१ उपाधि याग और तपस्या २५ १२ १९८७

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं, और जितना भी ये जड़ जगत, अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में, प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा हैं। क्योकि जितना भी यह संसार, प्रायः हमें दृष्टिपात आता रहता हैं, इसके दोनों प्रकार के स्वरूप, प्रायः मानवीयता की आभा में सदैव निहित रहते हैं, और मानव परम्परागतों से ही, ये अपने में चिन्तन और मनन करता रहा है कि वे परमपिता परमात्मा का जो अनूठा जगत है, इसके ऊपर मानव को अन्वेषण, करना चाहिए और विचार-विनिमय करना चाहिए क्योंकि यह अनुपम हैं। तो हमारे आचार्यों ने बेटा! परम्परागतों से ही, भिन्न-भिन्न प्रकार के रूप में जो यह प्रायः जगत दृष्टिपात आ रहा हैं इसके ऊपर अन्वेषण, चिन्तन और मनन किया और मनन करते-करते बड़ी विचित्र उड़ाने उड़ी हैं, कहीं संसार को भौतिक विज्ञान में ले गएं, कहीं संसार को, आध्यात्मिकवाद की उड़ाने उड़ने लगें क्योंकि दोनों प्रकार का यह जो अनुपम जगत है, मानो कहीं आध्यात्मिकवादी, अपने में सर्वोपरि बन जाते हैं, और किसी-किसी काल में, भौतिक विज्ञान अपने में मानो देखो, पराकाष्ठा पर चला जाता है। परन्तु विचार यह आता रहता हैं क्या ये दोनों प्रकार का जो विज्ञान है इनमें कौन-सा सर्वोपरि है, जिसके ऊपर मानव अपने निर्धारितता को अपने में स्थिर कर लेता है और विचारता रहता है सम्भो वर्णनं ब्रहे वाचन्नम् ब्रह्मा कृतं लोकाः ऐसा मानो ऐसे-ऐसे वेदमन्त्रों की, जब प्रतिभा प्रायः मानव के समीप आती रहती हैं, तो मानव अपने में बड़ी विचित्र विचित्र उड़ाने उड़ता रहता हैं तो विचार आता है कि ऋषि-मुनियों ने, एक वाक् ऐसा कहा, स्वचतप्रह्वा मानो देखो, दोनों प्रकार का विज्ञान, अपनी-अपनी आभा में सदैव निहित रहना चाहिए, एक दूसरे में पूरक रहना चाहिए, जब एक दूसरे में पूरक रहता है, तो मानो प्राणी समाज में बेटा! अज्ञान नही आता। परन्तु जिस काल में, आध्यात्मिकवाद और भौतिक विज्ञान की दोनों की विभक्त क्रिया आ जाती हैं, अथवा दोनों का विभाजन हो जाता हैं, उसी काल में, मुनिवरों! देखो, वह आध्यात्मिकवाद के मानो विभक्त और सूक्ष्म रहने से, मानव में अज्ञान की प्रवृत्ति आ जाती हैं। परन्तु विचार यह वेद का वाक् कहता है कि मानव को एक दूसरें में समावेश की, विचारधारा को ले करके अपने में अपनी विचित्र उड़ाने उड़नी चाहिएं। परन्तु जब ऐसा विचार बेटा! मानव समाज में आता रहता हैं, तो विचार आया कि दोनों प्रकार का विज्ञान, प्रायः मानवीय दर्शन में रहना चाहिए, ये दोनों प्रकार का विज्ञान ही समाज और मानवता को ऊँचा बनाता हैं। तो मेरे प्यारे! आज का हमारा वेदमन्त्र, जहाँ यह कह रहा है, वहाँ और भी विचित्र-विचित्र वाक् हमें प्रगट करा रहा हैं। हमारे यहाँ पूर्व काल में, यह जो समाज मानो अपने में कृतियों में रत्त रहा हैं, यह एक उपाधियों का क्षेत्र भी बना रहा है, परन्तु हमारे यहाँ उपाधि क्षेत्रों में यह वैदिकत्ता की मानो एक बड़ी विचित्र एक देन रही हैं, क्योंकि जिस काल में मानो देखो, अपने-अपने में, विभक्त क्रियाओं में परितण होता हुआ और ये मानव समाज और यह जो समाज है, यह अपने उपाधियों में निहित रहता हैं, और यह उन उपाधियों में आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान दोनों अपनी आभाओं में निहित रहता हैं, तो मानो देखो, ये समाज अपने में प्रकाश में निहित होता रहा हैं। चाहे वह राष्ट्रवाद हो, चाहे वह मानो देखो, मानवीय समाज हो, चाहे उसमें विज्ञानवेत्ता हों, चाहे उसमें बेटा! आध्यात्मिक विज्ञान की प्रतिक्रियाएं हों, परन्तु इन दोनों में एक मानो देखो, एकता का सूत्र रहा हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! हमारा वेदमन्त्र यह कह रहा है कि हमारे यहाँ ब्रह्मचारी, ब्रह्मवर्चोसि और देखो, इन्द्र

इत्यादियों की मानो एक उपाधि मानी गई है, जिन उपाधियों के साथ-साथ, हमारा जीवन एक बड़ा विचित्र बना रहा हैं, हमारे यहाँ पूर्व काल में आचार्यजनों ने भी, इस प्रकार की उपाधि स्वीकार की, परन्तु इन्द्र इत्यादियों ने जहाँ याग इत्यादियों का क्रियाकलाप बना रहा, वहाँ उनमें हिंसा और द्वेष भी प्रायः होती रही। क्योंकि ऋषि-मुनि अपना समय-समय पर, अपना उपदेश देते रहते, परन्तु उसके पश्चात भी रजोगुण, तमोगुण बना हुआ रहा हैं।

मेरे पुत्रों! आओ, आज मैं तुम्हें एक ऐसे आसन पर ले जाना चाहता हूँ, जहाँ बेटा! कई काल में मैंने तुम्हें वर्णन भी किए हैं हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की विद्याएं रही हैं, मानो भिन्न भिन्न प्रकार की चिकित्साए रही हैं। मेरे पुत्रों! देखो, नाना प्रकार का औषध विज्ञान, हमारे यहाँ बड़ा महान तत्त्व पर रहा हैं जिसके ऊपर बेटा! मानव अपने में बहुत गम्भीरता से, विचार-विनिमय करता रहा हैं। तो आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें ऐसे काल में ले जाना चाहता हूँ, जिस काल में बेटा! देखो, यहाँ अश्विनी कुमार जैसे मानो वैद्यराज जो मानो देखो, महात्मा भुंजु के दोनो पुत्र कहलाते थे। मेरे पुत्रों! देखो, अश्विनी कुमार, अपने में बड़े वैद्यराज थे, वह अपने में बडे अनुसन्धान करते रहते थे, मेरे पत्रों अनुसन्धान की, उनकी बड़ी विचित्र प्रक्रिया रही हैं, उनके आचार्य आयुर्वेद के एक मानो आचार्य उनके पूज्यपाद गुरु थे, जिनका नाम विलक्षणीत ऋषि कहलाया जाता था। जो बेटा! देखो, जिनके स्वप्रवत में रात्रि काल में मनन करके जब बेटा! देखो, निन्द्रा की गोद में जाते, और निन्द्रा से वह जागरूक होते, तो मानो देखो, औषधियां उनके, अपने गुणों का वर्णन करने लगती थी। जब बेटा! देखो, ऋषिवर अपने में यह विचार-विनिमय करते रहे, तो यह अश्विनी कुमार क्योंकि माता की बड़ी विचित्र देन रही हैं, यहाँ सन्तानोंत्पति में, जहाँ मानव का सहयोग रहा हैं, वहाँ मेरी प्यारी माताओं का बड़ा विचित्र सहयोग रहा हैं। मुनिवरों! देखो, माता अपने में महात्मा भुंजु मुनि की जो देवी थी यह मानो देखो, चन्द्रमा की उपासना करती रहती थी, क्योंकि हमारे यहां चन्द्रमा को सोम कहते हैं वैदिक साहित्य में इसको सोम की उपाधि प्रदान की गई है। हमारे यहाँ बड़ा विज्ञान एक मानो देखो, वेदमन्त्र को ले करके, उस विज्ञान की प्रतिक्रियाएं मानव के समीप आती रही हैं। मेरी माता मानो देखो, महात्मा भुंजु की दिव्या से, वह सदैव मानो देखो, जब दोनों राजकुमार दोनों माता के गर्भस्थल में विद्यमान थे, तो मुनिवरों! देखो, माता चन्द्रमा की उपासना करती थी, सोम नाम बेटा! समुद्रों का भी है, परन्तु सोम नाम ज्ञान का भी हैं, यहाँ सोम नाम मेरे पुत्रों! देखो, चन्द्रमा का माना गया है। जो अमृत को बिखेरता रहता हैं। जो मेरी प्यारी माता ये चाहती है, कि मेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाला, पुत्र आयुर्वेद के जानने वाला बने, या औषधियों को औषध विज्ञानवेत्ता बने, तो मानो देखो, माता चन्द्रमा की उपासना करती रही हैं, और उसी प्रकार वेदमन्त्रों का अपने में उद्गीत गाती रही हैं। मानो देखो, यहाँ वैदिक साहित्य में, बहुत से राजकुमार मन्त्रार्थ इस प्रकार के हैं। जिनका बेटा! देखो, समन्वय चन्द्रमा से होता हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, माता इस प्रकार की प्रायः, उपासना करती रहती। तो माता के दोनों ही पुत्र थे बेटा! अश्विनी कुमार जो महात्मा भुंजु मुनि महाराज के दोनों पुत्र मेरे प्यारे! माता की यह प्रबल इच्छा रहती कि मेरा बाल्य मानो देखो, औषध विज्ञान और वह वनस्पति विज्ञान के जानने वाला हो, तो माता की यह अभिलाषाएं पूर्ण हुईं, मेरे प्यारे! देखो, विलक्षणाता ऋषि महाराज के यहाँ दोनो राजकुमार बेटा! औषध विज्ञान को जानने के लिए, कौन-सी औषध मानो देखो, किस-किस प्रकार का, रूग्ण समाप्त कर सकती हैं। इस प्रकार का, मुनिवरों! देखो, उनका अनुसन्धान होता रहा। जो मुनिवरों! देखो, वह सदैव, प्रत्येक औषधियों के गुणों को जानने वाले, मुझे कुछ ऐसा स्मरण है, उन्होंने बेटा! पिछतर वर्ष तक, इस प्रकार का मानो अनुसन्धान किया, और अपने आचार्य के समीप, मानो देखो, नाना प्रकार के औषध को जानते हुए, अपने में देखो, उनका देखो, प्रयोग करते हुए मुनिवरों! देखो, अपने में उनका, अपने में व्रेत करते हुए वह सदैव उसमें निहित रहे। तो मुझे कुछ ऐसा स्मरण हैं बेटा! देखो, ऐसा प्रतीत आ रहा है, क्या महात्मा दधीचि के यहाँ, मेरे पुत्रों! देखो, महात्मा

याग और तपस्या

दधीचि तपस्या कर रहे थे, और महात्मा दधीचि, मेरे पुत्रों! देखो, वह वेदमन्त्रों का उद्गीत गाते रहते थे, परन्तु अश्विनी कुमार, मेरे पुत्रों! देखो, आयुर्वेद में पारायण हो गएं, और आयुर्वेद में पारायण होने के पश्चात, उन्हें ब्रह्मविद्या और प्राप्त करनी थी, और वह जहाँ ब्रह्म विद्या में, पारायण हुए तो, ऐसा उस समय एक नियम बना हुआ था, ऋषि-मुनियों का, क्या वह वही मुनिवरों! देखो, राजा इन्द्र की उपाधि को प्राप्त कर लें कही मुनिवरों! देखो, दो प्रकार का भेदन प्रायः हमारे यहाँ रहा है समाज मुनिवरों! देखो, एक सौ एक अश्वमेध याग कर लें, वह राजा इन्द्र बनता हैं, या वह मानो देखो, आयुर्वेद विज्ञान को ब्रह्म ज्ञान को प्राप्त कर ले, ब्रह्म ज्ञान को क्रिया में लाने के पश्चात, वह इन्द्र की उपाधि को प्राप्त हो सकता हैं। तो मुनिवरों! देखो, ऐसा मुझे स्मरण आता रहा है जिस समय मंगलम ब्रीहि की वृता मेरे पुत्रों! देखो, जिस समय, मेरे पुत्रों! देखो, दोनों अश्विनी कुमारों ने देखो, आयुर्वेद की विद्या का करने के पश्चात, उनका बड़ा गम्भीर अध्ययन रहा। क्या मानो देखो, मानव के कण्ठ के भाग को दूरी कर देना, और औषधियों में नियुक्त करना और मानो देखो, ज्यों का त्यों गति प्रदान कर देना, यह सब उसकी मानो आयुर्वेद के विज्ञान में मानी गईं, परन्तु देखो, वह ब्रह्म विद्या में जाने वाले, विचारने लगे, दोनों की, हमें ब्रह्म विद्या को और प्राप्त करना है। तो विचारा गया, कि कौन ऐसा ब्रह्म विज्ञान को जानने वाला है जो हमें ब्रह्म विद्या को प्राप्त करा सके।

तो मुनिवरों! देखो, विचारने लगे ऋषि-मुनियों में विचारा गया, कि महात्मा दधीचि बड़े पुण्यवान मानो देखो, महात्मा दधीचि का तप बड़ा विचित्र बहलाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, दोनों ने निश्चय कर लिया, क्या महात्मा दधीचि ऐसे महापुरूष है, जो हमें इस ब्रह्म विद्या को प्राप्त करा सकते हैं, और ब्रह्म विद्या को प्राप्त कराने के पश्चात, हमारा मानवीय जीवन एक विचित्रतम बन जाएगा। क्योंकि प्राण विद्या भी प्रायः उसमें आती है और जहाँ प्राण विद्या को हमने जाना, तो मानो देखो, उस समय हम आयुर्वेद और देखो, उस प्राण विद्या को दोनों को साकार रूप बना करके, हम समाज में, एक मानवीयता को मानो निर्धारित कर सकते हैं। मानो समाज किस प्रकार का होना चाहिए मेरे प्यारे! देखो, दोनों ने विचार-विनिमय करते हुए, और भयंकर वनों से अपने आचार्य से आज्ञा पा करके, आयुर्वेदाचार्य से अपने मन्तव्य की कुछ चर्चाएं उन्होंने की परन्तु विलक्षणाता ऋषि ने कहा, कि हे ब्रह्मचारियों! वाक् तो तुम्हारा बड़ा विचित्र है, क्योंकि तुम अपने जीवन मे अखण्ड ब्रह्मचारी रहे हो, और ब्रह्मचर्य की आभा से तुमने आयुर्वेद का अध्ययन किया हैं। परन्तु देखो, यह ब्रह्म विद्या भी ब्रह्मचर्य से समन्वय ही मानो देखो, इसका सम्बन्ध रहता हैं। इसीलिए तुम जाओ ब्रह्मचरिष्यामि को प्राप्त करो। मेरे प्यारे! देखो, वहाँ से उन्होंने गमन किया, आज्ञा पा करके, भ्रमण करते हुए बेटा! देखो, भयंकर वनों में, जहाँ महात्मा दधीचि, अपनी स्थलियों में अपनी साधना करते थे और ब्रह्मविद्या में उनका बड़ा मानो ब्रह्म विद्या में बड़े पारायण और ब्रह्म विद्या को क्रियात्मकता में मानो प्रायः उसका अनुभूति युग्यातम, प्रगट कराते रहते थे। तो मेरे पुत्रों! मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है, क्या जब दोनों अश्विनी कुमार, महात्मा दधीचि के आसन पर पंहुचे, तो महात्मा दधीचि ने उनका स्वागत किया। आओ, ब्रह्मचारियों! विराजो। तो वे ब्रह्मचारी विराजमान हो गएं, ब्रह्मचारियों को कुछ मानो बेटा! उनका अतिथि किया, नाना कुछ कन्दमूल इत्यादि पान कराने के पश्चात, उन्होंने कहा कहो! ब्रह्मचारी तुम्हारा आगमन कैसे हुआ है? उन्होंने कहा हे प्रभु! हम वेद का आयुर्वेद का अध्ययन कर रहे हैं। परन्तु आयुर्वेद का अध्ययन करते-करते, हमारे हृदय में, ऐसी एक आकांक्षा उत्पन्न हुई है, आकांक्षा का जन्म हुआ हैं, क्या हम ब्रह्म विद्या को प्राप्त कराए ब्रह्म विद्या को पान करना चाहते हैं और ऐसा हमें कोई ऋषि हमारी दृष्टि में प्राप्त नही हुआ हैं, पृथ्वी पर जैसा प्रभु आपका अध्ययन है, आपके अध्ययन की और नाना ऋषियों ने बड़ी सराहना की हैं। हमारे पूज्य मानो आचार्य ने भी आपकी सराहना की हैं। तो हमारा विचार यह है, क्या आप हमें ब्रह्म विद्या का प्राप्त कराईए। हम ब्रह्म विद्या को

प्राप्त करना चाहते हैं।

मेरे प्यारे! देखो, उस समय महात्मा दधीचि ने कहा, हे राजकुमारों! तुम्हें यह प्रतीत है, कि यह घोषणा, महाराजा इन्द्र के यहाँ से हुई है, एक घोषणा यह हुई है, कि जो अश्विनी कुमारों को, ब्रह्म विद्या का पान कराएगा, वह मानो देखो, उसके कण्ठ के भाग को दूरी कर दिया जाएगा तो हे ब्रह्मचारियों! मानो देखो, इस प्रकार की घोषणा हुई है, और यह घोषणा, बड़ी विचित्र है वास्तव में, इन्द्र ऐसा ही कर पाएंगे मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा-प्रभु! यह तो वाक् आपका विचित्र हैं परन्तु आप ब्रह्म विद्या नही प्रदान करोगे, तो ये ब्रह्म विद्या लुप्त हो जाएगी, और ब्रह्म विद्या के लुप्त होने पर, मानो देखो, इस संसार में वर्ण शंकर की स्थापना हो जाएगी यह आप कैसा विचार कर रहे हैं, कि एक राजा अपनी अज्ञानता से तुम्हारे कण्ठ को, या किसी भी ब्रह्मेवता के कण्ठ को मानो दूरी करना चाहता हैं, यह तो कोई विचार हमारे आंगन में आ नही रहा है, महात्मा दधीचि ने कहा कि यह घोषणा तो मानो ऋषि-मुनियों की सभी में मानो देखो, यह घोषणा हो गई है जो भी ब्रह्म विद्या तुम्हें प्रदान कराएगा, वही कण्ठ का ऊपरला भाग दूरी हो जाएगा। मेरे प्यारे! देखो, देखो, दोनों अश्विनी कुमार, अपने में मनन और चिन्तन करने लगे कि किसी और ऋषि के द्वार पर चलते हैं, ब्रह्म विद्या तो प्रायः प्राप्त करना हैं। हमें संसार की कोई उपाधि की आवश्यकता नही हैं, हमें तो केवल आत्म कल्याण के लिए और देखो, ज्ञान को प्राप्त करने के लिए हमारे हृदय में ऐसी एक मानो एक अभिलाषा का जन्म हुआ है, और इससे हमारे देखो, अन्तरात्मा का आभूषण हैं, ब्रह्म विज्ञान तो आत्मा का भूषण हैं। तो इसे हमें प्राप्त करना चाहिए।

मेरे पुत्रों! देखो, अश्विनी कुमारों ने ऐसा सम्भव ब्रहे, ऐसा विचार आता रहता है, कि मेरे प्यारे! ज्ञान जो हैं, जो आत्मा का मौलिक गुण कहलाता है, यह आत्म तत्त्व में मानो देखो, और भी नाना प्राणियों में गुण प्राप्त होते रहते हैं, जैसा मानो देखो, उन्होंने वर्णन कराया क्या एक एक समय चाक्राणी गार्गी, अपने आसन पर विद्यमान थी, और जब वह वेदों का उद्गीत गाती रहती, वेदों का उद्घोष करती रहती, तो सर्पराज और मृगराज उनके मानो ज्ञान को प्राप्त करने के लिए, वह एक पंक्ति में अपने में श्रवण करते रहते थे, जब वह जटा पाठ के माला पाठ में, विशुद्ध गान गाया जाता है। तो ऐसा मुझे प्रतीत हैं ऐसा उन्होंने कहा है कि यह तो संसार की यह तो प्रभु की धरोहर कहलाती है, जो प्रत्येक प्राणी के लिए मानो देखो, आत्म तत्त्व की आभा में निहित रहती है। तो मेरे पुत्रों! देखो, ऐसा प्रतीत हुआ, सम्भवं ब्रह्मे ऐसा मुनिवरों! देखो, अश्विनी कुमारों ने, विचारा कि ये विद्या तो ब्रह्मविद्या को तो सिंहराज भी चाहता हैं। मृगराज भी चाहता है, और इसी विद्या को सर्पराज भी चाहता है। मानो क्योंकि यह ब्रह्मविद्या को प्राप्त करने के लिए, मानो प्राणी मात्र सदैव ललाहित रहता हैं। तो मुनिवरों! देखो, अश्विनी कुमारों ने, जब यह मनन और चिन्तन किया, तो ओर भी ऋषि-मुनियों के द्वारों पर जाने के लिए वह तत्पर हुए। परन्तु सब ने उन्हें एक ही घोषणा कराई, क्या हम तुम्हें ब्रह्म विद्या प्राप्त नही कराएगें क्योंकि ब्रह्म विद्या पान कराने से हमारा कण्ठ का, ऊपरला भाग मानो दूरी हो जाएगा। मेरे प्यारे! देखो, अन्त में, वह भ्रमण करते हुए, ऋषि-मुनियों से विचार-विनिमय करते हुए अन्तिम ऋषि श्वेति ने यह कहा क्या महाराज! हे ब्रह्मचारियों! तुम दधीचि से ही प्रार्थना करो, और दधीचि ही तुम्हें ब्रह्म विद्या प्रदान करा सकते हैं और इसमें से कोई ऋषि तुम्हें ब्रह्म विद्या प्रदान नही करा सकते।

मेरे प्यारे! वह पुनः महात्मा दधीचि जी के आसन पर पंहुचे, महात्मा दधीचि ने कहा कहो अश्विनी कुमार! पुनः कैसे तुम्हारा आगमन हुआ हैं? उन्होंने कहा-प्रभु! ऐसी इच्छा हुई है, कि अमृतं अमृतां ब्रहे व्रतं क्या हे भगवन! हमें मानो देखो, ब्रह्म विद्या प्राप्त कराईए, उन्होंने कहा कि मैंने तो तुम्हें पूर्व काल में यह कहा है, क्या राजा इन्द्र के यहाँ से यह घोषणा हो गई, और इन्द्र मानो हमारे यहां कण्ठ के ऊपर ले भाग को दूरी कर सकता है मानो

देखो, यह सम्भूति ब्रह्मणा मेरे प्यारे! देखो, अश्विनी कुमारों ने आयुर्वेद के आधार पर, आयुर्वेद की विद्या को प्राप्त करते हुए, उन्होंने बेटा! इस विद्या को प्राप्त किया। उन्होंने एक औषध विज्ञान को, अपने में एक अदभुत रूपों में लाने का प्रयास किया। मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने अश्व के मस्तिष्क को मानो देखो, वह मानव के कण्ठ के ऊपरले भाग में स्थित करने से, औषधों का लेपन करने से, मानो देखो, वह ज्यों का त्यों और उससे ब्रह्म विद्या प्राप्त की जा सकती हैं मेरे पुत्रों! देखो, यह उन्होंनें बहुत वर्षों तक आयुर्वेद की विद्या के आधार पर मानो देखो, उन्होंने अनुसन्धान किया। आचार्य के चरणों में विद्यमान हो करके, अश्विनी कुमारों ने कहा-प्रभु! हमारी यह इच्छा हैं, कि हम ब्रह्मविद्या को आपसे प्राप्त करेंगें। परन्तु हमारा ये विज्ञानां ब्रह्मणां ब्रहे कृतम् हे प्रभु! हम ऐसा कर सकते हैं क्या तुम अश्व के मानो देखो, मुखारबिन्दु से, हम उसकी देखो, तरंगों के द्वारा, हम ब्रह्म विद्या को प्राप्त कर सकते हैं। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा दधीचि ने उस वाक् का आशय स्वीकार कर लिया। मेरे प्यारे! उस समय अश्विनी कुमारों ने ब्रह्मणां ब्रहे कृतो मेरे पुत्रों! देखो, सूत्र के इन शब्दों के आधार पर उन्होनें औषधियों को एकत्रित कर लिया, और औषधियों को एकत्रित करने के पश्चात, मुनिवरों! देखो, उन्होंने अश्व के मस्तिष्को लाया, और उसे भी औषधियों के पिपाद में स्थिर कर दिया। मेरे प्यारे! जब महात्मा दधीचि के चरणों में विद्यमान हो करके, अश्विनी कुमार दोनों बेटा! ब्रह्म विद्या का अध्ययन कराने लगे, और ब्रह्मविद्या को दोनों प्राप्त करने लगे अश्विनी कुमार के अश्वते ब्रह्मे लोकां बेटा! देखो, ब्रह्म ज्ञान होने लगा और उस समय महात्मा दधीचि के हर्ष की सीमा न रही, क्योकि उनका हृदय प्रफुल्लित था, वे अपने में यह अनुभव कर रहे थे, क्या मैं ब्रह्म विद्या किसी को प्रदान कर रहा हूँ, देखो, यह जब ब्रह्म विद्या का एक नृत्त होने लगा बेटा! देखो, इन्द्र को यह प्रतीत हुआ क्या देखो, अश्विनी कुमार, महात्मा दधीचि के यहाँ ब्रह्म की विद्या को प्राप्त कर रहे हैं, मेरे पुत्रों! ऐसा स्मरण आ रहा हैं, क्या महात्मा दधीचि के कण्ठ को बेटा! देखो, उन्होंने अपने सुदर्शन मानो चक्र यन्त्र से उन्होने बेटा! देखो, उसके कण्ठ के ऊपर ले भाग को, दूरी कर दिया। मेरे प्यारे उस कण्ठ ब्रह्मे जब वह नीचे आ गया, पृथ्वी पर आ गया, तो उन दोनों अश्विनी कुमारों ने, मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार की जो औषधियां थी, जैसे शेलमृचिका, वृत्तिका, पंचवेणु, विश्वम्भ्री मेरे पुत्रों! देखो, नाना प्रकार की औषधियों का, उन्होंने पिपाद बना करके, उन औषधियों में मानो उनके कण्ठ को स्थिर कर दिया, और जहाँ कण्ठ का भाग, दूरी हुआ उन मुनिवरों! देखो, अश्व के अश्व का जो मुखार ऊर्ध्वा भाग था वह अश्व के कण्ठ पर मुनिवरों! स्थिर कर दिया और स्थिर करने के पश्चात उन्होंने कुछ औषधियों का अग्नि में तपा करके, खरल बना करके, मानो देखो, पुनः कृतियां में अर्पित करके बेटा! उन्होंने उसका लेपन किया, तो कुछ समय के मानो देखो, वह कण्ठ का भाग उसका शुद्ध बन गया, और उनके मानो एक औषध होती हैं, उन दोनों अश्विनी कुमारों ने वह प्राप्त कर ली, जिससे मुनिवरों! देखो, जो अश्व था, उसके मुखारबिन्दु से, तरंगें जो जन्म लेती, मानो देखो, ब्रह्म विद्या की उन तरंगों को, वह उस औषधियों के माध्यम से, अपने में वह श्रवण कर सके और उस विद्या को वह उसको पान कर सकें। मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने उस विद्या का पान करना प्रारम्भ किया। महात्मा दधीचि देखो, अश्व के मस्तिष्क से ही देखो, अपनी वाणी में वह उद्घोष करने लगे, और उद्गीत गाते-गाते बेटा! अश्विनी कुमार, ब्रह्म विद्या को पान करने लगे यह घोषणा पुनः देखो, महाराजा इन्द्र को प्राप्त हुई, परन्तु देखो, इन्द्र ने अपना ब्रहे देखो, एक ही समय, वह कण्ठ को दूरी कर सकते थे। मेरे पुत्रों! देखो, उनका कण्ठ उन्हें जब प्राप्त हो गया, प्राप्त हो जाने के पश्चात अश्व के मस्तिक को, उन्होंने दूरी किया और देखो, उस पर दधीचि के भाग को पुनः स्थित करने के पश्चात, मेरे पुत्रों! देखो, वह पुनः ब्रह्म विद्या उन्हें प्रदान करने लगे। मेरे पुत्रों! ऐसा मुझे स्मरण आता रहता हैं, वे ब्रह्म विद्या, जब प्राप्त कराने लगे, तो इन्द्र को यह प्रतीत हुआ, क्या वह समय समाप्त हो गया है, क्या जब मैं महात्मा दधीचि के कण्ठ को दूरी कर सकता था परन्तु अब मैं नही कर पाऊंगा, क्योंकि अश्व के

मुखारबिन्दु से, उन्होंने ब्रह्म विद्या को प्रदान किया है। ब्रह्म विद्या को उन्होंने पान किया हैं। क्योंकि ब्रह्म विद्या का अध्ययन करना ही मानो देखो, उनका शाश्वत बनना है। तो मेरे प्यारे! देखो, महात्मा दधीचि उच्चारण कर रहे थे, हे अश्विनी कुमारों! ब्रह्म विद्या किसे कहते हैं, तुम्हें यह प्रतीत हो गया होगा, क्या प्रत्येक इन्द्रियों का जो विषय हैं, एक-एक विषय को जानने का नाम ही मानो देखो, ब्रह्म के आँगन को जाना है, और ब्रह्म विद्या को प्राप्त करना है जैसे मानव के नेत्र हैं, मानव के मानो देखो, घ्राणेन्द्रियाँ है, त्वचा है, और रसना हैं मानो देखो, श्रोत्रीय विद्या को प्राप्त करना हैं, इनको हमें विस्तार रूप देना है, इसको व्यष्टि से समष्टि में प्रवेश कराना है, और जब समष्टि में चला जाता है, तो ब्रह्म ज्ञान हो जाता हैं। क्योंकि ब्रह्म ज्ञान कहते किसे हैं? मुनिवरों! देखो, प्रत्येक संसार के मूल में जब ब्रह्म ही ब्रह्म दृष्टिपात आने लगता हैं। तो जानो की ब्रह्म विद्या में हम सार्थक बन गएं, तो मेरे पुत्रों! मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है, मानो देखो, अश्विनी कुमारों ने उस विद्या को पान किया, और महात्मा दधीचि ने यह कहा क्या संसार का एक-एक कण-कण मानो अपनी आभा से ओत-प्रोत हो रहा हैं। महात्मा दधीचि ने कहा, कि हे अश्विनी कुमारों! एक समय हम भ्रमण करते हुए मानो देखो, हम उद्दालक गोत्र में चले गएं, और उद्दालक गोत्र के जो ऋषि थे, शिकामकेतु ऋषि महाराज जो मानो देखो, अपने पूर्वजों का दर्शन कर रहे थे, यन्त्रों के द्वारा, मानो देखो, उस ब्रह्म विद्या को पान करने के लिए, और वह मानो देखो, नाना प्रकार के अस्त्रों-शस्त्रों में अग्नि विद्या को जान करके ही वह अपने पूर्वजों का दर्शन करना चाहते थे। परन्तु उनके पूर्वजों को दर्शन क्या, परन्तु देखो, शरीर में से आत्मा चला जाता है, यह शरीर रह जाता है, मानो देखो, उस शरीर में जो यह शरीर जब अग्नि के मुखारबिन्दु में प्रवेश करा दिया जाता है, इसका एक-एक कण-कण एक-एक परमाणु वायु मण्डल में, अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके, यह द्यौ लोक में प्रवेश हो जाता हैं। और यह जब द्यौ लोक में चला जाता हैं, तो उस द्यौ लोक में वह जो परमाणु हैं, मानो अणु है, उस एक-एक अणु में ही मानो देखो, उनके चित्र विद्यमान होते हैं। एक-एक तरंग में चित्र विद्यमान होते हैं, और वह जो चित्र है, उन चित्रों का दर्शन करना ही मानो देखो, हमारे लिए हमारा एक सौभाग्य जागरूक हो गया, और अश्विनी कुमारों ने कहा-प्रभु! उसी विद्या को हम जानना चाहते हैं उस विद्या को प्राप्त करना ही तो हमारा लक्ष्य है। उन्होंने कहा उस विद्या को जानना हैं, तो मानो तुम ब्रह्म का चिन्तन करो, और ब्रह्म के एक-एक कण-कण में दृष्टिपात करो, मानो देखो, उसका कण-कण वह जो प्रकृति का कण-कण है, वह ब्रह्म से मानो सजातीय कहलाया जाता है। उसमें जो गति है, उमसें जो आकुञ्चन शक्ति हैं, वह सर्वत्र मानो देखो, ध्रुवा और ऊर्ध्वा में गति करने वाली जो वृत्तियाँ है, वह सब ब्रह्म चेतना से उन्हें प्राप्त हो रही हैं, और वही ब्रह्म चेतना को, तुम अपने में साकार रूप बनाने का प्रयास करो।

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! यह वाक् मानो मैंने कई कालों में, कई मानो देखो, दार्शनिक रूप में इसका प्रायः अध्ययन भी किया है। तो महात्मा दधीचि ने कहा, जब मानो शिकामकेतु उद्दालक, अपनी ब्रह्म विद्या में क्या, अपने पूर्वजों का दर्शन करने के लिए, यन्त्रों के द्वारा, तत्पर हो गएं, तो यन्त्रों में मानो देखो, उनके पूर्वजों के चित्र और अणु, परमाणु मानो देखो, उनकी एक धारा ऐसी बन गई, जैसे सूर्य की नाना प्रकार की किरणों हैं, उन किरणों में हरित और लालिमा मानो देखो, जिसमें नाना प्रकार के रूप होते हैं, उसके साथ-साथ होती हैं। इसी प्रकार मानो शब्द चित्र और चित्र के साथ देखो, जो अणु परमाणुओं में जो एक ब्रह्माण्ड निहित था उनके ही रूप में परिणत उनके साथ एक चित्र रूप में कटिबद्ध हो रहा हैं, तो मानो बेटा! देखो, मैं तुम्हें बड़े गम्भीर रहस्यों में आज ले गया हूँ। यह एक बड़ा गम्भीर रहस्यतम माना गया हैं, इसके ऊपर बेटा! वैदिकता में बड़ा सुन्दर चिन्तन और मनन होता रहा हैं, इस मनन शैली को, मैने बहुत पुरातन काल में, तुम्हें निर्णय कराया, परन्तु आज मैं इतना और इतना मुझे समय प्राप्त नही हो रहा है, विचार क्या मुनिवरों! देखो, मैं, महात्मा दधीचि

की चर्चा कर रहा था, महात्मा दधीचि कितने मानो देखो, विशुद्ध, ब्रह्म विद्या में बेटा! सदैव तत्पर रहते थे। तो मेरे प्यारे! देखो, इस ब्रह्म विद्या को प्राप्त करने के लिए देखो, अश्विनी कुमार, अपने में देखो, आयुर्वेद और ब्रह्म विद्या को दोनों का उन्होंने अध्ययन किया, और अश्विनी कुमारों को, उन्होंने अध्ययन कराया, और ये निर्णय कराया, कि हे ब्रह्मचारियों! ये जो ब्रह्म विद्या है, इसको पान करना तुम्हारा कर्तव्य है। परन्तु विचार क्या, कि ब्रह्म विद्या कहते किसे हैं? यह भी तो एक विचार का विषय हैं, केवल चित्रावलियों को या इसको हम ब्रह्म विद्या के रूप में स्वीकार नही कर रहे हैं। यह भी बड़ा विचित्र एक रूप है मानो देखो, ब्रह्म विद्या हम उसे कहते हैं, जो याग की तरंगों से, यज्ञमान की भावना के साथ-साथ, उनका प्रादुर्भाव होता हैं। उसको भी हम ब्रह्म विद्या कहते हैं। परन्तु देखो, याग का भी हम देखो, एक शोधन शक्ति कह सकते हैं। परन्तु देखो, जब मैं यज्ञमान भौतिकवाद से आध्यात्मिकवाद में जब यह जगत अन्तर्मुखी अपने में दृष्टिपात करने लगता है तो मानो देखो, उसे हम ब्रह्म विद्या कहते हैं। परन्तु एक रूप में, उसे भी हम ब्रह्म विद्या नही कहते, उसको भी आत्म विद्या कहा जा सकता है। वह भी ब्रह्म विद्या नही कहलाया जाता। परन्तु ब्रह्म विद्या वास्तव में उसे कहते हैं, जो ब्रह्म में समाधिष्ट हो करके और ब्रह्म को अपने में और अपने को ब्रह्म में जो स्वीकार कर लेता है, वह मानो देखो, मौन हो जाता है, उस ब्रह्म विद्या को कोई वर्णन नही कर सकता। मेरे प्यारे! देखो, जब अश्विनी कुमारों ने कहा-प्रभु! जब दोनों एक दूसरे में मौन हो गएं है, तो ब्रह्म विद्या का मानो देखो, ब्रह्म विद्या तो वह न रही, वह तो मानो देखो, एक शान्त रूप बन गया है, जगत का, वह तो शून्य बिन्दु बन गया है, इस शून्य बिन्दु को ही ब्रह्म विद्या कहते हैं, उन्होंने कहा नही, ऐसा भी नही है। मेरे विचार में ऐसी भी नही आ रहा है, क्या शून्य बिन्दु को ही हम, ब्रह्म विद्या स्वीकार करें, ये भी हमारे विचार में अब तक नही आया है, परन्तु देखो, इसके ऊपर उन्होंने और अनुसन्धान करना प्रारम्भ किया, उन्होंने कहा क्या एक-एक इन्द्रियों का जो विषय है उस विषय को हम देखो, प्रकृति से उड़ान उड़ करके देखो, चेतना में जब प्रवेश करा देते हैं। क्या इसको ब्रह्म विद्या नही कह सकते। अश्विनी कुमारों ने जब ऐसा कहा, उन्होनें कहा ऐसा नही उन्होंने कहा तो ब्रह्म विद्या क्या है? उन्होंने कहा ब्रह्मणां ब्रहे वृतम् क्या देखो, ब्रह्म विद्या वह हैं जब एक-एक मानव का कण-कण देखो, ब्रह्मतव को प्राप्त हो जाता हैं, और ब्रह्मतव को प्राप्त हो करके वह ब्रह्म ही ब्रह्म में लीन हो जाता हैं। तो मानो देखो, इसको ब्रह्म विद्या कहते हैं, मेरे पुत्रों! देखो, अश्विनी कुमारों ने जब ऐसा श्रवण किया, तो उन्होंने पुनः प्रश्न किया कि भगवन! एक समय तो आप शून्य बिन्दु के लिए, मानो ब्रह्म विद्या का उदगीत गा रहे हैं, परन्तु दूसरे रूप में, आप मानो देखो, उसका समर्थन कर रहे हैं, यह मेरे विचार में नही आ रहा हैं। मुनिवरों! महात्मा दधीचि ने कहा हे ब्रह्मचारियों! अब तुम मौन हो जाओ, और मौन हो करके तुम प्रश्न न करो, मानो देखो, अति प्रश्न करने से मानो देखो, मस्तिष्क दोनों का मेरा और तुम्हारा मस्तिष्क मानो देखो, नष्ट हो जाएंगें। उन्होंने कहा-प्रभु! ऐसा क्यों? उन्होंने कहा-प्रभु! तुम्हारे हृदय में अभिमान आएगा और मेरे हृदय में निराशा आएगी दोनों मृत्यु के मूल बन जाते हैं।

मेरे पुत्रों! देखो, यहाँ अश्विनी कुमारो ने यह वाक् स्वीकार कर लिया, क्या वास्तव में प्रभु! परन्तु देखो, उन्होंने कहा-प्रभु! हममें अभिमान नही हो सकता, तुम्हारे उत्तर न देने पर, हम मौन हो जाएंगें। परन्तु देखो, अभिमान नही हो सकता, उन्होनें कहा क्यों नही? उन्होंने कहा क्योंकि हमने आयुर्वेद का अध्ययन किया हैं। जो आयुर्वेद का अध्ययन करने वाला हैं, वह ब्रह्म विद्या को पान करने में शुलभ बन जाता है, और उसे अभिमान नही आता। अभिमान उनको आता है, जो आयु के मूल को नही जानते, और जो आयु के मूल को जानते हैं, प्रभु! देखो, उन्हें अभिमान नही आता। अभिमान उन्हें आता है, जो मानो देखो, एक ही रूप को पाना चाहते है एक ही शाखा को मानो देखो, रूप में संसार को दृष्टिपान करना चाहते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, महात्मा अश्विनी कुमारों ने, जब

ऐसा कहा तो महात्मा दधीचि ने कहा, अब हम मौन हो करके, वेदमन्त्रों का अध्ययन करेंगें, और इसके ऊपर पुनः विचार-विनिमय करेंगें, जो बेटा! देखो, यहाँ दोनों अश्विनी कुमार और मुनिवरों! देखो, वह मौन हो गएं, दोनों मौन हो करके, वह अपने में बेटा! समाहित की चर्चाएं, तो हम कल प्रगट करेंगें, आज का वाक् अब बेटा! यह समाप्त होने जा रहा हैं। आज के विचारों का अभिप्रायः क्या है, क्या मुनिवरों! देखो, वैदिक साहित्य में, भिन्न-भिन्न प्रकार की विद्याओं का वर्णन हैं, भिन्न-भिन्न प्रकार के ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा का वर्णन होता रहता है। परन्तु देखो, जहाँ हम यह आज तुम्हें यह उच्चारण कर रहे हैं, जहाँ हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार उपाधियों का समन्वय बेटा! संसार में रहा हैं, उपाधियों का जगत रहा है, तो कल बेटा! समय मिलेगा, तो कल मुनिवरों! देखो, और भी उपाधियों की चर्चा तो हम कल प्रगट कर सकेंगें, आज तो बेटा! अपने विचारों की हमने भूमिका बनाई है समय मिलेगा वेदमन्त्रों का विचार वेदमन्त्र आएगें उनके ऊपर विचार-विनिमय करेंगें, अब उसके पश्चात उपाधि नाना ऋषि-मुनियों की, ब्रह्मवेत्ताओं की उपाधियां, भी प्रायः समाज में रही हैं, और वह राजाओं की उपाधियां, भी कौन-सा राजा किस क्रियाकलापों को करता हुआ, राष्ट्रीयता को प्राप्त होता रहा है। यह चर्चाएं बेटा! हम तुम्हें कल प्रगट करेंगें। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं मानां त्वा यमाः वाचन गताः। ओ३म् श्वञ्जना रेवं भद्रा माहं ऋषि वा याः।

२ ब्रह्मवेत्ता कौन बनता हैं? २६ १२ १९८७

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं और जितना भी यह जड़ जगत, अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा हैं, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में, प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा हैं। क्योंकि वह अनन्तमयी है, प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा के गुणों का प्रायः वर्णन कर रहा हैं क्योंकि यूं तो संसार में एक-एक तरंग है, उन तरंगों में बेटा! उस परमपिता परमात्मा का भान हो रहा हैं। परन्तु जब हम इन वाक्यों के ऊपर मनन और चिन्तन, करना प्रारम्भ करते हैं, तो प्रायः एक ऐसी आभा का जन्म होता हैं, कि हमारे अन्तर्हृदयों में, उस परमपिता परमात्मा का जो ज्ञान अथवा विज्ञान है, वह हमारे लिए स्वतः मानो आभासित होने लगता हैं।

तो आओ, मेरे पुत्रों! मैं विशेषता में तो नही जाऊंगा, आज का हमारा वेदमन्त्र, नाना प्रकार की विवेचना कर रहा था। जहाँ बेटा! वह परमपिता परमात्मा की गुणों का गुणवादन कर रहा था, वही मुनिवरों! देखो, इस ब्रह्माण्ड और मानवीय जीवन की जो चर्या हैं, उसके सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न प्रकार की विवेचना कर रहा था। जहाँ ज्ञान और विज्ञान मानव के समीप आता रहता हैं, और उसमें दोनों प्रकार के ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा, अथवा उसकी महानता का प्रायः वर्णन होता रहता हैं तो मुनिवरों! आज का हमारा वेदमन्त्र, जहाँ नाना प्रकार के विश्वसनीय रूपों का वर्णन और याग की बड़ी महत्तता का वर्णन आता रहा हैं। आज के हमारे वेद के पठन-पाठन में यागों की बड़ी विचित्रता आती रही हैं। नाना प्रकार के याग, उन यागों में किस प्रकार का कर्मकाण्ड है, मानो देखो, ये सब हमें वैदिक साहित्य से हम प्राप्त होती रहती हैं। परन्तु आज का वेद का पठन-पाठन, जहाँ यागों के सम्बन्ध में, अपनी विवेचना दे रहा है, वहाँ यह कि याग में किस प्रकार का निर्वाचन और किस प्रकार की पद्धतियों के द्वारा, मानो देखो, अपने हृदय में, हृदयग्राही बन करके, और अपनी मानवीयता का दर्शन, वह अपने में लाने के लिए सदैव तत्पर रहा हैं। जहाँ मुनिवरों! देखो, याग पद्धतियां वहाँ बेटा! देखो, विष्णु याग की, और विष्णु की बड़ी विवेचना आ रही थी। हमारे यहाँ विष्णु शब्द में, बहुत से पर्यायवाची शब्द आते रहते हैं परन्तु देखो, हमारे यहाँ विष्णु स्वरुप हमारे यहाँ एक ही मूल में माना गया हैं, जो पालन करने वाला है, उसका नाम, हमारे यहाँ विष्णु कहा गया हैं। तो मुनिवरों! देखो, आज का हमारा वेदमन्त्र, जहाँ मुनिवरों! देखो, विष्णु की विवेचना कर रहा है, कि हे विष्णु! तू कल्याण करने वाला है। हे विष्णु! तू मानो देखो, पालना करने वाला है। इसीलिए परमपिता परमात्मा का नामोकरण बेटा! विष्णु माना गया हैं। परन्तु जहाँ विष्णु, परमपिता परमात्मा को कहते हैं, वहाँ और नाना प्रकार के पर्यायवाची शब्दों में, बेटा! माता का भी प्रायः वर्णन आता रहा है। तो आज मुनिवरों! देखो, वैदिक साहित्य में, या वेद के वांगमय में प्रवेश होना चाहता हूँ, गम्भीरता से, विचार केवल यह कि हम अपने में अपनेपन का दर्शन करते चले जाएं, हमारा सबसे मूल एक ही वाक् रहता है, क्या मानो जो अपने में अपनेपन का दर्शन करता हैं। तो वह मानो दार्शनिक कहलाता है, और वह दार्शनिक बन करके, मेरे पुत्रों! देखो, अपनी आत्मा और परमात्मा के मध्य में, जो अन्तर्द्वन्द्व होता है मुनिवरों! देखो, उसका स्पष्टीकरण होता हुआ, परमात्मा को हम प्राप्त कर लेते हैं। जैसे मुनिवरों! देखो, परमपिता परमात्मा को यज्ञोमयी स्वीकार करते हैं, ये स्वतः मानो एक यज्ञमयी स्वरूप माना गया है। मेरे पुत्रों! क्योंकि याग उसका आयतन, उसका गृह, उसका सदन, मेरे पुत्रों! देखो, वह उसी

में वास करता रहता हैं। यह जो संसार रूपी एक यज्ञशाला हमें दृष्टिपात आ रही है जिसमें बेटा! देखो, प्रत्येक परमाणु प्रत्येक परमाणु ही नही, बेटा! लोक-लोकान्तर, एक दूसरे का सहायक बना हुआ हैं, और एक दूसरे में पिरोया हुआ सा यह ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात आता है। जैसे माता का पुत्र, माता में पिरोया हुआ है, माता पुत्र में पिरोई हुई है, इसी प्रकार प्राणी प्राणी में पिरोया हुआ है, लोक-लोकान्तर बेटा! एक दूसरे लोकों में बेटा! पिरोया हुआ हैं, एक दूसरे में मानो देखो, प्रतिभाषित हो रहा है। इसी प्रकार मुनिवरों! एक परमाणु दूसरे परमाणु में मानो दृष्टिपात हो रहा हैं।

तो बेटा! यह कैसा अनुपम जगत है, मानो जो एक दूसरे में पिरोया हुआ सा यह जगत दृष्टिपात आता रहा हैं। मेरे पुत्रों! मुझे बहुत-सा विचार, प्रायः स्मरण आता रहता हैं, यहाँ ऋषि-मुनियों की, बहुत-सी चर्चाएं, जब स्मरण आती हैं, तो मैं यह कहता रहता हूँ, क्या वह ऋषि-मुनियों को धन्य है, जिन्होंने बेटा! ज्ञान और विज्ञान से युक्त बेटा! इस ब्रह्माण्ड को जानने का प्रयास किया, और ब्रह्माण्ड और पिण्ड दोनों को एक सूत्र में लाने का प्रयास किया है। तो आओ, मेरे पुत्रों! देखो, मैं इस सम्बन्ध में, विशेष विवेचना न देता हुआ केवल तुम्हें यह उद्गीत गाने के लिए आया हूँ, यह उदगार कि हमारे ऋषि-मुनियों ने, मानो देखो, अपनी आभा में नियुक्त किए हैं।

पुत्रेष्टि याग

आओ, मेरे पुत्रों! मैं विशेष चर्चा न देता हुआ केवल कि हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की उपाधियों में बेटा! यह सर्वत्र यह जगत रहा हैं। मानो देखो, वर्तमान में भी इसी प्रकार यह दृष्टिपात आता हैं, भूत काल में भी, और आगे भविष्य में आने वाला भी मानो ये जगत हमें ऐसा एक रूप में दृष्टिपात आ रहा हैं। मेरे प्यारे! देखो, जब हम इन वाक्यों पर विचार-विनिमय प्रारम्भ करते है। और वेद की कहीं से एक आख्यिका के ऊपर हम विचार देना प्रारम्भ करते हैं। कि हमारे यहाँ राष्ट्रवाद में भी निर्वाचन होता रहा हैं। हमारे यहाँ बेटा! जो ब्रह्मवेत्ता होते हैं, उनमें ब्रह्मवेत्ताओं में भी, एक ब्रह्मवेत्ता होता हैं जिसे हमारे यहाँ वशिष्ठ कहा जाता हैं, और मुनिवरों! देखो, यागों में, जो यागों की रचना करने वाले है उनके कर्मकाण्ड में, मानो देखो, निहित रहते हैं, वह भी मानो एक उपाधि युक्त कहलाते हैं। मेरे पुत्रों! हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का प्रायः वर्णन होता रहता हैं। जैसे हमारे यहाँ पुत्रेष्टि याग का वर्णन है, हमारे यहाँ देखो, पुत्रेष्टि याग किसे कहते हैं? जो मेरे प्यारे! देखो, याग के द्वारा और यज्ञमान का निदान करने के पश्चात मानो देखो, नाना प्रकार की औषधियों को याग में परिणत करने वाले अग्नि के मुखारबिन्दु में प्रवेश करके और उस अग्नि के मुखारबिन्दु का समन्वय बेटा! यज्ञमान के शरीर में जो दम्पति के शरीरों में अग्नियां प्रदीप्त हो रही है उस अग्नि का और यह बाह्य अग्नि का दोनों का समन्वय हो जाता है और वह समन्वय हो करके वह मुनिवरों! सत्ता और शक्ति प्रदान करता रहता हैं।

तो विचार यह होता है, वह उस सत्ता को ले करके दम्पति तो मानो देखो, यज्ञमान अमृतं ब्रह्मे बेटा! देखो, वह पुरोहित जन, मानो देखो, ब्रह्मतव या ऋषितव अपने में मानो देखो, चरू का निर्माण करता है, और वह चरू को अग्नि में प्रवेश करता हुआ, मेरे पुत्रों! देखो, एक चरू बना करके, वह दम्पति को पान भी कराता हैं। तो इसके भिन्न-भिन्न प्रकार के स्वरूप माने गएं हैं। परन्तु देखो, इसी प्रकार यह पुत्रेष्टि याग का एक कर्म हैं। मैं विशेष नही, केवल संक्षिप्त परिचय देने आया हूँ।

अग्निष्टोम याग

मेरे पुत्रों! दूसरा याग एक अग्निष्टोम याग होता हैं अग्निष्टोम याग का अभिप्रायः मानो देखो, जिस समय अकाल आ जाएं, अकाल आ जाएं मानो देखो, पण अकाल भी होता हैं, अनावृष्टि के रूप में भी अकाल आ जाता है, तो राजा का कर्तव्य हैं, कि अग्निष्टोम याग का देखो, निर्माण और देखो, ऐसे बुद्धिमानों को कर्मकाण्डियों को

नियुक्त करके, बेटा! याग का आयोजन होना चाहिए। जिससे वायुमण्डल में मानो देखो, एक एक परमाणु को प्रदान किया जाएं, जिससे वृष्टि का चयन हो जाएं। और वह देखो, वह अनावृष्टि हो, तो उस समय देखो, अग्निष्टोम याग न करते हुए, वाजपेयी करना चाहिए। मानो देखो, जिससे देखो, अनावृष्टि समाप्त हो, अतिवृष्टि के रूप में ये वायुमण्डल मानो देखो, अवृत्तियों में रमण कर जाएं, तो इस प्रकार के बेटा! देखो, कर्मकाण्ड प्रायः हमारे वैदिक साहित्य में आते रहते है। आज मैं बेटा! याग के सम्बन्ध में चर्चा नही, मानो देखो, ऐसे ऋषियों का, भिन्न-भिन्न मानो देखो, उनके कर्मकाण्ड के आधार पर, उनकी नियुक्ति की जाती हैं, और वह अपने में वाजपेयी कहलाते हैं। तो मेरे पुत्रों! देखो, जैसे हमारे यहाँ, वशिष्ठ मुनि महाराज का वर्णन आता है, वशिष्ठ मुनि महाराज हमारे यहाँ बड़े विचित्र माने गएं हैं। जो ब्रह्मवेत्ता कहलाते हैं। ब्रह्मवेत्ता उसे कहते हैं तो ब्रह्म को जानता हैं। मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्म को जानने वाले को, ब्रह्म वेत्ता कहते हैं।

जैसा हमने इससे पूर्व काल में, ब्रह्म की चर्चाएं की, और ब्रह्म की चर्चाएं देखो, महात्मा दधीचि, मेरे पुत्रों! देखो, देखो, दधीचि के रूप में, हमारे यहाँ दधीचि के भी कई प्रकार के स्वरूप माने जाते हैं जो बेटा! आयुर्वेद और ब्रह्म ज्ञान को जानने वाला उसको दधीचि कहा जाता है। दधीची उसे कहते हैं जो मानो देखो, इन दोनों के माध्यम से कुछ मानो पदार्थों को जान करके जो यन्त्रों का निर्माण करता है, उसको दधीचि के रूप में परिणत किया गया है यह हमारे यहाँ दधीचि की उपाधि मानी गई। मेरे पुत्रों! सतोयुग के काल में भी, महात्मा दधीचि रहे हैं। और त्रेता काल में भी दधीचि रहें। उसके मध्य काल में भी मानो देखो, दधीचियों का रूप बना रहा हैं। इसका अभिप्रायः यह, कि हमारे यहाँ वैदिक काल में, वैदिक साहित्य में प्रायः देखो, वह समय-समय पर उपाधि प्रदान की जाती है। जैसे इन्द्र हैं, अश्वपति राजा है इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, एक हमारे यहाँ उपाधि काल माना गया।

तो विचार-विनिमय क्या, मेरे पुत्रों! देखो, मैं दूरी न जाता हुआ, आज तुम्हें उस क्षेत्र में पुनः ले जाना चाहता हूँ, जहाँ बेटा! देखो, दधीचि की चर्चाएं होती रहती थी। महात्मा दधीचि, मेरे पुत्रों! देखो, अश्विनी कुमार वह दोनों ब्रह्म विद्या को प्राप्त करने के लिए, तत्पर हो गएं। और मुनिवरों! देखो, जब अश्विनी कुमारों ने कहा, क्या भगवन! आप ब्रह्मवेत्ता हैं, तो उन्होंने कहा कि मैं ब्रह्मवेत्ता मानो देखो, तो नही हूँ, परन्तु देखो, कुछ वार्त्ता जानता हूँ, ब्रह्म के सम्बन्ध में, मेरे प्यारे! उन्होंने कहा-प्रभु! आप क्या जानते हैं? उसे इसे हमें वर्णन कराईए। तो महात्मा दधीचि ने कहा क्या, मैं केवल इतना जानता हूँ, ब्रह्म के सम्बन्ध में, क्या जिस ब्रह्म के आँगन मे विद्यमान रहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, जब अश्विनी कुमारों ने कहा कि-प्रभु! मैं तो सदैव यह जानता रहा हूँ, जैसे जातकारों ने कहा था एक समय मैं तो इस मानो चन्द्रमा को ही ब्रह्म स्वीकार करता हूँ, उन्होंने कहा नही, ऐसा मत कहो। महात्मा दधीचि ने कहा क्या चन्द्रमा तो ऐसा है, जैसे माता-पिता अपने बालक को शिक्षा देने के लिए तत्पर हो जाते हैं, जैसे आचार्य, विद्यालय में ब्रह्मचारी को शिक्षा देता हैं, मानो ऐसे ही तुम स्वीकार कर रहे हो। क्या यह चन्द्रमा तो मानो अमृत को देने वाला है यह मानो देखो, अन्धकार, रात्रि को अपने गर्भ में धारण करने वाला हैं। इसीलिए मानो देखो, ये चन्द्रमा प्रभु नही हो सकता। यह चन्द्रमा मानो देखो, प्रभु तो परमपिता परमात्मा ब्रह्म, तो वह जो चन्द्रमा में अमृत की धारा को मानो उत्पन्न करने वाला है। और उत्पन्न नही, धारा बन करके रहता हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह ब्रह्मणां ब्रहे मुनिवरों! देखो, अश्विनी कुमारो ने कहा-प्रभु! जब हम आचार्य कुल में अध्ययन करते थे, तो आचार्य कुल में अध्ययन करते हुए हम सूर्य को ब्रह्म को स्वीकार करते थे। क्योंकि यह ब्रह्म इसीलिए है, क्योंकि यह ऊर्ज्वा देता हैं, मानो देखो, यह प्रकाश देता हैं, मानो देखो, महात्मा दधीचि ने कहा क्या हे ब्रह्मचारियों! तुम ऐस मत कहो, क्या यह सूर्य ही हमारा चैतन्य प्रभु है, ऐसा मत कहो, परन्तु चैतन्य तो वह है, जो इसमें वास कर रहा हैं अथवा जो इसको गति दे रहा है, इसमे जो ऊर्ज्वा सत्ता आ रही हैं, वह कहीं से आ रही है, मानो देखो,

वह ऊर्ज्वा का और देखो, ध्रुवं ब्रह्मे ये द्यौ से इसका समन्वय रहता है, जिसका एक दूसरे से समन्वय रहता है यह ब्रह्म कदापि नही हो सकता मानो देखो, सूर्य तो हमें ऊर्ज्वा देता है प्रकाश दे रहा हैं परन्तु जैसे माता-पिता अपने पुत्र को, अथवा पुत्रियों को शिक्षा देते रहते हैं, इसी प्रकार यह भी हमें एक शिक्षाप्रद मानो देखो, सूर्य माना गया हैं। यह सूर्य प्रकाश देता हैं, परन्तु देखो, जैसे निर्माण में सहायक बना हुआ हैं। किसी भी वस्तु को निर्माणवेत्ता यह पृथ्वी के गर्भ में विद्यमान हो करके, यह प्रकाश देता है जैसे माता के गर्भस्थल में शिशु होता है, परन्तु शिशु में वह प्रकाश देने वाला है। परन्तु वह ब्रह्म नही हो सकता।

मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन कराया, तो महात्मा दधीचि ने कहा, मैं तो अग्नं ब्रह्मा व्रते मानो देखो, अग्नि को ही ब्रह्म स्वीकार करता हूँ, उन्होंने कहा ऐसा मत कहो, यह अग्नि तो मानो देखो, अग्नि में अग्नि बना हुआ है वही ब्रह्म कहलाता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने नाना प्रकार की विवेचना करते हुए कहा क्या यह ब्रह्मणं ब्रह्मे व्रते कहलाता है, मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार अन्त में उन्होंने कहा क्या ब्रह्म तो वह है, जो सबमें विद्यमान रहता हैं। मानो देखो, जो जिसमें रहता है, वह उसका आयतन कहलाता है, अथवा जिसका गृह है, तो वह ब्रह्म कहलाता है। मानो देखो, जो सबमें ओत-प्रोत हैं, तो देखो, जैसे माला है, माला में भिन्न-भिन्न प्रकार के मनके होते हैं, परन्तु देखो, उस माला का कोई सूत्र हैं, वह देखो, वह भिन्न-भिन्न मनके तो रूपों में रहते हैं, परन्तु देखो, ब्रह्मणं ब्रह्मे लोकां वाचन्नं ब्रहे वायु सम्भवा लोकाम् मानो देखो, उसी प्रकार यह तो मनके हैं और एक सूत्र है, जिस सूत्र में बेटा! ये पिरोया हुआ सर्वत्र जगत है। वह भी ब्रह्म कहलाता है। हे ब्रह्मचारियों! तुम उस सूत्र को जानने का प्रयास करो। जो मानो देखो, तुम्हारे शरीरों में, सूत्र बन करके, और एक एक अणु और परमाणु को देखो, वह उस सूत्र में वह पिरोया हुआ है, एक माला बनी हुई है, और उस माला को जो धारण करता है, मानो देखो, जो माला के रूप के रूप में माला में जो पिरोया हुआ, जो सूत्र हैं, तुम उस सूत्र को ब्रह्म स्वीकार करो। मेरे प्यारे! देखो, अश्विनी कुमार, अश्विनी कुमारों ने यह वाक् प्रायः स्वीकार कर लिया। उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! बहुत विशाल उन्होंने चर्चाएं की, परन्तु उनमें मैं जाना नही चाहता हूं।

मेरे पुत्रों! देखो, मैं उच्चारण कर रहा था, केवल यहाँ उपाधियों का चर्चाएं मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्म उपाधि प्राप्त करना ब्रह्म की आभा में रत्त रहना मेरे पुत्रों! देखो, मैंने तुम्हें कई कालों में, यह वाक् प्रगट कराते हुए कहा था, चर्चाएं करते हुए कहा था, हमारे यहाँ मुनिवरों! देखो, विश्वामित्र की चर्चाएं आती रहती हैं, और विश्वामित्र और अपने में बड़े वशिष्ठ, और अपने में बड़े देखो, नाना प्रकार के यागों में रत्त रहने वाले रहे हैं। बेटा! आओ, आज मैं तुम्हें इनकी कुछ चर्चाएं करना चाहता हूँ, ये चर्चाएं तो बेटा! मैं किसी काल में वेद का मन्त्र आएगा, तो दधीचि की चर्चाएं तो मैं जब प्रगट करूंगा। परन्तु आज का हमारा जो वेद का वाक्, कुछ हमें प्रेरणा दे रहा था उसी प्रेरणा के आधार पर आज हम तुम्हें कुछ चर्चाएं करने चले हैं। मेरे पुत्रों! महात्मा महर्षि विश्वामित्र, अपने में मानो देखो, प्रियतम। उनके जीवन की एक गाथा मुझे स्मरण आ रही हैं वह गाथाएं मैंने पूर्व कई कालों में बेटा! प्रगट की हैं आज भी मुझे वह स्मरण आ रही हैं।

मेरे पुत्रों! देखो, उसका नाम सुनीति देखो, श्वेत नाम के राजा थे। श्वेत नाम के राजा मानो देखो, वह सदैव अपने में बड़े देखो, प्रभु का चिन्तन करते रहते थे। प्रजा में मानो देखो, सदैव शान्ति और नाना प्रकार के यागों की रचना कराते रहते थे। जैसे अश्वमेध याग हैं, अग्निष्टोम याग हैं, मानो भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का चयन प्रायः करते रहते थे। तो मेरे पुत्रों! देखो, एक समय, यह भ्रमण करते हुए अपनी कुछ सेना के सहित, मुनिवरों! देखो, भ्रमण करते हुए, यह दण्डक वनों में मानो देखो, धनुर्याग में से कहीं विराज रहे थे। मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि श्वेत्ता और देखो, महर्षि कपिल मुनि महाराज के यहाँ एक मानो अश्वमेध याग चल रहा था। वह अश्वमेध याग के याग के

याग और तपस्या

पश्चात उनके यहाँ एक याग का आयोजन हुआ, जिसको हमारे यहाँ धनुर्याग कहते हैं। वह धनुर्याग में से मुनिवरों! देखो, महर्षि कपिल मुनि महाराज के यहाँ धनुर्याग याग होता रहता था। जिसमें बेटा! देखो, जय और विजय दोनों मानो देखो, ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, जिनका अध्ययन मानो देखो, बड़ा विचित्र उनका अध्ययन रहा हैं। तो मुनिवरों! देखो, उस याग में देखो, कुछ सेना के सहित अपने अश्व पर विचरण करते हुए, भ्रमण करते हुए मुनिवरों! देखो, भयंकर वनों में आए, जहाँ मुनिवरों! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज वास करते थे। महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज, अपने में बड़े शान्त मुद्रित थे, ब्रह्मवेत्ता थे। देखो, उस समय, ऋषि-मुनियों का यह नियम बना हुआ था, क्या जिसको यह महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज, ब्रह्मवेत्ता कहेंगें। वही ब्रह्मवेत्ता कहलाएगा। तो मेरे पुत्रों! देखो, वह जब उसके समीप आए, तो उनके यहाँ एक कामधेनु गऊ थी, जो उन्हें महाराज इन्द्र से प्राप्त हुई थी, महाराज इन्द्र ने उनकी शान्ति और ब्रह्मवेत्तातव को धारणा करते हुए महाराज इन्द्र ने उन्हें एक कामधेनु गऊ प्रदान की। मेरे पुत्रों! देखो, कामधेनु गऊ देखो, जैसे वास्तव में बड़े पर्यायवाची शब्दों में भी इसकी विवेचना होती रही हैं। परन्तु गऊ का अभिप्रायः यह है जो दुग्ध देने वाला पशु हो, उसका नाम गो कहा जाता हैं। कामधेनु उसे कहते हैं, जो मानव की कामना की पूर्ति करने वाली हो। ऐसी मानो देखो, वह कामधेनु गऊ, जो महाराज इन्द्र के यहाँ से प्राप्त हुई, तो मुनिवरों! देखो, जब वह महर्षि श्वेत नाम के राजा, जब ऋषि के आश्रम मे आए उनको आसन दिया, सेना का मानो देखो, जो सेना थी, वह भी स्थिर हो गई। मेरे पुत्रों! देखो, कामधेनु गऊ, ऐसी दुग्ध देने वाली मानो देखो, राजा की तृप्ति की और सेना की भी मानो देखो, तृप्ति की उसके दो स्वरूप बनते हैं। हमारे यहाँ एक कामधेनु गऊ पशु हैं, जो मानो देखो, दुग्ध देने वाली। मेरे पुत्रों! देखो, जो संकल्प शक्ति के द्वारा वह तृप्त हो गएं। तृप्त हो जाने के पश्चात, राजा के मन में यह विचार आया, कि ये कामधेनु गऊ तो मेरे राष्ट्र में होनी चाहिए थी मेरे पुत्रों! देखो, राजा, रात्रि समय चिन्तन मनन करता रहा, क्या कामधेनु गऊ को मैं अपने मानो देखो, अपने राष्ट्र मे कैसे इसका पदार्पण हो, मेरे पुत्रों! देखो, राजा यह विचारता रहा, चिन्तन और मनन करने के पश्चात देखो, दिवस आ गया, प्रातःकाल होते ही उन्होंने ऋषि से कहा हे ऋषिवर! आज हम इस कामधेनु गऊ को अपने राष्ट्र में ले जाना चाहते है, यह हमारे राष्ट्र में सुशोभित होगी। उन्होंने कहा राजन्! मेरी आज्ञा तो नही है। क्योंकि यह मेरे द्वारा देखो, इन्द्र की धरोहर है। इन्द्र ने मुझे प्रदान की है, मैं तुम्हें इसे प्रदान नही कर सकूंगा। मेरे प्यारे! देखो, राजा ने कहा-प्रभु! हम अपने क्षत्रिय बल से, इस कामधेनु को अपने गृह में राज कराएगें उन्होनें कहा यह कामधेनु की इच्छा है।

ऐसा उच्चारण करके बेटा! माता अरूणधती और वशिष्ठ अपने में मौन हो गएं। देखो, मौन हो जाने के पश्चात मुनिवरों! देखो, राजा ने अपने सेनापति को आज्ञा दी क्या इस कामधेनु को, अपने राष्ट्र में इसका गमन होना चाहिए। मेरे पुत्रों! जैसे ही वह कामधेनु को लेने, मानो उनको कामधेनु को लेने के लिए गमन किया, तो उस समय जब कामधेनु को गमन कराने लगे, तो माता वशिष्ठ मातं ब्रह्मे व्रतं माता और वशिष्ठ ने दोनों ने एक ही वाक् कहा हे कामधेनु तू इन्द्र की धरोहर हैं, हम तुम्हे आज्ञा नही दे रहे हैं, क्या तुम मानो राज गृह में तुम्हारा वास हो। अब तुम राष्ट्र गृह में प्रवेश करो। मेरे पुत्रों! देखो, कामधेनु ने, अपनी माता से और ऋषि से वाक्यों को पान करके मानो उनका सिंहनी का स्वरूप बन गया, और वह अपने तीखे सिंगों से मानो देखो, सेना को परास्त करने लगी, और उस समय यह नियम था क्या राजा मुनिवरों! देखो, कामधेनु गऊ पर आक्रमण नही कर पा सकते थे, यह एक नियमावली परम्परागतों से निर्माणित मानी गई हैं। मुनिवरों! देखो, जिस समय से जब से सृष्टि का मानो प्रारम्भ हुआ, और सृष्टि के प्रारम्भ के पश्चात, जब से राष्ट्रीय पद्धति का निर्माण हुआ, तो राष्ट्रीय पद्धति में, गऊ पशु का हमारे यहां बडा आदर और हमारे यहाँ उसका बड़ा विशेष मानो देखो, सेवा भाव माना गया हैं। राजा के

सैनिक उसे नष्ट नही कर रहे थे, मानो राजा के सैनिकों को नष्ट करने के लिए वह तत्पर हुई मेरे प्यारे! देखो, सेना और राजा अपने अश्व पर सवार हो करके, वह अपने राष्ट्र को उन्होंने गमन किया। मेरे पुत्रों! देखो, कामधेनु वशिष्ठ के आश्रम में, और उनके चरणों की वन्दना करने लगी। उन्होंने आश्वासन दिया, मेरे प्यारे! कामधेनु अपने आसन पर विद्यमान हो गई। राजा ने अपने मन ही मन में यह विचार-विनिमय किया क्या, ऐसा तो मुझे भी तप करना चाहिए, मानो जिस राजा, जिस देखो, ऋषि का तप इतना विशाल हो क्या मानो देखो, कामधेनु गऊ और पशु भी जिसकी रक्षा करने वाले हों, तो राजा ने अपने राष्ट्र में जा करके यह नियम बनाया क्या मुझे ऐसा तप करना है। अपने मन्त्री गणों को एकत्रित करके बोले हे मन्त्री गणों! मैं तप करने जा रहा हूँ, और ऐसे तप को करना चाहता हूँ जिससे मानो देखो, कामधेनु गऊ, मानो देखो, मेरी रक्षा करने वाली हो। और पशु भी मेरी रक्षा करने वाले हों। मेरे पुत्रों! देखो, यह वाक् मन्त्रियों ने स्वीकार कर लिया। मेरे प्यारे! देखो, वह भयंकर वन में, तप करने चले गएं, और तपों में मानो देखो, अनुष्ठान, उन्होंने किया उन्होंने गायत्री इत्यादि का अनुष्ठान किया, गायत्री का अभिप्रायः यह कि यह जो गाया जाता हों, यू तो प्रत्येक वेदमन्त्र मानो देखो, गान के रूप में गाया जाता हैं मानो वही गायत्री कहा जाता है। तो मेरे पुत्रों देखो, वेदों का उद्गीत गाते हुए, वेदों का गान गाते हुए, गायत्री छन्दों में प्रवेश किया, और प्रवेश करके बेटा! गायत्री क्या उन्होंने बेटा! देखो, लगभग करोड़ो गायत्रियों का देखो, उन्होंने मानसुख जप किया और आनन्दवत मानो मन और प्राण की प्रतिभा एकाग्र करते हुए, उन्होंने बेटा! अपनी साधना की, और साधना करके उन्होंने बारह वर्ष का अनुष्ठान किया, और बारह वर्ष के अनुष्ठान के पश्चात मेरे पुत्रों! ये उन्हें भान हो गया क्या अब तुम तपस्वी बन गएं हो। मेरे प्यारे! वह तपस्या करने के पश्चात, बारह वर्ष का अनुष्ठान करने के पश्चात, देखो, पत्र और पुष्पों का पान करते थे। मेरे पुत्रों! देखो, तपस्वी जब अपने राष्ट्र में आए, तो मन्त्री गणों ने उनका पूजन किया, और पूजन करने के पश्चात मेरे प्यारे! देखो, अगला जब दिवस आया, उन्होंने अश्व पर सवार हो करके, मेरे पुत्रों! देखो, अस्त्रों-शस्त्रों से युक्त हो करके, अश्व पर सवार हो करके वह भ्रमण करते हुए, मेरे पुत्रों! उस वनों में पंहुचे, जहाँ महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज, माता अरूणधती और उनका विद्यालय विद्यमान था। मेरे पुत्रों! देखो, जब वह उनके समीप पंहुचे, अस्त्रों-शस्त्रों से युक्त हैं, ऋषि की उपाधि को प्राप्त करने के लिए, महर्षि विश्वामित्र को दृष्टिपात करते उन्होंने अपना नामोकरण देखो, विश्व का मित्र अपने मन ही मन में स्वीकार किया। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि ने जब दृष्टिपात किया, क्या आज तो राजा विश्वामित्र के रूप में विद्यमान है, वशिष्ठ मुनि बोले कि आओ, आईए, राजर्षि जी! उन्होंने राजर्षि उच्चारण किया, उनके क्रोध की कोई सीमा न रही। मानो देखो, क्रोध छा गया, क्रोध के छा जाने के पश्चात, मेरे पुत्रों! उसने मन ही ब्रह्मे अहा, उन्होंने देखो, उनके पुत्र को, मानो ब्रह्मचारी, जो महर्षि जो श्वाति मुनि महाराज के पुत्र कहलाते थे, उन्हें बेटा! उन्होंने क्रोधाग्नि में मानो देखो, ब्रह्मचारी को मृत्यु का दण्ड दे दिया और जब मृत्यु का दण्ड दिया, क्योंकि राजा थे उन्होंने अश्व ब्रहे वहाँ से उन्होंने गमन किया वहाँ से अपने राष्ट्र में आ गएं, राष्ट्र में आ जाने के पश्चात, उन्होंने अपने मन में विचारा कि यह तूने क्या किया है यह जो बड़ा गृत हो गया। मानो देखो, ऐसा कहा जाता हैं, क्या उनके तीन जन्मों का तप मुनिवरों! देखो, उसमें समाप्त हो गया। मेरे पुत्रों! देखो, जन्मनं ब्रह्मे तपं ब्रह्मा लोकाम् वह बड़े तपस्वी होने से, मानो देखो, तप खण्ड हो गया, विचारने लगे, अगला दिवस आया, चिन्तन मनन करने लगे, मुझे क्या करना हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह एक अभिलाषा बनी हुई थी, कि मुझे ऐसा तप करना है, जिससे मानो पशु और पक्षी भी मेरी रक्षा करने वाले हों। मेरे पुत्रों! देखो, वह पुनः देखो, मन्त्रियों से बोले कि मैं तप करने जा रहा हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, तपस्या करने के लिए पुनः उन्होंने गमन किया, और भयंकर वनों में, दण्डक वनों में जा करके, उन्होंने पुनः तप किया। मेरे पुत्रों! उन्होंने बारह-बारह वर्ष के मानो तीन अनुष्ठान किए। मानो उनमें याग

करना तपों में रहना अग्निहोत्र करना नाना प्रकार के साकल्य मेरे पुत्रों! अग्नि के मुखारबिन्दु में परिणत करना, और गायत्राणी छन्दों का पठन-पाठन करना, वास्तव में गायत्राणी छन्द उसे कहा जाता है, जो गायन रूप में गाया जाता हो, जो माला पाठ में, विसर्ग पाठ, उदात्त और अनुदात्त में जो गान गाया जाता हो मानो देखो, प्रत्येक वेदमन्त्र को बेटा! गायत्राणी छन्दों के रूप में परिणत किया गया हो। हमारे यहाँ यह माना गया हैं क्या हम बेटा! देखो, गायत्राणी, जो गायन के रूप में गाते हैं जो मानो देखो, प्राण को उदात्त में, उदात्त को अनुदात्त में, और अनुदान को बेटा! उदान प्राण में ले जा करके, जो वेदों का गान गाते हैं वह गायत्री के छन्द रूप को जानते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, मैं इस सम्बन्ध में, विशेष चर्चा नही, यह तो बेटा! हमारा एक मूलक विषय रहा है। परन्तु मैं एक विचार देने जा रहा हूँ, मेरे पुत्रों! देखो, जब तीन अनुष्ठान समाप्त हो गएं, वह बेटा! देखो, महान तपस्वी बन गएं, और ऐसे तपों में पुनः बन गएं। क्या मानो देखो, शब्द उच्चारण किया, और उच्चारण करता हुआ वह वायुमण्डल में जब गमन करता था, तो उन शब्दों में चित्र और परमाणु मानो देखो, कि आभा में दृष्टिपात आते रहते थे। मेरे प्यारे! देखो, उनका तपों में उनकी दिव्य दृष्टि बन गई, दिव्यता आ गई और दिव्यता जब आई, तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने तप करने के पश्चात, वहाँ से प्रस्थान किया, और भ्रमण करते हुए, मुनिवरों! देखो, वह भ्रमण करते अपने राष्ट्र में आए, उनके सुधन्वा नामक एक मानो एक मन्त्री थे महामन्त्री उन्होंने कहा कहो भगवन! आत्म ब्रह्मे सम ब्रीहि उन्होंने कहा वाचप्प कृति लोकाः मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने अपनी वृत्तियों में, अपनी वार्त्ता प्रगट की।

ऐसा मुझे स्मरण आ रहा हैं बेटा! क्या राजा ने मानो देखो, ऋषि ने तपस्या की, राजा से ऋषि बन गएं और वह अस्त्रों-शस्त्रों से युक्त हो करके, मेरे पुत्रों देखो, अश्व पर सवार हो करके, वहाँ से उन्होंने गमन किया और भ्रमण करते हुए मुनिवरों! जब वह भंयकर वनों में पंहुचे, तो मुनिवरों! देखो, वही वशिष्ठ मुनि महाराज के आश्रम और वशिष्ठ मुनि महाराज ने कहा, आईए राजर्षि! विराजिए। मेरे पुत्रों! राजर्षि उच्चारण जैसे ही किया, वही पुनः अग्नि जागरूक हो गई। उन्होंने कहा हे ब्राह्मण! तुझे यह बड़ा अभिमान हैं? क्या तू ब्रह्मवेत्ता हैं, मानो देखो, मैं मंगल ब्रीहि वृतं देवाः जब क्रोधाग्नि जागरूक हो गई, परन्तु वशिष्ठ मौन हो गए, अपने में हर्ष ध्वनि हृदय में होती रही। मेरे प्यारे! देखो, विश्वामित्र ने यह निश्चय लिया क्या मैं आज इस ब्राह्मण को मृत्यु दण्ड दूंगा, मानो बेटा! देखो, उनकी वाटिका में, वह शान्त मुद्रा में, अस्त्रों-शस्त्रों से युक्त हो करके, वह विराजमान हो गएं। बेटा! वह दिवस पूर्णिमा का था, पूर्णिमा का चन्द्रमा में अपना प्रकाश दे रहा था, बेटा! प्रकाश हो रहा था माता अरूणधती और वशिष्ठ मुनि महाराज, एक स्थली पर विद्यमान थे, (यहाँ से पुस्तक में से लिया गया हैं) उन्होंने कहा माता अरूणधती बोली कि हे प्रभु! आज तो यह चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त है, षोडश कलाओं वाला चन्द्रमा है यह कैसा भगवन! प्रकाश है जो मानव को अमृत दे रहा हैं। यह कैस अद्वितीय प्रकाश है मानो देखो, अनुम ब्रहे वृतं यह अमृत देता रहा हैं देता रहता हैं और अभी भी दे रहा हैं परन्तु यह प्रतीत होना चाहिए कि यह प्रकाश तो न होने के तुल्य है, अब हम महर्षि की तपस्या को मानो देखो, अंकित करने लगते हैं, और वह प्रकाश उनका कितना अद्वितीय कहलाता हैं। कि यह जो प्रकाश है, चन्द्रमा का न होने के तुल्य हैं, मानो उनकी तपस्या का जो प्रकाश है, चन्द्रमा का न होने के तुल्य है। मानो उनकी तपस्या को मानो देखो, उनकी तपस्या को प्रकाश है वह अद्वितीय कहलाता हैं। प्रकाशमयी कहलाता हैं। मेरे प्यारे! ऋषि कहता हैं कि दिव्या से यह यदि सहस्त्रों चन्द्रमा भी इस प्रकार के प्रकाश देने वाले उदय हो जाएं तो महर्षि विश्वामित्र के तप को आच्छादित नही कर सकते। मेरे प्यारे! महर्षि ने जब यह वाक्य कहा तो माता अरूणधती बोली हे प्रभु! आप भी बड़े विचित्र हैं, आप मानो देखो, (यहाँ से शब्द ध्वनि से लिया गया है) माता अरूणधती बोली की हे प्रभु! आपको अशुद्ध और देखो, अभद्र व्यवहार करते रहता हैं, और आप उनकी प्रशंसा कर रहे हैं, आप भी कैसे विचित्र महापुरूष हैं। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा-

देवी! वे अस्त्रों-शस्त्रों से युक्त हो करके अश्व पर सवार हो करके आते हैं मानो देखो, उनका तप बड़ा नितान्तर है। परन्तु नम्रता की सूक्ष्मता रह गई हैं, जब तक मानव में नम्रता नही आती, जब तक मानो ब्रह्म ज्ञान नही होता, क्योंकि नम्रता तो ज्ञान के और तप के पश्चात विवेक मानो देखो, इस नम्रता का एक आहूत माना गया हैं। दिव्या से मानो देखो, मैं यह स्वीकार करता हूँ, क्या तपस्या अपनी स्थलियों पर बड़ी विचित्र हैं, परन्तु यदि तपस्या के साथ में मानव में नम्रता नही आती, विवेक उत्पन्न नही होता, तो मानो परमपिता परमात्मा जो ब्रह्म है, वह नम्र है, क्योंकि ब्रह्म में अभिमान नही होता, इसीलिए जो ब्रह्म को पाना चाहता है, ब्रह्म में लीन होना चाहता है, उसे अभिमान मानो देखो, अभिमान नही होना चाहिए। ज्ञान का इसी प्रकार का आभूषण होना चाहिए, वह क्रोध की अग्नि नही होनी चाहिए, उसमें क्योंकि-प्रभु! अक्रोध हैं। वह प्रभु नम्र है, शीतल है, वह मानो निरभिमानी हैं, निर संकोच है। हे देवी! वह प्रकाश हैं, अन्धकार से दूरी है। इसीलिए मानो देखो, वह गुण उस मानव में होने चाहिएं।

मेरे प्यारे! देखो, जैसे वशिष्ठ मुनि महाराज ने ये वाक् माता अरून्धती से विश्राम कर रहे थे, तो वह मानो जो विराजमान हो रहे थे, जो मृत्यु दण्ड देना चाहते थे, मेरे प्यारे! अस्त्रों-शस्त्रों को त्याग करके और वह नम्रता से मानो देखो, उनके नेत्रों में अश्रुपात होने लगे, और अश्रुपात होते ही, मुनिवरों! देखो, वह वशिष्ठ मुनि महाराज के चरणों में, ओत-प्रोत हो गएं। हे प्रभु! मुझे क्षमा कीजिए हे प्रभु! मैं आपका वृत्ति हूँ। मानो देखो, वह उसके चरणों में ओत-प्रोत हो गए, तो वशिष्ठ ने कहा आईए ब्रह्मर्षि जी! विराजिए। मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मर्षि की उपाधि प्राप्त की और ब्रह्मर्षि मानो देखो, ब्रह्मं ब्रहे कृतं मुनिवरों! देखो, वह उनके चरणों में ओत-प्रोत हो गएं।

तो विचार-विनिमय क्या आज हमारे इन वाक्यों का क्या ब्रह्मवेत्ता कौन बनता हैं? जो ब्रह्म के गुणों को अपने में धारण करता है, ब्रह्म का सर्वोपरि गुण नम्रता है, ब्रह्म का सर्वोपरि गुण एक ज्ञान है, और ज्ञान में जो विवेक की तरंगें होती हैं, मानो देखो, वही तो बेटा! देखो, ब्रह्मवादी कहलाता हैं।

आओ, मेरे पुत्रों! देखो, आज का विचार हमारा क्या हे मानव! यदि तू उसके समीप जाना चाहता हैं, मानो प्रभु की आभा में रत्त रहना चाहता है, तो मानो देखो, प्रभु के गुण होने चाहिए। एक मानव अग्नि की पूजा करना चाहता है, बेटा! वह अग्नि के गुण उसमें प्रायः होने चाहिए। वह विभक्त क्रिया को ज्ञान और विवेक में अपने में परिणत कर देता है। बेटा! वही तो ब्रह्माग्नि में प्रवेश करके ज्ञान और विवेक में प्रवेश करता हुआ, मानो परमपिता परमात्मा की आभा में निहित हो जाता हैं। मेरे प्यारे! हमारे यहाँ विचार यह चल रहा था विचारों का क्या ब्रह्मणां ब्रहे हमारे यहाँ उपाधि काल माना गया है, हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में उपाधि मानी गई हैं, क्योंकि जो मानव नम्र होता है, और वह उसके गुणों को अपने में गुणी बना करके जैसे उसके गुण है, वैसा उसका उदगार देना बेटा! उच्चारण करना मेरे पुत्रों! देखो, वही तो ब्रह्मवेत्ता बनता है, और वह ब्रह्मवेत्ता उपाधियों को वही प्रदान करता रहता है।

तो बेटा! आज का विचार-विनिमय क्या आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ आज के विचार उच्चारण करने का अभिप्रायः यह क्या हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, मेरे पुत्रों! देखो, परमपिता परमात्मा जो अनन्तमयी हैं। जो जड़ और चेतनता में सदैव निहित रहने वाले हैं, मानो एक-एक परमाणु में सदैव निहित रहते हैं, उस परमपिता परमात्मा को हम सदैव अपने में धारण करते हुए, नम्रता का आभूषण अपनाते हुए बेटा! उस परमात्मा को प्राप्त हो जाएं। यह है बेटा! आज का वाक्। अब समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। ओ३म् ब्रह्म गा वाचन बृविता रथं आभ्यां देवाः आ पा रथम् ओ३म् अग्नं ब्रीहि वाचन आ पा ऋषि वायु गृहिताम्।

३ पराविद्या २७ १२ १९८७

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी प्रसारण होता रहता हैं, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना, मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं, मानो वे पुरोहित है, पराविद्या को प्रदान कराने वाले हैं, इसीलिए वे पुरोहित कहलाते हैं, क्योंकि जितना भी संसार का ज्ञान और विज्ञान हैं, मानो उस परमपिता परमात्मा की एक आभा है, अथवा उसका एक नृत्त हैं, जो प्रायः हमें दृष्टिपात आता रहता है। जितना भी मानवीयतव अथवा जितना भी यह जगत, हमें दृष्टिपात आता रहता हैं। उस सर्वत्रता का निर्माण, अथवा गति और उसको सुसज्जित गति देने वाला, वह अनन्तमयी माना गया हैं। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्रों में, उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन आता रहता हैं, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा वरणीय है, और जो भी मानो उसको अपना वरुण बना लेता है, अथवा उसको वर लेता है, तो इसीलिए प्रायः वह उसी को प्राप्त हो जाता है तो इसीलिए हमे उस परमपिता परमात्मा को, अपना पुरोहित स्वीकार करते हुए, पराविद्या का अध्ययन करते हुए, उस परमपिता परमात्मा की महती में, सदैव निहित हो जाएं। आज का हमारा आज का वेदमन्त्र जहाँ उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन कर रहा हैं, वहाँ एक याग की बड़ी प्रतिभा का प्रायः वर्णन होता रहता हैं, हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के विचारों में एक याग अपनी स्थली पर ऊर्ध्वा में गति करता रहा है, और यह विचारते रहे हैं, कि यह एक याग ही अपने में मानो बड़ा विश्वसनीय विचार और मानव के उदगार और मानव की मानवीयता का वह प्रदर्शन कराने वाला है।

तो हमें उस परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप स्वीकार कर लेना चाहिए क्योकि वह आध्यात्मिक और भौतिक दोनों प्रकार के यागों की प्रतिभा का जो जन्म होता हैं मानो उस आभा में बेटा! वे परमपिता परमात्मा निहित रहते हैं, और जब हम परमपिता परमात्मा को अपने में और बाह्य जगत में और उसके ज्ञान और विज्ञान में, उसे हम दृष्टिपात करते हैं, उसे निहारते रहते हैं, तो मानव की मानवीयता सुचारू रूप से, अपने में नृत्त करती रहती है।

तो आओ, मुनिवरों! देखो, मैं विशेष चर्चा न देता हुआ इस सम्बन्ध में विचार केवल यह कि आज का हमारा वेदमन्त्र कहता है कि यज्ञं ब्रह्मा यज्ञा मानो देखो, याघ करना हमारा कर्तव्य है, आज मुझे कहीं से यह प्रेरणा आ रही है क्या याग के सम्बन्ध में कुछ अपना विचार दिया जाएं। मानो अपने चिन्तन का विषय एक यागमयी माना गया हैं, उसके सम्बन्ध में कोई विचार मानो उसकी आभा का वर्णन होना चाहिए। मुझे कहीं से ये प्रेरणा प्राप्त हो रही हैं, आज बेटा! उस प्रेरणा के आधार पर, मानो देखो, याग का अपने में यागां ब्रहे व्रतम् मेरे पुत्रों! देखो, याग तो मानव को जागरूक करता रहता हैं, वह अपने में आलस्य और प्रमाद से दूरी करता रहता हैं, क्योंकि वह देव पूजा कहलाती है। प्रायः वास्तव में हमारे ऋषि-मुनियों ने बेटा! एकान्त स्थली में विद्यमान हो करके मानो महर्षि याज्ञवल्क्य जैसे मुनियों ने, महर्षि भारद्वाज और भी मानो देखो, सृष्टि के प्रारम्भ में भृगु इत्यादि मुनियों की जब विवेचना आती हैं, तो प्रायः उन्होनें बेटा! देखो, याग क्तु सर्वोपरि माना है और यह कहा कि परमपिता परमात्मा का, यह जो अनुपम राष्ट्र और ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात आ रहा है इस ब्रह्माण्ड में मानो देखो, सर्वत्रता में एक याग हो रहा हैं। यज्ञमान बन करके, अपनी यज्ञशाला में याग कर रहा हैं। मुनिवरों! उन्होंने सर्वोपरि ऐसा विचार दिया, ऋषियों ने, क्या जम्ब्र ब्रह्मे मानो देखो, जितना भी राष्ट्रवाद है, या जितना भी मानव का क्रियाकलाप हैं, उस

क्रियाकलापों में, त्याग प्रवृत्ति मानो देखो, एक याग में परिणत करा देती हैं। मेरे प्यारे! देखो, पंच यागों का, हमारे यहाँ सबसे प्रथम मानो देखो, निर्वाचन किया, और निर्णय करके उन्होंने कहा, सम्भवं ब्रहे पंचम व्रीणि यागाः मानो यह जो पंचक याग हैं यही मानव के देखो, गृह से ले करके मानो देखो, वह पुत्र यागां और मुनिवरों! देखो, राष्ट्र यागां नाना प्रकार के यागों का चयन प्रायः देखो, पंचम यागों में बेटा! ब्रह्माण्ड का चिन्तन किया गया हैं। लौकिक और परलौकिक दोनों ये चित्रण किए गएं हैं सबसे प्रथम, मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मयाग का वर्णन आता है, ब्रह्मयाग, हमारे यहाँ उसे कहते हैं, जहाँ ब्रह्म का चिन्तन किया जाता हैं। और ब्रह्म को सर्वत्रता में दृष्टिपात किया जाएं, वह चिन्तन और मनन जितना भी गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो करके, मानव अध्ययन करता है, आन्तरिक मुद्रा में प्रवेश कर जाता है, तो उसे हमारे यहाँ, ब्रह्मयाग कहा जाता है। ब्रह्मयाग का अभिप्रायः एक और भी हैं, क्या जितना भी ये सृष्टि हमें दृष्टिपात आ रही है, उसमें परमपिता परमात्मा को निहारना और उसी को दृष्टिपात करना, मानो देखो, अपने को उज्ज्वम बनाना प्रभु को दृष्टिपात करना, उसकी सृष्टि को निहारना, मेरे पुत्रों! देखो, ये ब्रह्मयाग माना गया हैं। हमारे यहाँ ब्रह्मयागी जितने पुरूष होते हैं, वह मानो देखो, ब्रह्मयाग में ही दर्शन करते हैं, मेरी प्यारी माता, जब याग में परिणत हो जाती है, तो मानो बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, एक समय माता मलदाल्सा ने महर्षि उद्देत्वर ऋषि महाराज से यह प्रश्न किया, क्या महाराज! जब मैं मानो देखो, अपने अन्तर्हृदय में अन्तर्जगत में जब निहारने लगती हूँ तो मुझे प्रभु की एक चेतना, एक अनूभूति होने लगती हैं, और मैं यह विचारती रहती हूँ, कि मानो देखो, परमाणु, अपने रूप में, परमाणु रूपों का, इसका रूपान्तर होता रहता हैं सूक्ष्म से स्थूल और स्थूल से सूक्ष्मतव मानो देखो, निर्माणित होते रहते हैं। जब मानो मेरे गर्भस्थल में, मानो शिशु होता हैं तो शिशु का जब निर्माण होता है, तो मैं प्रभु को निहारने लगती हूँ, अन्तरात्मा मानो जब अन्तर्हृदय में बाह्य प्रवृत्ति जब अन्तर्हृदय में प्रवेश करती हैं, तो मुझे मानो देखो, अनुपम और अनूठा जगत प्रभु की रचना का, मुझे दृष्टिपात आने लगता है। जैसे एक दूसरा परमाणु, परमाणु में मानो निहार रहा है, और वही परमाणुवाद निहारता हुआ मानो देखो, निर्माण का एक मूल बन करके वही स्थूल रूप में परिणत हो जाता हैं। तो मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि कहते हैं, सम्भवं ब्रहे मानो देखो, उस परमपिता परमात्मा की, अनुपमता कितनी विचित्र हैं, तो मेरे प्यारे! देखो, वह निर्माणां ब्रह्मे देखो, वह ब्रह्मयाग कहलाया गया है। माता के गर्भस्थल में जो पुत्र याग हो रहा है, वैसे ही एक ब्रह्म याग हैं, क्योंकि देवता जन, उसके समीप रहते हैं, देवता ही मानो देखो, सहायक बन करके, और परमपिता परमात्मा की जो चेतना है। वह चेतना बेटा! उसमें प्रवेश हो करके बेटा! उसमें निर्माण हो रहा हैं। जैसे भौतिक विज्ञानवेत्ता एक यन्त्र का जब निर्माण करता है, उसके निर्माण में मानो देखो, एक सूक्ष्मता के स्थूल के आँगन में प्रवेश करता है, सूक्ष्मता को जान करके, स्थूल में प्रवेश करके बेटा! स्थूलता का निर्माण करता है। नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण भी, इसी प्रकार होता रहता है। परन्तु एक वैज्ञानिक से यह प्रश्न किया जाएं क्या यह परमाणुवाद तुमने कहाँ से जाना हैं? तो मानो देखो, उसका भी अन्तर्हृदय यही कहता हैं क्या इसको मैं नही जानता, क्या मेरे परमाणुवाद का मूल क्या है? मानो देखो, उस परमाणुवाद का जो मूल है, वे परमपिता परमात्मा है, चेतना हैं, चेतना ही मानो देखो, स्थूल चेतना को जन्म देती रहती हैं। तो मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने, इस प्रकार वर्णन किया, तो ब्रह्मणे वृतं देवाः तो मुनिवरों! देखो, इसको हमारे यहाँ, ब्रह्मयाग कहते हैं। ब्रह्मयाग का अभिप्रायः क्या है? मुनिवरों! देखो, मानव जब अन्तर्मुखी हो जाता है, और अपनी इन्द्रियों के विषय को मानो देखो, उसको साकल्य कहते हैं, जैसे भौतिक यागी, पुरुष मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार की औषधियों को एकत्रित करता हैं, मानो देखो, हृष्ट और विष्ट इत्यादियों को एकत्रित करके मुनिवरों! देखो, वह याग करता है, वह अग्नि के समीप जाता है, अग्नि के मुखारबिन्दु में प्रवेश करा देता है, इसी प्रकार आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी, मानो देखो, पंच इन्द्रियों के विषयों का साकल्य बना

करके, और उस साकल्य को बना करके एकत्रित करके बेटा! ज्ञान रूपी जो हमारे हृदयों में अग्नि प्रवेश हो रही हैं, अग्नि प्रदीप्त हो रही है, मानो देखो, उमसें पंच इन्द्रियों का साकल्य बना करके, उसमें हूत कर रहा है, उसमें आहुति दे रहा है। मेरे पुत्रों! जो पंच इन्द्रियों का विषय साकल्य एक ही सूत्र में, जब सूत्रित हो जाता है, तो वही सूत्र मेरे प्यारे प्रभु से मानो सूत्रित हो करके मेरे पुत्रों! देखो, एक संसार रूपी माला का विचार हो जाता हैं।

तो विचार वेद का आचार्य कहता है कि यह एक ब्रह्मयाग कहलाया जाता है। तो ब्रह्मयाग का अभिप्रायः बेटा! सबसे प्रथम यागों में ब्रह्मयाग आता है और द्वितीय यागों में बेटा! देव याग आता हैं, देवताजनों का याग बेटा! देवता जनों को हमें प्रसन करना हैं, देवता हमारे कौन है? बेटा! जिन्हें हमें प्रसन करना हैं? मानो देखो, अग्नि में जब हूत किया जाता हैं, नाना प्रकार के साकल्यों का तो बेटा! वायुमण्डल पवित्र हो जाता है, और उस वायुमण्डल के पवित्र होने से, मेरे पुत्रों! देखो, मानव साधना में, अपने को ले जाता है।

साधना का वायुमण्डल

मुझे स्मरण आता रहता है। एक समय कागभुषुण्ड जी ने महर्षि लोमश मुनि से यह कहा कि-प्रभु! मेरी इच्छा ऐसी है, कि मैं भयंकर वनों में अपने को याग में ले जाना चाहता हूँ और याग जब मेरा सिद्ध हो जाएगा, और मानो देखो, मैं साधना अपने में साधक बन करके, मैं परमात्मा को प्राप्त करना चाहता हूँ। महर्षि लोमश जी ने कहा बहुत प्रियतम, महर्षि कागभुषुण्ड जी ने बेटा! देखो, लगभग, बारह वर्षों का एक अनुष्ठान किया, और उस अनुष्ठान में लग गएं, वह याग करते थे साकल्य लाना, गो घृत, दुग्ध के द्वारा वह याग करते थे और उन यागों में विचारो की आहुति साकल्यों के साथ में प्रदान करते, जिससे बेटा! वायुमण्डल पवित्र हो जाएं, क्योकि कोई भी मानव कोई जब साधना में प्रवेश होना चाहता है, साधक बनना चाहता है तो मानो देखो, उसे वहाँ का वायुमण्डल बनाना होगा, वहाँ का वायुमण्डल विचारों से साकल्य के द्वारा हूत से अग्नि द्वारा मानो पवित्र परमाणुवाद से बिखेरना हैं। मेरे पुत्रों! देखो, विज्ञान की आभा में जब हम प्रवेश करते है, विज्ञान के वांगमय में हम प्रवेश करते हैं, तो बेटा! एक विचार मुझे स्मरण आया एक समय उद्दालक गोत्र के शिकामकेतु मुनि महाराज अपने आसन पर विद्यमान थे। याग के पश्चात अपनी दिव्यता, मानो अपनी देवी से बोले कि हे देवी! देखो, यहाँ एक वेद का मन्त्र ऐसा आता हैं। वेद का वाक् आता है क्या महापुरूषणां ब्रहे व्रतं देवा अनुष्ठानां ब्रीहि विश्वकदं ब्रह्मे चित्रा मेरे प्यारे! देखो, ऋषि शिकामकेतु उद्दालक बोले कि हे देवी! वेद की आख्यिका यह कहती है, कि हमारे पूर्वज कहीं मानो देखो, वेद का अध्ययन करते हुए, और विचारों को देते हुए करके याग करते रहें है और वह स्थली मानो कुछ दूरी पर हैं आओ, चलों हम यन्त्रों के द्वारा, उनके विचारों को और उनके चित्रों को मानो हम अपने विचारों में लाना चाहते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, शिकामकेतु उद्दालक ने देखो, अपने पूर्वजों के मानो देखो, पूर्वज जो संसारी में नही थे, बहुत समय चला गया, जब वह संसार से गति कर गएं थे, तो मानो देखो, जो अपने यन्त्र को ले करके वहाँ पंहुचे तो मुनिवरों! देखो, जिस स्थली पर पिचासी वर्षों तक उनके पूर्वज ने एक मानो तपस्या की, वह तपस्या मं ब्रहे मानो वह यन्त्रों के द्वारा उस आश्रम में ले गएं जहाँ वह आसन लग गया। जहाँ मानो देखो, भंयकर वनों में था तो उन्होंने जब चित्र लेना प्रारम्भ किया तो बेटा! उन्हें चित्र प्राप्त हो गएं, वह चित्र यन्त्रों में मानो देखो, निर्धारित किए यन्त्रों में जब वह चित्र दृष्टिपात आने लगे, तो मानो देखो, उनका वायुमण्डल उनके विचार मानो उसमें निहित उनके विचारों की प्रतिभा और उनका जो अणुवाद था, वह उसमें विद्यमान था। मेरे प्यारे! देखो, वह उसी कृतं ब्रहे अब ऋषि अपने आश्रम में उनका चित्रण करते रहे, इसी प्रकार मेरे पुत्रों! देखो, साधक अपने आसन में वायुमण्डल को बनाता है। इसी प्रकार जिस प्रकार यज्ञमान अपनी यज्ञशाला का निर्माण करता है। और यज्ञशाला में मानो देखो, नाना प्रकार के अपने विचारों के साकल्यों को एकत्रित करता है। सबसे प्रथम कोई भी क्रियाकलाप हो संसार का

सबसे प्रथम भूमिका बनती है, और भूमिका के पश्चात अपने क्रियाकलापों में मानव परिणत हो जाता है।

मेरे पुत्रों! देखो, इसी प्रकार महर्षि कागभुषुण्ड जी ने मानो बारह वर्ष के अनुष्ठान करने लगे तो बेटा! एक समय वह याग कर रहे थे, प्रातःकाल में मानो देखो, याग करते-करते सुनीति नाम के, मानो देखो, ऋषिवर जो विद्यालय में, प्रजापति के यहाँ वह विद्या अध्ययन कराते, और ब्रह्मचारियों को शिक्षा देते रहते हैं। एक समय एक ब्रह्मचारी को उन्होनें दण्डित किया, और दण्डित करके इतना दण्डित किया, क्या ब्रह्मचारी और आचार्य दोनों खिन्न हो गएं, खिन्न हो जाने के पश्चात, मेरे प्यारे! देखो, सुनीति नाम के ऋषि, भ्रमण करते हुए वह भंयकर वनों में जहाँ महर्षि कागभुषुण्ड जी, बेटा! जहाँ तपस्या कर रहे थे, मानो अनुष्ठान कर रहे थे, प्रातःकालीन देखो, जब हूत कर रहे थे, उन्होंने उसमें आहुति देना प्रारम्भ किया जब आहुति देना प्रारम्भ किया तो ऋषि कागभुषुण्ड इतने पारायण हो गएं थे, इतना विशाल उनका हृदय बन गया था, क्या वह प्रत्येक आहुति के साथ में, अपनी अन्तरात्मा से मानो आहुति विचार अथवा जो तरंगें जाती थी, उन तरंगों को अपनी अन्तरात्मा में दृष्टिपात करते थे जो वह साकल्य प्रदान कर रहे थे, अग्नि में तो देखो, सुनीति ने जैसे आहुति देना प्रारम्भ किया, मानो देखो, उसके विचार जो खिन्न विचार बन रहे थे, ब्रह्मचारी को दण्ड देने से, बेटा! उन विचारों के चित्र बन करके मानो देखो, वह वायुमण्डल को दूषित करने लगे। जैसे ही मानो देखो, शुद्ध वायु मण्डल का प्रसार हो रहा था, मेरे पुत्रों! देखो, वह ब्रह्मणं ब्रहे जब वह अशुद्ध होने लगे, तो उस समय कागभुषुण्ड जी ने अपने याग को शान्त कर लिया, उन्होंने कहा हे भगवन! हे ऋषिवर! हे बुद्धि वरणं ब्रहे! हे बुद्धि को वरण करने वाले! मानो देखो, यह मैने यह स्वीकार कर लिया है, परन्तु आपकी प्रवृत्ति खिन्न हो रही है, और खिन्न होने से वही रजोगुणी, तमोगुणी जो तरंगें हैं वह इस वायुमण्डल में प्रवेश कर रही है, मेरा अन्तरात्मा उसे पुकार रहा हैं।

मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने सुनीति ने उस वाक् को स्वीकार कर लिया और यह कहा कि प्रभु! वास्तव में ऐसा है तो मेरे प्यारे! देखो, विचार-विनिमय क्या, क्या मैं यह विचार दे रहा हूँ क्या देव याग किसे कहते हैं? जहाँ देवता जनो के सम्बन्ध में, हूत देना और अपने वायु मण्डल को पवित्र बनाना, और अपने अन्तर्हृदय को मानो पवित्रता की वेदी पर ले जाना, इसका नाम बेटा! देव पूजा कहा जाता हैं। जहाँ अग्नि के मुखारबिन्दु में, देखो, स्वाहा कहते हैं, मेरे पुत्रों! देखो, अग्नि परमाणुओं का विभाजन कर देती हैं, अग्नि का ये सर्वोपरि यह गुण माना गया है। जो भी हम साकल्य प्रदान कर रहे हैं, स्थूल स्वाहा उच्चारण कर रहे है, उसका सूक्ष्म रूप बना करके, वह वायु मण्डल में वह द्यौ में प्रवेश करा देते हैं। मेरे प्यारे! देखो, उसके में यदि भिन्नता आ जाती है तो वही विचार भू लोक में प्राप्त हो जाते है। तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन कराया वर्णनं ब्रह्मे कृतं देवाः आचारं ब्रीहि व्रताम् मेरे पुत्रों! देखो, ज्ञान और विज्ञान ये मानवीयता की एक देखो, प्रभु की एक धरोहर हैं, जो मानव के मध्य मे रहती हैं, उसके पश्चात मुनिवरों! देखो, हम देव पूजा में जब परिणत हो जाते हैं उसके पश्चात मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ अतिथि याग होता है, और अतिथि किसे कहते हैं? अतिथि ब्रह्मणं ब्रहे मानो देखो, बुद्धिमानो का एक समूह और बुद्धिमानो का एक सम्मेलन हो रहा है, विचार हो रहा है, और उस विचार-विनिमय करने के लिए कोई बुद्धिमान मानो देखो, निर्वणति आ जाता है, तो मानो वह अतिथि कहलाता है, उसका भोज्यं ब्रह्मे उसको भोज्य कराना मानो देखो, उसे अपने जीवन के कल्याण के लिए नाना प्रकार के प्रश्न और उत्तर करना मुनिवरों! देखो, उत्तर प्राप्त करके ही, मानव का जीवन धन्य बन जाता हैं। तो विचार क्या मुनिवरों! देखो, इसको भोज्य इत्यादि कराना मानो उसके पश्चात बलि वैश्य अमृतं वह पितर याग आता है। तो पितर यागों में बेटा! बहुत-सी वार्त्ताएं आती हैं, पितर यागों में मानो भोज्य कराना ही नही मानो देखो, पितरों की उनकी आज्ञा का पालन करना है, जैसे हमारे आचार्य ऋषि ऋणों से हमारे ऋषि भी पितर कहलाते हैं। हमारे पितरों में, मानो सूर्य भी पितर

कहलाता है, चन्द्रमा भी पितर कहलाता हैं, अग्नि भी पितर कहलाता है, जल भी आपो भी पितर कहलाता हैं, मेरे पुत्रों! देखो, वायु और अन्तरिक्ष भी सब पितर माने गएं हैं। परन्तु देखो, यहाँ ऋषि-मुनि देखो, यहाँ ऋषि पितर कोटि में माने गएं हैं। मैने इसकी विवेचना तुम्हें कई कालों में प्रगट की है। आज भी मुझे स्मरण आ रहे हैं, ये पितर कहलाते हैं। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि अपनी तपस्या में तल्लीन हो रहा हैं, और जिन विचारों को ले करके वह समाज को देता है, और समाज जब उसका अनुसरण करता है, उसकी पालना करता है, तो बेटा! वह पितरों की आज्ञा का पालन हो रहा हैं। मेरे प्यारे! देखो, पितर जन, हमें देते हैं, पितरं ब्रहे मानो देखो, वही पितर जन होते हैं, जो हमारी अन्तरात्मा को, उज्वल और महान बना देते हैं। ऋषि ऋण, मेरे पुत्रों! देखो, हम उन पितरों के ऋणी कहलाते हैं, जिन्होंने देखो, अपने जीवन का मन्थन किया हैं, और हूत कर दिया है उसकी आज्ञा का जो हम पालन करते हैं, तो ऋषियों का ऋण मानो पितरों के ऋणों से हम अवऋण होने जा रहे हैं, और यदि मानो देखो, उसमें हमने पालन नही किया, तो ऋणी बने रहते हैं।

तो संसार में एक दूसरे ऋण से अवऋण होने का नाम मेरे पुत्रों! देखो, इसमें राष्ट्रवाद, उसमें मानववाद, शिक्षावाद, सर्वत्रवाद मानो देखो, उसमें निहित हो जाता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, हम जब यह विचारते हैं कि हमारे अंग संग रहने वाले पशु पक्षी भी हमारे माना देखो, जो भी हमें देते हैं और वह क्या देते हैं वह नाना प्रकार की हमें शुद्धता, पवित्रता और जानकारी प्रदान करा देते हैं। जिसके द्वारा मानव वैज्ञानिक बन जाता हैं नाना पक्षियों की प्रेरणा प्राप्त करता हुआ मानो यानों के द्वारा मानो अन्तरिक्ष में उड़ान उड़ने लगता हैं। मेरे प्यारे! देखो, जलों में जलचर बन करके अपने में देखो, ऊँची उड़ान उड़ने लगता हैं। विचार-विनिमय क्या बेटा! यह प्रेरक हैं, हमें प्रेरणा प्राणियों की भी रक्षा करनी हैं तो मेरे पुत्रों! देखो, उसको हमारे यहाँ, एक साम्यवाद की, एक प्रवृत्ति कहा जाता है, जिसको हम साम्यवाद कहते हैं। साम्यवाद का अभिप्रायः यह है कि क्या हमारा जितना भी मानव का क्रियाकलाप हैं, वह मानो देखो, एक दूसरे से प्रेरणा पाता हुआ, एक दूसरे की सेवा करता हुआ, एक दूसरे के विचारों में तल्लीन होना, मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्म में लीन होना है। ब्रह्म की आभा में परिणात होना है, तो मानो देखो, उसको हम साम्यवाद कहते हैं। संसार के प्रत्येक प्राणी का भाव, उसमें निहित हो जाता हैं। तो मेरे पुत्रों! देखो, मैं तुम्हें विचार दे रहा था, कि यह जो पाचों प्रकार के जो याग हैं, इन यागों में मानो देखो, नाना प्रकार का विश्वव्रता है, और यही हमारे यहाँ साम्यवाद कहलाते हैं। हमारे यहाँ देखो, राष्ट्रीयता में भिन्न-भिन्न प्रकार के राष्ट्रों की तरंगों का जन्म होता रहता हैं, राष्ट्रवाद किसे कहते हैं? विचार आता है कि जहाँ मुनिवरों! देखो, मानव अपंग हो जाता हैं मानव कर्तव्य से विहिन हो जाता है उस समय राष्ट्रवाद का निर्वाचन होता है और राष्ट्रवाद इसीलिए क्योंकि मानव को कर्तव्यवाद में मानो देखो, निहित किया जाएं, और वह कर्तव्यवाद में जब प्राणी निहित हो जाता है तो वह महान एक राष्ट्रवाद कहलाता हैं। उसे साम्यवाद कहते हैं।

तो आज में बेटा! विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नही आया हूँ, यह विचार मुनिवरों! देखो, मैने इससे पूर्व काल में, जो हमारी चर्चा चल रही थी, महर्षि वशिष्ठ और मुनिवरों! महर्षि विश्वामित्र जिनकी यही चर्चा हुआ करती थी, मानो देखो, भंयकर वनों में, विद्यालयों में माता अरूणधती और महर्षि वशिष्ठ मुनि महारजा का यह मानो देखो, पर लोक में जाने का क्या, इस लोक में विज्ञान को जानना, विज्ञान के प्रश्न करना, यह माता अरूणधती का एक कर्तव्य बन गया था। तो मेरे प्यारे! देखो, मेरी प्यारी माताएं, सदैव मानो देखो, सदैव सहयोगी रही है, ज्ञान और विज्ञान में जाने के लिए भी सहयोगिता को मानव इसकी सहायता लेता रहा है, ब्रह्मचर्य व्रत में भी मानो देखो, ब्रह्मवर्चोसि बनने के लिए भी मेरी प्यारी माता मानो सदैव सहयोग देती रही हैं।

तो आज मैं बेटा! देखो, यह विचार देने आया हूँ मुझे वह काल पुनः स्मरण आ रहा हैं मेरे पुत्रों! देखो,

याग और तपस्या

महर्षि विश्वामित्र ने, जब मानो! देखो, ब्रह्म उपाधि को प्राप्त किया, ब्रह्म उपाधि को प्राप्त करने के लिए, वह वशिष्ठ मुनि महाराज के चरणों में विद्यमान रहते, तो मानो उनमें वह नाना प्रकार की शिक्षा देते रहते, मेरे पुत्रों! देखो, एक समय मध्य रात्रि का काल था, और मध्य रात्रि में माता अरूणधती और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज मानो अपनी स्थली पर विद्यमान थे। माता अरूणधती ने ये प्रश्न किया क्या भगवन! मैं यह जानना चाहती हूँ क्या यह जो मानव का बुद्धि स्थल है, और बुद्धि के चित्त का प्रवेश मानो देखो, मन, बुद्धि, चित्त अहंकार का एक चित्र बन करके एकोकी चित्रं बन करके मानो देखो, मानव के जीवन का इससे क्या समन्वय रहता हैं? मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ब्रह्मवेत्ता बोले कि क्या दिव्या से क्या मानो देखो, सबसे प्रथम मन आता है, और मन की दूसरी धारा का नाम बुद्धि कहलाता है, और बुद्धि की तीसरी धारा का नाम मानो देखो, अहंकार कहलाता हैं। सप्त प्रवणं ब्रहे देखो, यह मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार मानो देखो, चित्राणि से आता है मुनिवरों! देखो, अहंकार की प्रवृत्ति बन करके यह चतुष अन्तःकरण कहलाता हैं, जिस अन्तःकरण में मानो देखो, मन की एक दूसरे की धारा एक दूसरे में प्रवेश हो करके, मानो जब ये प्राण में रत्त हो जाती हैं, जब प्राणेश्वर बन जाते हैं, तो मानो देखो, हमें प्रभु का दिग्दर्शन होने लगता हैं। हम प्रभु के दर्शन में लीन हो जाते हैं। तो मेरे पुत्रों! यह जो संसार हमें दृष्टिपात आ रहा है, इससे हमारा उपराम हो जाता हैं।

मेरे पुत्रों! देखो, इस वाक् को ले करके वह दोनों मंगलं ब्रहे माता अरूणधती और वशिष्ठ मुनि की चर्चा कर रहे थे, तो महर्षि विश्वामित्र मानो देखो, वह अपनी स्थली से, वह उनके निकटतम आए, उनकी चर्चाओं का जो मानो स्रोत जो बह रहा था उसे अपने में वह ग्रहण करने लगे तो मेरे प्यारे! देखो, विचार यह आता रहता हैं, मैं इसीलिए इन वाक्यों को उद्गीत रूप में गाना चाहता हूँ, क्या मानव पति पत्नी जब भी अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो परमपिता परमात्मा का यशोगान गान चाहिए, और जब परमात्मा का यशोगान गाते हैं, तो उनके जीवन में सफलता मानो प्राप्त हो ही जाती है।

तो विचार यह आ रहा है बेटा! यह विचारों का याग मानो देखो, मैं याग के सम्बन्ध में, अपने विचार प्रगट कर रहा था, तो यह जो नाना प्रकार के याग, देवपूजा यह मानव को कहीं का कही ले जाती है, नाना प्रकार की आभा में परिणत करा देती है, तो आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, आज बेटा! देखो, मैं विशेषता में तुम्हें नही ले जा रहा हूँ, विचार केवल यह कि बेटा! महर्षि विश्वमित्र, महर्षि वशिष्ठ और माता अरूणधती की चर्चा चल रही थी, उनकी लोक-लोकान्तरों में बड़ी उड़ाने रहती। तो मेरे प्यारे! देखो, आज का विचार यह अब समाप्त होने जा रहा है, अब मेरे प्यारे महानन्द जी अपने दो विचार व्यक्त करेंगें।

पूज्य महानन्द जीः- ओ३म् देवं भद्राः वायु रथं मां रेवाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अथवा भद्र समाज! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी बड़ी अपनी गम्भीर उड़ाने उड़ रहे थे, और वह ऐसी उड़ाने हैं, जब हम इनके चरणों में विद्यमान हो करके प्रायः अध्ययन करते थे तो उस समय याग की ऐसी प्रतिभा, सदैव इनके मुखारबिन्दु से उत्पन्न होती रहती, आज भी हम यह विचार रहे हैं कि जैसे हम अपने उस विद्यालय में विराजमान हैं, जिन विद्यालयों में आचार्य जन, पूज्यपाद अपने ब्रह्मचारियों को शिक्षा प्रदान कर रहे हैं, कितनी ऊँची उड़ाने हैं कि अन्तर्हृदय में मानो चित्रों का आ जाना, यन्त्रों में अपने पूर्वजों के चित्र आना क्रियाकलाप प्रायः यन्त्रों में दृष्टिपात हुए, कैसा विचित्र एक विज्ञान मानवीय क्षेत्रों में, सदैव नृत्त करता रहा है। सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक, कई समय विज्ञान का ह्रस हुआ है, और कई समय विज्ञान का प्रादुर्भाव हुआ, और ह्रस होना प्रादुर्भाव होना, ये प्रकृति का एक स्वाभाविक गुण कहलाया जाता है, मानो ये मानव की प्रवृत्तियों में भिन्न-भिन्न प्रकार की आभाएं जन्म लेती रहती हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने, आज यहाँ हमारी ये विचारधाराओं का प्रसारण हो रहा है,

याग और तपस्या

वहाँ मानो देखो, एक याग को मैं दृष्टिपात कर रहा था। मेरा अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न मानो मैं यह अपने में उद्गीत गा रहा था, क्या ये कृतं क्या यह जो समय चल रहा है, या काल चल रहा है, आज का वायुमण्डल गति कर रहा है, इस वायुमण्डल में भिन्न-भिन्न प्रकार के विचार तो प्रायः होते ही रहते हैं, परन्तु अकारण मुझे दृष्टिपात आता है मुझे वह समाज एक वाममार्ग जैसा हमें प्रतीत होता, मानो जो उल्टे मार्ग पर, समाज या राष्ट्र गति करने लगता है। ऐसा मुझे प्रतीत होता है परन्तु बहुत से प्राणी कहते हैं, क्या मैं विज्ञान का युग है विज्ञान ने बहुत कुछ जाना है। मानो देखो, मैं इस आभा में नही जाना नही जाना चाहता हूँ, क्या विज्ञान ने क्या जाना है, परन्तु विज्ञान यह नही कहता क्या तुम अशुद्ध मार्ग पर ये गति करने लगो विज्ञान कहता है कि तुम विज्ञान का सदुपयोग करो, और विज्ञान के सदुपयोग करने से देखो, राष्ट्र और समाज और मानवतव का कल्याण होता हैं। ये विज्ञान कोई दूरी नही है, परन्तु विज्ञान में जब त्रास होने लगता है, तो विज्ञान एक मृत्यु के मूल में ले जाता है। परन्तु विज्ञान में आध्यात्मिक का आ जाना यह बहुत अनिवार्य है, यह राजा का कर्तव्य है। यह राष्ट्रवाद का कर्तव्य है, क्या वह विज्ञान में, मानो देखो, आध्यात्मिकता का प्रवेश हो जाए पुरातन काल में देखो, जितना विज्ञान का देखो, विज्ञान का जब भी ह्रस हुआ है, उस काल में हुआ है जबकि विज्ञान का दुरूपयोग हुआ हैं और जिस भी काल में विज्ञान का ह्रस हुआ है मानो देखो, उसी काल में अन्धकार आया है, और जब अन्धकार आ गया, तो मानव का क्रियाकलाप शून्यता को प्राप्त होता रहा है।

तो मैं आज इस सम्बन्ध में विशेषता न देता हुआ, विचार क्या कि आज मेरा अन्तरात्मा यज्ञमान के साथ रहता है, हे यज्ञमान! मेरा अन्तरात्मा तेरे साथ रहता है, तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, मानो तेरी मंगलं ब्रहे कामं ब्रीहि व्रतां तेरी मंगलमय कामनाए होती हुई, मानो और तेरे आँगन में शब्दं ब्रह्मे मानो देखो, इस वाममार्ग के काल में, जहाँ प्रत्येक मानव देखो, विज्ञान के देखो, चमत्कार में आ करके, सुरापान कर रहा हैं, सुन्दरियों में लगा हुआ है, मानो जहाँ रक्त का, दूसरे के रक्तों का पान कर रहा है। तो मैं इस काल को प्रायः वास्तव में वाममार्ग का काल कहता रहता हूँ। परन्तु विचार आता है कि इस प्रकार का विचार देखो, आहार और व्यवहार दोनों मानव के पवित्र होने चाहिए और उसमें आध्यात्मिकवाद की मानो देखो, जब तक पुट नही लगती, जब तक मानो देखो, उसका आहार, व्यवहार पवित्र नही होता। तो इसीलिए आहार और व्यवहार ही आध्यात्मिकवाद में ले जाता है, सतोगुण में ले जाता है, और देखो, आहार ब्रह्मे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जब हमें विद्यालयों में अध्ययन कराते रहते थे, और विज्ञान की शिक्षा देते रहते तो आहार मानो देखो, बड़ा पवित्र वायु का सेवन करना और मानो देखो, सूक्ष्म सा स्थूल आहार प्राप्त करना, ग्रहण करना क्योंकि ब्रह्मचर्य को हमें साकार रूप में लाना हैं। तो पूज्यपाद विद्यालयों में प्रायः ऐसा तपस्या में ले जाते, परन्तु देखो, तपश्चरों में विज्ञान, अपने में नृत्त करता रहता था, तो आज क्या मैं इस सम्बन्ध में विचार न देता हुआ, केवल ये क्या मैं सदैव अपने यज्ञमान को, अपने हृदय से हृदय से हृदय का समन्वय विचार केवल यह कि इनके जीवन की प्रतिभा महान बनी रहें, क्योंकि द्रव्य का सदुपयोग करना, देवपूजा के द्वारा मानो देखो, वह विद्या के द्वारा, इसी प्रकार जब देवतव को प्राप्त हो जाते है। तो वह वाममार्ग की प्रथा से ऊर्ध्वा में वह अपनी उड़ाने उड़ने लगता है। तो विचार आता रहता है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो सदैव यह उद्गीत उच्चारण करते रहते हैं, क्या तुम स्नेह से, अपने वाक् प्रगट करो परन्तु मेरा अन्तर्हृदय जब समाज को, काल को दृष्टिपात करता है तो आश्चर्य से चकित हो जाता हूँ। जब मैं राम के काल की चर्चाएं या उससे पूर्व काल की चर्चाएं करने लगते हैं, तो प्रायः अन्तर्हृदय गद-गद हो जाता हैं अभी-अभी मेरे पूज्यपाद साम्यवाद की चर्चा कर रहे थे, साम्यवाद कैसा है, तुम्हारे यहाँ वेदों में कैसा साम्यवाद हैं? यागों में कैसा साम्यवाद है? पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी प्रगट कर रहे थे, सबसे प्रथम देखो, ब्रह्मयाग, ब्रह्म का चिन्तन करना, जिस ब्रह्म ने

हमारे माता के गर्भस्थल में माता का निर्माण किया, और मानव इसमें रहता हुआ, कोई वैज्ञानिक अब तक ऐसा भौतिक विज्ञान में नही हुआ कि आत्मा कहाँ रहता है? मन कहाँ रहता हैं? चित्त का स्थान कहाँ है? बुद्धि कहाँ रहती हैं? परन्तु देखो, यह नही जानता, कितनी नस नाड़ियाँ इस मानव के शरीर में है। परन्तु देखो, नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण कर देता हैं, परन्तु यह परमात्मा ने इस मानव शरीर का आत्मा के रहने के लिए स्थल निर्माणित किया, उस यन्त्र को भी नही जानता, कैसी विचित्रता है। इसमें मानव वास कर रहा है, इसमें मानव नाना प्रकार के क्रियाकलापों में परिणत है, परन्तु देखो, सूचना और आज्ञा चक्र जहाँ देखो, मस्तिष्क में निर्माणत किए हैं, उसे वह नही जान पाता, क्या उसे तरंगें और प्राण देने वाला कौन हैं? परन्तु जब यह विचार आता है तो मेरा अन्तरात्मा यही कहता है, कि कैसा आश्चर्य हैं इसमें मन है, बुद्धि हैं, चित्त है, अहंकार है परन्तु देखो, हृदय हैं, अणुष्ठान स्थलियों में एक आत्म तत्त्व माना गया है। परन्तु देखो, उसकी स्थलियों को जान नही पाता। उसको साकार रूप बना नही पा रहा हैं, यह कैसा विचित्र विज्ञान है, उस मेरे प्यारे प्रभु का, जब प्रभु की महिमा का वर्णन आता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने इन वाक्यों को उद्गीत उद्धारित करने लगते हैं तो मेरा अन्तरात्मा तो सदैव प्रसन्न रहता है परन्तु विचार यह आता है कि एक मानव देखो, यान का निर्माण करता हैं, परन्तु जो मन की उड़ान है, उस उड़ान को अब तक नही जान पाया वैज्ञानिक, कि कितनी उड़ान इस मन की हैं, यह सूर्य लोकों में भ्रमण कर लेता हैं, यह चन्द्रमा में चला जाता है। परन्तु देखो, यही बुद्धि और मन के द्वारा नाना प्रकार की प्रतिभा का वर्णन करता रहता है। परन्तु एक यान बना करके, वह उड़ान उड़ता है, परन्तु जो अपने यहां उड़ान है, उस उड़ान के ऊपर मानव का नियन्त्रण नही हो सका।

तो विचार आता है कि यह कैसा विचित्र उस रचनाकार की रचना हैं, और उसका विज्ञान है, जिस विज्ञान के ऊपर हमारे ऋषि-मुनि अध्ययन करते, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, इसके ऊपर अपना बहुत-सा विचार देते रहते हैं। मैं आज इस सम्बन्ध में, कोई विशेष चर्चा नहीं केवल यह, कि हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, और मेरी ये सदैव प्रेरणा रहती है, क्या गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, गृह में जब भी द्रव्य का दुरूपयोग होता हैं, वो गृह मानो देखो, अन्धकार में चला जाता हैं, और जहाँ गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता है, वह द्रव्य प्रकाश में मानव को पंहुचा देता हैं। तो आज मैं अपने विचारों को विराम देने जा रहा हूँ, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अपने बहुत से विचार दिए, और साम्यवाद की चर्चाएं क्या, याग साम्यवाद है, क्या आज का विचार अब समाप्त अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः- मेरे प्यारे ऋषिवर! मेरे प्यारे महानन्द जी ने अभी-अभी अपने विचार व्यक्त किए, इनके विचारों में बड़ी सार्थकता और मानवीयता का दर्शन होता है। परन्तु जब यह राष्ट्रवाद पर चर्चा करते हैं, तो राष्ट्र का दर्शन होने लगता हैं, परन्तु उनके विचारों में अपने बाल्यकाल और अपने विद्यार्थी काल की वार्त्ता स्मरण आईं। तो आज का विचार अब यह हमारा समाप्त होने जा रहा है। आज के विचारों का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते हुए, इस संसार सागर से पार हो जाएं। यह आज का हमारा वाक् समाप्त। अब वेदो का पठन-पाठन। ओ३म् देवाः यमा रथं भगां आ पा रथं ब्रीहि वरुणा गायन्त्वा। ओ३म् माणांश्चम ब्रौ सर्वा वरुणां आ पा यम मया।

४ अनुशासन १३-०८-१९८८

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का पठन-पाठन कर रहे थे ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहा हैं, जिस पवित्र वेदवाणी में, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा के नाना स्वरूप माने गएं, मानो नामोकरण के आधार पर उसका नामोकरण एकोकी भी आभा में सदैव निहित रहा हैं। परन्तु जहाँ उसके गुणों का गुणवादन किया जाता हैं, मानो वह प्रकृति के एक-एक, कण-कण में व्याप्त रहने वाले हैं। और वह व्याप रहा है, मानो उस परमपिता परमात्मा जो शिवत्रा है, जिसे हमारे यहाँ शिव कहते हैं। प्रायः वास्तव में तो भिन्न-भिन्न प्रकार के पर्यायवाची शब्दों की, हमारे यहाँ विवेचना की जाती हैं। और नाना पर्यायवाची शब्दों का स्वरूप हमारे समीप आता रहा है, परन्तु यदि ये विचारने लगते हैं कि यह जो नाना पर्यायवाची शब्द है, ये अपने में ही मानो नृत्त करते रहे, और मानो परम्परागतों से इसके ऊपर अन्वेषण और अनुसन्धान भी करते रहे हैं। हमारे यहाँ नाना ऋषि-मुनियों का, समाज एकत्रित होता रहा हैं, और वेद के प्रत्येक वेदमन्त्र के ऊपर अनुसन्धान और विचार-विनिमय होता रहा है। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, एक ऐसी विचित्रधारा रची गई, मानों जिस धारा के ऊपर मानव अपने मैं अनुसन्धान, परमपिता परमात्मा का नामोकरण, एक महादेव कहा जाता है, जो देवताओं का भी महादेव है, मानो वो परमपिता परमात्मा का एक गौणिक नामों से वर्णन किया गया है, उस परमात्मा का नाम महादेव है। जो देवताओं का भी देव कहा गया हैं। वह महादेव कहा जाता हैं हमारे यहाँ देवता के सम्बन्ध में, भिन्न-भिन्न प्रकार के पर्यायवाची शब्द आते रहें हैं तो देवता किसे कहते हैं? देवता कहते हैं, जो देता है, और प्रत्येक मानव यह चाहता है कि मैं देवता की पूजा करूं, मानो देवताओं की पूजा का अभिप्रायः तो प्रायः यह आता रहा है, गुणाधानम् ब्रह्मे व्रताः जो जिसमें गुण होता है, उसके गुणों को धारण अपने में करने का नाम, प्रायः यह उसकी पूजा कहलाती हैं। परन्तु पूजा के भिन्न-भिन्न स्वरूप, प्रायः हमारे समीप आते रहे हैं। प्रत्येक वेदमन्त्र मानो देखो, उस अग्नि की धारा पर विद्यमान हो जाता है, और जब वह मानो विशुद्ध हृदय से, वेद का उद्गीत गाता है, तो हृदय से गा रहा है, और जो उसमें गुण है, वेदमन्त्र में, उसको अपना करके, उसे क्रियात्मक बनाने का नाम ही उसकी पूजा कही गई हैं। तो पूजा का अभिप्रायः क्या है? क्या मानो देखो, जो हम उसके गुणों को धारण करें प्रत्येक मानव अग्नि की पूजा करना चाहता हैं, अग्नि को अग्न्याध्यान करके उसकी पूजा कर रहा है। तो पूजा का अभिप्रायः यह है जैसे हमारे यहाँ अग्नि हैं, अग्नि की हमें पूजा करनी है, अग्नि तेजोमयी कहलाती हैं। इसीलिए जितने भी साधकजन होते हैं, वह अग्नि के गुणों को अपने में धारण करने लगते हैं अन्तर्हृदय में, जब वह प्रकाश और अग्नि अपने में जागरूक होती हैं, अग्नि के और भी नाना गुण मानो तेजोमयी मानो उसमें आने प्रारम्भ हो जाते हैं। अग्नि के गुण माने गएं, हमारे यहाँ, जैसे शब्द हैं, वह तेजोमयी कहलाता हैं, परन्तु शब्द भी जब द्यौ लोक में प्रवेश कर जाता हैं। हमारे आचार्यों ने ऋषि-मुनियों ने यह कहा कि वाणी शब्द इतना महान गम्भीर और इतना सुसज्जित होना चाहिए, इतना सजातीय होना चाहिए, वह अग्नि की धारा पर, विद्यमान हो करके वह शब्द द्यौ लोक मे प्रवेश कर जाएं, और द्यौ लोक में मानो उसी से, विद्युत धाराओं का जन्म होता हैं। उसी से उस धाराओं का जन्म होता है जिस धाराओं को, अपने में धारण करते हुए, धारयामि बन जाते हैं। तो मुनिवरों! देखो, यह बड़ा गम्भीर एक विषय बन जाता है। आज मैं तुम्हें गम्भीरता में नही ले जाऊंगा, केवल विचार-विनिमय यह, कि हम प्रत्येक स्थलियों में, एक पूजा का एक बड़ा महत्व माना गया हैं।

हृदय से पूजा

परम्परागतों में बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जहाँ बेटा! देखो, महर्षि उद्दालक और उद्दालक गोत्र में भी एक ऋषि थे, जिनको हम वाजश्रवा कहा जाता था, और वाजश्रवा के जो पिता थे, वह श्वेति वर्णनं कहलाते थे। एक समय श्वाति उद्दालक ने ऋषि ने यह कहा क्या महाराज! हम साधक हैं, और साधना में परिणत होना चाहते हैं। उन्होंने कहा विराजो। वह विराजमान हो गएं। विराजमान हो करके, उद्दालक ने कहा कि हृदय में, तुम्हारे में यह कैसे समाहित हो रही है कि पूजा करें उन्होंने कहा कि वेद का अध्ययन करते रहते हैं, विचार आते रहते हैं, आचार्य जन भी कहते हैं, कि पूजा करो। मेरे प्यारे! देखो, वेदमन्त्र भी पूजा के लिए पुकार रहा हैं। तो उद्दालक ने कहा क्या हे ऋषिवर! पूजा का केवल एक ही अभिप्रायः माना गया है, कि उसके गुणों को अपने में धारण करो। हमारे जो पितरजन हैं, मानो वह उनके गुणों को अपने में धारण करो, जैसे हमारे यहाँ शिव की हमें पूजा करनी हैं, प्रत्येक मानव शिव की पूजा कर रहा है, और शिव को अपने में धारण करना चाहता है। परन्तु विचार आता है, कि शिव किसे कहते हैं? शिव के हमारे वैदिक साहित्य में भिन्न प्रकार के पर्यायवाची शब्द माने गएं हैं। परन्तु मूल में यह जो रक्षा करने वाला है। उसका नाम शिव है। रक्षा करने वाला बेटा! कौन है? जो रक्षा कर रहा है, वे परमपिता परमात्मा हैं। जो यत्र बन करके हमारे को उल्लास में परिणत कर रहा हैं। तो मानो वे परमपिता परमात्मा जो शिव है, वह हमारा कल्याण करने वाले, और वह उसकी पूजा का एक महान द्यौतक कहलाता है, एक महान ब्रह्मणे जो मानो जिसके गुणों की आभा में रत्त हो करके, उसके गुणाधानम अपने में ग्रहण करने लगता है, वह देवता कहलाता हैं। तो मेरे प्यारे! विचार आता रहता है, कि मैंने कई काल में, तुम्हें वर्णन करते हुए कहा था, क्या संसार में जितना भी, संसार में पूजा स्थली है, वह केवल मानव के अन्तर्हृदय के उसका समन्वय रहता हैं। हमारे ऋषि-मुनियों की, एक बड़ी विचित्र देन रही है, इस सम्बन्ध में क्या पिण्ड और ब्रह्माण्ड को एक सूत्र में लाने का प्रयास किया, जो ब्रह्माण्ड में हो रहा है, वह पिण्ड में हो रहा है, जो गति समुद्र में हो रही है, मानव के रक्त में गति हो रही हैं, जो मानो पर्वतीय अस्तो मानो जो गति उनमें हो रही है, वह हमारी अस्थियों में हो रही हैं, तो भिन्न-भिन्न प्रकार क्या ऋषि-मुनियों की बड़ी एक विचित्र देन रही हैं क्या उन्हें व्यष्टि से समष्टि में जाने के लिए परम्परागतों से अनुसन्धान करते रहे हैं। और यह विचारते रहे हैं, कि हम समष्टि से व्यष्टि में, जाने के लिए परम्परागतों से अनुसन्धान करते रहे हैं। और यह विचारते रहे हैं, कि हम समष्टि से व्यष्टि में, प्रवेश हो जाएं। व्यष्टि और समष्टि में कैसे प्रवेश होते हैं? मानो जैसे हमारे नेत्र हैं हमारे नेत्रों में जो प्रकाश आ रहा हैं, वह प्रकाश कैसे आ रहा हैं? कहाँ से आ रहा है? तो यह प्रश्न उत्पन्न होता है। परन्तु स्वरूप उसका वर्णन करते हुए ऋषियों ने कहा, क्या अग्नं ब्रह्मे क्या अग्नि की ज्योति, नेत्रों से आती है, नेत्रों के पिछले विभाग में पीला पटल है, पीले पटल के पिछले भाग में, मानो देखो, एक आकार बना हुआ है, सूर्य जैसा, उसके पश्चात जब वह जाता है, तो वह ज्ञान जो प्रकाश ज्ञानमयी प्रकाश आ रहा हैं, तो आत्मा से आ रहा है। तो आत्मा को उसका द्यौतक हमे स्वीकार कर लेना चाहिए। परन्तु देखो, यह हमारी व्यष्टि से, हम समष्टि में पंहुचे, आत्मा के द्वार पर। मेरे प्यारे! देखो, यह व्यष्टि समष्टि और व्यष्टि से समष्टि में जाना ही, हमारे लिए एक ज्ञान और प्रयत्न की प्रतिभा पराकाष्ठा है। और ज्ञान को त्यागना, ज्ञान में प्रवेश होना हैं। तो मानो देखो, इस प्रकार जब नेत्रों से स्वीकार करते हैं, क्योंकि ये ज्योतिवान है, और ज्योति आ रही हैं, और हमें ज्योतिवान बनना है, तो ऋषि-मुनियों की यही विचित्र देन रही है, कि व्यष्टि से समष्टि में, मानो प्रवेश हो जाना है, और वही हमारा ज्ञानां ब्रहे पूजं गणत्वां मानो देखो, यह उसको धारण करता है, अपने में ग्रहण करने का नाम, वह गुणाधानम कहलाता हैं। तो इसी प्रकार मानो देखो, ये हमारे यहाँ, विचार आता है, कि हम एक स्थली में प्रवेश हो जाएं, और ऋषि-मुनियों के अपने अनुपम विचार दे करके

और अग्नि मानो नेत्रों को कहा गया है और दूसरे रूप में अग्नि देखो, वाणी को कहा गया हैं, यह वाणी ऐसी विचित्र है क्या मानो देखो, पूजा स्वर्ग स्थली बना देती हैं, यही वाणी पाण्डितव बना देती हैं, यही वाणी है, जो हमारी याचना का केन्द्र बना देती हैं। मुझे वह काल स्मरण है पुत्रों! जिस काल में वाणी के कारण, मानव कितनी यातनाओं में परिणत हो जाता हैं। बेटा! त्रेता के काल में जब मैं प्रवेश करता हूँ तो मानो देखो, एक शब्द के कारण कितना भंयकर कितना मानो विशाल संग्राम हो गया था। जब मैं त्रेता के काल में प्रवेश होता हूँ तो मानो देखो, सीता ने एक ही शब्द कहा था जब राम मानो देखो, एक मायावी एक क्रिया असुतो में रत्त होने वाले मृगराज के पिछले भाग में चले गएं, तो मानो देखो, वह समय लक्ष्मण को वह सीता की आभा में रत्त कर गएं, और यह कहा कि तुम रक्षक हो, और रक्षा में तुम्हें रहना है। तो मानो देखो, वह जो बड़े, जब वहाँ से शब्द आया उस शब्द कारण सीता ने अपनी लक्ष्मण से कहा, लक्ष्मण जाओ देखो, अपने विधाता के लिए जाओ, पुकार आई है। तो उन्होंने स्वीकार नही किया। वे ये चाहते थे हूँ कि ब्रह्मणां ब्रहे मानो देखो, मैं तुम्हारी सेवा करूंगा। उन्होंने कहा नही, तो उन्होंने एक शब्द अशुद्ध उच्चारण कर दिया उसके कारण वे यातना में देखो, रावण के वाटिका में यातना ग्रहण करती रही अपने में ग्रहण करती रहीं। तो यह जो शब्द है, यही तो अग्नि का स्वरूप बन जाता हैं। यह शब्द यही शब्द मानव को पाण्डितव बना देता हैं। जब मैं शब्द की विवेचना में प्रवेश करता हूँ, तो मानो वह भी तो शब्द है, जब पाण्डितव विराजमान हो करके, वेद की विवेचना कर रहा है, परमात्मा के गुणों का ध्यान कर रहा है, गुणों में प्रवेश हो रहा है, तो मानो देखो, वह भी तो एक आभा कहलाती हैं, वह भी कोई शब्दायमान हैं, पाण्डितव, वेद का अध्ययन करता है, उसकी विवेचना कर रहा हैं। देवता बन रहा है, ब्रह्मचारी उसी से बन जाता हैं, क्योंकि बिना ब्रह्म ज्ञान के ब्रह्मवर्चोसि नही बनता, तो ये शब्द मानो देखो, बाह्य जगत और आन्तरिक जगत में, जब शब्द प्रवेश करता है, तो अन्तर्हृदय में क्योंकि अग्नि प्रदीप्त हो गई हैं, वह ज्ञान रूपी अग्नि को प्रदीप्त करता हुआ, मानो योग साधना में प्रवेश हो करके वह अपने में अपनेपन का भी भान कर रहा हैं। अपनेपन को ही दृष्टिपात कर रहा हैं। तो वह अग्नि कहलाती है, मानो एक-एक स्वरूप में दो-दो रूपों में अग्नि का हमें भान होता हैं मानो देखो, इसी प्रकार वह भाना ब्रहे वह जो शब्द हैं। वह कहीं पाण्डितव के हृदयों में अग्नि बन करके रहता हैं। कहीं ब्रह्म ज्ञान बन करके रहता है वही राजा के राष्ट्र में देखो, शुद्ध और अशुद्धियों में, मानो अमृतात् होने लगता है, उसके ऊपर जब विचार-विनिमय किया जाता हैं, तो शब्द अपने में ऐसी भंयकर अग्नि है, कि राष्ट्र के राष्ट्र अग्नि के मुखारबिन्दु में चले जाते हैं। मानो देखो, द्वापर के काल में, वह भी तो शब्द ही था, जब इन्द्रप्रस्थ की राजस्थलियां में देखो, राष्ट्र गृह में जो ऐसा निर्माण किया गया था कि जहाँ जलाशय था वहाँ मानो देखो, ऐसा प्रतीत होता था, कि यहाँ जलाशय नही हैं, और जहाँ जलाशय नही था, वहाँ ऐसा प्रतीत होता था कि यहाँ जलाशय हैं। जहाँ जल हैं, वहाँ सुकृतियों में दृष्टिपात आता रहता हैं। देखो, यहीं तो दुर्योधन अवृत हो गया, अपभ्रंश हो गया। तो उसी काल में, द्रौपदी ने कहा था कि अन्धे की सन्तान मानो नेत्रहीन ही रही हैं, शब्द के कारण यह बना कि देखो, विधाताओं में विनाश का एक मूल बन गया।

ये शब्द है यही शब्द मानो देखो, द्रोणाचार्य के शब्दों में परिणत होता हुआ, मानो देखो, जब द्रुपद के यहाँ से देखो, हस्तिनापुर की स्थली पर आ गए तो शब्दों के कारण से ही एक क्रान्ति आई, और वह शब्द ही एक दूसरे के मृत्यु के मूल में प्रवेश हो गए। देखो, जब हस्तिनापुर में विद्या का क्षेत्र बना, तो पितामह भीष्म ने कहा कि हे द्रोण! इस राष्ट्र में जो पुत्र ऋण हैं, यह राज-वृत्तियों में है, राजकुमार है इन्हें आप शिक्षा प्रदान कीजिए, धनुर्विद्या की बेटा! मुझे स्मरण हैं, कि देखो, उन्होंने कहा कि विद्या तो जब मैं इनका निर्णय करूंगा, जो निर्णय में यह आया कि सब अधिकारी तो नही हैं, परन्तु जो प्रतिज्ञाबद्ध हो करके, शब्दों की जो द्रुपद से आए थे, उसकी

पूर्णता करनी थी। इसीलिए उन्होंने यह स्वीकार नही किया। क्या यह नही विचारा द्रोण ने कि इसका अन्तिम परिणाम क्या होगा, इस मानो राष्ट्र गृहों का क्या होगा। मेरे प्यारे! देखो, मुझे ऐसा स्मरण है कि उनको शिक्षा देना प्रारम्भ कर दिया। इस अपनाति अप्रो में अपमान मे आकर के शिक्षा दी, क्योकि उसकी मुस्तिका में लाना हैं। परिणाम यह हुआ, कि वह विद्या दी गई अनाधिकारियों को, जो अधिकारी न थे, अनधिकार चेष्टा हुई। उसका परिणाम यह हुआ, कि एक ही गृह में हस्तिनापुर का राष्ट्र का राष्ट्र अग्नि के मुखारबिन्दु में चला गया। बेटा! आज मैं तुम्हें विशेष विवेचना देने नही आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ गुणाधनम् हमें अपनी वाणी और देखो, जो यह अग्नि है अग्नि के स्वरूप को अपने में धारण करना है, क्योंकि यह शब्द, अग्नि के रूप में विद्यमान हैं। यह शब्द ही देखो, वृत कहलाता है, मानो प्रत्येक इन्द्रियों के ऊपर, जब साधक अपने में संयम कर लेता है अपने में संयमी बन जाता हैं, तो यह संयम आभा में प्रवेश हो करके, उसके गुणों को अपने में धारण करने लगता हैं, और गुणाधानम् बन करके वह मानव देखो, अग्निस्वरूप बन जाता हैं। वह साधना में प्रवेश हो गया हैं।

तो मानो देखो विचार आता रहता है आज हम शिव और महादेव की उपासना कर रहे थे शिव कहते हैं, जो मानो देखो, उसके गुणों की वृत्तियों में रत्त रहता हो, शिव कहते हैं, मेरे प्यारे! पर्यायवाची शब्दों में, शिव नाम राजा का भी है। शिव नाम परमपिता परमात्मा का भी है शिव नाम रजोगुण, मानो शासन करने का नाम भी शिव कहा गया हैं, शिव के बहुत से पर्यायवाची शब्द हैं।

महादेव

परन्तु देखो, महादेव के पर्यायवाची बहुत से शब्द हैं, महादेव कहते है। परमपिता परमात्मा को, जो सब देवताओं का देवता हैं। महादेव आत्मा को भी कहते हैं, क्योंकि महादेव है। उसी के कारण पंचाग्नि अपने में प्रकाश देती रहती हैं, शरीर में आत्मा, महादेव विद्यमान है, यज्ञ को भी महादेव कहते हैं। मानो देखो, ऐसा देव तुम्हारे मध्य में उत्पन्न हो गया हैं। आचार्यों ने वर्णन करते हुए कहा हैं

एक समय मुझे स्मरण आ रहा हैं कि जब एक समय महर्षि शिकामकेतु उद्दलक याग कर रहे थे, तो कहीं से भ्रमण करते हुए, महर्षि शोभनी मुनि महाराज आ पंहुचे, शोभनी मुनि ने कहा कि हे देवतम्! हे उद्दालक! तुम्हारे गृह में, तुम्हारे मध्य में ऐसे एक देवता ने जन्म ले लिया है, ऐसे महादेव का जन्म हुआ हैं, जिसको विचारते-विचारते थकित हो जाओगे। मेरे प्यारे! महर्षि शिकामकेतु ने कहा-प्रभु! वह देवता कौन-सा हैं, जो हमारे मध्य में उत्पन्न हो गया हैं? उन्होंने कहा वह देवता है याग है, वह यज्ञ हैं।

मानो देखो, ऐसा याग है वह यह ऐसा महादेव है, जिसके रूप में मानो चार श्रृंग कहलाते हैं मानो देखो, चार श्रृंग कहलाते हैं सप्त मानो देखो, हस्तवाला है, सप्त हस्तवाला कहलाता हैं, और उसके मानो देखो, चार सिर कहलाते हैं। तो मेरे प्यारे! ऋषि ने कहा-प्रभु! यह कैसे? वेद का मन्त्र कहता हैं चारे श्रृंग जिमि कृतां सप्त होतां ब्रह्मे महादेवः ऐसा वो महादेव हैं, जो सप्त होताओं वाला हैं, मानो देखो, सप्त होता कहते हैं तो सात आहुति देने वाले हैं, उनको मानो होता कहते हैं, और वो कौन-सा देव हैं? मानो देखो, चाम्ब्रह्मणे देवं ब्रह्वा सप्त होता कौन से हैं? बेटा! देखो, यह देवता हैं, जैसे जमदग्नि, वशिष्ठ, आदि ये सर्वत्र देवता कहलाते हैं। यह ऋतुओं का ग्रह-विधान कहलाया गया हैं। मानो देखो, ऐसा महादेव हैं, जो तुम्हारे मध्यम में विद्यमान हो गया है चार श्रृंग है उसके मानो देखो, चृ क्वया यज्ञमान, अध्वर्यु, उद्गाता और ब्रह्मा बन करके यह चार उसके श्रृंग कहलाते हैं, जो सिर है वह उस महादेव की प्रतिभा में निहित रहते हैं, रहा यह कि कृण ब्रह्मेः मानो ऐसा कौन सा देवता है बेटा! वह याग है जो याग ब्रह्मे मानो वेद का मन्त्र कहता हैं ऐसा एक महादेव तुम्हारे मध्य में विद्यमान हो गया हैं, जो देवताओं का भी देवता हैं, जो अग्नि प्रदीप्त हो रही हैं। वह उसका याग का मुख कहलाता हैं और वो देवताओं का चरी प्रदान करने

वाला हैं। इसीलिए पंच हस्त हैं, उसके पाचं हस्त कहलाते हैं। मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या? आलांकारिक विचारों को देते हुए ऋषि ने कहा कि ऐसे महादेव की हमें पूजा करनी हैं। ऐसे महादेव को हमें नमः होना हैं, मेरे प्यारे! देखो, इसीलिए शित्रं ब्रह्मः शिव नाम बेटा! परमात्मा का, शिव नाम आत्मा का है, और शिव नाम राजा का हैं, जो अपना शासन कर रहा है, और शासन प्रणाली में विद्यमान हो करके, मानो देखो, वह अपने में रत्त हो रहा हैं। रहा ये शासनां ब्रह्वे मानो देखो, शिव नाम जब रजोगुण में प्रधीः अर्पणाकृतेः जब हम रजोगुण में अपने में समाहित हो जाते हैं, तो अपने में अपनेपन को ही शासन में अनुशासन में परिणत होते हुए मानो वहाँ योग की अवस्था आ जाती हैं। पांच ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ को जो संयम में लाने वाला हैं वह महादेव कहलाता है वह शिव कहलाता हैं। जो अपने को संयम करता है प्रत्येक इन्द्रियां को वह शिव बन करके अपने में अपनेपन को अपने में ही दृष्टिपात करके मानव मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कर लेता हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार जब वेद का वाक्य, हमे स्पष्टीकरण करता है, उसके ऊपर हमें बारम्बार विचार-विनिमय करना चाहिए। विचारना चाहिए कि हमे देखो, अपने में राजा को भी शिव कहा जाता हैं, कौन-सा राजा शिव हैं? इस सम्बन्ध में मैंने बहुत पुरातन काल में एक विवेचना की हैं बेटा! देखो, उस राजा का नाम शिव कहलाता हैं, जो अपने मे मन, वचन, कर्म को एकाग्र करके देखो, राष्ट्र को ब्रह्मज्ञान को अध्ययन करने वाला हैं और राष्ट्र का पालन करने वाला हैं। जो राजा और प्रजा में अपने में और प्रजा में कोई अन्तर्द्वन्द्व स्वीकार नही करता हैं, वह एकोकीकरण लाने के लिए तत्पर रहता हैं, उस राजा का नाम, शिव कहलाता हैं। जिस राजा के राष्ट्र में प्रजा ऊर्ध्वा विचारों वाली हो, संकीर्णता का मानो देखो, नामोकरण वहाँ नही होना चाहिए। ऐसा जो शिव है वह मंगलं ब्रह्मे वह राजा कहलाता हैं, जिस राजा के राष्ट्र में, देखो, वेदमन्त्रों का उद्घोष हो, और राजा स्वयं उद्घोष करने वाला हो, देखो, ऐसा राष्ट्र महादेव और ऐसा राजा शिव कहलाता हैं। तो हम उस शिव की पूजा करें। पूजा का अभिप्रायः यह कि गुणों को अपने में धारण करें।

परमात्मा के गुण

मेरे प्यारे! परमपिता परमात्मा निरभिमानी हैं, इसीलिए मानव को भी निरभिमानी बन जाना चाहिए। परमपिता परमात्मा मानो, देखो, अमृतं अकाय वह काया में नही हैं वह अकाय है इसीलिए मानव जब चिन्तन की गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो जाएं। तो अन्तःकरण में, आत्मा के क्षेत्र में वह अपने में विचार-विनिमय करने लगे, तो मानो देखो, वह तार्किक बन जाता हैं।

परमात्मा सर्वव्यापक है, कण-कण में व्याप्त हैं, इसीलिए देखो, सर्व भूतेषु मानो सर्वत्रता में उसको दृष्टिपात करता रहे। सब स्थलियों में जब परमपिता परमात्मा को जो दृष्टिपात करने वाला हैं, वह निष्काम कर्मयोगी कहलाता हैं। वह ब्रह्म में समाधिस्थ हो जाता हैं, और ब्रह्म निष्ठ हो करके, परमपिता परमात्मा की प्रतिभा को सर्वतत्रा में दृष्टिपात करता हुआ, अपने में अपनेपन में ही दृष्टिपात करता रहता हैं। मेरे प्यारे! यह एक बड़ा विचित्र विचार है कि जिसको मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था, आज का एक विषय बन गया है, कि विचार बन गया है कि विचार आ गया है कि वेदमन्त्रों ऐसे ही आज मैं बेटा! उन उदगारों को उद्गीत रूप में गाना चाहता हूँ।

अनुशासन का महत्व

विचार-विनिमय क्या, मुनिवरों! देखो, हम यह विचारे कि हमारे यहाँ प्रत्येक इन्द्रियों में जो देवताओं का वास हो रहा हैं, उसे अपने में धारयामि बनाएं और अपने में जैसे हमारे यहाँ अग्नि के स्वरूप है, अग्नि ही तो है जो कहीं शब्द बन करके रहती हैं, वही अग्नि आचार संहिता के रूप में परिणत रहती हैं, जिसे हम अनुशासन कहते हैं,

देखो, जब तब अनुशासन नही आता, तब तक मुनिवरों! देखो, हम साधना में भी ऊर्ध्वा को प्राप्त नही होते। हमारे यहाँ विचार आता है कि अप्रतिं ब्रह्मणां ब्रह्वे मानो ये विचार आता है कि कैसे हम अपने को अपनेपन में प्रवेश कराते रहें? कैसे विचारे? मानो देखो, साधनं अनुशासनम् वेद का ऋषि तो मानो यह कहता है कि अनुशासन होना चाहिए। जो भी इस प्रतिक्रियाओं को, साधना का क्षेत्र है साधना को जो अनुशासन है वह क्या है? बेटा! वहाँ प्रत्येक इन्द्रियों को मानो संयम में लाना, इन्द्रियों के विषयों को जान करके, संयम में लाने कानाम मेरे पुत्रों! देखो, अनुशासन कहलाता हैं। अनुशासन की विवेचना, यौगिक विवेचना तो यही कहलाती है।

गृह में जो प्रवेश होने वाला, गृह स्वामी हैं, और गृह स्वामिनी है वह मानो बाल्य को स्वर्ग मे लाना चाहता हैं साधक साधना में परिणत होना चाहते हैं, तो बाल्य-बालिकाओं के मध्य में वह मानो दर्शनों का अभ्यास करते हुए, अपने में अनुशासित बनते रहें। और बाह्य सांसारिक जगत में भी इसी प्रकार मानो रमण करते रहें जैसे ब्रह्मणां राजा है वह द्वितीय राष्ट्र में गमन करता है और गमन करता हुआ जब रक्षा की सामग्री हैं एक दूसरा उससे प्रश्न करता है तो वह मौन हो जाता है। यदि वह मौन नही होता है, और अपने साकल्य या सामग्री को सबको उद्गीत रूप में गाता हैं, तो राष्ट्र का जो परोक्ष क्रियाकलाप है, वह अपरोक्ष में बन गया, तो राजा उस पर आक्रमण कर सकता हैं। तो इस प्रकार देखो, अपने विचारों को, गोपनीय बनाना हैं ऐसे ही परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में, हम रहते हैं, परमात्मा का जितना भी ज्ञान और विज्ञान है, वह परोक्ष रूप में और कुछ प्रत्यक्ष रूप में विद्यमान है। जो परोक्ष है, वह गोपनीय विषय कहलाता हैं, और जो मानो प्रत्यक्ष है, वह सर्वत्र दृष्टिपात आ रहा है। परन्तु जब अपनी अन्तरात्मा के समीप, इन्द्रियों पर अनुशासन करके, जब तुम प्रवेश हो जाओगे, वे परमपिता परमात्मा का जो सूक्ष्म तरंगों का जन्म होता है, जन्म-जन्मान्तरों की प्रतिभा को ले करके वह उद्गीत रूप में गाता हैं तो मानो वह उसका परोक्ष रूप बन जाता हैं।

प्रत्यक्षं ब्रह्मेः परोक्ष रूपम् मेरे प्यारे! परोक्ष में ही सर्वत्र विज्ञान है। जैसे, मुझे स्मरण आ रहा है कुछ ऋषि-मुनि एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके ये विचारने लगे, उनमें कुछ विज्ञानवेत्ता भी थे, उन्होंने यह विचारा कि परोक्ष रूप क्या हैं? परमात्मा का मानो परोक्ष रूप और प्रत्यक्ष रूप क्या है? प्रत्यक्ष तो प्रायः दृष्टिपात आ रहा है, मानो देखो, मनुष्य उसकी रचना हैं, जगत की रचना है, मानो देखो, चारों प्रकार की सृष्टि की रचना हैं जैसे उदभिज, स्थावर, जंगम, और अण्डज इत्यादि यह सृष्टि है। और यदि परोक्ष रूप में आता हैं, तो कहाँ पंहुचेगा? वे मानो कहीं योग के द्वारा अग्नि को जानेगा, अग्नि के परमाणुओं को लेने के लिए तत्पर होगा और परमाणु का जब वह विभाजन करता हैं एक दूसरे परमाणु को सहकारिता में ला करके, तो परमाणु का जब विकृत रूप बनाता है, तो उसमें से सर्वत्र ब्रह्माण्ड का जन्म होता हैं। उस एक ही परमाणु में ब्रह्माण्ड का जन्म हो जाता हैं, वह ब्रह्माण्ड ही दृष्टिपात आ रहा है। इसी प्रकार, वह इस परमपिता परमात्मा का परोक्ष रूप है। एक-एक मानो देखो, परमाणु में ब्रह्माण्ड सर्वत्र विद्यमान रहता हैं, इसी प्रकार उसका परोक्ष जो रूप है परमपिता परमात्मा का वह गोपनीय हैं। और गोपनीय विषय को मानो देखो, अपनी अन्तरात्मा के, अन्तिम सूत्र, क्षेत्र में ले जाओ। जहाँ आत्म चिन्तन बन सकें।

आत्म चिन्तन क्या है, जहाँ परमात्मा को यह सर्वत्रता में, अनुशासन में कटिबद्ध हो करके दृष्टिपात करता है, उसी पर स्थिर हो जाता हैं उसका नाम अनुशासन कहलाता हैं। प्रत्येक इन्द्रिय, जैसे हमारे यहाँ धिक्कारने लगी, कुदृष्टिपात किया॰ धिक्कारने लगा हैं अन्तःकरण सुदृष्टिपात करने लगा है तो पूजा का एक और स्थल उसे प्राप्त हो गया है। मानो देखो, ऐसे स्वरूप ममें जब हम अपने को दृष्टिपात करते हैं, तो अपने में अपनेपन का भान अप्रत्यक्ष में हम दृष्टिपात करने लगते है। उस अन्तःकरण में जो जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार विद्यमान हैं, उन संस्कारों को

साक्षात्कार करने वाले उसमे जो अगतं ब्रह्मे वह जो गम्भीर संस्कार विद्यमान हैं जन्म-जन्मान्तरों में ले जाने वाले मानो देखो, उनको हमें दग्ध करना हैं उन्हें दूरी करना है तो उसमें पुरूषार्थ की आवश्यकता है।

मुझे एक वाक्य स्मरण आ गया है वह वाक्य मैंने कई काल में तुम्हें प्रगट कराया था कि एक समय महर्षि भारद्वाज गोत्र में एक ऋषि हुए, जिन ऋषि का नाम स्वांगकृति भारद्वाज था, तो स्वांगकृति ने सर्वप्रथम जैसे स्वांग वाली अपनी निद्रा को निन्द्रित किया उन्हें इसीलिए स्वांग कहते थे, परन्तु गति भी उनकी बड़ी विचित्र थी, तो वह अपने आचार्य से एक समय विद्यालय में उद्गीत गाने लगे, कि हे प्रभु! मेरी इच्छा यह है कि मैं भंयकर वनों में जा करके, अपने अन्तःकरण के संस्कारों को नष्ट करना चाहता हूँ। जिससे मैं केवल बन जाऊं। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। विचार प्रिय हैं।

मानो देखो, ऋषि स्वांगकृति ने आज्ञा पा करके, वहाँ से उन्होंने गमन किया और अध्ययन करते हुए सर्वत्रता में विचरने लगे। उन्होंने सबसे प्रथम अहिंसा का पालन किया, स्वाध्याय किया और तप किया। मानो देखो, इस प्रकार उन्होंने नाना प्रकार के दक्षो दक्षिणां ब्रह्मे वृतं यह सर्वत्र करने के पश्चात मुनिवरों! देखो, एक समय उन्होंने संकल्प किया, कि मैं अस्सी वर्ष तक मौन रहूँगा। कोई वाक् नही उच्चारण करूंगा, वार्त्ता करनी हैं तो प्रभु से करूंगा। जब इस प्रकार देखो, ऋषि स्वांगकेतु महाराज ने इस प्रकार अपना संकल्प किया। भयंकर वनों में विद्यमान हैं, और विचार कर रहे हैं वार्त्ता कर रहे हैं प्रभु के गुणों से, प्रभु की सृष्टि को अपने में भान कर रहे हैं, परन्तु अनुशासन में रहते हुए अनुवृत्तियों में गमन करते हुए उन्होंने अस्सी वर्ष तक जब तक मौन धारण किया, तो मौन से वह अन्तरात्मा में चले जाते थे, प्रभु के चिन्तन में तो मानो देखो, वह अन्तर्मुखी बन गए, बाह्य जगत उनसे दूरी हो गया। तो बेटा! उन्होने अपने अनुभव को एक समय हमारे विद्यालय में प्रगट कराया। उन्होंने यह कहा था कि मुझे तीन हजार पांच सौ इक्कसठ जन्मों का स्मरण मानो देखो, उनकी साक्षात्कार मेरे समीप है, और मैं उनको दग्ध करने वाला हूँ, तपस्या के द्वारा, अनुशासन के द्वारा।

तो मुनिवरों! देखो, अनुशासन की बड़ी विचित्र विवेचना हमारे आचार्यों ने वर्णन की हैं, अनुशासन उसे कहते हैं जो जगत बाह्य और आन्तरिक जगत दोनों को जान करके, अन्तर्मुखी बन जाए। मानो देखो, अपने चित्त के मण्डल में जो नाना जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार है उन्हें चित्त पटलों पर दृष्टिपात करने लगे। तो मानो देखा यह वाक्य ऋषि ने वर्णनं ब्रहे मेरे प्यारे! देखो, मुझे ऐसा स्मरण है, ऋषि का यह वाक्य जैसे हमारे समीप आज भी विद्यमान हो। परन्तु देखो, स्वांगकृति ऋषि महाराज ने उदयालकम् व्रणां ब्रहे वृतम् मेरे प्यारे! देखो, भारद्वाज गोत्रीय ऋषि भी बड़े विचित्र रहे हैं। तो विचार-विनिमय क्या? बेटा! ऋषि बड़े अनुसन्धान करता रहता है, अपने को अनुशासन में लाता हैं मानो वेदों का उद्गीत गाता है और वेद प्रभु का जो गुणवादन हो रहा है उन गुणवादनों को अपने में ग्रहण करने वाला है तो ऐसा मानो जो साधक होता है वह साधक परमपिता परमात्मा को प्राप्त होता हुआ मुनिवरों! देखू संसार सागर से पार हो जाता है बेटा! आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नही आया हूं। मानो उसका गुणाधानम् करता रहता हैं बेटा! मैं तो परिचय देने आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नही हूँ केवल आज सूक्ष्म सा परिचय देकर हम चले जाते हैं।

आज मैं तुम्हें एक परिचय दे रहा हूँ इसके ऊपर हमें विचार-विनिमय करना है मेरे पुत्रों! देखो, ऐसे महादेव की हमें पूजा करनी है ऐसे शिव को अपने में गुणाधानम् बना करके शिव के आचरणों को अपने में ग्रहण करते हुए इन्द्रियों पर अनुशासन करना हैं जिससे हम परमपिता परमात्मा की आनन्दमयी पगडण्डी को ग्रहण कर सकें। हमारे जन्म-जन्मानतरों के जो संस्कार हैं उन संस्कारों के आधार पर हमारी जीवन चर्या बनती रहती है और भ्रष्ट होती रहती है। तो इसीलिए उससे हम उपराम हो करके व्यष्टि से समष्टि में प्रवेश हो जाएं।

याग और तपस्या

समष्टि किसे कहते हैं? व्यष्टि किसे कहते हैं? वह इन्द्रियों में समाहित रहती है, जैसे एक मानव मानवीयता के रूप में एक शब्द का उद्गीत गा रहा हैं, वह मानव शब्द का उद्गीत गाता हुआ, अपने में उदधृत हो रहा है, और वह शब्द अपने में मनोवृत्तियों में रत्त हो रहा हैं। वही शब्द जब अन्तर्हृदय में प्रवेश होता है, वही मानो शब्द समष्टि से व्यष्टि में प्रवेश हो जाता हैं। व्यष्टि से समष्टि में, जैसे नेत्रों की ज्योति हैं, वह संसार को दृष्टिपात कर रहा है, और जब वह समाहित हो जाता हैं, तो यह प्रभु का राष्ट्र है, और प्रभु के राष्ट्र में ही मैं यह दृष्टिपात कर रहा हूँ, तो वह संकीर्णता को त्याग करके व्यापकवाद में प्रवृत्ति प्रवेश हो जाती हैं तो इसीलिए व्यष्टि से समष्टि में चला जाता हैं, और समष्टि में इन्द्रियों के साकल्य को एकत्रित करता हुआ वह एकोकी सूत्र और अपने को उसके साथ दृष्टिपात करता हुआ अपने को प्रभु को समर्पित कर देना हैं, मानो देखो, साधक बन करके अपने अन्तर्हृदय में प्रत्येक इन्द्रियों के साकल्य को एकत्रित करता हुआ वह एकोकी रूप बना करके अन्तःकरण में हवि प्रदान करता हैं मानो देखो, अन्तःकरण मे जो संस्कार हैं वे कहीं-कहीं प्रबलता में दग्ध हो जाते हैं, प्रभु की गोद में चले जाने से।

बेटा! मैं विशेष चर्चा न देता हुआ आज का वाक् हमारा क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए अनुशासन में रत्त होकर परमात्मा की पूजा में रत्त हो जाएं परमात्मा के गुणों को अपने में धारण करें। क्योंकि परमात्मा निरभिमानी हैं तो निरभिमानी बन जाना चाहिए। साधक को। परमात्मा मानो अकाय है इसीलिए काया का अभिमान नही होना चाहिए। मेरे प्यारे! परमपिता परमात्मा रचयिता हैं इसीलिए परमात्मा के साथ मे मानो देखो, अपना सहयोग हो रचनं ब्रह्म देखो, रचयिता है हम रचे हुए हैं वह अपने में परिणत्व हो रहा हैं मानो देखो, तो देखो, इस प्रकार से जो परमात्मा के प्रत्येक वेदमन्त्र के ऊपर अन्वेषण करता है अनुसन्धान करता है परमात्मा को उसमें दृष्टिपात करता है उसके गुणों को उसका ज्ञान और विज्ञान उनके समीप आता है तो वह पार हो जाता है।

यह है बेटा! आज के वाक् आज का वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है कि हम परमपिता परमात्मा की उपासना करें। जो परमात्मा के नाना पर्यायवाची शब्द हैं और उन पर्यायवाची शब्दों की विवेचना करते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं यह आज का हमारा वाक्य समाप्त होने जा रहा हैं। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि उस देव की उपासना करके संसार सागर से पार हो जाएं। ओ३म् रथाः माणं वायु गतं रथा वायाः ओ३म् मनु ब्रा यशश्चां देवं गताः वाचन्नमा ओ३म् पृ वरुणा रथं आभ्यां देवाः यम सर्वा यम रथा

५ गृहपथ्याग्नि-पूजन ०९-१०-१९८९

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है।, मानो वो अग्नं ब्रह्मः प्रकाशं भूव्यश्वतं ब्रह्व, वेद की आख्यिका कहती है कि वे परमपिता परमात्मा अग्निमयी ज्योति माने गएं हैं, क्योंकि वह अग्नि, हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की अग्नि बन करके रहती है। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में जब अग्नि के ऊपर विवेचना होने लगती है, तो अग्नि के भिन्न-भिन्न स्वरूप हमारे समीप आने प्रारम्भ हो जाते हैं। मानो यह जो अग्नि है, ब्रह्मग्नि बन करके रहती है, कहीं यही अग्नि गृहपथ्य नाम की अग्नि बन करके रहती है, मानो यही अग्नि, कहीं, मुनिवरो। वैश्वानर नाम की अग्नि बनकर रहती है। मेरे पुत्रो! यही अग्नि है जो, मानो देखो, वैष्णो वृत्ति बनकर के रहती हैं, मेरे पुत्रो! यही अग्नि है, जो अणु और परमाणु के रूप में विद्यमान रहती है। तो विचार-विनिमय क्या? मुनिवरों! देखो, इस अग्नि के ऊपर विचार-विनिमय करना, यह प्रायः हमारा एक कर्त्तव्यवत माना गया है, जिसके ऊपर हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, नाना प्रकार का विश्लेषण और नाना प्रकार की प्रतिभाओं का वर्णन होता रहा है।

आओ, मेरे पुत्रो! हमारा आज का वेदमन्त्र क्या कह रहा है? यह जो गृहपथ्य नाम की अग्नि है, जो मेरे प्यारे! देखो, गृहों में अग्नि प्रदीप्त रहती है, उस अग्नि के ऊपर हमें चयन करना चाहिए। मेरे प्यारे! अमृतां भूत प्रह्लां ब्रह्वे, कहीं से मुझे यह प्रेरणा प्राप्त हो रही है, कि गृहपथ्य नाम की अग्नि के ऊपर कुछ विचार-विनिमय किया जाएं, क्योंकि मुझे कोई न कोई प्रेरणा देता रहता है, और यह संसार का जितना भी प्राणी मात्र है, यह प्रेरक है, प्रेरणा को प्राप्त करता रहता है, अपने क्रियाकलापों में सदैव तत्पर रहता है। तो इसीलिए हम प्रेरणा को प्राप्त करते हुए, प्रेरित होते हुए, मुनिवरों! देखो, प्रेरणा में अमृतां ब्रह्वे हम अपने में ही अपनेपन का ध्यान करते रहते हैं। तो आज हमें कहीं से यह प्रेरणा प्राप्त हो रही है कि याग के ऊपर अपने विचार-विनिमय प्रारम्भ करते चले जाएं, कि हमारी गृहपथ्य नाम की अग्नि क्या कहती है?

महर्षि लोमश मुनि का अग्नि-पूजन-आदेश

मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक मानव अपने-अपने गृहों में वास करते रहते हैं। मुझे स्मरण आता रहता है कि एक समय, बेटा! महर्षि कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमश मुनि अपने आसन पर विद्यमान थे। तो महर्षि लोमश मुनि से एक समय महर्षि कागभुषुण्ड जी ने ये कहा कि-प्रभु अग्नि में अग्नि कौन-सी है, जिसका हम पूजन करें और जिसे हम अपने आचरण में लाए? तो महर्षि लोमश मुनि ने यह कहा कागभुषुण्ड जी से - अग्नं ब्रह्मणः गृहपथ्यां भूयस्तुतं मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा-हे ऋषिवर! संसार में सबसे जो महान अग्नि है, वह गृहपथ्य नाम की अग्नि है। क्योंकि गृहपथ्य नाम की अग्नि से ही गृह उज्ज्वल और पवित्र बना करते हैं, और उसमें वास करने वाले भी महान बनते हैं। तो मुनिवरों! देखो, हमें स्मरण आता रहता है, महर्षि कागभुषुण्ड जी बोले कि -प्रभु! मैं गृहपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करना चाहता हूँ, अथवा अनुष्ठान करना चाहता हूँ। उन्होंने कहा - बहुत प्रियतम! तो मेरे पुत्रो! देखो, महर्षि कागभुषुण्ड जी अपने स्थान पर विद्यमान हो करके वायुमण्डल को पवित्र बनाने के लिए उन्होंने, देखो, अग्नि का चयन किया और उस अग्नि के समीप विद्यमान हो करके याग करने लगें अपने विचारों को, मानो एक धाराएं अग्नि की वृत्तियों में रत्त कराके, बेटा! द्यौ लोक में प्रवेश कराने लगे। वह द्यौ लोक में जाने लगीं,

क्योंकि अग्नि ही एक ऐसी अग्नि है, जिसकी धाराओं पर शब्द विद्यमान हो करके द्यौ में प्रवेश करता रहता है, और द्यौ में स्थित रहता हुआ वो शब्द अग्नि की धाराओं पर, मुनिवरों! देखो, गमन करता है। उस समय अग्नि उस शब्द का अश्व बन करके गमन करता रहता है। मेरे पुत्रो! देखो, जब यह विचार आता रहता है, तो वेद के मन्त्र, अनन्य वेद के मन्त्र इस प्रकार के स्मरण आने लगते हैं, जहाँ ये अग्नि के सम्बन्ध में बहुत कुछ विचार दिए हैं और देखो, यह जो अन्तरिक्ष है, द्यौ है यह सर्वत्र मेरे प्यारे! देखो, शब्दायमान हो रहा है, शब्दों की प्रतिभा में सदैव रत्त हो रहा है। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि कहता है, सम्भव प्रह्वाः तो महर्षि कागभुषुण्ड जी ने, बेटा! अपना अनुष्ठान किया।

अनुष्ठान

जो गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा करने वाले हैं, वे, मुनिवरो। देखो, अनुष्ठान करते रहते हैं। अनुष्ठान का अभिप्रायः यह है कि, वे मानो अपने मन को अग्नि की धाराओं पर, बेटा! शब्द को उसमें ओत प्रोत करा देते हैं और अग्नि का चयन करते हुए द्यौ में प्रवेश हो जाते हैं। इसी प्रकार, मुनिवरों! देखो, गृहपथ्य नाम की अग्नि का एक मूल यह है कि जिस आसन पर मानव को वास करना है, उस वायुमण्डल को हमें अपने अनुकूल बनाना है और वहाँ का दूषित वायुमण्डल, मेरे पुत्रो! देखो, वह सात्विक वातावरण में परिणत हो जाएं, अथवा परिवर्तित हो जाएं। तो ऐसा, मुनिवरों! देखो, वेद का शब्द कहता है। तो विचार-विनिमय क्या? मुनिवरों! देखो, हम यह विचारते रहते हैं कि जब भी, मुनिवरो। देखो, ऋषि-मुनि साध बने हैं, साधना में परिणत रहे हैं, तो साधना के क्षेत्र में भी वायुमण्डल को पवित्र बनाते हैं, कहीं वेदमन्त्रों की ध्वनि के द्वारा, कहीं गायत्रणि छन्दों के द्वारा, कहीं, मेरे प्यारे! देखो, याग-अनुष्ठान के द्वारा वायुमण्डल को देखो, अपने अनुकूल, जैसा भी वो चाहते हैं, उसी प्रकार का वायुमण्डल बनाते रहते है। तो इसी प्रकार, गृहपथ्य नाम की अग्नि का एक स्वरूप माना गया है कि वायुमण्डल का परिवर्तन हो जाना चाहिए। मेरे पुत्रो! देखो, गृहस्वामी-गृहस्वामिनी का जब गृह में प्रवेश करते हैं, तो मुनिवरों! देखो, वे जो अपने आचरण, अपनी महान् धाराओं को अन्तःकरण से और अग्नि से जब समन्वय कर लेते हैं, तो बेटा! देखो, वहाँ का वायुमण्डल पवित्र हो जाता है।

महर्षि भारद्वाज के आश्रम में गृहपथ्याग्नि-पूजन

मुझे स्मरण आता रहता है, शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ भी इसी प्रकार की विचारधारा रही है और स्मरण आता रहता है, बेटा! देखो, रेंगणी भारद्वाज मुनि के यहाँ नित्यप्रति वे, पति-पत्नी, दोनों याज्ञिक बने हुए थे, और प्रातःकालीन, बेटा! देखो, ब्रह्म का चिन्तन करना, ब्रह्म की आभा में रत्त रहना। एक समय, बेटा! वे कहीं, मानो देखो, भ्रमण करने के लिए एक देखो, व्रीहि श्वेत लवणोत्तर राजा के यहाँ, मेरे प्यारे! देखो, उनका गमन हुआ। लवणोत्तर राजा ने, मुनिवरों! देखो, उन्हें भोज कराया और जब भोज कराया तो बेटा! देखो, भोज को प्राप्त करते ही, उनका मन दूषित हो गया और मन मे नाना प्रकार की अशुद्ध तरंगों का जन्म होने लगा। मेरे प्यारे! देखो, देवतवम् उनकी पत्नी शकुन्तका ने कहा-प्रभु! मन भ्रमित हो गया है, इस अन्न के पान करने से। अब चलो, भगवन! इस वायुमण्डल को त्यागकर अपने वायुमण्डल में गमन करेंगे। मेरे प्यारे! ऋषि ने कहा-हाँ देवत्त्वम्! परन्तु ऋषि ने कहा-देवी! मैं राजा से यह प्रश्न तो करूं कि हमने मन में विकृतता क्यों आ गई है? तो मुनिवरों! दखो, वह महर्षि रेंगणी भारद्वाज मुनि उनके समीप पहुंचे, लवणोत्तर राजा से बोले-हे राजन्! यह क्या कारण है, जो तुम्हारे राष्ट्र का हमें दो दिवस हो गएं हैं, अन्न पान पाते-पाते और हमारा मन भ्रमित हो गया है, इसके मूल में क्या है? उन्होंने कहा-प्रभु! इसके मूल में तो कोई वाक्य नहीं हो सकता। उन्होंने कहा -भगवन! हमारा मन दूषित हो गया है, वायुमण्डल हमारे हृदय का, मानो देखो, दूषित-वायु-वृत्तियों में परिवर्तित हो गया है। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा - लवणोत्तर राजा, तुमने अपने यहाँ, जो कलाकृति करते हो, अथवा जो कृषि-उद्गम करते हो, उससे तुमने अन्न नहीं

प्राप्त कराया? उन्होंने कहा-कदापि नहीं। ब्रह्मे ब्रहा, उन्होंने कहा - यह अन्न राजकोष का है। मेरे प्यारे! देखो, वह बोले-हे राजन्! तुमने हमारे मन को दूषित किया है, और हम यहाँ से गमन कर रहे हैं। लवणोत्तर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ और मानो अश्रुपात करने लगे और बोले-प्रभु! मैं तो बड़ा पापाचार में परिणत हो गया हूँ, क्योंकि जिस राजा के यहाँ, या जिस गृहस्थी के द्वार पर एक ब्रह्मवेत्ता का मनत्व, अशुद्धत्व में परिणत हो गया, विकृत हो गया है, यह तो मेरा बड़ा दुर्भाग्य है, भगवन!

मेरे प्यारे! देखो, जब लवणोत्तर, राजा ने ऐसा कहा, परन्तु महर्षि रेंगणी भारद्वाज, उनकी देवी वहाँ से गमन करते हैं और भ्रमण करते हुए जब अपने आश्रम में आ गएं उन्होंने, बेटा! देखो, अन्न को त्यागा और अन्न को त्याग करके वायु का सेवन किया। मानो प्रातःकालीन ब्रह्म का चिन्तन करने लगे। बेटा! देखो, लगभग दस दिवस तक उन्होंनें पुनः वह तप किया। अन्नाद का, वायु का सेवन किया, तो उनकी साधना वृत्तिरूप बन गयी। उनका जो हृदय था, साधना के अनुकूल बन गया, जैसा पूर्व काल में था। मेरे पुत्रो! देखो, दोनों तपस्या में परिणत हो गये। मुनिवरों! देखो, ऋषि ने कहा-हे देवी! तुम्हें यह ज्ञान हो गया है, अथवा नहीं? क्या राष्ट्र का जो अन्न होता है, वह दूषित होता है? और, उस अन्न के प्राप्त करने से, मानो देखो, हमारा आन्तरिक जो गृह है। वह दूषित हो गया है, और हमारा जो गृह है, मानो देखो, इससे भी दूषितपन आया। तो (यदि) हमें अपने वायुमण्डल को ऊँचा बनाना है, तो हमें, मानो देखो, अपनी प्रवृत्तियों को प्रकृति के स्वरूप में परिवर्तित करना होगा। तो बेटा! देखो, इस आभा को ले करके दोनों तपस्वी तपस्या करने लगे।

महर्षि कागभुषुण्ड द्वारा वायुमण्डल निर्माण

मेरे प्यारे! देखो, उनके यहाँ जब वायुमण्डल पवित्र बना तो विचार आया, बेटा! देखो, वे भ्रमण करते हुए एक समय महर्षि रेंगणी भारद्वाज मुनि महाराज, बेटा! देखो, वे सम्भव प्रवाः वृत्तं देवाः वे शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ पहुँचे और उद्दालक के यहाँ पहुंचे और उद्दालक से कहा-हे प्रभु! हमारी - ऐसी वृत्ति बनीं, इसका क्या कारण है? उन्होंने कहा - अन्नादब्रह्वे तरंगें ब्रहिस्ताः यह जो अन्न है, इसी से तो मन की उत्पत्ति होती है और, मन से, देखो, तरंगें उत्पन्न होती रहती हैं, अन्न के द्वारा ही। इसलिए तुम अपने में तपस्वी होओ। तो मेरे प्यारे! उन्होंने कहा - चलो, भगवन्! आज गमन करते हैं। महर्षि कागभुषुण्ड जी अपने में अनुष्ठान कर रहे हैं, उनके आश्रम में चलते हैं। अनका अनुष्ठान कैसा हो रहा है? मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने वहाँ से गमन किया और गमन करते हुए, जब शिकामकेतु उद्दालक के गृह में प्रवेश किया, तो शिकामकेतु उद्दालक ने उनका स्वागत किया और स्वागत करने के पश्चात् उन्होंने कहा - कहो, भगवन! ब्रह्मणे व्रहा सम्भवे् लोकाम् उन्होंने कहा -प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं कि, आपका अनुष्ठान कैसा हो रहा है? गृह का आसनम् ब्रह्वे आसन को तुम पवित्र बना रहे हो, मानो यह हमारा अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न हो रहा है, भगवन! मेरे प्यारे! कागभुषुण्ड जी ने कहा-प्रभु! यहाँ अभी देखो, जो इससे पूर्व, जो दिवस समाप्त हो गया है, रेवस मुनि महाराज देखो, मेरे आश्रम में पधारे थे और रेवस मुनि महाराज ने, मानो देखो, जैसे विद्यालय में रजोगुण-तमोगुण में सने हुए विचारों को ले करके, वे याग में जब आहुति प्रदान करने लगे, तो उनकी तरंगें मुझे अग्नि की धाराओं पर दृष्टिपात आने लगीं। अग्नि नाम, बेटा! विचारों को भी कहते हैं, जहाँ अग्नि काष्ठ मे रहने वाली है, वही अग्नि देखो, यज्ञशाला के स्वरूप में विद्यमान रहती है, वहीं अग्नि, मेरे प्यारे! देखो, मानव के विचारों में निहित रहती है। इसलिए विचारों को पवित्र बनाना हमारे लिए बहुत अनिवार्य है।

गृह को स्वर्ग कैसे बनाएं?

मेरे प्यारे! देखो, गृहस्वामी और गृहस्वामिनी अपने गृह को पवित्र बनाना चाहते हैं, तो मेरे प्यारे! वे गृहपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करते हैं। जिस गृह में, मुनिवरों! देखो, माता-पिता यह चाहते हैं कि महारी जो संतान है,

अथवा पुत्र-पुत्रियाँ हैं, वे पवित्र बन जाएं, तो बेटा! देखो, माता-पिता को वैसा आचरण करना होगा। उस अग्नि का पूजन करना होगा, अपने गृह को पवित्र बनाना होगा। मेरे प्यारे! देखो, जिस क्रियाकलाप को माता-पिता करते हैं, उन्हीं क्रियाकलाप को पुत्र-पुत्रियाँ किया करते हैं। बेटा! यदि, माता-पिता गृह में अग्नि का चयन करते हैं, तो पुत्र-पुत्रियाँ भी करते हैं और, देखो, उस गृह में मानो कलह रहता है, तो पुत्र-पुत्रियाँ भी कलह के वातावरण में परिणत हो करके गृह, मानो देखो, आपत्ति-वृत्तियों के रूप में परिणत हो जाता है। तो मेरे प्यारे! इसलिए वेद का ऋषि कहता है कि गृह में मानो कलह नहीं रहना चाहिए, उस गृह में देखो, एक दूसरे के मानवीयता का और परमपिता परमात्मा का स्मरण रहना चाहिए, दर्शनों का अध्ययन होना चायि। माता-पिता याग करते हैं, तो बाल्य-बालिका में भी उसी प्रकार की प्रवृत्ति बन जाती है। माता-पिता यदि, द्वेषाम्भविस्तुतं क्रोधा ब्रहे वे अपने में, मानो देखो, अग्नि के सम्म्ब्रह्निः आपने हृदय को बना लेते हैं, तो उसी प्रकार का गृह बन जाता है। क्योंकि, गृह तो, मुनिवरो। देखो, गृहस्वामी और गृहस्वामिनी के आधार पर निहित रहता है।

आओ, मेरे प्यारे! देखो, मैं विशेष विचार नहीं दूंगा, क्योंकि देखो, यमाचार्य ने भी यही कहा है, जब नचिकेता से यह प्रश्न आया कि, स्वर्ग किसे कहते है? तो यमाचार्य ने यह कहा था- पूजन करने का नाम, मुनिवरों! देखो, बृह्ने सम्भव प्रवाः, वह स्वर्ग कहलाता है। उन्होंने स्वर्ग की कल्पना करते हुए कहा है-एक स्थान में देखो, कलह रहता है, वह नार्किक बन जाता है, वह गृह और, एक गृह में दर्शनों का अध्ययन, अग्निहोत्र, ब्रह्म का चिन्तन और मुनिवरों! देखो, एक दूसरे में प्रीतियुक्त रहने वाला समाज है, वह गृह स्वर्ग कहलाता है। हमारे यहाँ स्वर्ग और नार्किकता की, दोनों की कल्पना करने वाले ने वेद का अध्ययन करते हुए कहा है कि गृहस्वामी, अमृतं ब्रह्मा बृत्ते, बेटा! देखो, गृहस्वामी और गृहस्वामिनी यदि दोनों प्रसन्न रहते हैं, तो बाल्य-बालिका, प्रसन्न हैं और गृह का वायुमण्डल भी प्रसन्न है। मेरे प्यारे! देखो, वह स्वर्ग और महानता की प्रतिभा कहलाती है।

हमारे यहाँ आचार्यजन जब, बेटा! देखो, इस गृह को, यह तो एक बहुत ही सूक्ष्म गृह है, जब परमात्मा के राष्ट्र और गृह में चले जाते हैं वहाँ, मुनिवरों! देखो, ब्रह्मज्ञान का अध्ययन करते हैं, और ब्रह्मज्ञान में जब परिणत हो जाते हैं, ब्रह्मज्ञान में जब, मेरे प्यारे! वायुमण्डल को जब वायुमण्डल को जब पवित्र बनाते रहते है, और उस वायुमण्डल में जब ऋषि-मुनि साधना में परिणत होते हैं, वे साधना में परिणत हो करके, साधना के क्षेत्र में प्रवेश हो करके, अपनी गौ नाम की इन्द्रियों को वे संयम मे ला करके, परमपिता परमात्मा के क्षेत्र में वह अभ्योदय हो करके, बेटा! वे सागर से पार हो जाते हैं।

हृदय की प्रसन्ना का महत्त्व

आओ, मेरे प्यारे! मैं आज साधना के सम्बन्ध में तुम्हें कोई चर्चा देने नहीं आया हूँ, विचार-विनिमय यह देने के लिए आया हूँ कि हमें आज के वेदमन्त्र यह कह रहे थे कि, गृह को ऊँचा बनाना है, गृह को पवित्र बनाना है, तो गृहस्वामी और गृहस्वामिनी को चाहिए वह अपने, मानो देखो, वेदां अमृता अध्यानां स्वतप्रवाः, क्योंकि वेद का अध्ययन करें और दर्शनों की मीमांसा करके अपने हृदय को सदैव प्रसन्न रहने दें और प्रसन्नता ही, मानो देखो, आत्मा को मौलिक गुण है। और, और वह जितना प्रसन्न रहेगा, उतना मानव का अन्तर्हृदय पवित्र रहेगा और जितना हृदय पवित्र रहेगा उतना ही हम परमपिता परमात्मा के निकट चले जाएंगे और ज्ञान और विज्ञान की कुंञ्जियों को हम जानने लगेंगे। आओ, मेरे प्यारे! देखो, विचार-विनिमय क्या? विचार आता रहता है कि हम, मुनिवरों! देखो, अपनेपन की धाराओं को विचारते हुए परमात्मा के निकट पहुंचे।

गाड़ीवान रेवक का गृह

मुझे स्मरण आता रहता है, एक समय, बेटा! देखो, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज आपने आसन पर

विद्यमान थे। मेरे प्यारे! देखो, महाराजा ज्ञानस्वरूपी, जो अयोध्या में राज्य करते थे, बेटा! एक समय, वे महाराजा ज्ञानस्वरूपी के द्वार पर पहुंचे और गाड़ीवान रेवक मुनि महारा ने उनका स्वागत किया-आइये, राजन्! ते ज्ञानस्वरूपी ने यह कहा-हे प्रभु! यह आपका गृह कैसा है? तो उस समय ऋषि ने कहा कि-भगवन! मेरा जो गृह है, इसमें मैंने तपस्या की है, यह तपस्या का क्षेत्र है। मेरे प्यारे! देखो, राजा ने कहा-प्रभु! यह आपका गृह कैसा है? उस समय ऋषि गाड़ीवान रेवक मुनि ने कहा-मुझे एक सौ पांच वर्ष तपस्या करते हो गएं हैं। इसी गाड़ी के नीचे, मैंने अपने गृह को जाना है। यही मेरा गृह है और मेरे एक सौ पांच वर्ष देखो, तपस्या में परिणत हो गएं है, ब्रह्मज्ञान को जानता रहता हूँ, इसीलिए मेरा जो गृह है वह, मानो देखो, तरंगों से तरंगित हो रहा है, मेरे पुत्रो। देखो, पुनः राजा ने ऋषि से प्रश्न किया- हे भगवन! यह आपका कैसा गृह है? उन्होंने कहा - मेरा गृह ऐसा है, जिसमें, मानो देखो, ब्रह्म की आभा प्राप्त होती रहती है, ब्रह्मज्ञान की तरंगे मुझे तरंगित करती रहती है, उन तरंगों का मैं अमृत बना करके पान करता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, राजा ने कहा, ऋषि से-आप को धन्य है! उन्होंने कहा - भगवन! आपका जो यह गृह है, यह कैसा है? उन्होंने कहा -प्रभु! मेरा यह गृह, एक गाड़ी है, उसके नीचे जीवन को व्यतीत कर रहा हूँ, मैं स्वर्ग और मानवीयता की इसमें तरंगो को परिणत कर रहा हूँ और वे तरंगे, मानो देखो, मेरे मनस्त्व, प्राणत्त्व और मेरे इस आश्रम को महानता में परिणत कर रही है। अभ्यं ब्रह्मः बृतं देवाः वैदिक ऋषि कहता है-हे राजन्! तुम्हें भी अपने राष्ट्र को ऐसा ही बनाना है। यदि राजा का राष्ट्र ऐसा बन गया है, तो राष्ट्र पवित्रत्त्व को प्राप्त हो गया है। मेरे प्यारे! देखो, राजा ने पुनः प्रश्न किया कि -महाराज! यह आपका कैसा गृह है? उन्होंने कहा -हे भगवन! मेरा ऐसा गृह है कि दार्शनिक आयेंगे और दार्शनिक मेरे से प्रश्न करेंगे और वे तरंगे मुझे स्पर्श करके, मैं उन दर्शनों के प्रश्नों का उत्तर दे सकूंगा। मेरे प्यारे! देखो, गृह और स्थली में यही तो विचित्रता होती है, जहाँ का वायुमण्डल मानो ब्रह्मज्ञान से परिणत हो जाता है, वायुमण्डल पवित्र बन जाता है, वहीं तो प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है, ऋषि की, मानो देखो, तरंगे, वहाँ तरंगित रहती हैं।

मुझे स्मरण आता रहता है, एक समय, बेटा! देखो, अमृतां भूतप्रवाः लोकां, मेरे प्यारे! देखो, ऋषि कहता है कि -प्रभु! एक समय हम मगध राष्ट्र में पहुंचे, एक आचार्य के समीप और भ्रमण करते हुए जब मगध राष्ट्र में पहुंचे, तो मगध राष्ट्र में एक कात्यायन के गृह में रात्रि समय हमने विश्राम किया और जब रात्रि समय विश्राम किया, तो कात्यायन ने जब प्रातःकालीन याग किया, तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव से यह प्रश्न किया कि-महाराज! आपको मेरा गृह कैसा प्रतीत हुआ? तो पिता ने, मेरे आचार्य से यह कहा कि-तुम्हारा गृह बड़ा विचित्र है। यहाँ, मानो देखो, परमपिता परमात्मा की अनुभूति और तरंगे यहा तरंतिग होती रहती हैं और उन्हें, मानो साधक अपने में पान करता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, हे भगवन! कात्यायन ने ऐसा क्यों कहा? तो मुनिवरों! देखो, गाड़ीवान रेवक ने अमृतां ब्रह्मे जब राजा से यह कहा, तो ज्ञानस्वरूपी ने कहा-प्रभु! डसने यह वाक्य इसलिए कहा है कि, उनका गृह मानो उनके विचारों से, उनकी महानता से पवित्र बन गया था और जो भी साधक या ऋषि-मुनि आते तो उनके मनों की प्रवृत्तियाँ ऊर्ध्वा में गमन करती रहीं। ऐसा, मानो देखो, कात्यायन ने इसलिए कहा। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा, ने- हे ज्ञानस्वरूपी! क्या राष्ट्र का भी इसमें कुछ सहयोग होगा? उन्होंने कहा -राष्ट्र में भी, मानो देखो, जब राजा के राष्ट्र में बुद्धिजीवी, कर्मकाण्डी और बुद्धिजीवी प्राणी अपने में प्राणों को संग्रह करते रहते हैं, वो राष्ट्र पवित्र बना हुआ रहता है, और उस राजा के राष्ट्र में साधक विशेष होते हैं और गृह पवित्र होते हैं। गृहस्वामी और गृहस्वामिनी ब्रहे, जब प्रातःकालीन विचारों की सुगन्धि और साकल्य की सुगन्धि आती रहती है। तो गृह, मानो पवित्रता की वेदी पर निहित हो जाते हैं।

अग्निहोत्र के लिए भगवान राम की प्रेरणा

मेरे प्यारे! देखो, यह वाक्य भगवान राम ने भी कहा था, जब, मुनिवरों! देखो, राम का उपदेश होता, याग के पश्चात्, तो राम यही कहा करते थे कि अयोध्या राष्ट्र, हमारे यहाँ देखो, मपु वंश ब्रह्मे मनु ने इस अयोध्या पुरी का निर्माण किया था और यह समुद्रों के कुछ ही दूरी पर थी, परन्तु देखो, हमारा कर्त्तव्य है कि अयोध्या राष्ट्र में, प्रत्येक गृह के सुगन्धि होनी चाहिए, मानो देखो, साकल्य की सुगन्धि, विचारों की सुगन्धि, जब सुगन्धि-सुगन्धि से गृह परिवर्तित हो जाता है, तो मुनिवरों! देखो, राष्ट्र भी सुगन्धित हो जाता है।

मेरे प्यारे! देखो, सुगन्धि क्या है? वह सुगन्ध, विचारों की, वह सुगन्ध, मानो देखो, उनके साकल्य की है। एक तो साकल्य की सुगन्ध होती है, अग्नि देखो, साकल्य को विभाजित कर देती है, वह विभक्त कर देती है, वायुमण्डल तरंगित हो जाता है और एक, विचार-अग्नि को ले करके वेद का अध्ययन करेंगे, दर्शनों की मीमांसा करने लगेंगे, तो उस समय, मुनिवरों! देखो, विचारो में सुगन्धि आती रहेगी। एक-दूसरा प्राणी, प्राणी के समीप जाता है, तो यह कहता है, अमृतां भूतं प्रह्वे लोकां -हे मानव! अमृत क्या हे? उन्होंने कहा -एक दूसरे से स्नेह और प्रीति की प्रतिभा का नाम, अमृत कहा जाता है। तो मुनिवरों! देखो, जब ऋषिवर! इस प्रकार के विचार समाज में आ जाते हैं, तो समाज पवित्र बन जाता है और, जब देखो, प्रजा भी इस प्रकार की हो, तो राष्ट्र उन्नत भी हो जाता है, तो मेरे प्यारे! राष्ट्र भी सुगन्धित हो जाता है।

गृह की परिभाषा

आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि, मुनिवरों! देखो, गृहस्वामी और गृहस्वामिनी ब्रह्मणे के द्वारा ही, मुनिवरों! देखो, हमारा गृह पवित्र बनता है और गृह में, मुनिवरों! देखो, गृहस्तुतां गृह उसे कहते है, जहाँ वास करते हैं। मेरे प्यारे! परमपिता परमात्मा ने जब सृष्टि का सृजन किया तो, मुनिवरों! देखो, नाना गृहों के निर्माण किये। वह गृह उसे कहते हैं, जहाँ वास करने वाले प्राणी रहते हैं, जैसे चन्द्रगृह है, सूर्यगृह है, बुद्ध-गृह है, ये सब गृह कहलाते है, इनमें सब प्राणीमात्र, वास करते रहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, ये गृह हैं, जो परमात्मा ने सृष्टि के पिता ने सृष्टि का सृजन करते हुए इन सब गृहों को निर्माणित किया और निर्माणित करके वहाँ के प्राणीमात्रत्त्व को, मुनिवरों! देखो, ऋषि-मुनियो ने अपनी समाधि के द्वारा अपने सूर्य की किरणों के द्वारा गमन करते हुए, मुनिवरों! देखो, उन गृहों में जाने का प्रयास किया, यंत्रों के द्वारा! मेरे पुत्रो! देखो, अमृतं ब्रह्म वृत्तम् वेद का आचार्य कहता है, ऋषि कहता है कि, वे परमपिता परमात्मा का कैसा भव्य यह गृह माना गया है, जहाँ परमात्मा वास करता है। परमपिता परमात्मा सर्वज्ञ हैं। वह एक-एक कण-कण में व्याप्त रहता है। तो मेरे प्यारे प्रभु ने इन नाना गृहों का निर्माण किया। वशिष्ट-मण्डल, वशिष्टगृह कहलाता है, अरून्धति गृह कहलाता है, विश्व श्रृंग गृह कहलाता है, मेरे पुत्रो! देखो, नाना गृह हैं, जिनकी गणना भी नहीं की जा सकती। यह प्रभु का एक अनूठा जगत् है। मेरे प्यारे! देखो, ये गृह कहलाते हैं, जिसमें प्राणी वास करता है, वैज्ञानिकजन अपने में वास करते रहते है।

निवास-स्थान पर गृह-निर्माण-साधना

मेरे प्यारे! देखो, पुरातन काल के आचार्यजन, बेटा! अपने-अपने यंत्रों के द्वारा लोकों की यात्रा करते रहे हैं और उन लोकों में वास करते रहे हैं। वायुमण्डल को जानते हुए, मुनिवरों! जान करके, उन्होंने वातावरण को यहाँ लाने का प्रयास किया है। मेरे पुत्रो! विचार क्या? परमपिता परमात्मा का यह अनूठा जगत् है। इस अनूठे जगत् में गृहों का निर्माण करने वाले प्रभु हैं। मेरे प्यारे! देखो, यह पृथ्वी, गृह है। जहाँ मानव वास करता है गृहां का निर्माण करने वाला हो, वही तो गृह कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, चन्द्र-गृह, सूर्य-गृह, मंगल-गृह, वशिष्ट-गृह, व्रीति-गृह, नाना प्रकार के गृहों का वर्णन आता रहता है और गृह का अभिप्रायः यह है, जहाँ मानव वास करता है, गृहां का निर्माण कर सकता है। तो मेरे पुत्रो! इन नाना प्रकार के गृहों में -अश्वतम्, देखो, मानव का यातायात बना रहा है।

वह यातायात विज्ञान के द्वारा, प्रवत्ति के द्वारा, योगाभ्यास के द्वारा, मेरे प्यारे! देखो, प्राण और मन का एकाग्र करना, मुनिवरों! देखो, यातायात की प्रतिभा बनी रहती है। प्रत्येक मानव के हृदय में यातायात बना रहा हैं मन ऐसा विचित्र है कि यह संसार के प्रत्येक, मानो देखो, यातायात इसके पिछले विभाग में रह जाते हैं और यह अग्रणीय बन जाता है। एक, मानो एक क्षण समय नहीं लगता, जब यह चन्द्रमा की यात्रा करके चला आता है, एक क्षण समय नहीं लगता, ज बवह सूर्यमण्डल की किरणों के साथ में गमन कर जाता है।

साधना

मेरे प्यारे! देखो, प्रभु अमृतां ब्रह्मे प्रकृति का सबसे सूक्ष्मतम तन्तु यह मन माना गया है। इस मन और प्राण के ऊपर, दोनों का संयम ब्रहा देखो, दोनों के ऊपर संयम करने का नाम साधना है, विचित्रता है, मानवीयता है। वृत्तियों में देखो, बेटा! यह मानव रत्त रहता है। यह है, बेटा! आज का वाक्। आज का वाक् क्या कह रहा है? क्या हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, और देवत्त्व को जानते हुए, हम गृह को ऊँचा बनाएं! और, गृह में मुनिवारो! देखो, गृह का निर्माण और गृह के निर्माण में, मानो देखो, जब निर्माण हो जाएं, उस गृह में, विचारों का एक माधुर्यत्त्व रहना चाहिए, एक अपने क्रियाकलापों का माधुर्यत्त्व रहना चाहिए।

मेरे पुत्रो! मैं आज तुम्हें एक बड़ी विचित्र वार्त्ता प्रकट रहा हूँ, जो शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ विज्ञान के माध्यम से जानी गई है। एक समय महर्षि शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ नाना ऋषियों का गमन हुआ और ऋषियों को जब उन्होंने आतिथ्य दिया, तो उन्होंने कहा -प्रभु! हम कुछ चित्रावलियों का दर्शन करने के लिए आए हैं। तो शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ, ऐसी विज्ञानशाला थी, जिनमें शब्दों को और शब्दों के साथ में चित्र और चित्रों के साथ में क्रियाकलाप उनके यंत्रों में दृष्टिपात आते रहते। मानो उनके पूर्वज के सौंवे महापिता, मानो उनके पिचहत्तरवें महापिता, ऐसे क्रियाकलापों में, रत्त रहते थे, जिनका क्रियाकलाप, एक समय उनका योग भ्रष्ट हो गया और योग जब भ्रष्ट हो गया, उनके जो शब्द थे, वे अन्तरिक्ष में, बेटा! अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके, वही भ्रष्ट प्रतिक्रियाएं वायुमण्डल में चित्रों में परिणत हो गयीं। मेरे प्यारे! वे चित्रों में जब परिणत हो गयीं, तो उस समय शिकामकेतु उद्दालक ने ऋषियों को दर्शन कराया-कि मेरे पिचहत्तरवें महापिता हैं, इनका, मानो देखो, योगामृत्ति भ्रष्ट हो गया उनकी प्रवृत्ति, जब साधना में भ्रष्ट हो गयी, तो वे ही अशुद्ध परमाणु, अशुद्ध शब्द, मानो देखो, चित्रों में रत्त हो गएं हैं और वही शब्द, शब्दं ब्रह्मे देखो, चित्र और शब्द सब, मुनिवरों! देखो, दृष्टिपात आ रहे हैं। तो उन्होंने कहा -प्रभु! मैं यह निश्चय कर गया हूं कि मैं अपनी योग-साधना में, या चित्त की साधना में, संसार की साधना में रहूँ, तो मैं, प्रभु! आपकी शरणागत रह करके आपका स्मरण करता रहूँ, मैं अशुद्धता में परिणत न हो जाऊं, जिससे मेरी आत्मा को आभास पहुंच जाएं और मैं, मानो देखो, प्रभु के राष्ट्र में भ्रष्ट हो जाऊं। मेरे प्यारे! देखो, एक प्रति स्रोत है, जिससे मानव सदैव जानता रहा है, क्योंकि विज्ञान अपनी आभा में विचित्रता में उड़ाने उड़ता रहा है। तो मेरे प्यारे! ये विचित्र, देखो, विज्ञान की उड़ान है, क्योंकि महर्षि शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ, वे सौवें महापिता तक के उन्होंने यंत्रों में, बेटा!। दर्शन करते रहे हैं। वे पचासवें महापिता का दर्शन, एक-एक के मानो दर्शन करना, उनके क्रियाकलाप, उनकी साधनाएं, उनकी प्रतिभाएं, मानो देखो, अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके द्यौ में प्रवेश हो जातीं।

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ। केवल परिचय करने के लिए चला आता हूँ और वह परिचय यह है कि, हे मानव! अमृतां गृह स्वञ्जंन वृद्धि वेद का वाक्य कहता हैं, गृहस्वामी और गृहस्वामिनी को अपने गृह को ऊंचा बनाना है और उसे सुगंधित करना है। मुनिवरों! देखो, यह, सुगन्धित विचारों से होता है, साकल्य से होता है, प्रीति से होता है, ममत्त्व से होता है, दर्शनों से होता

है, और वेदरूप प्रकाश का जब ज्ञान, अन्तःकरण, यह जो अन्तःकरण गृह है, यह भी अन्तःकरण गृह है, जहाँ संसार का प्रत्येक इन्द्रियों का समावेश इन मानवीय हृदयों में परिणत होता रहता है, यही, मुनिवरों! देखो, विज्ञान की धारा कहलाती है, यह है बेटा! आज का वाक्।

आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि, हम परमपिता परमात्मा, उस अग्निमयी स्वरूप का वर्णन करते हुए, वे परमात्मा अग्निमयी स्वरूप हैं और वे, मानो देखो, अग्निवृता अग्नि उसी के तेज से तेजत्त्व है और वह तेज को, अग्नि को जानना है। अग्नि गृहपथ्य कहलाती है और गृहपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करना, यह हमारा कर्त्तव्य है। और, गृहपथ्य, मानो देखो, जैसे यह गृह, ऐसा यह परमात्मा का रचा हुआ ब्रह्माण्ड गृह है, ऐसे ही परमात्मा का जो राष्ट्र है, वो भी एक गृह है। मेरे प्यारे!। एक-एक गृह का जानते हुए, दूसरे गृह में प्रवेश कर जाओ, तीसरे गृह में प्रवेश करके अपनी मानवीयता को ऊंचा बनाओ। यह है बेटा! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा, तैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन होगा। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि, हम परमपिता परमात्मा की महती अनन्तता को जानते हुए, इस सागर से पार हो जाएं। यह है, बेटा! आज का वाक्। अब समय मिलेगा, शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। डी-२९३, रामप्रस्थ ०९-१०-१९८९

६ इन्द्र २४-१०-१९८९

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी हैं और यह जो हमें जगत् दृष्टिपात आ रहा है, यह मानो उस परमपिता परमात्मा की महती और अनुपमता मानी गई है। क्योंकि इसकी प्रत्येक जो आभा हमें दृष्टिपात आ रही हैं, वह बड़ी अनूठी है और विचित्रतम् मानी गई है। तो यह जो परमपिता परमात्मा का जगत् है, यह अनूठा है और परमपिता परमात्मा इसमें सदैव निहित रहते हैं और इसी में वो गमन करते रहते है। जिससे मानव अनुसन्धान करता रहता है और यह विचारता रहता हे कि वे परमपिता परमात्मा क्या, अमृतं ब्रह्मः, वे परमपिता परमात्मा तो अमृत हैं और यह सर्वत्र जगत् उसकी प्रतिभा कहलाता है।

हमारे यहाँ दार्शनिकजन परम्परागतों से ही, उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में, बड़ी विचित्र-विचित्र उड़ाने उड़ते रहे हैं और उस संसार के सम्बन्ध में विचारते रहे हैं कि यह संसार क्या है? परन्तु, अन्त में एक ही वाक्य आता है कि यह परमपिता परमात्मा की उग्र क्रिया है, और यह, मानो उसी में निहित हो रही है। तो जब हम यह विचारते रहते है कि परमपिता परमात्मा एक अनूठा है और वह विचित्रतम् माना गया हैं। परन्तु ऋषि-मुनि परम्परागतों से ही, अपनी-अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके विचार-विनिमय करते रहे हैं, और बहुत गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो करके, मानो उसमे मुद्रितं ब्रह्म कृत, उसी मे वो मानो नृत्य करते हुए अपने में महानता का प्रायः दर्शन करते रहे है। तो आओ, मुनिवरों! आज मैं तुम्हे विशेष विवेचना ने देता हुआ, आज केवल हम यह वाक्य उच्चारण करना चाहते हैं कि -हमारा वेदमंत्र क्या कहता है? आत्मा के सम्बन्ध में और परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में नाना प्रकार की, मानव अपने मे उड़ाने उड़ता रहा है। आज, बेटा! हम भी उस उड़ान में जाना चाहते हैं। मानो उसकी रचना के ऊपर विचार-विनिमय, और उसकी रचना को दृष्टिपात करने को हम सदैव तत्पर रहते हैं। बेटा!। बहुत-सा काल हमें स्मरण आता रहता है, और उस काल के ऊपर हम विचार-विनिमय करते रहते हैं। बेटा! हमारे यहां ऋषि-मुनि विद्यमान हो करके एक वाक्य पर बड़ा विचार-विनिमय करते रहे। आज के हमारे वेद के पठन-पाठन में भी प्रायः यह चर्चा आ रही थी कि हमारे यहाँ, इन्द्र किसे कहा जाता है? बेटा! ऋषि-मुनियो की नाना प्रकार की गोष्ठियाँ होती रहीं इस सम्बन्ध में, और यह विचारते रहे हैं कि यह इन्द्र क्या है। मानो हमारे वैदिक साहित्य मे, पठन-पाठन की पद्धतियों में भी, इन्द्र के ऊपर बड़ा विश्लेषण किया गया है। आज के हमारे वेद के पठन-पाठन में भी इन्द्र की बड़ी चर्चा आ रही थी।

आओ, बेटा! आज मैं तुम्हें एक ऋषि के आसन पर ले जाना चाहता हूँ, जहाँ ऋषि-मुनि एकत्रित हो करके एक वस्तु, एक विचारक वाक्यों पर कितना विचार-विनिमय करते रहे हैं। मानो एक इन्द्र शब्द के ऊपर वह अपनी भिन्न-भिन्न प्रकार की विचारधाराएं प्रकट करते रहे हैं। आओ, बेटा! तुम्हें आज उन ऋषियों के आश्रम में ले जाने के लिए हम आए हैं। उनके विचारों को व्यक्त करने के लिए कि उनके कैसे विचार रहे हैं इस सम्बन्ध में। मेरे प्यारे! देखो, हमें स्मरण आता रहता है, बहुत समय हुआ, बेटा! एक समय महर्षि वशिष्ठ मुनि के आश्रम में एक ऋषि-मुनियो का समूह एकत्रित हुआ था, जिसमें मुनिवरों! देखो, विश्वामित्र और महर्षि भारद्वाज और उनके कुछ, ब्रह्म-जिज्ञासु, जैसे कवन्धि और सुकेता, महर्षि पणपेतु, जो देखो, अश्वं ब्रवा, जो अश्विनी कुमारों के पिता कहलाते थे,

मेरे पुत्रो! देखो, और भी नाना ऋषि, जैसे महर्षि वैशम्पायन, विभाण्डक, और भी आदि ऋषि, जैसे उद्दलक गोत्र में वाजश्रवा, नाना ऋषि-मुनियो का समूह, बेटा! एक समय, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के विद्यालय में एकत्रित हुआ। और उन्होंने, बेटा! जब वह सब समाज, बुद्धिमानों में उनमें कुछ ब्रह्मवेत्ता थे, कुछ ब्रह्मनिष्ठ थे और कुछ ब्रह्मवर्चोसि थे।

ब्रह्मवेत्ता, ब्रह्मनिष्ठ, ब्रह्मवर्चोसि, ब्रह्मचरिष्यामि कौन है?

बेटा! ब्रह्मवेत्ता तो वे कहलाते हैं जो ब्रह्म को जान गएं थे। वे ब्रह्मनिष्ठ कहलाते हैं। जो ब्रह्म को अपने में और अपने को ब्रह्म में जो स्वीकार कर लेते हैं, वह ब्रह्मनिष्ठ हो जाते हैं। मेरे पुत्रो! देखो, ब्रह्म में निष्ठा हो जाना, यह मानव का सौभाग्य है। वास्तव में, यह कहते हैं कि हम ब्रह्मणं प्रवाः, यह मानो उच्चारण करते हैं कि -ब्रह्मनिष्ठ हो गएं हैं। परन्तु ब्रह्मनिष्ठ वह कहलाता है, जो ब्रह्म की प्रतिभा में सदैव रत्त हो गया है, और ब्रह्म में उसकी निष्ठा हो गई है। वे संसार के नाना प्रकार के आदेशों में भी अपने प्रभु से अपने को दूरी नहीं कर पाता। मानो वह इस परब्रह्म को ब्रह्म ब्रहाः ब्रह्म में जो निष्ठा हो गई है उससे वह विचलित नहीं होता, तो वह ब्रह्मनिष्ठ कहलाता है। एक ब्रह्मवर्चोसि वह कहलाता है, जैसे, मुनिवरों! देखो, परब्रह्म, जैसे गौ है और गौ को दुहने वाला, उसके दुग्ध का आहार कर लेता है, और उसे दुहनेवाला बन जाता है। इसलिए, जो ब्रह्म की चरी को, मानो देखो, ब्रह्मवर्चोसि वह कहलाता है, जो ब्रह्म को दुहने वाला है। और ब्रह्म को दुहा कैसे जाता है? वह, मानो देखो, अपने में धारण करता हुआ, ब्रह्मविद्या वस्तुतम्, वह, मानो देखो, अपने में अपनी प्रतिभा को ले जाता है। वह ब्रह्मवर्चोसि कहलाता है, जो ब्रह्म को ही दुह रहा है। जो विचारता है कि यह ब्रह्म का ही जगत् है, मैं भी ब्रह्म के जगत में हूं और ब्रह्म में ही, मानो देखो, मैं प्रविष्ट हो गया हूँ, तो वह, मानो देखो, ब्रह्मवर्चोसि कहलाता हैं। एक ब्रह्मचरिष्यामि कहलाता है। ब्रह्मचरिष्यामि कौन है? बेटा! जो अपने को? मानो देखो, ब्रह्म की अप्रिता प्रहाः देखो, ब्रह्मचरिष्यामि वह कहलाता है, अमृतां ब्रह्मनिष्ठ ब्रहे मेरे पुत्रो! देखो, ब्रह्मणा कृतमं, जिज्ञासु बन करके, मुनिवरों! देखो, वह ब्रह्मचरिष्यामि बन करके, बेटा! अपने को उसमें ले जाता है।

इन्द्र रूप में राजा

मुनिवरों! देखो, इस प्रकार के ब्रह्मवेत्ता, ब्रह्मनिष्ठ, ब्रह्मवर्चोसि, बेटा! विद्यमान थे। तो मेरे प्यारे! ऋषि-मुनि जब एकत्रित हो गये, तो ऋषि-मुनियो के विचार बड़े भव्य रहते हैं। मुनिवरों! देखो, महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज ने एक वेदमन्त्र उच्चारण कराया, माता अरून्धति ने एक वाक्य उच्चारण किया- इन्द्रो समं ब्रह्म कृतं देवत्वाम्। मुनिवरों! देखो, माता अरून्धति ने कहा-हे ब्रह्मवेत्ताओं! यह इन्द्र क्या है? यह वेदमन्त्र कहता है कि उन्होंने कहा इन्द्र किसे कहते हैं? परन्तु वेद का मन्त्र ही इसका उत्तर देता है-ब्रह्मवर्चस्वत यश्वताम! वेद का ऋषि कहता है कि-इन्द्र क्या है? तो उसका उत्तर वेदमन्त्र देता है कि-इन्द्र उसे कहते हैं, जा अनुशासन में लाने वाला है। संसार को जो अनुशासन में लाने वाला हो, उसे इन्द्र कहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, इसी वाक्य के ऊपर चिन्तन प्रारम्भ हो गया। और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने यह कहा कि-हे भगवन! देखो, यह इन्द्र क्या है? तो बेटा! इसमें महर्षि विश्वामित्र उपस्थित हुए। और महात्मा विश्वामित्र ने यह कहा कि-महाराज! आपकी आज्ञा हो, तो मैं कोई वाक्य उच्चारण कर सकता हूँ। महर्षि ने कहा कि-हाँ, उद्गीत गाइये! महर्षि विश्वामित्र ने कहा कि-इन्द्र तो वह कहलाता है, जो राजा है, और जो एक-सौ-एक अश्वमेध यज्ञ कर लेता है, उसे इन्द्र कहते है। और इन्द्र बन जाता है, क्योंकि वह इन्द्र, सब राजाओं के ऊपर भी अनुशासित होने वाला है। वह इन्द्र कहलाता है। महात्मा विश्वामित्र ने यह कहा कि-वह इन्द्र है। और इन्द्र, मानो देखो, राज्य को अपने में धारण करता है, अपने में, मानो, अपना जो जीवन का स्वराज्य है उसका अपना जो शरीर रूपी राष्ट्र है, उसको जो पवित्र बनाने वाला है, उसका नाम इन्द्र है। मेरे प्यारे! देखो, इतना वाक्य

उच्चारण करके महर्षि विश्वामित्र अपने में मौन हो गये।

इन्द्र रूप में आत्मा

मेरे प्यारे! देखो, इतने में महर्षि वैशम्पायन उपस्थित हुए। और वैशम्पायन के समीप वही आया कि-इन्द्र क्या है? तो मेरे प्यारे! देखो, महात्मा ने यह वर्णन करते हुए कहा कि-इन्द्र नाम तो आत्मा का है। क्योंकि वह अनुशासित और वह यदि अपनी सत्ता को अपने में समेट लेता है, तो कोई इन्द्रिय अपना क्रियाकलाप नही कर सकेगी। मानो देखो, वह आत्मा इन्द्र है, वह अनुशासन करने वाला है। मानो देखो, जितनी इन्द्रियाँ हैं, मानव के शरीर में, जब इन्द्र होता है, शासन करने वाला होता है, तो अनुशासित रहने वाली मानो इन्द्रियाँ कहलाती हैं, और प्रत्येक इन्द्रियाँ अपने-अपने क्रियाकलापों में सदैव तत्पर हो जाती हैं। और यदि उसके चले जाने पर इन्द्रियाँ शान्त हो जाएं, अथवा मृतक हो जाएं, निष्क्रिय बन जाएं, तो देखो, उस आत्मा का नाम इन्द्र है। क्योंकि इन्द्र ही तो इनको अनुशासन में लाने वाला है और इन्द्र ही इन्हें शून्यत्त्व को प्राप्त करा देता है, तो इसीलिए देखो, उसका नाम इन्द्र है। -आत्म ब्रह्मणे आत्मा इन्द्रः, वेद की आख्यिका कहती है कि आत्मा इन्द्र है, और यह इन्द्र ही अमृत कहलाया है। मेरे प्यारे! देखो, इतना उच्चारण करते हुए उन्होंने कहा -इन्द्रियों पर जो अनुशासन करने वाला है, उसका नाम इन्द्र है। वह, मानो देखो, प्राणं मनः, जो मन और प्राण को एक सूत्र में लाना जानता है, और उसके ब्रह्म में समर्पित कर देता है, वह इन्द्र कहलाता है, वो आत्मा है। जो आत्मा में ही, मानो देखो, उनको समर्पित कर देता है। वह मुनिवरों! देखो, इन्द्र कहलाता है, जो इन्द्रियों का अधिपति है, इन्हें अनुशासन में लाने वाला है। मेरे प्यारे! वही तो इन्द्र कहलाता है।

परमात्मा का इन्द्र रूप

मेरे पुत्रो! देखो, इसमें वे इतना उच्चारण करके मौन हो गये। मौन हो जाने के पश्चात् महात्मा वशिष्ठ ने कहा कि- इन्द्र क्या है? इसमें मुनिवरों! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि उपस्थित हुए। और भारद्वाज मुनि ने कहा कि- इन्द्र नाम तो परमात्मा का है। मानो, जो संसार का नियंता, निर्माण करने वाला है, उसका नाम, देखो, परमपिता परमात्मा इन्द्र है। जो मानो, सर्वत्र ब्रह्माण्ड का नेतृतव करने वाला है, वह अधिराज बना हुआ है, सब संसार को अनुशासन में लाने वाला है, वह अधिराज बना हुआ है। वे परमपिता परमात्मा इन्द्र है, जो हमारा सबका कल्याण करने वाले हैं, वो इन्द्र कहलाते है। उन्होंने कहा -वृतं देवत्वाम ! ऋषि ने कहा कि-इन्द्र, मानो देखो, संसार का अधिपति कहलाता है, अनुशासन करने वाला है। क्योंकि देखो, समय-समय पर, संसार और सृष्टि का, प्रत्येक सृष्टि अपने में प्रकृति क्रियाशील हो रही है। उस क्रियाशीलता का नेतृत्व करने वाले, वह प्रभु हैं। मानो, जैसे यह अमृताम् समय पर सूर्य उदय होता है, रात्रि आ जाती है, दिवस आ जाता है, मानो देखो, यह तो संसार का नियमन हो रहा है। मेरे पुत्रो! देखो, तारा मण्डल अपनी-अपनी आभा में गमन कर रहे हैं। देखो, अग्नि अपने समय पर अपना ऊष्णा बना रही है। और प्रकाश देने वाला प्रकाश दे रहा है। तो इस प्रकार का यह जो नृत्य हो रहा है, वह नृत्य करने वाला, वे परमपिता परमात्मा, जो प्रकृति को अपने में धारण करता हुआ, मानो, यह नृतिका बन करके अपनी अप्रतो अपनी आभा में परिणत हो रही है। मेरे पुत्रो! देखो, महाराज ब्रहे, ऋषि ने यह वर्णन करते हुए कहा कि- वे परमपिता परमात्मा इन्द्र है, जो इन्द्रियों को क्या, इस प्रकृति को अपने में धारण कर रहे हैं, और धारयामि बना करके, मानो देखो, इसी में रत्त हो रहे हैं, उसका नाम इन्द्र है। मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने यह वर्णन किया तो ऋषि उच्चारण करते हुए बोले कि-मैं तो अब तक यही जान पाया हूं, कि वे परमपिता परमात्मा इन्द्र है, जो इस प्रकृति का नेतृत्त्व करने वाले हैं। और उग्र क्रिया बना करके मानो, जो इस प्रकृति से संसार की रचना हो रही है। प्रत्येक अणु-परमाणु, मानो इसमें रत्त हो रहा है। ऋषि ने ये वाक्य उच्चारण करके, आज्ञा पाकर के वो

मौन हो गये।

इन्द्र रूप में वायु

महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज ने, ऋषि ने यह कहा कि-इन्द्र क्या है? तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने वर्णा ब्रह्माः कृतेः । मेरे पुत्रो! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि ने भी और उनके, मानो देखो, उनके शिष्य ने, उनके आश्रम में अध्ययन करते थे, जिनका नाम महात्मा कवन्धि था। और ब्रह्मचारी कवन्धि ने यह कहा कि- हे प्रभु! मेरे विचार में यह आता है कि इन्द्र नाम तो वायु का है। यह वायु ही इन्द्र कहलाता है। मानो जब वेग में, जब वृत्तियों में रक्त होने लगता है, वेग में, गमन ब्रहे वह वेगवान् होता है, तो मानो देखो, इन्द्र ही तो वृष्टि करने वाला हैं। जब यह वत्रासुर उमड़ने लगता है और मानो इन्द्र का और वत्रासुर का, दोनों का संग्राम जब होता है, तो मानो देखो, यह इन्द्र ही अपने वज्र को ले करके, प्राणरूपी वज्र को ले करके, वह वत्रासुर का संहार करते हैं, और वृष्टि हो जाती है। मानो देखो, वह इन्द्र ही वत्रासुर को नष्ट कर सकते हैं। मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने यह कहा कि -यह जो वायु है, यह इन्द्र कहलाता है। हम वायु के ऊपर विचार-विनिमय करते है, जो प्राणों का संहार करने वाला है, मानो वही तो इन्द्र है। मेरे प्यारे! माता के गर्भस्थल में एक शिशु पनप रहा है। और शिशु जब पनप रहा है, मेरे प्यारे! माता को प्रतीत नहीं है कि कैसे प्राण आता है। तो मेरे पुत्रो! देखो, वायु गमन करता है। और वायु गमन करता हुआ, मानो देखो, उसी प्राण को उसमें प्रविष्ठ करा देता है। और प्राणसत्ता आते ही गर्भस्थल में रहने वाला, रहने वाला जो शिशु है, उसमें क्रिया आ जाती है। और वह क्रिया मानो देखो, प्राणसत्ता की है, प्राणमयी वायु, बेटा! वही वायु है जो मेरे पुत्रो! देखो, मानव को प्राण देती है, अगम्यता देती है, तो मुनिवरों! देखो, इससे विचार आता है कि वायु ही इन्द्र है। वह इन्द्र, मानो अपने में रक्त हो रहा है। और विचारवान् कहते हैं कि यह मानो वायु ही, प्राणों के रूप को परिणत रहती है। मेरे पुत्रो! देखो, मानव के शरीर में आते ही, इस वायु के, मानो देखो, उसके भाग हो जाते हैं। और वे दस भाग, मानो देखो, प्राण, अपान, उदान, व्यान, मेरे पुत्रो! देखो, ये पांच प्राण बन जाते हैं। और पांचों के ही देखो, पांच उपप्राण बन जाते हैं, -नाग, देवदत्त, धनञ्जय, कुरू और कृकल ये मानो देखो, दस भाग बन जाते है। ये दस भाग एक वायु के हैं और शरीर में आते ही इसके दस विभक्त क्रियाओं में परिणत हो जाते हैं। और ये ही प्राण, मानो देखो, इस ब्रह्माण्ड में जब छा जाते हैं, तो वैज्ञानिक-जन भी इन प्राणों को ही वायुयानम ब्रहे प्राण सत्ता को जानते-जानते इतनी गम्भीर मुद्रा में चले जाते हैं कि मानो देखो, प्राण के द्वारा वो यन्त्रों का निर्माण करते हैं, वे वायुमण्डल में गमन करने लगते हैं, नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों में चले जाते हैं।

प्राण-सत्ता

मेरे प्यारे! देखो, विचार आता है कि इन प्राणों को, दस प्राणों को, जो आत्मा के अंग-संग, मानो देखो, उसकी प्रतिभा से वह मनस्त्व की क्रियाओं में रक्त रहते हैं, तो उस समय इनका नेतृत्व करने वाला देखो, एक आत्मा रहता है, आत्मा नेतृत्व करता है, इसे विशेष-प्राण कहते हैं। और विशेष-प्राण, पिण्ड में गमन कर रहे हैं प्राण, मेरे पुत्रो! देखो, प्राण है, जो अरबो-खरबों परमाणु को ला करके, बेटा! इस शरीर में स्थिर करता है। अरबो-खरबों परमाणुओं को बाह्य जगत् में, मानो देखो, यह त्याग देता है। प्राण का कार्य अपान है। जितनी भी संसार में देखो, गति हो रही है वह ऊर्ध्वा में गति जितनी है, ध्रुवा में जितनी गति है, वह मानो देखो, यह उदान प्राण की प्रतिष्ठा कहलाती है। मेरे प्यारे! देखो, समान, जो सर्वत्रता में है। उदान, जो मुनिवरों! देखो, मन के साथ में गमन, बेटा! देखो, बुद्धि और मन यह सब आत्मा के समीप प्रविष्ठ हो करके बेटा! हृदय, और अस्वतिं देखो, उदान में गमन करते रहते हैं।

याग और तपस्या

मेरे पुत्रो! देखो, ये पांचों प्राण हैं, दस प्राण हैं। ये ब्रह्माण्ड में भी इसी प्रकार गतिवान हो रहे हैं। परन्तु एक प्राणत्व है जो परमपिता परमात्मा का है, परमपिता परमात्मा उसका नेतृत्व करने वाले हैं। बेटा! वह प्राण कौन-सा है? उसे हमारे यहाँ, एक विशेष प्राण है, एक सार्वभौम प्राण कहलाता है। मेरे प्यारे! सार्वभौम प्राण, जो मुनिवरों! देखो, जहाँ ज्ञान और प्रयत्न नहीं है, वहाँ मानो देखो, वह शून्यता में भी, प्रायः अपना क्रियाकलाप कर रहा है, उसको सामान्य प्राण कहते हैं। बेटा! जैसे आत्मा शरीर से जब निकल जाता है, तो पिण्ड में देखो, प्राण विद्यमान रहता है, मेरे प्यारे! देखो, वह प्राण जब तक अग्नि के मुखारबिन्दु में प्रवेश नहीं हो जाते, अग्नि में भी प्राण होता है, अग्नि में वायु है। बेटा! देखो, एक-एक परमाणु को अपनी-अपनी स्थली पर प्रवेश करा देती है। मेरे प्यारे प्रभु कैसा वैज्ञानिक है। कितना महान् है, बेटा! वह प्रभु मेरे पुत्रो! देखो, प्राण ब्रह्मे कृतम् अग्नि में जब प्राणम् अग्नि मे जब दाह कर देते हैं, किसी भी वस्तु का। वह विभक्त क्रिया में परिणत हो करके बेटा! अपनी-अपनी स्थलियों में प्रवेश करा देते हैं, वह प्राण है। वह प्राण ही तो है बेटा! प्राण पिण्ड में भी है, जो जड़वत है, चेतना में भी विद्यमान है। आत्म देखो, जहाँ, आत्मा है, वहाँ ज्ञान-प्रयत्न हैं, बेटा! वहाँ ये दसों प्राण कार्य करते हैं। इनको विशेष प्राण कहते हैं। एक सामान्य प्राण होता है, जो मेरे पुत्रो! देखो, परमात्मा के समीप मानो देखो, परमपिता परमात्मा के संग मानो सानिध्य में अमृताम् देखो, उसके संरक्षण में वह क्रियाकलाप करता रहता है। वे जड़ में भी, चेतन में भी, सर्वत्रता में विद्यमान रहता है। मेरे प्यारे! देखो, वही तो प्राणम् ब्रह्मे प्राणसत्ता हैं। इसलिए वेद का ऋषि कहता है कि वायु, प्राण है, मानो देखो, वायु को इन्द्र कहते हैं। यह इन्द्र प्राणों का प्रतिनिधित्व करने वाला है, प्राण सत्ता को वह धारण करने वाला है, इसलिए उसे इन्द्र कहते हैं। वह वायु है, वायु ही गमन करा देती है। जब, मानो देखो, कोई भी मानव अपनी स्थली पर विद्यमान है, परन्तु देखो, वह दर्शनों की विचारधारा दे रहा है और दर्शनों की विचारधारा को, बेटा! यह प्राण-सत्ता ही है, जो उसका प्रसारण कर रहा है।

मेरे पुत्रो! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, ऋषि-मुनियो ने अपना वर्णन करते हुए कहा है, क्या? मुनिवरों! एक स्थली पर मानव, देखो, नित्यप्रति, जब प्राणायाम करता है, प्राणायाम करता हुआ, बेटा! वह ऋषित्व को प्राप्त हो जाता है, वह ब्रह्मनिष्ठ बन जाता है, ब्रह्म प्रतिष्ठा में परिणत हो जाता है। तो मानो, जहाँ वह रहता है, जिस स्थली पर उसके अंग-संग का जो वातावरण है, मुनिवरों! देखो, वह सुगन्धमयी हो जाता है। वह सुगन्धि किसकी है। वह प्राणो की सुगन्धि है और प्राणो में जो क्रियाकलाप, उसके विचारों को जा रहा है, उन विचारों को वे तरंगे रूप की परिणत हो रही तरंगों को धारण करने वाला, मेरे पुत्रो! धारयामि बन जाता है। और वह प्राणं ब्रह्मा देखो, अपने को शुद्ध पवित्र कर लेता है। तो विचार आता रहता है, मुनिवरों! इसलिए यह प्राणसत्ता अमृता वायु ब्रह्मे कृतं अग्नि रूद्र प्रथः अग्नि को ध्यान करने वाला, बेटा! प्राण का ध्यानावस्थित हो रहा हैं। और वायु का ध्यानावस्थित करता हुआ, प्राणसत्ता को, बेटा! अपने में दृष्टिपात कर रहा है। आओ, मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। हम कोई व्याख्याता नहीं हैं। केवल तुम्हें परिचय देने के लिए चले आते हैं। और वह परिचय क्या है? क्या, इन्द्र, मुनिवरों! हमारे यहाँ वायु को इन्द्र कहते हैं, जो वायु ही, मेरे प्यारे! अपने क्रियाओं को देने वाली है। वही क्रिया से, बेटा! जल गमन कर रहा है। गुरूतव के परमाणु मानो गतिवान् हो जाते है, अग्नि के परमाणु गतिवान् हो जाते है। यह सर्वत्र, मानो वायु हैं, जो प्राण को ले करके आत्मा को आत्मा के समीप पहुंचा देती है। वही बेटा! देखो, जो सामान्य प्राण है, जो सब स्थलियों में गमन करने वाला, वो जडवत् को भी क्रियाशील बना रहा हैं, मानो देखो, वह गति हो रही हैं, ज्ञान प्रयत्न नहीं है। मेरे प्यारे! देखो, वह सामान्य प्राण कहलाता है।

प्राण-चिकित्सा

तो विचार आता है, मुनिवरों! देखो, जो प्राण को अपने में धारण करने वाले, हमारे यहाँ, जिस काल में

बेटा! देखो, यह प्राणसत्ता, देखो, ऋषि-मुनि प्राण के आश्रित रहते, तो बेटा! देखो, यह प्राण का गमन कराने वाली एक प्राण-चिकित्सा कहलाती है। वह प्राण-चिकित्सा, मुनिवरों! देखो, महात्मा वशिष्ठ मुनि के काल में भी रही है, और भी बहुत से काल रहे है। अब का तो मुझे प्रतीत नहीं परन्तु प्राण-चिकित्सा, हमारे वैद्यराजों के मस्तिष्कों में, सदैव गमन करती रही हैं। कोई भी रूग्ण हो, किसी भी प्रकार का प्राणी को, परन्तु वह प्राण के द्वारा अपनी चिकित्सा कर लेता है, प्राणायाम के द्वारा बेटा! बहुत प्रकार के प्राणायाम होते हैं, एक खेचरी-मुद्रा वाला प्राणायाम होता है, एक रिध्री मानो प्राणायाम कहलाता है, एक संकल्पमयी प्राणायाम कहलाया जाता है। मेरे प्यारे! एक रेचक और कुम्भक प्राण की प्रतिष्ठा में प्रविष्ठ होते रहे है। बेटा! एक धीमा प्राणायाम होता है, एक मानो उर्ध्वा में गमन कराने वाला प्राणायाम होता है। मेरे पुत्रो! नाना प्रकार के प्राणायाम कराते वैद्यराज, देखो, मनुष्यों के रूग्णों को शान्त करते रहे है। यह विद्या, मुनिवरों! देखो, महात्मा अश्विनी कुमारों ने भी इस विद्या को जाना है। क्योंकि औषध विज्ञान में, औषध क्या है? उसमें भी तो प्राणसत्ता है, इसीलिए मानव उसको खरल बनाता है, कहीं अग्नि में तपाता है, कही मानो देखो, सूर्य की किरणों में तपायमान करता है, तो सूर्य से ओझल करता है। किसलिए कर रहा है? कि उसमें प्राणसत्ता आ जाएं, तो उसको पान करके, मैं प्राणसत्ता वाला बन करके, मेरे रूग्ण समाप्त हो जाएं। ऐसी, प्रणाली, बेटा! परम्परागतों से मानवीय मस्तिष्कों में रही है। परन्तु देखो, यह प्राण सत्ता हमारे यहाँ प्राण-चिकित्सा-क्रम परम्परागतों से बेटा! मानवीय और वैद्यराजों के हृदयों में प्रविष्ट होती रहती है।

प्राण और योग

एक सूत्र को ले करके मानो उर्ध्वा सूत्र गमन कर जाता है, इसी प्रकार सूर्य की नाना किरणों को लेकर के बेटा! सूत्र बना करके उसके साथ-साथ किरणों को लेकर के बेटा! वह योगेश्वर गमन कर जाता है। मेरे प्यारे! प्राणसत्ता को लेकर गमन कर जाता है। और कहाँ तक चला जाता है? मुनिवरों! देखो, वह सूर्यमण्डल में चला जाता है। मेरे प्यारे!। वहाँ उसे अग्नि भी प्रभावित नहीं करती, अग्नि भी मानो उसे भस्म नहीं करती, क्योंकि प्राणंब्रह्मे देखो, प्राण ब्रहे कृतम्, मानो देखो, अग्नि ही प्राणों के आश्रित रहती है। और जो, जिसके ऊपर आश्रित रहती है, बेटा! अपने आश्रय को भस्म नहीं कर सकती।

मेरे प्यारे! इसी प्रकार, ऋषि-मुनि प्रायः गमन करते रहे हैं। तो प्राण विद्या बड़ी विशिष्ट बनकर रही है। तो विचार-विनिमय क्या? बेटा! वेद के ऋषि ने यह कहा, वशिष्ठ मुनि आश्रम में कि यह जो प्राण है, यह वायु का स्वरूप है। वायु ही हमारे यहाँ इन्द्र कहलाता हैं। बेटा! देखो, इन्द्र कहलाता है, वह इन्द्र कौन है, जो मुनिवरों! देखो, हमें सत्ता प्रदान करता है? वही इन्द्र है, बेटा! जो इन्द्र, वायु बन करके, मेरे पुत्रो! देखो, वह आत्मा के अंग-संग रहने वाले दस प्राण है। मानो देखो, एक सामान्य प्राण है, जो परमपिता परमात्मा की सत्ता के साथ गमन करता हुआ, बेटा! वह प्राण ही, मेरे पुत्रो! देखो, सर्वत्रता में विद्यमान रहता है। वहाँ विभक्त-क्रिया नहीं होती प्राण के एकोकीकरण में बेटा! वह एक सूत्र बन करके, नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों को जो अपने में धारण कर रहा है। वह सूत्रां भूतं प्रवाणं बृहे लोकां हिरण्यं रथाः तो मेरे पुत्रो! देखो, वह प्राणसत्ता को जानने वाला ही, मेरे प्यारे!। महान बनता है। वही प्राणसत्ता मुनिवरों! देखो, माता के गर्भस्थल में विद्यमान रहती है। माता उन प्राणों के द्वारा ही, मेरे पुत्रो! देखो, अपने में शान्त पूर्वक, विद्यमान रहती है। क्या प्राणसत्ता मेरे अन्तरं ब्रहे देखो, जो शिशु, मेरे गर्भ में प्रवेश कर रहा है, उसमें विद्यमान है तो मानो देखो, मैं उस प्राणसत्ता को जानने का प्रयास करूं। मेरे प्यारे! देखो, वायु गमन कर रहा है, प्राणों का संचार कर रहा है, उससे, गमनं ब्रह्मे माता भी प्रसन्न हो रही है। तो मेरे प्यारे! वही अग्नि है, वह अग्नि अखंड बन करके रहती है, बेटा! वह अग्नि ही वायु से उसका निकास माना है। परन्तु देखो, अग्नि अखंड ज्योति बन करके माता के गर्भस्थल में विद्यमान रहती है, जहाँ हम जैसे शिशुओं का

जन्म होता रहता है। और आश्रय ले करके, बेटा! अपने उसमें आश्रित हो करके, वह गमन करता रहता है, अपने में प्रतिष्ठित हो जाता है।

बेटा! देखो, वेद के आचार्यों ने अपना यह निर्णय दिया कि इन्द्र कौन है। उन्होंने कहा -इन्द्र नाम वायु का है। जो इन्द्र, मेरे प्यारे! देखो, इन्द्र का ही वेग है, जो वृष्टि कराने वाला है। इन्द्र का ही वेग है, मेरे पुत्रो! जो मानो देखो, मेघ मण्डलो को नष्ट करके धीमी वृष्टि करता है। वही इन्द्र है बेटा! देखो, जो पृथ्वी के गर्भ में विद्यमान हो करके नाना प्रकार के अंकुरों को अंकुरित कर देता हैं और वही मुनिवरों! देखो, संसार की प्रतिभा बन करके रहते हैं। तो मेरे पुत्रो! विचार, वेद का मन्त्र कहता है- इन्द्रो भव प्रमाणं ब्रहे वृत्तम् देव का आचार्य कहते है कि - जहाँ नाना पर्यायावाची शब्दों में इन्द्र आता है, वहाँ इन्द्र नाम वायु का है।

इन्द्रलोक

मेरे प्यारे! देखो, इन्द्रो सम ब्रह्मा वृत्तम आचार्यजनों ने कहा है, जब बेटा! देखो, सूत्रों को गणित करता हुआ मानव चला जाता है। गमन करता हुआ, बेटा! इन्द्र मण्डल में चला जाता है, इन्द्र लोकों में प्रवेश हो जाता है। तो ऐसा लोक कौन-सा है, जो इन्द्र लोक है,जिसमें मुनिवरों! देखो, ये नाना लोक-लोकान्तर अपने में प्रतिष्ठित हो जाते हैं? उसी में, मानो दृष्टिपात करने लगता है मानव! मेरे पुत्रो! देखो, वेद का ऋषि, वेद का वाक्य यही तो कहता है कि वो इन्द्रमण्डल है, इन्द्रलोक है और जहाँ पर्यायवाची शब्दों में, बेटा! इन्द्रलोक माता का गर्भाशय कहलाता है, जहाँ बेटा! प्राणों को, प्राणसत्ता को पा करके शिशु अपने में पूर्ण अंगों को प्राप्त हो करके, बेटा! बाह्य जगत् में प्रवेश करता है। हे माता! तू इन्द्रो सम्भवा ब्रहे । वहीं तो वायु गमन करने वाला है। वही इन्द्र देखो, लोक कहलाता है। क्योंकि इन्द्रोभवप्रमाण ब्रहे, बेटा! इन्द्रलोक हैं, जिसके ऊपर मानव, देखो, शिशु, अपने में बसता रहता है, अपने में गमन करता रहता है। और गमन करता हुआ अखंडमयी ज्योति को धारण करता हुआ, अपने में पूर्णता को प्राप्त हो करके, बेटा! बाह्य जगत् में प्रवेश हो जाता है और बाह्य जगत् में, अपने को स्वीकार कर लेता है।

मेरे पुत्रो! देखो, विचार आता है, वेद का ऋषि, मुनिवरों! देखो, कहता है। कौन ब्रह्मचारी है? ऋषि ब्रह्मे कृतम् बेटा! महात्मा कबन्धि, ब्रह्मचारी कबन्धि ने कहा - हे प्रभु!। मेरे विचार में तो यही आया है, मैने इसका अध्ययन किया है, मैंने बाल्यकाल में इसके ऊपर विचार-विनिमय किया है कि इन्द्र नाम तो वायु का है, परमात्मा का भी नामोकरण है क्योंकि वायु तो उसके आश्रित रहती है। इसलिए परमात्मा का नाम भी इन्द्र है। और इन्द्र के नाना पर्यायवाची शब्द हैं, मानो देखो, अपने में कृत नही कर रहा हूँ। विचार केवल मेरा इतना ही है कि इन्द्र नाम, यहाँ मेरे विचार मे तो वायु को कहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, जहाँ वायु है, वहाँ अग्नि है, क्योंकि अग्नि में भी प्राण सत्ता है और, जहाँ वायु नहीं है, वहाँ अग्नि का भी निधन हो जाता है अग्नि भी नहीं रह पाती। क्योंकि एक दूसरे के आश्रित रह करके, यह संसार की क्रियायें और रचनाएं चल रही है। और ये चलती रहेंगी। परन्तु मेरे विचार में, इन्द्र नाम वायु का है और इन्द्र ही, मुनिवरों! देखो, सर्वत्र रूपों को अपने में धारण कर रहा है। परमपिता परमात्मा का नाम तो इन्द्र है ही, क्योकि वह तो सर्वज्ञ प्रवाःकृत कहलाता है। मानो देखो, वो प्राणों का भी प्राण है, सखा है और ओजस्व कहलाता है।

मेरे पुत्रो! देखो, वेद के ऋषि ने कहा है कि इन्द्र नाम वायु का है, इन्द्र नाम परमात्मा का है, इन्द्र नाम आत्मा का है, इन्द्र नाम राजा का है। बेटा! कौन से राजा का नाम इन्द्र है? जो राजाओं का भी अधिराज है, मानो जो तपस्या करता है, एक-सौ-एक अश्वमेध यज्ञ करके, उस उपाधि को प्राप्त करता है, वह तमो ब्रह्मे कृत कहलाता है मानो देखो, वो इन्द्र है जो राजाओं का भी अधिराज बन करके, नियमावली को धारण करता है, अपने मानवीय

शरीर के ऊपर संयम करता है, इन्द्रियों का अधिपति बनता हुआ, अश्वमेध करता हुआ, मान और अपमान से दूरी हो करके जो इस प्रकार के क्रियाकलाप करता है, वो इन्द्र कहलाता है। हे इन्द्रो! समं ब्रह्मः! मेरे प्यारे! परमात्मा का नाम इन्द्र है जो संसार का अधिपति है, निर्माण करने वाला है, अनुशासन में लाने वाला है। हे इन्द्रो! सम्भवं प्रमाणं ब्रहे हृदय अगम्यां ब्रवे कृतम् वेद का आचार्य कहता है- हे इन्द्र! आ, और तू मेरे हृदय में प्रवेश हो जा, मेरे हृदय में प्रविष्ठ हो करके मुझे भी इन्द्र बनना हैं। मैं भी अनुशासित बन करके, हे प्रभु! तेरी सृष्टि को निहारता रहूँ, तेरे जगत् को दृष्टिपात करता रहूँ। हे प्रभु! मुझे अपना आश्रित बना करके मानो मुझे, ओज और तेज की उत्पत्ति कर मेरे हृदय में प्रवेश कर दे, जिससे भगवन्!। मैं अन्धकार से प्रकाश में चला जाऊं और प्रकाश, मेरे जीवन में आ जाएं। मैं प्रकाश में रत्त हो करके तेरी सृष्टि को निहारता रहूँ, प्रभु।

मेरे प्यारे! देखो, आज मैं विचार यह देने जा रहा था कि मुनिवरों! देखो, यह प्राण सत्ता बड़ी विचित्र रही है। कल, बेटा! मैं इस प्राण सत्ता के सम्बन्ध में तुम्हें बहुत से विचार दूंगा, क्योंकि अभी तो ऋषि-मुनियो का समाज एकत्रित हुआ है। अभी उन्होंने अपना-अपना वक्तव्य नहीं दिया है। जो वेद का सार वक्तव्य है, बेटा! इसके सम्बन्ध में कल हम चर्चा करेंगे। आज का विचार हमारा यह कह रहा है क प्राण ब्रह्मणा वृत्तम् हे भगवन! अमृताम कहलाता है। बेटा! देखो, महात्मा वशिष्ठ ने ऋषि-मुनियो से कहा कि -वायु ही प्राण नहीं है। इसी के ऊपर मानव को सीमित नहीं रह जाना चाहिए। आगे भी इसकी बहुत-सी व्याख्यायें हैं। परन्तु वह देखो, वायु के रूप में क्या, परमपिता परमात्मा के रूप में भी विद्यमान रही है। अग्नि के स्वरूप में भी विद्यमान रही हैं। क्योंकि इन्द्र नाम आत्मा का है, आत्मा ब्रह्मे आत्मा के सम्बन्ध में भी बहुत से चिन्तन किए गएं हैं। तो बेटा! महात्मा वशिष्ठ ने कहा कि-अब सांयकाल हो गया है, संध्या का काल हो गया है, अपनी संध्या को गोद में चले जाओ, प्रभु का स्मरण करो और, मानो देखो, ये चर्चाएं कल की सभा में, हम उद्गीत रूप में गा सकेंगे। और यहाँ अनुभव लिया जाएगा, जिन-जिन ऋषिवरों ने मानो अपना-अपना इसके ऊपर मनन और चिन्तन किया है।

बेटा! देखो, कल मुझे समय मिलेगा, तो मेरे पुत्रो! देखो, कल महात्मा वशिष्ठ मुनि के आश्रम में द्वितीय राष्ट्रों से भी आने वाले, प्राण सत्ता वाले, प्राण-अस्त्रों-शस्त्रों का निर्माण करने वाले वैज्ञानिकजन प्राण को एक ही अंग में लाना, ऐसे ही, मानो देखो, क्रियात्मक जिने विचार, मैं तुम्हें, बेटा! कल प्रकट करूंगा। मानो देखो, तुम्हें स्मरण है, महात्मा वशिष्ठ मुनि के यहाँ, बेटा! नाना ब्रह्मवेत्ता आते रहते थे, द्वितीय राष्ट्रों से भी ब्रह्मवेत्ता आते रहते थे। तो बेटा! कल मै, मानो देखो, जैसे महातं ब्रह्मे राजा रावण के पुत्र जो मेघनाथ थे, वे भी प्राणसत्ता में बड़े पारायण थे, उनका जो विचार, उनका जो क्रियात्मक, जो उन्होंने तप किया और उसकी राजसी प्रतिक्रिया में लाने का, उन्होंने प्रयास किया है, बेटा! वे चर्चाएं, मैं तुम्हें कल प्रकट करूंगा। आज का वाक् अब समाप्त होने जा रहा है। आज के विचारों का अभिप्रायः क्या? बेटा! हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुयें, अपने में महानता, इन्द्र की प्रतिभा को प्राप्त होते हुए, हम बेटा! उस परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाएं। यह है, बेटा! आज का वाक्। अब समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। यह आज का हमारा वाक्य समाप्त। अब वेदो का पठन-पाठन। सी-४७, रामप्रस्थ २४-१०-१९८९

७ प्राणों के ऊपर अन्वेषण २५-१०-१९८९

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जो हमारे अन्तर्हृदय में विद्यमान है। मानो वह वेदज्ञ कहलाता है, और प्रज्ञा है। तो हम उसपरमपिता परमात्मा जो वेदज्ञ है और प्रज्ञावी है, हम उस परमपिता परमात्मा को सदैव माने अपने में नमः करते हुए और अपने में ही मानो उसे दृष्टिपात करना चाहते हैं। क्योंकि वह प्रज्ञ है और वह वेदज्ञ कहलाता है। क्योंकि जो प्रकाशों का प्रकाश होता है, वही तो वेदज्ञ कहलाया गया है। तो हमारे यहाँ, वह जो वेदज्ञ है, हम सदैव, उस परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता के ऊपर सदैव विचार-विनिमय करते रहे। क्योकि हमारे यहाँ, जो अनन्तमयी प्रतिभा हमारे अन्तर्हृदयों में मानो विद्यमान रहती है, हम सदैव उस प्रकाश के लिए लालायित रहते हैं। क्योंकि हमारे यहाँ जब वेदों का गान गाया जाता है, एक स्वर नहीं नाना प्रकार की ध्वनियाँ प्रारम्भ हो जाती है। मानो हम इसलिए गान गाते हैं, माला पाठ में गान इसलिए गाया जाता है कि हम परम आनन्द की प्राप्ति कर सकें। क्योंकि हमारा जो प्रत्येक शब्द है, वह मानो प्रज्ञावी बन जाए और प्रकाश में रत्त हो जाए। हमारा जितना भी संसार का, और हमारा मानवीय क्रियाकलाप कहलाता है, उस सर्वत्र क्रियाकलाप में अपने में आनन्द को चाहते रहते हैं।

हमारे यहाँ एक समय, हमे स्मरण आता रहता है, महात्मा श्वेतकेतु मुनि महाराज, एक समय, वेदों का गान गा रहे थे। और वे तन्मय हो करके मानो अपनी ध्वनि में ध्वनित हो रहे थे। तो महर्षि शाण्डिलय मुनि ने एक समय कहा-हे प्रभु! यह तुम क्या कर रहे है? उन्होंने कहा - प्रभु! मैं उस वेदज्ञ प्रभु की उपासना कर रहा हूँ, जो हमारे अन्तर्हृदयों में विद्यमान है। और मेरी मनोनीत यही इच्छा हो रही है कि मैं उस आनन्द के लिए विभोर हो जाऊं। इसीलिए मैं वेदज्ञ बनना चाहता हूँ। और वेदज्ञ वो प्राणी कहलाता है, जो परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान का सदैव बखान करता रहता है, अथवा इतना विचित्र, कि जब भी जागरूक होता है, या निद्रा में तल्लीन होता हैं, अपने प्रभु का गुणगान गाता रहता है। और अपने में यह स्वीकार करता रहता है कि मैं वेदज्ञ हूँ और मैं वेद रूपी प्रकाश में रत्त हो गया हूँ। बेटा! वेद रूपी प्रकाश क्या है? क्योंकि वह हमारे अन्तःकरण में जो प्रकाश आता है, अन्तःकरण जिससे प्रकाशित होता है, वही तो वेदज्ञ, मानो, ज्ञान कहा जाता है, प्रकाश कहा जाता है। तो मेरे पुत्रो! देखो, वेद के आचार्यो ने, हमारे यहाँ, भिन्न-भिन्न प्रकार की विवेचनाएं की है। आज हम उन विवेचनाओं में तो जाना नहीं चाहते हैं, परन्तु विचार, वेद का मन्त्र यह कहता है कि-हे मानव! तू प्रकाश में जाना चाहता है, प्रकाश में रत्त होना चाहता है, उस प्रकाश के लिए, जिस प्रकाश के लिए सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के वर्तमान के काल तक प्रयास करता रहा है। और वह, मुनिवरों! देखो, अपने में अपनेपन का भान करता हुआ, प्रकाश में, जहाँ रत्त हो जाता है, वहीं इन्द्रियों का विषय शान्त हो जाता है। मानो प्रकाश को, कोई अपने में उद्गीत नहीं गा सका है कि वो प्रकाश और आनन्द किस प्रकार का है? क्योंकि उसकी अनुभूति, प्रायः होती है। परन्तु, जब अनुभूति होती है, जब ही मौन हो जाता है। मेरे पुत्रो! मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा करना नहीं चाहता हूँ, क्योंकि ये तो ज्ञान की चर्चाएं हैं। वेदों में, एक-एक शब्द में, मानो उस परमपिता परमात्मा की महती विद्यमान रहती है और उसका ज्ञान और विज्ञान मानो वो प्रज्ञ कहलाता है। तो विचार-विनिमय क्या, मेरे पुत्रो! देखो, वेद का मन्त्र हमें उद्गीत गा रहा

है, और वेदमन्त्र कहता है कि-हे मानव! उस परमपिता परमात्मा, जो वेदज्ञ है और प्रज्ञ कहलाता है, उस परमपिता परमात्मा की महती को सदैव अपने में धारण करते हुए इस संसार की प्रतिभा, अन्धकार को त्याग करके, बेटा! उसकी प्रतिभा में अपने को रत्त करते चले जाएं, जिससे जीवन एक उद्गीत गाने वाला बन जाएं।

ऋषि-मुनियों के अनुसन्धान

आओ, मेरे पुत्रो! आज मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ ऋषि-मुनियो की, बेटा! सभायें होती रही हैं, और ऋषि-मुनियो का एक विचार-विनिमय होता रहा है। हमारे यहाँ ऋषि-मुनियो की एक बडी विचित्र देन रही है कि किसी भी वस्तु पर जब अनुसन्धान करना उन्होंनें प्रारम्भ किया, जो इतनी गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो गए हैं कि मानो देखो, उस गम्भीरता में इतने महान, अन्तर्मुखी बन गए हैं, मुनिवरों! देखो, वहाँ मानव, अपने में प्रसन्न और युक्तियों से युक्त होता रहा है। बेटा! ऋषि-मुनियो ने अन्तिम तक उनके उद्गीत गाए हैं, जब तक उसका निर्णय न हो सका है। इसी प्रकार, बेटा! देखो, हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में भिन्न-भिन्न प्रकार के मन्त्र और मन्त्रों की प्रतिभा, मानो इतिहास और साहित्य में भी मानो देखो, प्रकाशां भूत प्रवाः वह प्रकाश होता रहा है। क्योंकि हमारे यहाँ, जितना भी इतिहास है, अथवा साहित्य है, अथवा साहित्य है, उस साहित्य में देखो, इतने गम्भीर साहित्यकार हुए है, जिन्होंने बेटा! देखो, वेद के, और आपने विचारों का अन्वेषण करके, बेटा! उसे साहित्यिक रूप में परिणत कर दिया है। मानो देखो, वह साहित्य भी हमारे यहाँ, एक वेद की ही प्रतिभा स्वीकार कर लेती है। जैसे हमारे यहाँ याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने शतपथ ब्राह्मण की रचना की है। परन्तु उसमें एक-एक आख्यिका ऐसी है, क्या, मुनिवरों! वह वेदों की प्रतिभा कहलाती है, और अलंकार से उसे जब अंलकृत करते है, उसको सजातीय बनाया है, तो मानो, ऐसा प्रतीत होता है, जैसे ऋषि ने, मानो देखो, अपने अन्तःकरण को अन्धकार से प्रकाश में ला करके प्रकाश को उस पौथी में निहित कर दिया है। तो मेरे पुत्रो! देखो, जब यह वाक्य आता है, और भी देखो, हमारे यहाँ शतपथ ब्राह्मण तो देखो, साहित्य कहलाता है। परन्तु जब इतिहास की चर्चाएं आती है, तो ऋषि-मुनियो का जीवन इतना तन्मय हो गया है, इतना गम्भीर और सुगन्धित हुआ है, कि उनके जीवन-काल में ही जीवन की प्रतिभा की जब लेखनी, लेखक, लेखनीबद्ध करता है, तो वह इतिहास न रह करके, बेटा! वह, मानव को प्रेरणा देने वाला बन जाता है, और मानव को प्रेरित करता रहता है। और वह जो प्रेरणा है, वही मानव के लिए, बेटा! प्रकाश बन करके उसके जीवन को परिवर्तित कर देती है और काल और समय को भी मानो वो परिवर्तित करते रहे हैं।

तो विचार आता रहता है, बेटा! इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा नहीं देने आया हूँ। विचार केवल यह, कि हमारे यहाँ, मानो देखो, ऋषि-मुनि एक स्थली पर विद्यमान हो करके, नाना ऋषि-मुनियो का एक समूह, विद्यमान है और इन्द्र के ऊपर, बेटा! विवेचना हो रही है। परन्तु, स्वाति मुनि के आश्रम में ऋषि-मुनियो का आगमन हुआ हैं। और स्वाति मुनि महाराज के आश्रम में, बेटा! देखो, विद्यालय में ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहे है। और अध्ययन, मानो देखो, प्राण के ऊपर अध्ययन हो रहा है। क्योंकि हमारे शरीरों में दस प्राण बन करके रहते हैं, और ये दस ही प्राण है, बेटा! जो बाह्य जगत् में इस ब्रह्माण्ड के स्तम्भ बने हुए हैं। ये दोनो प्रकार से, देखो, ऋषि-मुनियो ने, बेटा! आन्तरिक प्राण और बाह्य प्राणों का, दोनो का, समन्वय करने का प्रयास किया है। क्योंकि, जब हम, प्राण का प्राण से ही समन्वय कर देते हैं, जैसे बेटा! देखो, इससे पूर्व काल में हमने तुम्हें यह निर्णय कराया कि प्राण, एक विशेष होता है और एक मानो देखो, सार्वभौम कहलाता है। वह जो सार्वभौम प्राण है, वास्तव में उसे हमारे यहाँ देखो, जैसे विशेष, और एक सर्वांग कहलाता है।

प्राण-विद्या

याग और तपस्या

मुनिवरों! देखो, वह जो प्राणसत्ता, जो सर्वत्रता में विद्यमान है। मेरे पुत्रो! देखो, यह जो विशेष प्राण है, इनमें एक नाग प्राण है और नाग प्राण के ऊपर ऋषि-मुनि बड़ा अध्ययन करते रहे हैं। मेरे पुत्रो! मुझे स्मरण आता रहता है कि महर्षि स्वाति मुनि के यहाँ, बेटा! देखो, नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते रहते थे। उनका बाल्यकाल था। और बाल्यकाल में बेटा! देखो, प्राणों की संध्या को बनाने में सदैव तत्पर रहे हैं मेरे पुत्रो! देखो, राजा रावण के पुत्र मेधनाद जी महर्षि स्वाति मुनि के यहाँ, बेटा! देखो, प्राण-विद्यास का अध्ययन करते रहे। और देखो, एक स्थान से, मानो देखो, बाली पुत्र अंगद भी, मानो उसी विद्यालय में अध्ययन करते। मेरे प्यारे! देखो, अध्ययन करते हुए ब्रह्मणा वृते, वह, मुनिवरों! देखो, नाग-प्राण के ऊपर अध्ययन प्रारम्भ हो रहा था। प्रारम्भ होते हुए, बेटा! देखो, इसी प्राण के ऊपर, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के यहाँ, नाना ऋषि-मुनियो का एक समूह विद्यान था और प्राण के ऊपर, बेटा! उनका विचार-विनिमय हो रहा था।

मेरे पुत्रो! देखो, महर्षि स्वाति मुनि महाराज और देखो, उनमें ब्रह्मचारीजन, ब्रह्मचारियों ने एक समय प्रातःकालीन यह प्रार्थना की- हे प्रभु! हमने यह श्रवण किया है कि महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के यहाँ नाना ब्रह्मचारी, मानो प्राणविद्या के ऊपर अध्ययन कर रहे हैं। तो प्रभु! हमारी इच्छा यह है कि हम भी उस ऋषि के आश्रम में गमन करना चाहते हैं। ऋषि-मुनियो के मुखारबिन्दु से, मानो जो-जो उनके अध्ययन की प्रतिक्रिया है, उसे हम श्रवण करें। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा -बहुत प्रियतम्, ब्रह्मचारियों! विचार तो तुम्हारा सुशोभनीय है, परन्तु वहाँ से हमें कोई निमन्त्रण नहीं आया है। मेरे प्यारे! देखो, उस समय ब्रह्मचारियों ने कहा-प्रभु! किसी जिज्ञासा के लिए मानव को निमन्त्रण की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि यह एक मानो पिपासा है। और वहाँ, मानो देखो, उसके ऊपर विश्लेषण होना है, तो इससे मानो देखो, जिज्ञासु बन करके जाना चाहिए। क्योंकि, यदि निमन्त्रण आता है, तो निमन्त्रण में तो प्रभु! देखो, हमारे लिए मानो एक जिज्ञासा नहीं बन पाएगी। मुनिवरों! देखो, ऋषि ने वह वाक्य स्वीकार कर लिया। और स्वीकार करके बेटा! वहाँ से अपने वाहन में विद्यमान हो करके, बेटा! देखो, वह दण्डक वनों में, महर्षि वशिष्ठ मुनि आश्रम में, बेटा! देखो, स्वाति मुनि महाराज का आगमन हुआ। महर्षि ने, बेटा! बड़ा, अपने में हर्ष-ध्वनि करते हुए उन्होंने कहा - यह हमारा बड़ा सौभाग्य है, जो आज स्वाति मुनि महाराज, जो इस प्राण के विशेषज्ञ हैं, और प्राण के ऊपर जिनका अन्वेषण चल रहा है, यह हमारा कितना सौभाग्य है। मेरे प्यारे! देखो, उनका आसन दिया, ब्रह्मचारी अपनी-अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो गये।

प्राण के रूपों का योग और याग से समन्वय

मेरे पुत्रो! देखो, वहाँ विचार-विनिमय हो रहा है। इन्द्र के ऊपर विचार हो रहा है। तो मुनिवरों! देखो, महर्षि विश्वामित्र इत्यादि मुनियों ने और भी देखो, ब्रह्मचारी कबन्धि ने अपना निर्णय दिया कि मैं वायु को ही प्राण स्वीकार करता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, इसमें महर्षि स्वाति मुनि महाराज ने कहा-कि तुम इस प्राण को वायु के रूप में दृष्टिपात करत हो या प्राण के रूप में? उन्होंने कहा कि- भगवन्! वायु ही प्राण है और प्राण ही वायु है। उन्होंने कहा -यह प्राण, कहाँ-कहाँ समन्वय करके, इसका कैसा-कैसा स्वरूप बनता है? यह जानना चाहते है। ब्रह्मचारी कवन्धि ने कहा-प्रभु! यह, मेरे विचार से तो ऐसा आता है, मानो देखो, यह प्राण, जब वायु से मिलान करता है, तो वायु के गर्भ में क्योंकि मातृत्व बन जाता है। मानो देखो, विभक्त-रूप में जब विभक्त-क्रिया आ जाती है, तो यही प्राण भिन्न-भिन्न रूपों में परिणत हो जाता है। मानो देखो, जैसे प्राण, अपान, उदान, समान, व्यान बन जाते है। उप प्राणों में, मानो ऊर्ध्वा में गमन करते, नाग, देवदत्त, धनञ्जय, कुरू और कृकल बन जाते हैं। मानो देखो, जब इन प्राणों का मिलान, अणु और परमाणुवाद से होता है, तो शक्तिशाली बन करके अणु के रूप में व्यापने लगते हैं। और यही प्राण, जब मानो देखो, तपस्वी के हृदय में, जब तपस्वी के हृदय में प्राणों का मिलन होता है, मानो प्राण

को अपान से मिलान कर दिया जाता है, तो वह तपस्वी प्राण में तपायमान हो जाता है। और तपायमान हो करके वो योगेश्वर बन जाता है। और वही, मानो देखो, प्राण और अपान का जब मिलान करता है, उसमें यदि व्यान का मिलना कर देता है, और समान की पुट लगा देता है, तो वही देखो, लोक-लोकान्तरों वाले प्राणायाम, अपनी आभा में मानो वह गमन करने लगता है। बेटा! विचार आता रहता है कि जब इस प्रकार का अन्वेषण ऋषि-मुनियो के यहा था। जब ब्रह्मचारी कबन्धि ने ऐसा कहा, तो उस समय, मुनिवरों! देखो, महर्षि स्वाति ने कहा-प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं। ब्रह्मचारीवर! क्या जब इस प्राण का याग से समन्वय होता है, तो उसका कौन-सा रूप बनता है? तो उस समय उन्होंने कहा - जब यह याग का स्वरूप बनता है, तो ये चित्रावलियों में परिणत हो करके, अग्नि की जो प्राणमयी वृत्तिधारा है, उसमें गमन करके, यह द्यौ लोक को गमन करते लगता हैं। उन्होंने कहा -यथार्थ है। परन्तु देखो, जब यह प्राण, इन्द्र राजा के यहाँ होता है, राजा को इन्द्र क्यों कहते है? क्योंकि उसमें कोई सत्ता है, मानो देखो, उग्र गति है। उन्होंने कहा -यह जो राजा है, राजा को अपनी उग्र गति बहुत हुआ करती है, क्योंकि वह प्राण का स्वामी है। और वो प्रजा का स्वामी बनने से, मानो देखो, इन्द्र, वह तपस्वी बन करके अश्वमेध यागों मे इतना तपायमान हो जाता है, उसकी वाणी इतनी तपायमान हो जाती है कि वह, मानो देखो, इन्द्र, अपने इन्द्रत्त्व को प्राप्त हो करके और इन्द्रियों पर संयम करता हुआ, उनका साकल्य बना करके अपने अन्तर्हृदयों मे, मानो देखो, वह याग करता है। और याग का बाह्य जगत् में उसका समन्वय कर देता हैख्, तो वह जो प्राणं ब्रह्मा कृतं लोका है वह मानो देखो, इन्द्र की आभा को प्राप्त हो जाता है।

मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि ने जब इस प्रकार वर्णन तो स्वाति ने कहा-प्रभु! हम यह और जानना चाहते हैं किए नाग प्राण का यदि हम प्राण से समन्वय कर देते हैं, तो क्या बन जाता है? मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी कबन्धि ने कहा-प्रभु! इसको मैं नहीं जानता। इस सम्बन्ध में मैंने कोई अनुसन्धान नहीं किया। आगे विचारा आता रहेगा, वेद के मन्त्रों के द्वारा हम अध्ययन करते रहेंगे। मेरे पुत्रो! देखो, उस समय स्वाति मुनि ने कहा-भगवन! ब्रह्मचारी! यह तो जानते हो कि माता के गर्भ में जब हम पनपते रहते हैं, और जब शिशु का प्रवेश होता है, तो वहाँ कौन-सा प्राणी गति करता है? कौन-सा प्राण है, जो देखो, शिशु को अपने में सत्ता को प्रदान करता है? उस समय उन्होंने कहा-प्रभु! वह जो शिशु है, वो आत्मा है, वो स्वयं शक्तिशाली हैं। परन्तु वह स्वतः अपने में सत्ता को धारण किए रहती है। और माता के गर्भ में, जैसे ही शिशु जाता है, तो मानो देखो, प्राण और अपान, दोनों ही, शक्तिशाली बन करके, सामान्य प्राण, देखो, उसमें सहयोगी बन जाता है। और सहयोगी बन करके, देखो, उसमें, वह माता के गर्भस्थल में सत्ता को प्राप्त करता रहता है। इन तीनों प्राणों की, और पंच प्राण, मानो देखो, उसमें एकोकीभूत हो जाते हैं, एकोकीकरण करने लगते हैं। मेरे प्यारे! देखो, स्वाति मुनि ने कहा-यथार्थ है। मुनिवरों! देखो, उन्होंने कहा -हे ब्रह्मचारी! अब मैं यह जानना चाहता हूँ कि यदि मानव, प्राण को एक अंग में लाना चाहता है, तो कौन-सी प्रतिक्रिया की आवश्यकता है? मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारी कवन्धि ने कहा-प्रभु! यह हमारे आचार्य ने अब तक हमें निर्णय नहीं कराया है। मानो देखो, इसमें निर्णय की सूक्ष्मता है, हम योगाभ्यास तो करते रहते है, परन्तु देखो, हम प्राणसत्ता को, हम देखो, इन परमाणु और अणुवाद में भी दृष्टिपात करते रहे हैं। यंत्रों का निर्माण भी करते रहते हैं, उन यंत्रों में भी उसकी प्रतिभा हमें दृष्टिपात आती रहती है। परन्तु देखो, हम इस सम्बन्ध में अब तक नहीं जानते हैं भगवन!

प्राण से यन्त्रों और अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा - चलो यह तो मैंने स्वीकर कर लिया। परन्तु बाह्य जगत् में जाओगे, तो तुम देखो, जब वरुणास्त्र का निर्माण करोगे, तो वहाँ कौन से प्राण की आवश्यकता है? मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचारी

कबन्धि ने कहा-प्रभु! यह तो हम मानो निर्माण करते रहते हैं। इसमें तो हमें, मानो देखो, जो व्यान प्राण है, व्यान प्राण के साथ में देखो, समान का जब मिलान करते हैं, उसममें देवदत्त का मिलान करके, मानो देखो, वह शीतलो प्राणाः वृत्त-प्राणों को हम वायुमण्डल से मानो धारण कर लेते है, देखो, ये वृहस्ताः परमाणुओं का निर्माण करके, यंत्र को यंत्रित कर लेते है। वे जलाशय यंत्र, मानो देखो, जलास्त्र का निर्माण हो जाता है। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा -यथार्थ। तो मुनिवरों! देखो, अब वे मौन होने लगे, तो स्वाति मुनि से प्रश्न किया गया कि-महाराज! नाग-प्राण और देखो, जब प्राण का, दोनो का समन्वय होता है, तो इसमें क्या वृत्तियां है? मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा कि - इसकी दो प्रकार की प्रवृत्तियाँ बनती है। स्वाति मुनि ने कहा कि-देखो, एक तो वह प्रवृत्ति है, जब नाग प्राण को हम, प्राण से उसका समन्वय करते हैं और देखो, समन्वय प्राण से करते, उसमें उदान की पुट लग जाती है और व्यान, मानो देखो, उसके ऊपर अश्वत्थ हो जाता है। जब अश्वत्थ हो जाता है, तो उस समय, मानो देखो, वह जो प्राणहै, वह कृत बन जाता है। और कृत बन करके वही प्राण, मेरे प्यारे! देखो, एक यंत्र के रूप में यंत्रित कर लेते हैं, मानो यंत्रों में ही इन परमाणुओं को ला करके और परमाणुवाद से यंत्रों का निर्माण करते हैं, उसको नागेश्वरः यंत्र कहा जाता है।

मेरे प्यारे! उन्होंने कहा -भगवन! यह तो स्वीकार कर लिया, परन्तु आध्यात्मिकवाद से क्या समन्वय हो जाएगा? उन्होंने कहा - आध्यात्मिकवाद में नागप्राण और देखो, प्राण का समन्वय करते हुए और समान प्राण की पुट लगा करके, जब मानव एकोकीभूत हो करके, एक स्थली पर आसन लगा करके विद्यमान हो जाता हैं, तो मानो देखो, वह समाधिनस्थ हो जाता है। और समाधिनस्थ हो करके वह प्राण को अपना में, और अपान को व्यान में, और व्यान को नाग में, नाग को देवदत्त में, देवदत्त को मानो देखो, वह सामान्य प्राण में प्रवेश करके बेटा! वो समाधिनस्थ हो जाता है। और समाधिनस्थ हो करके, मेरे पुत्रो! देखो, वह अपने में अपनेपन, आनन्द को अपने में, प्रतियों में दृष्टिपात करने लगता है। जो बिखरी हुई प्रवृत्तियाँ हैं, मानो देखो, जो लोक-लोकान्तरों में बिखरे हुए परमाणु है, लोक-लोकान्तर है। उनको भी वह दृष्टिपात करने लगता है।

मेरे प्यारे! देखो, स्वाति मुनि ने कहा-और वह, जो मैंने पूर्व कहा है, जब यंत्रों का निर्माण हो जाता है, नाग प्राण का अन्तरिक्ष में उन परमाणुओं को एकत्रित करते हैं, प्राण को करते है, और देखो, उदान को पुट लगा देते है, जो गमन कर रहा है और देखो, वह जो सामान्य प्राण हे, उसको ला करके, उसकी पुट लगा करके, परमाणुवाद की, मानो देखो, वो नागेश्वर एक यंत्र बन जाता है और उसमें यह विशेषता हो जाती है, वो नाग फांस के रूप में भी परिणत किया गया है कि क्या उस यंत्र को यदि हम प्रहार कर देते हैं, किसी प्राणी पर तो मानो कुछ समय के पश्चात् वो देखो, वह उसकी कृतां ब्रह्मे देखो, उसके रस-रक्त हो मानो अपने में शान्त कर अपने में समन्वय कर लेता है, और रात्रि, देखो, एक व्यतीत होने पर, वह मानो, उसको संसार में कोई जीवित नहीं बना सकता, उसकी मृत्यु हो जाएगी। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि स्वाति ने कहा-मेरे यहाँ विद्यालय में इस प्रकार का अध्ययन हम कर रहें हैं कि प्राण से जीवन-सत्ता कैसे प्राप्त हो सकती है यह भी हम अन्वेषण कर रहे हैं। तो मानो देखो, वह जो बह्मे व्रतम्, मुनिवरों! देखो, जिनमें ये नाग प्राण इत्यादियों का विभाजन होता रहता है, वही प्राण, मेरे प्यारे! देखो, वही तो इन्द्रो सवं ब्रह्माः? वह इन्द्र नाम, बेटा! यहाँ वायु का स्वीकार किया गया है। महर्षि स्वाति ने भी इस प्रकार का निर्णय कर दियां और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज का यह प्रश्न बना ही रहा कि-इन्द्र कौन है? मेरे प्यारे! उन्होंने, देखो, नाना रूपों में इसका निर्णय दिया, परन्तु उसके पश्चात् भी यह बना ही रहो, क्योंकि इन्द्र एकोकीवचन कहलाता है। परन्तु देखो, वशिष्ठ मुनि ने कहा-क्या यह जो जितने भी प्राणायाम है, यंत्रवाद है, प्रकृतिवाद है, सर्वत्र मानो देखो, इसमें बहुवचन माना गया है इसमें जब तक देखो, प्राण के साथ में अग्नि को पुट

नहीं होगी, जल की पुट नहीं होगी, पृथ्वी के परमाणुओं की पुट नहीं होगी, तो यंत्र का निर्माण नहीं कर सकते। एकोकिता में परमाणु का, यंत्रों का, निर्माण नहीं होता। और यहा मानो देखो, इन्द्र का एक प्रसंग है, इन्द्र के बहुत से पर्यायवाची शब्द हैं, वह एक ही वचन में परिणत होता रहता है।

प्राणों का विभाजनवाद और तृष्णावाद

मानो देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार कहा, तो मुनिवरों! देखो, सभा में महर्षि सोमकेतु मुनि महाराज उपस्थित हुए। और सोमकेतु मुनि ने कहा-प्रभु! हमारे जो वंशलज गएं हैं, हमारे जो पूर्वज गएं हैं, मानो देखो, उन्होंने हमें यह निर्णय कराया, हमें यह कहा गया है कि इन्द्र नाम, आत्मा को यदि हम स्वीकार करते हैं, तो प्रियतम् हैं, क्योंकि वह परमात्मा के लिय पिपासी रहता है और परमात्मा के समीप जाना चाहता है। अन्तरात्मा में जब भी, कोई मानो देखो, संसार में किसी प्रकार आत्मा के विपरीत कोई क्रियाकलाप हो जाता है, तो उसे अन्तरात्मा में दुःखित होना और वह, मानो देखो, अपने में एक विडम्बना युक्त बन जाता है, एक दाह उत्पन्न हो जाती है। तो वह जो दाह है, वह सिद्ध करती है कि संसार को यह आत्मा नहीं चाहता। मानो देखो, यह जो प्रपंच है, संसार का जितना भी प्रपंच है, जितना भी विभाजनवाद है, उसे यह नहीं चाहता। क्योंकि -उन्होंने कहा तो मानो देखो, इसका, सृष्टि के पिता ने मानो शरीर में प्रवेश करते हुए इसका विभाजन किया है। और, वह विभाजन किस प्रकार? मानो देखो, बड़ा विचित्र, मैं तुम्हें वाक्य प्रकट कर रहा हूँ। बेटा! देखो, जब यह आत्मा इस संसार के मानो देखो, एक बाल्य ने माता के गर्भ में, देखो, प्रवेश, अमृतम वह एक शरीर को धारण किया और जब बाह्य जगत् में आया, तो बेटा! देखो, वह शून्यता के रूप में विद्यमान था। परन्तु देखो, माता के गर्भ से आते ही उसने, बेटा! व्याकुल होना प्रारम्भ किया। और व्याकुल जब हुआ, तो क्योंकि वो संसार में आ गया, बेटा! देखो, प्रभु ने, मेरे पिता ने, निर्माणवेत्ता ने, देखो, आत्मा के दो वृत्ति दी हैं, मानो एक ज्ञान है, और एक प्रयत्न कहलाता है। ये ज्ञान की प्रतियां कहलाती है। मेरे प्यारे! आत्मा की प्रतियां भी, इनको कहा जाता है। जब मानो देखो, दोनों बने, तो एक वृत्ति को प्राण ने अपनाया और एक को मनस्त्व, प्रकृति के सूक्ष्म तन्तुओं ने अपना लिया। जब यह अपनाया गया, तो मानो देखो, यह अपनाते हुए, प्राणों के दस भाग बन गएं -दसं प्राणां ब्रह्माः सबसे प्रथम, देखो, प्राण के दस भाग बने। मेरे पुत्रो! देखो, अमृतो सम्भवः वेच प्रभाणां ब्रहे, वेद की आख्यिका कहती है-सबसे प्रथम प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान। मुनिवरों! देखो, वृत्ते दे सुदानस्ता और देखो, पांच उपप्राण बने, बेटा! नाग, देवदत्त, धनंजय, कुरू और कृकल। अब मुनिवरों! देखो, प्राण के ता और विभाजन हो नहीं सकते थे, दस से ज्यादा विशेष-प्राण के भाग नहीं हो सकते थे।

मेरे पुत्रो! देखो, वही प्राण, ब्रह्मेकृतम् देखो, यह विचारा, क्योंकि वह जो मन विभक्त हो गया है, मानो देखो, ज्ञान के माध्यम के सूतों मे, और प्राण, क्रिया के स्वरूप में प्रवेश हो गया हैं मेरे प्यारे! देखो, मन को शांति नहीं प्राप्त हुई। और इस प्राणों के, मानो देखो, ये पांच ज्ञानेन्द्रियाँ बन गई। पांच ज्ञानेन्द्रियों को, बेटा! देखो, ज्ञान का, देवताओं का, इनको समूह बनाया गयां मेरे प्यारे! देखो, सबसे प्रथम, मुनिवरों! देखो, वाकशक्ति का निर्माण किया, वाकम् देखो, रसों का जो समन्वय रहता है, बेटा! वाणी का निर्माण किया, वाक्तं सत्सं ब्रहे । मेरे प्यारे! देखो, उसका निर्माण किया गया। मांगलब्रहे, वह अपने में अपनेपन को ग्रहण करने लगा। बेटा! देखो, त्वचा का निर्माण किया, तो वह प्रीति में प्रवेश हो गया। मेरे पुत्रो! देखो, जब चक्षु का निर्माण किया, अग्नि देवता बन गया। देखो, वह रूप को दृष्टिपात करने लगा। और श्रोत्रों का समन्वय, देखो, दिशाओं से सम्बन्धित हो गया, वह इन्द्र के समीप चला गया। बेटा! मेरे पुत्रो! देखो, घ्राण, पृथ्वी-देवता बन गया, वह सुगन्ध उसका देवता बन गयां मेरे प्यारे! देखो, इसको कार्य वाहक प्रदान कर दिया। अब, मुनिवरों! देखो, पांच कर्मेन्द्रियों का निर्माण हो गया। मेरे प्यारे!

देखो, इसको शांति नहीं उत्पन्न हुईं मुनिवरों! देखो, इसकी विभक्त क्रियाएं बनती रही। और वह विभाजन होते-होते मेरे पुत्रो! मुनिवरों! देखो, वह काम, क्रोध, लोभ, मोह के रूप में परिवर्तित हो गई। वही देखो, बेटा! अतितृष्णा के रूप में परिणत हो गई।

तृष्णा से मुक्ति ही मोक्षपथ प्रशस्ति है।

जब तृष्णा बलतवी हो गयी, तो इस प्रकार से, मुनिवरों! देखो, वह मानो बेटा! देखो, प्राण से इस प्राण वृत्तियों को ले करके जब तृष्णा की तृष्णा बलवती हो गयी, कार्यवाहन इतना बलवती हो या, बेटा! शांति की स्थापना नहीं हुई। शांति न होने से, मेरे पुत्रो! जब शांति न हुई तो तृष्णा का जन्म हो गया, तृष्णा बलवती बनी। अब ऋषि-मुनियो ने यह विचारा, जब वेदज्ञ बनने के लिए गमन करते लगे कि - हम कैसे शांति को प्राप्त कर सकते हैं? मेरे प्यारे! देखो, तृष्णा को समेटना प्रारम्भ किया। तृष्णा सिमट गयी। मेरे पुत्रो! देखो, वह वृत्त बन करके, प्राण का आश्रय ले करके परमात्मा प्राणं ब्रहे प्राणेश्वर का आश्रय ले करके काम, क्रोध, लोभ, मोह, इन पर बेटा! उन्होंने संयम किया। और संयम करते, मुनिवरों! देखो, आगे, जब अग्रणीय बने, तो बेटा! देखो, इन्हीं को ले करके, इन्द्रियों के विषयों का साकल्य बना दिया। इसको एक साकल्य के रूप में, यज्ञमान बन गया। बेटा! आध्यात्मिक याग का प्रारम्भ हो गया। और आध्यात्मिक याग का प्रारम्भ हो करके, जिस हृदय से सर्वत्र ब्रह्माण्ड समाहित हो जाता है, उसी ब्रह्माण्ड में मुनिवरों! देखो, ये सर्वत्र ब्रह्माण्ड समाहित हो जाता है, उसी ब्रह्माण्ड में मुनिवरों! देखो, ये सर्वत्र इन्द्रियों के विषयों का साकल्य बना करके, वहाँ एक ज्ञान रूपी अग्नि उपलब्ध हो गई थी। वह ज्ञान रूपी अग्नि प्रदीप्त हो गयी, तो बेटा! उसमें उन्हें भस्म करने लगे। मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि-जन, जितने भी देखो, मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करने वाले क्या, जो अन्तरात्मा, अपने स्वरूप में प्रवेश होना चाहता है, मेरे पुत्रो! देखो, हृदय रूपी यज्ञशाला में साकल्यों के द्वारं ब्रह्म, उसमें, बेटा! हूत करने लगे। जब वह हूत बन गये, तो बेटा! प्राण अपने में सिमिट गया और प्राण बेटा! सिमिट करके, अपने स्वरूप में प्रवेश हो करके बेटा! वो वायु, इन्द्र बन गया, वे परमपिता परमात्मा इन्द्र के रूप में स्वीकार करके बेटा! इन्द्रमयी वो एकोकीकरण हो गया।

मेरे पुत्रो! देखो, यह मानव का जीवन, बेटा! जहाँ से अन्तरात्मा, अपने में ज्ञान और प्रयत्न को दोनों को एक सूत्र में लाया गया, और लाने से स्वतः जब अपने में, अपने में ही दृष्टिपात करके बेटा! वही अन्तरात्मा एकोकीकरण हो करके, बेटा! मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करने लगा। तो बेटा! मैं कहाँ चला गया हूँ, बहुत गम्भीर रहस्यतम में प्रवेश कर गया हूँ। बड़ा विचित्र! मनो जब किसी काल में बेटा! अध्ययन करते थे, गुरुओं के द्वारा, तो मुनिवरों! देखो, वे गुरुजी इसकी विवेचना करते रहते थे। और मानो देखो, अपने गर्भ की चर्चाएं, हमें उद्गीत रूप में गाते रहते थे। मेरे पुत्रो! देखो, सर्वत्र एक सूत्र में पिरोएं हुए है। उस सूत्र का जब ज्ञान हो जाता है, सूत्र में प्रवेश हो जाते हैं, तो बेटा! एकोकीकरणमय वृत्ति बन जाते हैं तो विचार-विनिमय क्या? बेटा! मैं बहुत दूरी चला गया हूँ, विचार यह, मुनिवरों! देखो, ऋषि-मुनियो ने आध्यात्मिकवाद और भौतिकवाद, बेटा! दोनो का, समन्वय किया है और दोनों को एक सूत्र में लाने का प्रयास किया है, जिससे बेटा! देखो, प्राण की प्रतिष्ठा को हम जान सकें।

आओ, मेरे प्यारे! देखो, मैं बहुत दूरी न जाता हुआ, विचार-विनिमय क्या? मेरे पुत्रो! देखो, स्वाति मुनि ने इसका बड़ा विश्लेषण किया हैं स्वाति मुनि ने जब यह कहा कि-भगवन! ब्रह्मणे कृताः मानो देखो, नाग प्राण की, उन्होंने विवेचना की, अब उन्होंने बेटा! एक विवेचना और की है, इस प्राण की, और देखो, मानवीय-दर्शन की विवेचना करते हुए, ऋषि ने अपना उद्गीत गाया। परन्तु इन प्राणों को एकोकीभूत में, एकोकी रूप में, लाने के लिए बेटा! देखो, एकोकीकृत किया और उन्होंने, बेटा! प्राण के एक देखो, प्राणों को एक अंग में लाना चाहा, तो प्राणों

की एकाग्रता बन गयी। बेटा! प्राण अपना को, दोनों को मिलान किया, इसमें उदान की पुट लगाई गई और उदान प्राण को, बेटा! जब पुट लग गई, तो उसमें समान प्राण को मिश्रित कर दिया। और देखो, वह जब समान को मिश्रित, और व्यान इसमें स्वतः प्रवेश हो गया, तो बेटा! जिस अंग में मानव लाना चाहता है, उसी अंग में बेटा! वह मानो देखो, प्राण आ जाता है। मुझे, बेटा! स्मरण है, महात्मा चमन ऋषि महाराज ने, इन प्राणो की प्रतिक्रिया से, बेटा! देखो, उन्होंने बहुत वर्षो तक तपस्या की। बेटा! देखो, शरीर भी, मानो देखो, एक पार्थिक तत्त्व, पार्थिक अंगृतियों से परिणत हो गया। परन्तु प्राण देखो, उनके आंगन में एकोकीभूत परिणत होते रहे। बेटा! देखो, उनका जब समाधि-काल-वृत्त, देखो, जब जगत् में आये, तो बेटा! देखो, शरीर ज्यों का त्यों वृत्तीत बन गया। देखो, मैंने तुम्हें इस प्रकार की विवेचनायें, चर्चायें की होंगी, आज मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा, तुम्हें प्रकट नहीं करूंगा। विचार केवल यह, कि प्राण का बड़ा महत्व माना गया हैं। प्राण अपनी स्थलियों में, बेटा! बड़ा विचित्र बन करके रहा है। परन्तु ऋषि-मुनियो के मस्तिष्कों में, जब ऋषि-मुनियो के क्रियाकलाप में, ब्रह्मचारियों के, जो मृत्यु पर विजय करने वाले हैं, उनके हृदयों में, बेटा! हृदय अगम्यता में परिणत होता रहा है। तो आओ, मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ, न बेटा! मैं कोई व्याख्याता हूँ, केवल परिचय देने के लिए चला आता हूँ। यह मैंने तुम्हें आज सूक्ष्म सा परिचय दिया है और यह परिचय का अभिप्रायः यह है, क्या मुनिवरों! देखो, प्राण हम इन्द्र को स्वीकार करें, परन्तु आत्मा को स्वीकार करें। यह आत्मा ही मानो देखो, इन्द्र हैं राजा भी इन्द्र है, जो एक-सौ-एक अश्वमेध याग करता है। और- करने वाला, राजाओं के ऊपर मानो देखो, जो संयमी है, परमपिता परमात्मा, जो प्रकृति को समय-समय पर, मानो देखो, उद्बुद्ध करता रहता है, वही तो परमपिता परमात्मा, इन्द्र कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, जैसे बाह्य जगत् में संसार में, इन्द्र राजा, राष्ट्र को अनुशासन में लाने का प्रयास करता है। परन्तु, इसी प्रकार, मेरे पुत्रो! देखो, परमपिता परमात्मा इस प्रकृति के स्वरूप को, बेटा! अपने में अनुशासित करता हुआ, वे परमपिता परमात्मा के रूप में है। और मानव का शरीर क्रियाशील बना रहता हैं। यह भी इन्द्र है। और यह इन्द्र बन करके, मुनिवरों! देखो, प्राणों का एकोकीकरण करता है, इन्द्रियों का एकोकीकरण कर लेता है। उनके विषयों का साकल्य बना देता है। और वह आध्यात्किम याग करके बेटा! मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कर लेता है।

मेरे पुत्रो! देखो, यह विचार आज मैं तुम्हें विशेषता में देना नहीं चाहता हूँ। विचार कवल यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान करते हुए, मुनिवरों! देखो, इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा सर्वज्ञ हैं, परमपिता परमात्मा अनन्तमयी कहलाते है। उस परमपिता परमात्मा की महिमा में सदैव हमे रत्त रहना चाहिए। यह है, बेटा! आज का वाक्। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह, कि महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के यहाँ, बेटा! प्राणों के ऊपर अन्वेषण होता रहा, प्राणके ऊपर बेटा! विचार होता रहा। परन्तु देखो, मुझे समय मिलेगा कल, बेटा! मैं शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। क्योंकि, देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के यहाँ, राजकुमार, ऋषि कुमार, ऋषिवर, ब्रह्मवेत्ता, सब, बेटा! अपना-अपना विचार व्यक्त करते रहे है। उनके विचारों में एक महानता का, बेटा! देखो, दिवत्तम् प्रकाश होता रहता, जिसको धारण करके, मानव, धारयामि बन करके सागर से पार हो जाता है। यह है, बेटा! आज का वाक्। मुझे समय मिलेगा, कल मैं तुम्हें, बेटा! जो प्राण के सम्बन्ध में, देखो, राजा रावण के पुत्र मेधनाद, और देखो, बालि पुत्र अंगद की जो चर्चाएं होती रहती थीं, उनका संवाद, उनका विचार, मैं, बेटा! कल प्रकट कर सकूंगा। जो स्वाति और वशिष्ठ मुनि महाराज के, दोनों के, मानो देखो, संरक्षण में उनकी वार्त्ता होती रही है। यह चर्चाएं मुनिवरों! कल प्रकट करेंगे। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन। सी - २५, रामप्रस्थ -१०-१९८९

याग और तपस्या

पृष्ठ ६३ से १८३

८ पुरोहित २६-१०-१९८९

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी हैं और वह यज्ञोमयी स्वरूप है। क्योंकि जितना भी संसार का यह क्रियाकलाप हो रहा है, मानो उस परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता में, वह सर्वत्रता में दृष्टिपात आता रहता है। तो हमारा वेदमन्त्र यह कह रहा है कि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है, और वह पुरोहित कहलाए जाते हैं। क्योंकि, जो पराविद्या को प्रदान कराने वाला है, वह पुरोहित कहलाता है। हमारे यहाँ जितने भी देवतव कहलाते हैं, वे सर्वत्र पुरोहित कहलाते हैं। तो हमें उस पराविद्या के ऊपर विचार-विनिमय करना चाहिए। क्योंकि वह पराविद्या को प्रदान कराने वाले है, और हमारी अन्तरात्मा में हमें प्रेरित करते रहते हैं। उसी प्रेरणा को प्राप्त करता हुआ मानव, अपने-अपने क्रियाकलापों में सदैव तत्पर हो जाता है और विचारता रहता है कि मैं परमपिता परमात्मा के उस महान् प्रकाश में रत्त हो रहा हूँ, जिस प्रकाश में पराविद्या की हमें प्रेरणा प्राप्त होती रहती है और हम उस प्रेरणा को ही प्राप्त करके अपनी मानवीय जीवन और इस संसार की प्रतिभा में हम सदैव रत्त होते रहें, और यह जो नाना प्रकार का ज्ञान और विज्ञान मानवीय मस्तिष्कों में सदैव रत्त हो रहा है, यह सर्वत्र एक आभा और विचित्रत्त्व कहलाई जाती है।

राष्ट्रीय पुरोहित

आओ, मुनिवरों! देखो, आज का हमारा वेदमन्त्र हमें यह कह रहा है कि पुरोहित होने चाहिएं, क्योंकि पुरोहित ही हमारे समाज को ऊंचा बनाते है, और पुरोहित ही राष्ट्र को उंचा बनाते है, और वह पुरोहित ही है, जो, मानो देखो, आदि पुरूष परमपिता परमात्मा, जो पुरोहित के रूप में हमें प्रेरित करते रहते है। तो बेटा! यहाँ पुरोहित के नाना पर्यायवाची माने गएं है। परन्तु, देखो, जब किसी भी राष्ट्र में पुरोहित होता है, तो वह राजा का राष्ट्र, बेटा! पवित्र होता है, क्योंकि वह पराविद्या की प्रेरणा देता रहता है और राष्ट्र को यह प्रेरणा देता रहता है-हे राजन्! तू अपने राष्ट्र को महान और पवित्रतं बनाता चल और यह उस काल में बनेगा जब तू हे राजन्! अपने जीवन को अपनी प्रत्येक इन्द्रियों को राष्ट्रीयत्व में परिणत करा देगा, इसका राष्ट्रीयकरण हो जाए।

हृदय में राष्ट्र और राष्ट्र में हृदय

बेटा! हमारी प्रत्येक इन्द्रियों का राष्ट्रीयकरण होना चाहिए। जब प्रत्येक इन्द्रियां, मानो देखो, एक हृदय से केन्द्रित हो जाती है, वह हृदय, मानो देखो, एक राष्ट्रीय वृत्तियाँ बन करके रहता है। जैसे मुनिवरों! देखो, मानव का नेत्र, नाना प्रकार के दृश्यों को दृष्टिपात कर रहा है। परन्तु वह जो दृश्य की स्थिति है, वह मानव के हृदय में प्रविष्ठ हो जाती है। मानो देखो, दिशाओं से हमारे श्रोतों का समन्वय रहता है और जब उसका समन्वय रहता है, तो वह नाना प्रकार के शब्दों को श्रवण करता है। परन्तु शब्द के साथ में देखो, रूप भी है, शब्द के साथ में चित्र भी हैं और वह दिशाओं से ले करके, बेटा! देखो, हृदय में उस श्रोत की स्थिति, वह उसमें स्थिर हो जाता है। इसी प्रकार प्रत्येक इन्द्रियों का जो केन्द्र है, हृदय अगम्य माना गया है। मेरे पुत्रो! सुगन्ध आ रही है, नाना प्रकार की ध्वनियां आ रही है और वह सर्वत्र ध्वनि, बेटा! देखो, मानव के हृदय मंन केन्द्रित हो रही है। मुनिवरों! देखो, -गहमं ब्रह्मे सर्वतम् सुगंध आ रही है, उसका समन्वय पृथ्वी से रहता है, और वह सुगन्ध देता हुआ, मुनिवरों! देखो, उसकी स्थिति हृदय में स्थित हो जाती है, और मुनिवरों! देखो, प्रीति आ रही है। प्रत्येक इन्द्रियों का अपना-अपना

स्वरूप और उसकी स्थिति कहाँ है? मानव के हृदय में। तो बेटा! यह जो हृदय है वह केन्द्रित कहलाया जाता है। इसी प्रकार, जैसे और हृदय ही, बेटा! देखो, एक राष्ट्र कहा जाता है। हृदय में प्रत्येक इन्द्रियों की, मुनिवरों! देखो, गोष्ठियां होती है, प्रत्येक इन्द्रियों के विषयों का एक चरू बनाया जाता है, तो मुनिवरों! देखो, वह एक राष्ट्रीयकरण हो रहा है। इसी प्रकार, राजा के राष्ट्र में भी जब प्रत्येक राष्ट्रं ब्रह्वे कृतम् जब राजा के राष्ट्र, में, मानो राजा का प्रत्येक अंग का राष्ट्रीयकरण हो जाता है, तो राजा अपने में यह अनुभव कर रहा है, क्या, मानो देखो, मैं अवृतम् रहा हूँ। तो वेदमन्त्र में आया हूँ, वेदमन्त्र कहता है, हे राजन्! तू अपने राष्ट्र को केन्द्रित करता हुआ अपने हृदय की भांति, जब तू अपने राष्ट्र को हृदय स्वीकार करेगा, मानो उसी काल में तेरा राष्ट्र पवित्रतव को प्राप्त हो जाएगा। तो मानो देखो, प्रत्येक इन्द्रियों का जो तृत्यु हो रहा है, वह नृत्यीकरण, मानो देखो, राष्ट्रीयत्त्व उसका होना चाहिए। जब उसका राष्ट्रीयकरण हो जाता है, तो बेटा! देखो, राजा का राष्ट्र पवित्र, वह पुरोहित राजा को प्रेरणा दे रहा है, और पुरोहित कहता है कि-हे राजन! तू आपने राष्ट्र को ऊंचा बना।

पुरोहित रूप में विश्वामित्र

बेटा! तुम्हें स्मरण होगा, पुरोहित ऐसे महान् होते हैं कि पुरोहित राष्ट्र और समाज के लिए, मानो देखो, अपनी पुरोहितता का आवृत्त कर देते हैं। जैसे, बेटा! तुम्हें स्मरण होगा, त्रेता के काल में, मुनिवरों! देखो, जब महाराजा विश्वामित्र, वशिष्ठ की आज्ञा से, राजा दशरथ के यहाँ पहुंचे, राजकुमारों को, और धनुर्याग कराने के लिए, तो बेटा! देखो, राजा ने यह कहा-भगवन! यह बाल्य किशोर है, मैं तुम्हारे राष्ट्र, मानो तुम्हारे याग को मैं पूर्ण कराऊंगा राष्ट्रीयत्त्व से। उन्होंने कहा -नहीं भगवन! मुझे तो बाल्य किशोर चाहिए, क्योंकि राजा मेरे धनुर्याग को पूर्ण नहीं करा सकेगा। तो मेरे पुत्रो! देखो, उस समय राज ब्रह्म जब ऋषि ने यह कहा तो राजा अमृतं ब्रह्म कृतम् बेटा! देखो, मैं पुरोहित हूँ, वेद का ऋषि कहता है, कि मैं पुरोहित हूँ और पुरोहित का कर्त्तव्य है कि जो मैं उच्चारण कर रहा हूँ, राजा को उसको स्वीकार करना होगा। राजा, यदि राष्ट्र के मोह में आ जाएगा, बाल्य सन्तत्ता के मोह में आ जाएगा, तो उसका राष्ट्र तो, मानो देखो, कालिमा की एक कलंकिनी बन करके एक राष्ट्र रह जाएगा। तो मुनिवरों! देखो, महाराजा विश्वामित्र ने यही कहा कि -मैं पुराहित हूँ, और पुरोहित को, राजा को यह सर्वत्र उसको समर्पित कर देना चाहिए। यह तो राजकुमार हैं, यदि मैं पुरोहित बन करके तुम्हारे राष्ट्र का वित्त भी चाहूँ, तो वह तुम्हें देना होगा, क्योंकि मैं, राष्ट्र और समाज के लिए सर्वत्र का पुरोहित कहलाता हूँ।

मानो देखो, वेदमन्त्र कहता है- पुरोहितां भूषणां ब्रहे कृतं वृस्सुता बेटा! देखो, वेद का आचार्य कहता है, कि पुरोहित, मानो देखो, पराविद्या को देने वाले हांगे? राष्ट्र और समाज का कल्याण करने वाले होंगे, तो वह पुरोहित, मुनिवरों! देखो, महान् कहलाते हैं। तो इसलिए वेद का मन्त्र कहता है, पुरोहित होने चाहिए।

पुरोहित रूप में महर्षि वशिष्ठ मुनि

मेरे प्यारे! देखो, वह एक पुरोहित कहलाता है, तो आत्मा-परमात्मा का ज्ञान देता है, वह पराविद्या के प्रदान कराने वाला है, जैसे महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज, बेटा! देखो, उनके समीप जो भी राजा थे, बेटा! स्मरण आता रहता है कि वशिष्ठ हमारे यहाँ महाराजा दिलीप जी के यहाँ क्या, राजा रघु ने भी यही कहा था कि मैं पुरोहित से अपना याग कराना चाहता हूँ। पुरोहित से प्रार्थना की कि -प्रभु! मेरी इच्छा यह है कि मैं सर्वत्र याग कर रहा हूँ। मेरे प्यारे! देखो, उस समय महाराजा दिलीप ने जब ऐसा कहा तो वशिष्ठ मुनि महाराज और उनकी पत्नी अरून्धति ने कहा-प्रभु! यह राजा क्या कह रहा है? उन्होंने कहा -देवी! मैं श्रवण कर रहा हूँ। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा -तुम याग क्यों कराना चाहते हो? उन्होंने कहा - प्रभु! मैं तो, आपकी आज्ञा की देरी है, आज्ञा पालन करने का मेरा कर्त्तव्य है। प्रभु! मैं नहीं जानता कि यह याग क्यों करना चाहता हूँ। यह मेरे अन्तर्हृदय में एक प्रेरणा जागरूक हुई

है और यह प्रेरणा के आधार पर याग की मेरे हृदय में यह आकांक्षा है, तो आप मुझे, मानो देखो, इसका उत्तर दीजिए। महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले कि- यह तो राजन् तुम्हारा सुशोभनीय विचार है, यह तो बड़ा सुशोभनीय है, और आप यदि याग कर रहे हैं तो हम सब आप्त-पुरूषों को आदर्श, और देखो, जितने भी वह पराविद्या में गमन करने वाले हैं, उनका सौभाग्य है।

मेरे प्यारे! देखो, स्मरण आता रहता है, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज, ने कहा कि- याग तो होना चाहिए। परन्तु याग का यह नृत्य होता रहा है यागां रूद्र भाग प्रमाणां ब्रहे यह जो याग है, यह अपनी प्रतिभा में प्रतिष्ठित रहना चाहिए। हे राजन! ब्रहे! मानो अपने में ही, अपनेपन में ही, संसार, समाज के लिए राष्ट्र में याग होना चाहिए। तो देखो, महाराजा दिलीप ने पुरोहित की आज्ञा पाई। क्योंकि पुरोहित को राष्ट्र से विरोधी नहीं होना चाहिए, उससे मानो संघर्ष नहीं करना चाहिए। वह पराविद्या के देने वाले हैं।

आध्यात्मिक याग और भौतिक याग

मेरे प्यारे! देखो, रात्रि समय जब महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज रघु के समीप पहुंचे और महाराजा रघु से ब्रह्मणां, मेरे प्यारे! देखो, दिलीप जी से तो यह चर्चा हुई। परन्तु दिलीप जी के गुरु आचार्य भी वही वशिष्ठ कहलाते थे, क्योंकि राजा सगर के यहाँ भी एक वशिष्टत्त्व माना गया। परन्तु देखो, यह प्रणाली इसलिए, इस प्रणाली में वशिष्ठ की महत्ता रहीं, क्योंकि वशिष्ठ जो है यह एक उपाधि है, और वशिष्ठ, मुनिवरों! देखो, एक ऋषि के नाम नहीं, जो भी, मानो देखो, अयोध्या में पुरोहित होता था, वही वशिष्ठ कहलाता है, और वह वशिष्ठ की उपाधि में परिणत हो करके, क्योंकि जो ब्रह्मवेत्ता हो, ब्रह्मनिष्ठ हो, और जो निःस्वार्थ हो, परमात्मा का मनन और चिन्तन करने वाला हो, और अपनी माधुर्य पवित्र विद्या से जो राष्ट्र को उन्नत कराने वाला हो, ऐसा, राजा के यहाँ पुरोहित होना चाहिए। तो ये वशिष्ठ में सर्वत्र गुण थे।

व्यष्टि-याग और समष्टि-याग

मुनिवरों! देखो, रात्रि समय जब (महर्षि वशिष्ठ मुनि) राजा रघु के समीप पहुंचे, तो राजा रघु ने और उनकी पत्नी ने उनका स्वागत किया, रात्रि काल में। परन्तु, दोनों नतमस्तक होकर बोले कि-हे प्रभु! आपका रात्रि समय हमारे कक्ष में आने का, क्या मंतव्य है? तो उस समय ऋषि ने कहा-हे भगवन! हे राजन्! मैं इसलिए तुम्हारे कक्ष में आया हूँ, क्योंकि यह मेरा कर्त्तव्य है, जो तुमने मुझे ऐसा वाक्य उच्चारण किया याग के सम्बन्ध में? सर्वत्र याग होना चाहिए। परन्तु देखो, मैं इसलिए आया हूँ कि याग दोनों प्रकार से किया जाता है, एक आघ्यात्मिक याग होता है एक भौतिक याग होता है। तुम आघ्यात्मिक याग और भौतिक याग दोनों का समन्वय करना चाहते हो? उन्होंने कहा -प्रभु! मुझे इसका विश्लेषण कीजिए। मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि वशिष्ठ ने कहा कि - आघ्यात्मिक याग तो वह होता है, जो अपनी आत्म-शांति के लिए किया जाता है, और आत्म-शांति का जो याग है, उसमें प्रत्येक इन्द्रियों का साकल्य तुम्हें एकत्रित करना होगा और प्रत्येक इन्द्रियों का साकल्य एकत्रित करके अपने अन्तर्हृदय में, मानो - उन्होंने कहा के विषयों का मनन करना होगा, और वह जो मननशीलता है, वह प्राण, मन और विचार में जब परिणत हो जाते हैं, उनका परिवर्तन हो जाता है, तो मानो देखो, आघ्यात्मिक याग कहलाता है।

वह उन्होंने कहा में, मानो देखो, निस्वां ब्रहे कृतम! वह राष्ट्र, मानो देखो, एक राष्ट्र है, वे तेरा आत्मा है, क्योंकि राष्ट्र का, अमृताम्, देखो, राष्ट्र एक आत्मा कहलाता है, और राष्ट्र में जो चरित्र होता हे, वह महान् आत्मा बन करके रहता है, और जो, मानो देखो, मनस्त्व जीवं ब्रह्मा, जो जीवात्मा कहलाता है, वह तुम्हारा सत्तं ब्रीहि कृतम् प्राणः देखो, वह प्राण गति करने वाला है। आज तुम, मानो देखो, इस आत्मतत्त्व के आधार पर यदि तुम याग करना चाहते हो, तो वह आघ्यात्मिक याग कहलाता है। एक भौतिक याग होता है, कि मेरा जो द्रव्य है,

इसका शुद्धिकरण हो जाए, और शुद्धिकरण के साथ में जो यागां ब्रह्म कृतम्, मानो देखो, मैं याग करना चाहता हूँ, श्रद्धामयी घृत को ले करके, और देखो, अपने विचारों से, नाना प्रकार का जो देखो, यह नृत्य, औषध विज्ञान का है, इसको एकत्रित करता हुआ, उसे साकल्य बना करके, और अग्न्याधान करके मानो मैं शुद्ध हृदय से याग करना चाहता हूँ, और वह शुद्ध हृदय का जो, मानो देखो, अग्नि की धाराएं जब गमन करती है, अग्नि की धाराओं पर मानो, वह जब, जो नृत्य हो रहा है, अग्नि की धाराओं में ही देखो, नृत्य होना चाहिए, और वह जो नृत्य हो रहा है, वह नृत्य, जब मानो अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो जाता है, वह भूः और भूवः मानो स्वः में प्रवेश कर जाता है। यह तीनों के आश्रयों को ले करके, वह मानो देखो, ऊर्ध्वा गति में स्थिर हो जाता है और वह स्थिर हो करके उसके चित्र बनते रहते हैं, और वह जो चित्र बनते रहते हैं, वही चित्र, मानो देखो, हमारे ही क्रियाकलानों में किसी समय, मानों हमें प्राप्त हो सकते हैं।

व्यष्टि-याग और समष्टि-याग

मुनिवरों! देखो, ऋषि ने कहा-क्या तुम अपने चित्रों को द्यौ लोक में पहुंचाना चाहते हो? अग्नि की धाराओं पर परिणत करना चाहते हो? क्योंकि हमारे यहाँ पुरोहितों ने परम्परागतों से ही, देखा पुरोहितजनो ने यह वर्णन करते हुए कहा कि याग में जो, मानो देखो, हमारे यहाँ दो प्रकार के यागों का आयोजन परम्परागतों से माना गया है, एक, मानो देखो, व्यष्टि-याग होता है, एक -उन्होंने कहा होता है। -उन्होंने कहा में, देखो, समाज में हम, देखो, जब अपने समाज के हृदयों का परिवर्तन करते हैं। और, समष्टि वह होता है, जिसमें प्रभु की प्रभुत्ता, जो हमें दृष्टिपात आती है, मानो देखो, उसमें हम याग कर रहे हैं, हृदय में, हृदय में ही हृदय का याग हो रहा है।

मानो देखो, समष्टि याग वह कहलाता है, जब हम, देखो, यज्ञशाला में यज्ञमान यह विचारता है कि-मेरे जो नेत्रों का समन्वय है, वह अग्नि से है, मानो मेरे श्रोत्रों की धाराएं यह हे और जितना, मानो देखो, जैसे साकल्य, समिधा और अग्नि, मुनिवरों! देखो, तीनों का सम्पर्क हो करके तीनों का मिलन हो करके, एक प्रीति बनती है, ऐसी मेरी त्वचा जो है यह प्रेम का प्रतीक बनी हुई हैं। यह अग्नि, साकल्य और समिधा के साथ-साथ इनका एक नृत्य हो रहा है। तो मानो देखो, इस प्रकार, जब यह स्वीकार करता है, तो मेरे प्यारे! देखो, यज्ञमान पवमानाय ब्रह्मणे सूक्तों का, देखो, पठन-पाठन करता हुआ, मेरे प्यारे! देखो, त्वचा को क्या, घ्राण को पृथ्वी से समन्वय करता हुआ, यज्ञशाला के रूप में स्वीकार करता हैं। मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार, वह अमृतां ब्रह्मणे देखो, मुखारबिन्दु, अग्नि की जिह्वा में प्रवेश कर जाता है। इस प्रकार, मानो देखो, समष्टि के भाव को ले करके, यज्ञमान जब याग करता है, तो उसके जो चित्र है, वह निःस्वार्थ जगत् में प्रवेश होते हुए वह द्यो से ऊर्ध्वा में गमन करते लगते हैं और वह जब गमन कर जाते हैं, तो मानो देखो, वह आध्यात्मिक, देखो, वह समष्टि याग बन जाता है और समष्टि याग बन करके, बेटा! भौतिक और समष्टि, दोनों का समन्वय हो करके, मेरे पुत्रो! देखो, वह हृदय अगम्य बन करके, अनुकृतियों में रत्त होने लगता है, जिससे, बेटा! देखो, वेद का एक-एक मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महती में रत्त हो जाता है।

याग में वेदमन्त्र-गायन

वेद का मन्त्र क्यों उच्चारण करते हैं? प्रत्येक जब याग करते हैं, तो याग में वेद का उद्गीत गाया जाता है। वह उद्गीत क्यों गाया जाता है? क्योंकि वह उसमें जो ज्ञान है, वह जो प्रकाश है, वह, मेरे पुत्रो! देखो, अग्नि की धाराओं पर, मन्त्र की एक माला बन करके उसके ऊपर स्थित हो जाती है और स्थित हो करके, वही, मुनिवरों! देखो, माला बन करके द्यौ में प्रवेश हो जाती है। और, ज बवह द्यौ में प्रवेश हो जाती है तो माला बन करके, बेटा! उसी को यह प्रत्येक तरंगे अपने में धारयामि बना करके धारण करने लगती है, और वह जो धारण की जाती

है वही अग्नि, बेटा! मानव को महान बना देती है।

तो आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष तुम्हें चर्चा प्रकट करने के लिए नही आया हूँ केवल तुम्हें यह उद्गीत गाने के लिए आया हूँ कि हम परमपिता परमात्मा की महती और उसके अनन्तमयी जगत् के ऊपर, बेटा! विचार-विनिमय करते चले जाएं। तो महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने जब इस प्रकार, बेटा! वर्णन कराया, तो मुनिवरों! देखो, वे पुरोहित कहलाते हैं, जो इस प्रकार की शिक्षा देते हैं। यह पराविद्या कहलाती है, इसको जो देते हैं, बेटा! देखो, राजा का राष्ट्र और हृदय, दोनों पवित्र बन जाते हैं, क्योंकि राष्ट्र ही हृदय है और हृदय ही राष्ट्र कहलाता है। मेरे पुत्रो! देखो, दोनों पति-पत्नी, दोनों बड़े प्रसन्नचित्त हो करके बोले कि -हे प्रभु! आज तो अपने हमें प्रकाश में पहुंचा दिया है, भगवन! आपने हमें समष्टि में पहुंचा दिया है, वयष्टि में और, समष्टि और व्यष्टि दोनों का मिलान करा दिया है। भगवन्! आप को धन्य है।

पुरोहित रूप में माता

मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार, जब राजा के राष्ट्र में पुरोहितजन होते है, तो जन समूह में भी पुरोहितजन होते है, तो बेटा! राष्ट्र और समाज पवित्रता की वेदी पर रत्त होने लगता है और पवित्रता जब मानव के हृदयों में छायमान हो जाती है, तो मुनिवरों! देखो, वहाँ राष्ट्रवाद अपनी आभा में सदैव नृत्य करता रहता हैं मेरे पुत्रो! विचार-विनिमय क्या? मैं उच्चारण कर रहा था कि पुरोहित होने चाहिए। जब इस प्रकार के राजा होते है और पुरोहित होते हैं, वहाँ मुनिवरों! देखो, जन मंगल ब्रह्मः मेरे पुत्रो! देखो, वहा पुत्रों! भव प्रमाणां मृत्योवर्णास्ताः वेद की आख्यिका कहती है कि जिस राजा के राष्ट्र में, समाज में, जिस काल में, पुरोहित जन होते हैं, प्रत्येक गृह के साथ में, मानो जो पराविद्या के देने वाले, स्वार्थी नहीं होने चाहिएं, मुनिवरों! देखो, जहाँ पवमानाय सूक्तों से आहुति प्रदान की जाती है, और वह आहुति जब दी जाती है, तो माता-पिता पवित्र होते हैं, उनका हृदय अगममयी होता है, उनको गर्भ से जो संतान का जन्म होता है, वह पूर्ण आयु को ले करके आता है।

पूर्ण आयु का रहस्य

मेरे प्यारे! देखो, अमृतां ब्रह्मणे, बेटा! वाक्य तो मुझे बहुत स्मरण आ रहे हैं, आज, बेटा! केवल तुम्हें उद्गीत सूक्ष्म सा गाने के लिए आया हूँ। मेरे प्यारे! देखो, जब मां ब्रहे राजा देखो, अमृतं ब्रहे, मुनिवरों! देखो, राजा रघु के यहाँ, जब दिव्यां ब्रह्मे मेरे प्यारे! उसके गर्भ में शिशु की स्थापना हुई, तो वह पुरोहित के द्वारा नित्य-प्रति अपने वाक्यों को, प्रश्न करना, उसका उत्तर लेना, जिज्ञासा में सदैव रत्त रहना, तो मुनिवरों! देखो, माता की सदैव यह कामना रही है कि मेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाला जो शिशु है, वह मानो पूर्ण आयु में होना चाहिए, पूर्ण आयु का होना चाहिए। मेरे से प्रथम, मानो यह मेरे से पूर्व संसार से न चला जाए, ऐसी प्रत्येक माता की कामना होती है। मेरे पुत्रो! प्रत्येक माता यह चाहती है, परन्तु चाहती तो है, इसे इतना ज्ञान होना चाहिए।

मैनें बहुत पुरातन काल में कहा था, बेटा! माता मलदाल्सा की चर्चा भी इस संदर्भ में दी। परन्तु आज मैं देखो, केवल त्रेता के काल की ही चर्चा कर रहा हूँ। माताएं, बेटा! जब अपने गर्भस्थल में बालक को आयु की प्रेरणा देती हैं, मेरे प्यारे! देखो, पवमानाय-सूक्तों के द्वारा वह याग में अग्निहोत्र करती है, बेटा! उसकी आहुति देती है, और उसको विचारती रहती हैं। एक-एक वदे-मन्त्र के ऊपर अध्ययन प्रायः होता रहता है और माता यह विचारती है, अपनी गर्भ की आत्मा से वार्त्ता प्रकट करती रहती है, शिशु से। रात्रि का काल है, अन्धकार छाया हुआ है, परन्तु प्राणों की ध्वनियां आ रही है। रात्रि काल में, बेटा! देखो, अपनी एक ध्वनि होती है और वह धीमी-धीमी ध्वनि होती है। मेरे प्यारे! देखो, वहाँ परमाणुवाद अपने में सघंर्ष करते हैं, रात्रि का काल होता है, सूर्य प्रकाश में नहीं होता है, चन्द्रमा अपने प्रकाश में होता है, चन्द्रमा की कांति में, बेटा! परमाणु, अपने में ध्वनित होता रहता है,

वह ध्वनियाँ करता रहता है, उस ध्वनि को, मेरी प्यारी माता, जब श्रवण करती है, श्रवण करके, अपने में ध्वनियां उत्पन्न हो रही है, उस ध्वनि का और उस ध्वनि का, दोनों का मिलन हो रहा है। मेरे प्यारे! कैसी ध्वनि है, वो, जो माता अपने में श्रवण कर रही है, बाल्य को ध्वनि को दे रही है।

गर्भस्थ बाल्य को माता की शिक्षा

गर्भस्थल में, बेटा! देखो, बाल्य पनप रहा है, शिशु पनप रहा है, माता उसे ध्वनियां दे रही है, और वेदमन्त्र का अध्ययन करती हुई कहती है- चन्द्रमं ब्रह्म अमृतां दिव्यं ब्रहे ऋतम् माता कहती है- हे चन्द्रमा! तू अमृत है। हे चन्द्रमा! तू मेरे में समाहित हो जा, तू अमृत है, मानो तू आयु के देने वाला, अमृत को प्रदान करने वाला हैं। जब मुनिवरों! देखो, माता इस प्रकार की प्रार्थना करती है, तो माता के गर्भस्थल में, जो शिशु है, वह उस ध्वनि को अपने में श्रवण करता रहता है। उसका आयु, मानो देखो, बुद्धि का विकास होता रहता है। मेरे पुत्रो! देखो, वही बाल्य बाह्य जगत् में आता है माता ही देखो, मुनिवरों! लोरियों का पान कराती हुई उसे अपनी शिक्षा प्रदान करती रहती है। और वह, मुनिवरों! देखो, रात्रि में जब जागरूक हो जाती है, बाल्य भी जागरूक हो जाता है, माता उसे, मानो देखो, कुछ न कुछ उद्गीत गाती रहती है-हे बाल्य! तू अमृत को प्राप्त हो। हे बाल्य! तू प्रकाश को प्राप्त हो। हे बाल्य! तू ब्रह्मवेत्ता बन। हे बाल्य! ब्रह्मवेत्ता बनने के लिए साधना तेरे द्वारा है माता उस साधना को परिणत कर देती है। वह कहती है- हे बाल्य! तू ओ३म् की ध्वनि को अपने में श्रवण करता चल, क्योंकि ओ३म् की ध्वनि जो है, तेरे जीवन, तेरी आकृतियों में रत्त हो जाएगी। हे बाल्य! जब तू ओ३म् ध्वनि की श्वास के साथ में, मनके की भांति, मानो, जैसे सूत्र में, मनका पिरोया जाता है, वह माला बन जाती है? इसी प्रकार, हे बाल्य! तू सूत्र में, प्राण रूपी सूत्र में तू, मानो देखो, विचार रूपी अमृत को, मानो देखो, विचार रूपी अमृत को, मानो देखो, मनके को, उसमें धारयामि बना करके, उस माला को तू धारण कर, वह तेरा आंतरिक जगत् मानो देखो, मालामयी बन जाएगा, वेदमन्त्रों मयी बन जाएगा। ओ३म् ध्वनि को श्रवण करता हुआ, तू आयु को प्राप्त होता रह।

मेरे प्यारे! देखो, यह माता, जो शिक्षा और ब्रह्मवेत्ता बना देती है, उसके लिए बेटा! कोई विश्व का विश्वविद्यालय नहीं बन पाता है, कोई आचार्य ऐसा नहीं है, जो मानो देखो, उन शब्दों को, उस ध्वनि को, मानो देखो, बाल्य के अन्तर्हृदय से दूरी कर सके। मेरे प्यारे! देखो, वह बाल्य ऐसे, मानो विश्वविद्यालय में अध्ययन कर रहा है, जिस विद्यालय में अध्ययन करने वाला मानो प्रत्येक शब्द अन्तःकरण में जब अंकित हो जाता है, वह उससे दूरी नहीं होता, वह नष्ट भी नहीं होता।

मेरे प्यारे! देखो, वह बाल्य आयु में पूर्ण हो जाता है। मुझे विचार आता रहता है, बेटा! जब इस प्रकार के पुरोहित, मानो देखो, राष्ट्र-राष्ट्र में रहे हैं, राजाओं के यहाँ रहे हैं, समाज में रहे हैं, तो बेटा! देखो, उस राजा के राष्ट्र में पुत्र से पूर्व, मेरे प्यारे! देखो, माता-पिता अपने में चयन करते है और माता-पिता से पूर्व, पुत्र का निधन नहीं होता। मेरे प्यारे! देखो, निधन जब होता है, जिस काल में माता, मेरे प्यारे! अपने कर्त्तव्य से विहीन हो जाती है, मानो शिक्षा प्रणाली उनकी भ्रष्ट हो जाती है। मेरे प्यारे! देखो, ऐश्वर्य में मेरी पुत्रियां, मेरी मातृ-शक्ति, जब मानो देखो, ऐश्वर्य में परिणत हो जाती हैं, और वह देखो, वह केवल अपने कर्त्तव्य को नष्ट करके, मानो देखो, और ही कुछ उद्गीत गाने लगती है। इस प्रकार मानो देखो, मुझे एक समय, मेरे प्यारे महानन्द जी ने इसके ऊपर बड़ा विचार मुझे दिया, मैं उन विचारों को ले करके, आज अपने उद्गीत को गाना नहीं चाहता हूँ। केव विचार-विनिमय यह कि मुनिवरों! देखो, जब शिक्षा-प्रणाली हमारी पवित्रतव में परिणत हो जाती है, माता जब सबसे प्रथम शिक्षक बन करके, मुनिवरों! देखो, बाल्य को ऊर्ध्वा में गमन करा देती है, वह सबसे महान् विद्यालय कहलाता है। उस विद्यालय में मानव को परिणत हो जाना चाहिए।

याग और तपस्या

मेरे प्यारे! आज का हमारा वेदमन्त्र कह रहा है पुरोहितां भवते ब्रह्माणो रेवस्सुताः, सबसे प्रथम, जो पुरोहित है, वे परमपिता परमात्मा है, जो प्रेरक है, अन्तर्हृदय को ऊँचा बनाने वाला है, दूसरा पुरोहित, देखा राजा के राष्ट्र में होता है, जो मेरे प्यारे! देखो, समाज और प्रजा और राष्ट्र को उन्नत बनाता है, और तीसरा पुरोहित वह होता है, जो प्रत्येक मेरी पुत्री और माता को, मुनिवरों! देखो, गृह का पुरोहित बन करके सुचरित्रता से मानवीयता से मानो देखो, उसको मनस्त्व की और अति मानवत्व की चर्चा प्रकट करने लगते हैं, तो माता देखो, मुनिवरों! पवित्रता में परिणत हो जाती है। यह समाज, मुनिवरों! देखो, अपने में पवित्र बन जाता है। और, जिस काल में मुनिवरों! माता तपस्वी नहीं होती, बाल्य-बालिकाओं को ऊर्ध्वा में उपदेश नहीं दिया जाता, मानो देखो, उस काल में माता-पिता सदैव देखो, शान्ति की स्थापना नहीं हो पाती, क्योंकि ज्ञान से वे शून्य हो जाते हैं।

मुनिवरों! देखो, आज का विचार, मैं क्या कह रहा था? वेद का मन्त्र कहता है, कि पुरोहित होने चाहिए। मुझे स्मरण आता रहता है, त्रेता के काल में, जब पुरोहित थे, तो मुनिवरों! देखो, राष्ट्र पवित्रता की वेदी पर तो मुझे इतना प्रतीत नहीं है, जब राष्ट्र की प्रणाली, देखो, वह त्रेता के काल में ब्रह्मणे देखो, द्वापर के काल में, जब यह प्रणाली भ्रष्ट होने तो मानो देखो, इसका दूसरा एक स्वरूप बन गया। स्वरूप बन जाने से यह विद्यालयों में रही, मानो देखो, त्रेता के अमृत काल में भी यह विद्याएं रहीं माताओं के द्वारा, और यह विद्या द्वापर के काल में भी, प्रायः रही है। माता कुंती के जब गर्भ की स्थापना होती थी, तो जिस देवता का देवत्त्व बाल्य को निर्धारित करना होता था, उसी देवता की उपासना करना, प्रारम्भ हो जाता। वह उसी देवत्त्व को अपना करके, मानो देखो, वह ब्रह्मचारी उसी प्रकार का निर्माणित कर गया। विचार आता रहता है, बेटा! ये विद्याएं हमारे यहाँ, परम्परागतों से रही हैं कि वेद-मन्त्रों का उद्गीत गाना और उस वेदमन्त्र का जो देवता है, उसी देवता की उपासना करना वह दुग्ध-आहार करते समय भी उसी की शिक्षा देना, गर्भाशय में जब बाल्य, शिशु बन करके गर्भ में प्रवेश हो रहा है, एक-एक पंचीकरण हो करके, पंच महाभूतों के परमाणुओं में, वह मानो देखो, वे वृत्तियां उसमें प्रदान करना, उसमें कृत्त करना, मेरे प्यारे! देखो, उसी प्रकार के भाव, बलिष्ठता और सुचरित्रता और मानवीयता, मुनिवरों! देखो, उसके साथ-साथ उद्गीत गाने लगती है।

आओ, मेरे प्यारे! मैं आज तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट नहीं चाहता हूँ। विचार-विनिमय केवल यह कि मुनिवरों! देखो, प्रेरक परमपिता परमात्मा है, ऋषिजन भी मानो देखो, प्रेरक होते हैं। और मुनिवरों! देखो, देखो, पुरोहित होने चाहिएं जो पराविद्या को देने वाले हों। और पराविद्या कहाँ से प्रारम्भ होती है? बेटा! यह माता के गर्भ से होती है, मुनिवरों! पराविद्या राजा के निर्वाचन से होती है। यह परा विद्या प्रत्येक गृह में याग के द्वारा होती है। तो मेरे पुत्रो! देखो, यह नाना प्रकार की पवित्र और पुनीत विद्या हमारे हृदयों में होनी चाहिए।

तो विचार-विनिमय क्या?आज मैं, तुम्हें यह उद्गीत गाने के लिए आया हूँ, यह विचार देने के लिए आया हूँ कि मुनिवरों! देखो, हमारा जो विश्वविद्यालय है, वह माता का अनुपम विचार है। गर्भ से ले करके, पांच वर्ष तक माता का विश्वविद्यालय पवित्र बना रहे। ऐसा मैं परमात्मा से प्रार्थना करता रहता हूँ, हे परमात्मन! यदि राष्ट्र और समाज को ऊँचा बनाना है, जन समूह को ऊंचा बनाना है, तो माता का जो विश्वविद्यालय है वह पवित्र होना चाहिए, उसमें पराविद्या, पुरोहिततं होना चाहिए। माता पुरोहितत्त्व बन करके बाल्य को शिक्षा देने वाली हो, और उसे इतना ज्ञान होना चाहिए, ब्रह्म से ले करके, देखो, उसे वेद के एक-एक मन्त्र में, वृत्तियों में रत्त रहना चाहिए। पुरोहितों के द्वारा उसे अध्ययन करना चाहिए। मानो देखो, उसमें कर्मकाण्ड भी हो, उसी में ब्रह्मज्ञान हो, और उसी में देखो, मुनिवरों! व्यवहार भी होना चाहिए। जब तक मानव का व्यवहार और कर्मकाण्ड, मुनिवरों! देखो, जब तक तीनों साथ-साथ नहीं गमन करेंगे, तब तक मानव का उत्थान नहीं हो सकेगा। ये चर्चाएं बेटा! मैं तुम्हें कल प्रकट

कर सकूंगा।

आज के विचारों का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और अपने प्रभु को देवत्त्व अपने में स्वीकार करते चले जाएं, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महान् है, वह पुरोहित है और पराविद्या के देने वाला है। बेटा! देखो, प्राण भी पुरोहित कहलाता है। प्राण से ही, मुनिवरों! देखो, प्रेरणा उद्बुद्ध होती है, यह चर्चा, बेटा! कल प्रकट करेंगे। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है, कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और अपने प्रभु देवत्त्व, परमपिता परमात्मा की उपासना करते हुआ और पुरोहितां ब्रह्मणा वृत्तम् बेटा! पुरोहित हो, अपने में धारयामि बनाते रहें और पुरोहित की उपासना करते रहे। वे परमपिता परमात्मा महान् पुरोहित कहलाता है और उस पुरोहित के लिए हम सदैव तत्पर रहें! आगे की चर्चा कल प्रकट होगी। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन। सी-४७ रामप्रस्थ २६-१०-१९८९

९ नम्रता २७-१०-१९८९

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसाराण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं, और जितना भी यह जगत ये मानो उसी में पिरोया हुआ है, जिस प्रकार एक धागे में नाना मनके पिरोएं जाते हैं और मनके पिरोने से वह माला कहलाती है इसी प्रकार वह जो परमपिता परमात्मा है, मानो हम सब उसमें भांति-भांति के रूप दृष्टिपात आते हैं, वह ब्रह्म सूत्र में पिरोएं जाते हैं, ये और वह एक मानो देखो, जगत एक माला के सदृश्य बन जाते हैं, और उस माला को मानो देखो, जो भी मानव धारण कर लेता है, वह अपने मानवीयतव को प्राप्त हो जाता हैं। तो इससे ये विचार आता है, कि वे परमपिता परमात्मा सूत्रवत हैं, और उसी सूत्र में मानो ये ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ है, एक-एक अणु और परमाणु पिरोया हुआ है, जिससे बेटा! यह माला बनी रहती हैं। मुझे एक वाक् स्मरण आ रहा है पुत्रों! एक समय मानो देखो, ऋषिवर अपने में चर्चा कर रहे थे और उन्होंने यह दृष्टिपात किया अपने योगाभ्यास के द्वारा, प्राणों को एकाग्र समेट करके, उन्होंने एक अनुभव किया, क्या ये संसार तो एक माला के सदृश्य है। मानो एक अणु हैं, उस अणु में नाना सूक्ष्म परमाणु में अणु की कृतियों में बेटा! मानो एक दूसरे में पिरोया हुआ जगत दृष्टिपात आता रहता हैं। बेटा! वे परमपिता परमात्मा बेटा! मानो सूत्र कहलाता हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, वैज्ञानिक जन, जब अग्नि की धाराओ को जानने में तत्पर हो जाते हैं, तो अग्नि की धाराओं में बेटा! सूक्ष्म, से सूक्ष्म अग्नि जब उदबुद्ध हो करके आती है, तो बेटा! देखो, वह चित्रावलियों का निर्माण करती रहती हैं। मानो चित्रावली अपने में धारण करती रहती हैं। वह अग्नि का समन्वय है, जो मानो देखो, द्यौ से उसका समन्वय होता है, और वह जो अग्नि वह जो गतिवान होती है तो वह उसके द्वारा यह प्राण सत्ता है, वायु की प्रतिभा मानो कृत कहलाता है, उसका सूक्ष्मतम जो रहस्यतम माना गया है, तो विचार आता है, कि वे परमपिता परमात्मा मानो सूत्र हैं, और परमपिता परमात्मा में ये सर्वत्र ब्रह्माण्ड, एक-एक परमाणु, अणु बेटा! देखो, उसमें पिरोया हुआ है। मेरे पुत्रों! कैसा वह प्रभु महान है, कैसा वह मानो देखो, वह विचित्रतम कहलाता हैं। क्या वह मुनिवरों! देखो, अपने में पिरोया हुआ दृष्टिपात आता है।

आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा वेदमन्त्र यह क्या कह रहा है, क्या मुनिवरों! देखो, परमपिता परमात्मा एक सूत्रवत कहलाता हैं। हम उस परमपिता परमात्मा के समीप जब जाना चाहते हैं, तो मानो देखो, हमें भी उसी के देखो, गुणों को अपना करके गुणाधानम बन करके, नम्र बन करके मानो देखो, हम अकाय नही स्वीकार करते हुए, जब बेटा! हम परमपिता परमात्मा की महती और उसकी अनन्तता के ऊपर हम देखो, अश्वत हो सकते हैं। हम प्रभु के समीप जा करके हम अपने में मानो देखो, आनन्दवत को अपने में अनुभव कर सकते हैं तो मेरे पुत्रों! देखो, मैं इस सन्दर्भ में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ। आओ, मुनिवरों! देखो, हमारा कुछ वेदमन्त्र कह रहा हैं और वेदमन्त्र क्या कह रहा है वेद कहता है सम्भवं ब्रह्मा सम्भवं रुद्रभागा मेरे प्यारे! वह रूद्रतं वह रूद्र कहलाता है। जैसे मानो देखो, रूद्र याग होता हैं, और रूद्र याग उसे कहते, जो मानो देखो, रजोगुण देखो, राष्ट्रीयता से पिरोया हुआ याग होता है, उसे रुद्र याग कहते हैं। बेटा! हमारे वैदिक साहित्य में बेटा! रूद्र नाम मानो देखो, प्राणों को कहा गया है। जो रूलाने वाले हैं, वह रूद्रेसम कहलाते हैं। परन्तु यहाँ रूद्र नाम परमपिता परमात्मा का भी, रूद्र नाम राष्ट्र का भी कहा जाता है। और मुनिवरों! देखो, रूद्र नाम देखो, वह राजा जो शिव कहलाता हैं। वह रूद्र के नाम

से ही पुकारा जाता हैं जो मेरे प्यारे! देखो, जो शत्रु को रूलाने वाला हों और मित्रों को मानो देखो, हर्ष ध्वनि कराने वाला हो, उसका नाम रूद्र कहा गया हैं। तो रूद्रो वह सम्भवं ब्रह्मा देखो, हमारे यहाँ रूद्र याग भी कहलाते हैं। रूद्र याग उसे कहते हैं, जहाँ मुनिवरों! देखो, वह वायुमण्डल में, जब तरंगें जाती हैं, शब्दों के साथ में हृदयग्राहियों से शब्दों के साथ में जब बेटा! वह गान गाती हैं तो अशुद्ध परमाणुओं को तरंगों को वह रूलाने वाला इसीलिए उसे रूद्र याग कहते हैं। बेटा! देखो, सु को वह प्रसारण कराने वाला हैं। तो मुनिवरों! देखो, वह रूद्र कहलाता है। तो हमारे यहाँ रूद्र की बड़ी विशिष्ठ विवेचना होती रही हैं। आचार्यजनों ने बेटा! देखो, रूद्र याग के सम्बन्ध में, अपने बहुत से मन्तव्य दिए हैं, बहुत से विचार दिए हैं, आज बेटा! मैं उन विचारों में तो ले जाना नही चाहता हूँ विचार यह क्या बेटा! देखो, प्राण के ऊपर जब भी विवेचना प्रारम्भ हुई, तो यह प्राण मुनिवरों! सखा बन करके रहा हैं, ये प्राणा नाना प्रकार के विज्ञान के रूप में परिवर्तित होता रहा है, और ये विज्ञान की एक अमूल्य धारा कहलाई जाती हैं, क्योंकि प्राण के साथ में, प्रकृति का समूह होता हैं, जैसे मुनिवरों! देखो, मन है, और मन के साथ में जब आत्मा का प्रकाश प्रतिबिम्ब आया तो मुनिवरों! प्रतिबिम्ब आते ही, शक्ति जड़वत को प्राप्त हुई परन्तु उसी का समन्वय प्रकृति का सर्व स्वरूप, प्राण के साथ में मुनिवरों! देखो, गमन करने लगता हैं। जब वह गमन करता है, तो बेटा! उस समय उसे प्राणेश्वर कहा जाता हैं, विचार आता रहता है, कि वह जो प्राण है, जब तक मन से उसका समन्वय नही होता, या प्रकृति के तन्तुओं से इसका समन्वय नही होता तो प्राण अपने सार्थक नही बना करता है तो मुनिवरों! देखो, इसीलिए प्राण को हम अपने में धारयामि बनाना चाहते हैं। बेटा! प्राण के द्वारा ही मानव जब अष्टचक्रा नौ द्वारा वाली पुरी में जब हम प्रवेश करते हैं आठ चक्र है, नौ द्वारों वाली जो पुरी है, अयोध्या पुरी है, जब उसमें वास करते हैं तो बेटा! देखो, प्राण के चक्र से ले करके बेटा! अन्त तक मानो प्राण की धुक-धुकी लगाता हुआ, योगेश्वर मेरे प्यारे! देखो, आठ चक्रों में जब वह धुक-धुकी लगा करके, वह प्राण की वृत्तियाँ मुनिवरों! देखो, कृतिका में प्रवेश कर जाती हैं। ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश कर जाती है, तो मानो देखो, वही प्राण है, बेटा! जो प्राण में प्राण सूत्र को बेटा! पिरोया जाता है और वह प्राण है और जो विश्वभान प्राण है, बेटा! उसका जब उससे समन्वय हो जाता है, तो जितना ये ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात आता हैं जितना भी ब्रह्माण्ड है, उतना ही मुनिवरों! देखो, ये ब्रह्माण्ड उस ब्रह्माण्ड मुनिवरों! देखो, वह सर्वत्र अमृतां प्राण का जब समन्वय होता हैं, विशेष और सामान्य प्राण का समन्वय होते ही बेटा! एक-एक लोक-लोकान्तरों को वह गणना में लाने के लिए योगेश्वर तत्पर हो जाता हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, लोक-लोकान्तरों की गणना तो मैं तुम्हें आज करना नही चाहता हूँ, विचार केवल ये क्या मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हे उसी क्षेत्र में ले जा रहा हूँ, क्योंकि आध्यात्मिकवाद और नैतिकता का जहाँ तक प्रसंग आता है।

मेरे प्यारे! देखो, मुझे बहुत सी मेरी पुत्री और माताओं का जीवन मुझे स्मरण आता रहता है, मेरे प्यारे! देखो, जब वह अपनी शून्य शान्त अवस्था में विद्यमान हो करके, प्राण के ऊपर अन्वेषण करती रही है, मेरे पुत्रों! देखो, वेद में एक वाक् आया है महात्वां ब्रह्वे गर्भाश्सुतं शिशु वर्णाप्रह्वे वर्तम भवतप्रहे व्रता मेरे प्यारे! वेद की आख्यिका यह कहती है, कि माता, अपने गर्भ की आत्मा से शिशु से वार्त्ता प्रगट करती हैं तो मुनिवरों! देखो, वाक् तो वेद का बड़ा विचित्र है। परन्तु जब मैं यह विचारता रहता हूँ, जब यह विचार आता रहता है कि माता अपने गर्भ के शिशु से कैसे वार्त्ता प्रगट करती हैं? तो वह बेटा! देखो, ये विचार एक समय मुझे स्मरण आता रहता है, माता मलदाल्सा का मनों में यह विचार आया जब यह विचार आया तो वह शान्त हो करके ये चिन्तन मनन करने लगी क्या मैं गर्भ की आत्मा के शिशु से कैसे मैं वार्त्ता प्रगट कर सकती हूँ? यह विद्याएं मानो देखो, वेद में जो मन्त्र आते हैं, तो प्रायः ऐसा होता है तो उस समय मानो देखो, माता ने चिन्तन करते-करते प्राण के द्वारा, बेटा! मन

को ले गई, और मन और प्राण का जब दोनों का समन्वय होना प्रारम्भ हुआ, तो मेरे पुत्रों! देखो, वह जो सामान्य प्राण है और वह सामान्य और उदान तीनों प्राणों का बेटा! जब समन्वय हो करके देवदत प्राण की जब इसमें पुट लग गई, तो बेटा! देखो, माता शान्त चित्त हो करके, अपने गर्भ के आत्मा से और शिशु से वार्त्ता प्रगट करने लगी, और माता ये विचारने लगी, ये वार्ता करने लगी वह अपने शान्त मुद्रा में मुद्रित हो करके कि हे आत्मा! तू अपने गर्भ स्थल में विद्यमान हो गया है, तेरा मेरे से क्या संस्कार हैं? क्या तेरा मेरा दोनों का क्या समन्वय हैं? मानो देखो, हे आत्मा! यदि तू मेरे गर्भ में प्रवेश हुआ हैं, तो तुझे योगेश्वर बनना होगा, तुझे मानो प्राणेश्वर उस सखा को जान करके मानो उससे पार होना होगा। तो मुनिवरों! देखो, जब माता ने ये वार्त्ता जब प्रगट करती है, तो मुनिवरों! देखो, शिशु गर्भ में जो शिशु हैं, वह उनको अपने में श्रवण कर रहा हैं और उसके अन्तःकरण में बेटा! संस्कारों की झड़ियां लग रही हैं, संस्कार बन रहे हैं, पनप रहे हैं, बेटा! ध्वनियां आ रही है, बेटा! देखो, वह शान्त ध्वनि आ रही है उन ध्वनियों को श्रवण करते हुए वह अपने में मानो धारयामि बना हुआ है। अपने में मानो अपनेपन को पवित्रता में धारण कर रही हैं, हे ममत्वाम्! मेरे प्यारे! देखो, माता, प्रत्येक अवृत्तियों में बेटा! अध्ययन कर रही हैं, दर्शनों का अध्ययन करती हुई, मैंने ये वाक् तुम्हें कई कालों में तुम्हें प्रगट भी कराए हैं, और मैं इस सम्बन्ध में विशेषता नही केवल ये क्या मुनिवरों! देखो, यह प्राण की वृत्तियों से उसे दृष्टिपात कर सकती हैं, प्राण का एक कार्य नही है, बेटा! संसार में, जो प्राण है, ये प्राण ही है बेटा! जो लोक-लोकान्तरों की माला बनाएं रहता है, और एक दूसरे में माला को धारण कराए रहता हैं, ये सब माला कहलाती है। मेरे प्यारे! देखो, राष्ट्र भी एक मानो देखो, माला का सूत्र कहलाता है। और प्रजा और राजा दोनों मिल करके एक माला बन जाती हैं दोनो सुगठित हो करके बेटा! राष्ट्र को उन्नत बनाते हैं नैतिकता में लाते हैं, उनको मानो कर्तव्यवाद में रत्त करा देते हैं, और कर्तव्य में जब उग्र क्रिया देखो, धर्मज्ञं ब्रह्मा धर्मं देखो, वह उग्र क्रिया दोनों वृत्तित हो जाती हैं, तो मानो देखो, वह और ही वृत्तियाँ बन जाती हैं जिससे मानव अपने में अपने को प्रकाश में ले जाता है।

तो आओ, मेरे प्यारे! बेटा! क्या यह प्राणों की प्रतिभा कहलाती हैं, मेरे प्यारे! देखो, रात्रि, अग्नि अपने में देखो, काष्ठों में रमण कर रही है, वह प्राण ही वहां समाहित रहता हैं मेरे पुत्रों! देखो, अग्नि नही होती, तब तक अपने में ध्वनियां कर रहा हैं, रात्रि आ जाती हैं, रात्रि में बेटा! एक-एक ध्वनि आ रही है, और वह रात्रि मुनिवरों! देखो, बेटा! परमाणुओं का संघर्ष होता हैं, वह परमाणु रूपी मानो देखो, ध्वनियां आती रहती हैं। मेरे प्यारे! यह कैसा संघर्ष हो रहा है। मानो देखो, कहीं अच्छाईयों का संघर्ष है, जो कहीं दुरिता का संघर्ष हो रहा हैं, और उसकी ध्वनियां बन रही है, और ध्वनि मुनिवरों! देखो, मानव के श्रोत्र अन्तर्मुखी बन करके बेटा! देखो, जो योगेश्वर होता है, उन ध्वनियों में, परमात्मा का दिग्दर्शन करता हैं, और जो मुनिवरों! देखो, विज्ञानवेत्ता होता हैं, वह विज्ञान का, मेरे प्यारे! देखो, ऐसे-ऐसे निर्माण, आविष्कार होते रहते हैं, कि सूर्य की किरणों के साथ में क्या, मुनिवरों! देखो, चन्द्रमा की आभा में भी रमण करने लगता हैं, क्योंकि चन्द्रमा प्रायः वह शीतल, परन्तु देखो, चन्द्रमा की कान्ति के साथ में, वह गमन कर जाता हैं, और गमन करता हुआ, बेटा! चन्द्रमा के स्वरूप में, चन्द्रमा में गति करने लगता है।

तो विचार आता रहता है बेटा! मैं तुम्हें विज्ञान के युग में नही ले जाना चाहता हूँ, विचार केवल यह क्या आज मुनिवरों! देखो, मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ बेटा! देखो, अंगद और जहाँ देखो, जहाँ ब्रह्म भोग अस्तं ब्रीहि कृतं मेरे प्यारे! देखो, श्वेत्ता मुनि के यहाँ ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहे हैं, और ब्रह्मचारी जब अपने में अध्ययन कर रहे हैं, तो बेटा! वह जब विद्यालय शान्त होता, अवकाश को प्राप्त होते तो एक समय बेटा! देखो, यहाँ अंगद और अंगदं सुतम् बालि के पुत्र बड़े सुयोग्य और बड़े मानो देखो, विज्ञान में पारायण थे, प्राण विद्या को

अपनें में धारण करते रहते थे, मानो देखो, ये प्राण विद्या उन्होंने स्वाति मुनि के चरणों में अध्ययन की और प्राण को मुनिवरों! देखो, जिस अंग में वह लाना चाहते थे, वह प्राण उसी अंग में मानो अर्पित हो जाता था, उसी में प्रायः वह दृष्टिपात होने लगता था। तो मुनिवरों! देखो, यह विद्याएं अंगद जी ने मुनिवरों! देखो, महाराजा स्वाति मुनि के यहाँ अध्ययन की यहाँ नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, जो बुद्धिमान होता है मानो कर्मठ होता है, मानो उसके लिए बेटा! राष्ट्रीयतव नही होता, उसमें एक मानवतव होता हैं उसमें मानो सुयोग्यता होती हैं और वह सुयोग्य को ही मुनिवरों! देखो, वह सुयोग्य को ही उस विद्या को प्रदान कराना चाहता हैं मेरे प्यारे! देखो, यह आचार्यों का कथन रहा है परम्परागतों से उसके लिए एक राष्ट्र नही दो राष्ट्र नही पृथ्वी का क्या किसी भी लोक-लोकान्तरों का प्राणी क्यों न आ जाएं परन्तु उसी को विद्या देना प्रारम्भ कर देता हैं तुम्हें स्मरण होगा पुत्रों! मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन कराया था क्या देखो, द्वापर के काल में सम्भव अप्रत देवाः देखो, महाराज अर्जुन मंगल में मानो मंगल मण्डल तक उनकी उड़ान रही और मंगल में जा करके वह विद्या का अध्ययन करते रहे इसी प्रकार स्वाति मुनि के यहाँ बेटा! देखो, प्राण विद्या को अपने में समेटने के लिए बेटा! देखो, वह बालि के पुत्र अंगद जी विद्यमान परन्तु देखो, उसमें नाना ब्रह्मचारी भी अध्ययन करते थे बेटा! स्वाति मुनि के यहाँ उस काल में दौ सौ ब्रह्मचारी केवल प्राण विद्या के अध्ययन के लिए बेटा! तप कर रहे हैं कि हमें प्राण विद्या को जानना है और प्राण को मानो देखो, हमें उदान और समान सर्वत्र धाराओं को जानना हैं मेरे प्यारे! देखो, ऋषि के यहाँ देखो, जहाँ अंगद जी थे वही मुनिवरों! देखो, राजा रावण के पुत्र मेघनाथ जी भी मानो देखो, शिक्षा अध्ययन करते रहते थे वह भी प्राण विद्या को अपने में धारयामि बनाने वाले प्रथम ब्रह्मा व्रतं राजा रावण के पुत्र जो मेघनाथ जी थे, वह बड़े वैज्ञानिक थे मेरे प्यारे! देखो, इन्द्र के यहाँ उन्होंने शिक्षा का अध्ययन किया, मानो मंगल मण्डल में यन्त्रों के द्वारा वह मंगल में जा करके उन्होंने इस विद्या का अध्ययन किया, मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है उनका जो क्रियाकलाप रहा हैं राजा रावण के पुत्र एक मानो देखो, नारायन्तक थे वह इनके यन्त्रों में विद्यमान हो करके वह बुद्ध मण्डल में पंहुचे और बुद्ध मण्डल में बेटा! देखो, इस प्रकार की विद्या का उन्होंने अध्ययन किया यह अध्ययन क्रिया परम्परागतों से ही, बेटा! देखो, यह मानवीय मस्तिष्कों में क्या हृदयग्राही रही हैं। तो मुनिवरों! देखो, जब स्वाति मुनि के यहाँ दोनो ब्रह्मचारियों को अवकाश प्राप्त होता, उसी काल में दोनों अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके विचार-विनिमय करते रहते थे, तो बेटा! देखो, एक समय सांय काल के समय देखो, वह मेघनाथ जी ने अंगद से कहा कि भगवन! ये जो प्राणं ब्रहा कृतं यह जो प्राण है यह क्या है उन्होंने कहा कि हे भगवन! ये प्राण क्या नही है? उन्होंने कहा मैं तुमसे प्रश्न कर रहा हूँ। उन्होंने कहा मैं भी तुमसे प्रश्न कर रहा हूँ। उन्होंने कहा वाक् तो यथार्थ है परन्तु देखो, एक दूसरे में जानने के लिए तत्पर हो जाओ। बेटा! देखो, सांयकाल का समय था उन्होंने कहा यह प्राण क्या है? तुम यह जानना चाहते हो, मैं यह जानना चाहता हूँ कि प्राण क्या नही हैं संसार में, तो दोनों का प्रश्न एक दूसरे में जटिल बन गया हैं, एक वृत्त बन गया हैं। मानो देखो, मेरा विचार यह आ रहा है, क्या ये जो प्राण है यह मानव का जीवन है ये जो प्राण है, यह मानो देखो, इस पृथ्वी से ले करके ये जो माला बनी हुई है यह जो मानो देखो, प्राण के कारण बनी हुई। मेरे पुत्रों! देखो, इसीलिए उन्होंने कहा क्या प्राण कहाँ नही हैं? प्राण सर्वत्रता में विद्यमान रहता हैं, यह मानो देखो, विशेष प्राण है, और विशेष प्राण में जो देखो, सामान्य प्राण है, वह सर्वत्रता में मानो देखो, जड़वत में भी और देखो, चैतन्य की प्रतिभा में भी सदैव निहित रहता हैं। उन्होंने कहा भगवन! ये हमने जान लिया। मुनिवरों! देखो, यह अमृतं मेघनाथ जी बोले कि-प्रभु! यदि हम प्राण में अपान का मिलान करा देते हैं, तो क्या बन जाता हैं? उन्होंने कहा जब प्राण और अपान का दोनों का मिलन होता है, तो उग्र क्रिया बन जाती है। उन्होंने कहा यदि दोनों प्राण के मध्य में यदि हम सामान्य प्राण का मिलान कर देते

हैं, तो क्या बन जाता है? उन्होंने कहा वह जो उग्र क्रिया है, उग्रता को जान करके वह मानो देखो, सामान्य प्राण को अपने में शमन कर जाता है। उन्होंने कहा यदि इसमें यदि हम नाग प्राण की पुट लगा देते हैं, तो क्या बन जाता है? उस समय मुनिवरों! देखो, अंगद जी बोले कि यदि नाग प्राण की जब पुट लगा देते हैं, तो वह मानो देखो, एक यन्त्र बन करके, देखो, मानव के प्राणों का घातक बन सकता हैं। तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने कहा वाक् यथार्थं ब्रह्मे उन्होंने कहा अंगद जी बहुत बुद्धिमान हो। प्राण के सम्बन्ध में क्या जानते हो यह तो मानो देखो, भौतिक प्राण की प्रतिभा हुई, यदि हम आध्यात्मिकवाद में इन वाक्यों को लेना चाहते हैं, मानो देखो, आध्यात्मिकवाद में एक संकल्पमयी प्राण होता हैं, उस संकल्पोंमयी प्राण से क्या बनता है उन्होंने कहा जब संकल्पमयी प्राणायाम करने वाला साधक मानो देखो, संकल्प कर रहा है मेरे में चन्द्रमा का वास हो जाएं तो मानो देखो, चन्द्रमा के वास से वह मानो चन्द्र प्राण को ऊर्ध्वा में लाना चाहता है। मानो देखो, प्राणों को उन परमाणुओं को मानो उन तरंगों को अपने में धारयामि बना लेता हैं, और उसको मानो देखो, सूर्य के समीप जा करके वह त्याग देता हैं सूर्य प्राण के साथ में मानो देखो, वह चन्द्र प्राणायाम संकल्पमयी मानो देखो, चन्द्र और सूर्य दोनों की प्रतिभा बन जाता है आगे दोनों का एकोकी वृत्त और स्वर में स्वरचित हो करके मानो उसी में परिणत हो जाते हैं। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा अस्तम् यह संकल्प प्राण इसी को कहते हैं। उन्होंने देखो, संकल्पमयी प्राण ऐसा होता है, क्या वह संकल्प प्राण के द्वारा, जब चन्द्रमा में उसकी प्रवृत्ति चली जाती हैं, तो जितने भी शीतल लोक-लोकान्तर होते हैं, इनमें मानो जल प्रधान होता हैं, उन मण्डलों के जानने वाला बन जाता है और यदि मानो देखो, सूर्य प्राणायाम करने वाला संकल्पोमयी बन जाता हैं, संकल्प से ही करता है, तो उसमें वह सूर्य मण्डल क्या जितने भी अग्नि तत्त्व प्राणां ब्रहे देखो, अग्नि तत्त्व जितने भी मण्डल हैं। वह उनके प्रति मानो उनकी ग्रतियां बन करके, उसको जानने वाला बन जाता हैं। तो मानो बेटा! मैं आज प्राण के सम्बन्ध में, इतना गम्भीरता में जान नही चाहता हूँ, केवल यह तो गम्भीर वैज्ञानिकों का विषय है, बेटा! विचार केवल यह मुझे प्रगट करना है, कि दोनों का बड़ा विचार-विनिमय होता रहा। तो उन्होंने कहा कि यह संकल्पमयी प्राण यह है, क्या संकल्प से हम प्राण को लें, और संकल्प से उसको त्यागने का प्रयत्न करें, रेचक और कुम्भक के द्वारा मानो देखो, यह आध्यात्मिक साधना बन जाती है, इस प्राण के करने से यह लाभ होता हैं, कि ये मानो देखो, कृत होने लगता है, कि हमारे जितने रूग्ण हैं, जितने रूग्ण है वह शान्त हो जाते हैं, रूग्णों के शान्त होने पर हमारा शरीर मानो देखो, अब्रहा ब्रीहि देखो, वह सूक्ष्म बन जाता है, हमारे शरीर के प्ररमाणुओं के द्वारा के द्वारा जो हव्य रहते हैं वह सूक्ष्म देखो, वाहस्त बन करके, वह अपने में ही अपनेपन को दृष्टिपात कराने लगते हैं। तो मानो देखो, ये संकल्पोंमयी प्राण है एक शीतली प्राणायाम होता हैं, जिसमें देखो, जल को ही अपने में सींचन करता रहता है। एक मानो देखो, ऐसा प्राणायाम हैं, प्राणां ब्रह्वे देखो, जब हम नाग प्राण देवदत और देखो, प्राण का समन्वय कर देते हैं, तीनों प्राणों का मानो एक अग्नि प्राणायाम हैं, जो मानो देखो, अग्नि प्रदीप्त हो जाती हैं। मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में वर्णन करते हुए कहा था, क्या ये जो प्राण की प्रवृत्ति विद्या, अस्तुति विद्या इसको जानने के लिए मानव को तत्पर रहना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, नाग प्राण और देवदत दोनों का मिलन होता है उसमें प्राण और अपान का मिलन हो जाता हैं, अपान का मिलन होते ही प्राण का मिलन होते, इन प्राणायाम करने वाले जो साधक जन होते हैं वे जब प्राणायाम करते हैं तो मुनिवरों! देखो, वह अपने आश्रम में एक दीपावली बन जाती हैं। दीपं ब्रहे देखो, वह दीपावली बन करके उस गान को गाया जाता हैं, वह प्राण के द्वारा गाया जाता हैं मुनिवरों! देखो, इसको यह अंगद जी भी, इस दीपावली देखो, राग को जानते थे। मानो देखो, इसी को देखो, मेघनाथ जी भी जानते थे, मेघनाथ जी जब वनों में रहते, तपस्या करते तो जब यह गान गाते, तो वनों में दीपावली बन जाती थी। मेरे प्यारे! देखो, ये विद्या हमारे यहाँ बड़ी विशिष्ठ बन करके रही हैं।

याग और तपस्या

स्वाति मुनि के यहाँ बेटा! देखो, यहाँ दीपावली वृत रागों में परिणत होता रहा हैं हमारे यहाँ, परम्परागतों से बेटा! देखो, दीपमालिका के ऊपर बड़ा अध्ययन होता रहा है।

मुझे स्मरण आता रहा है महर्षि वशिष्ठ मुनि के यहाँ भी, इस दीपावली मानो दीपमालिका के ऊपर बड़ा अध्ययन होता रहा, ब्रह्म ज्ञान में कहीं जाना, कहीं मानो देखो, भौतिकवाद में जाना, कहीं अणु और परमाणुओं को मिलान करके दीपमालिका का गान गाते रहते। मेरे पुत्रों! मुझे तो बहुत-सा काल स्मरण आता रहता हैं राजा नल के यहाँ, वह दीपावली गान को वह जानते थे, बेटा! प्राण विद्या को जानने वाले देखो, राजा नल भी इस प्रकार के रहे हैं, जब वह रात्रि समय बेटा! किसी नगर में बेटा! देखो, दीपावली गान गा रहे थे, तो बेटा! देखो, नगर भी अपने में दीपमालिका बन करके रहता था। तो मेरे प्यारे! देखो, मैं तुम्हे विशेषता में नही केवल इस दीपमालिका को पान करने के पश्चात मुनिवरों! देखो, रावसम् ब्रह्वे कृतं मुनिवरों! देखो, जब महाराजा देखो, वृतं ब्रह्वे मेघनाथ जी एक समय बेटा! देखो, महाराजा इन्द्र के यहाँ पंहुचे तो एक समय जब इन्द्र ने स्वागत किया उन्होंने कहा तुम बड़े वैज्ञानिक हो और प्राण विद्या को जानने वाले हो, तो मेरे पुत्रों! देखो, जब अपनी स्थली में विद्यमान हो गएं और तो ये चर्चाएं श्रवण की क्या आप तो स्वाति मुनि के आश्रम में अध्ययन करने वाले, मेघनाथ जी देखो, लंका स्वामी के पुत्र पधार रहे हैं, इनका देखो, बड़ा अध्ययन हैं, वेद विद्या पर और वेद मे भी जो प्राण विद्या उसके ऊपर उनका अध्ययन रहा हैं। तो मानो देखो, मुझे ऐसा दृष्टिपात किया गया, श्रवण किया गया क्या मुनिवरों! देखो, महाराजा इन्द्र के इन्द्रियाणियों ने कहा क्या हे भगवन! हम तो दीपमालिका जो तुम्हारा गान हैं, उसे श्रवण करना चाहते हैं। उन्होंने कहा हे मातेश्वरी! इस समय मेरा अन्तर्हृदय मानो देखो, उस आँगन में जाना नही चाह रहा है, तो उन्होंने कहा शान्त हो जाईएं आप विश्राम कीजिए, तो मुनिवरों! देखो, वह विश्राम के पश्चात, जब रात्रि छा गई तो उन्होंने पुनः प्रार्थना की हे प्रभु! आप बड़े विशेषज्ञ है, ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा में, और यन्त्रवाद में भी आपका बडा मानो देखो, विज्ञान अपनी आभा में रत्त होता रहा हैं। और दीपमालिका के सम्बन्ध में भी मानो देखो, तुम्हारा गान बड़ा विचित्र हैं, उस गान को और उस प्राण को हम दृष्टिपात करना चाहते हैं, प्रभु! तो मेरे प्यारे! देखो, दीप वृत्ति के दृष्टिपात किए गएं, और महाराजा अंगद जी ने बेटा! देखो, प्राण को, अपान और अपान को मानो देखो, देवदत से समन्वय किया और देवदत का नाग प्राण से समन्वय करते हुए और सामान्य प्राण की पुट लगा करके बेटा! जब प्राण को वहाँ एक दूसरे में ले गएं जैसे धनुषं ब्रहा अपने में मानो देखो, तर्कश को कशा जाता हैं ऐसे ही प्राणो को उसमें एकाग्र करते हुए जब कसना प्रारम्भ किया तो मेरे प्यारे! देखो, प्राणायाम के द्वारा उनका मिलान देखो, विचित्र बन गया और उनके मुखारबिन्दु से बेटा! देखो, अग्न्याध्यान होने लगा तो मेरे पुत्रों! ऐसा मुझे उनका साहित्य अध्ययन करने से प्राप्त हुआ है जब इस प्रकार उनका देखो, अग्न्याध्यान होने लगा तो बेटा! दीपमालिका बन गई उनके मानो देखो, नगरी जो त्रिपुरी की थी दीपमालिका बन गई तो विचार आता रहता है, बेटा! प्राण विद्या मानवीय मस्तिष्कों में रही है वेद के मन्त्रों में और मानवीयता में सदैव निहित रही हैं तो मुनिवरों! देखो, जब दीपमालिका बनी तो महाराजा इन्द्र क्योंकि राजाओं में द्वेष भावना परम्परागतों से रही हैं, क्योंकि जब राष्ट्र बनता हैं, तो रजोगुण राष्ट्र में अवश्य आता है और जब रजोगुण आता है तो उसमें द्वेषाग्नि भी जागरूक होती हैं। तो मुनिवरों! देखो, महाराजा इन्द्र को ये द्वेषाग्नि जागरूक हुई, क्या हो सकता है कि मेघनाथ मेरी त्रिपुरी को विजय न कर ले, और मेरी त्रिपुरी को विजय कर लेगा, तो मेरा इन्द्र पद समाप्त हो जाएगा। मानो देखो, ये भावना राजा इन्द्र के हृदय में मानो प्रविष्ट हो गई थी, तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने अपनी देवियों से कहा, हे दिव्याओं! ये जो मेघनाथ है, यह तो बड़ा मानो देखो, बुद्धिमान क्या विज्ञान में पारायण हैं, यह क्रियात्मकता में योगेश्वर हैं, मानो यह प्राण विद्या को जानता हैं, अस्त्रों-शस्त्रों की विद्या भी जानता है। मानो ये वरुणास्त्रों में पारायण

हैं, यदि देखो, इसके हृदय में ये समाहित हो गया, क्या मैं त्रिपुरी को अपने में विजय करना चाहता हूँ। तो मेरी त्रिपुरी को विजय कर सकता हैं। उन्होंने कहा हे भगवन! आप इस प्रकार की जिज्ञासा अपने हृदय में क्यों कर रहे हैं? ऐसी द्वेषा भावना को क्यों अपने में लाना चाहते हैं? यदि अमृतां यदि इसके हृदय में यह समाहित हो गया कि इन्द्र का मेरा संग्राम होगा, तो मानो तुम्हें विजय कर लेगा, मानो देखो, उसके पश्चात भी त्रिपुरी को ले सकता है। आप ऐसी भावना बनाते ही क्यों हैं? तो मुनिवरों! देखो, इन्द्र के हृदय में, यह अमृतां ब्रह्मे देखो, यह समाहित रहा, परन्तु देखो, मेघनाथ जी ने इस विद्या का अध्ययन कर चमत्कार दिखाते हुए विद्या को बेटा! उन्होंनें दृष्टिपात कराते हुए, उन्होंने कहा अच्छा मातेश्वरी! अब मुझे आज्ञा दीजिए। अब मैं अपने लंकेश में जाना चाहता हूँ, उन्होंने कहा धन्य हैं हे ब्रह्मचरिष्यामि! तुम तो ब्रह्म की चरी को जानने वाला है, जो प्राणों की प्रतिक्रिया को जानता हैं, जो प्राणों के स्वरूप को जानता है, वह वास्तव में देखो, ब्रह्मचरिष्यामि कहलाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने एक वाक् और कहा क्या हे मेघनादं ब्रहे क्या तुम यह भी जानते हो क्या विशेष प्राण को तुम सामान्य प्राण से मिलान कराना जानते हो? उन्होंने नतमस्तिष्क हो करके कहा कि यह मैं नही जानता। यह मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जानते हैं। मैं इसको नही जानता हूँ क्योंकि मैं जिज्ञासा तो कर रहा हूँ, कि मैं उस प्राण को और जानूं जिससे मेरा मानो सामान्य प्राण देखो, विशेष प्राण से समन्वय हो जाएं, तो मैं इस ब्रह्माण्ड में यह जितना प्रभु का ब्रह्माण्ड है, जो लोक-लोकान्तर है, जो एक ब्रह्म सूत्र में पिरोया हुआ जगत है, उसको मैं दृष्टिपात करूं। मानो देखो, ये मैं अभी दृष्टिपात नही कर सका हूँ। यह बेटा! उन्होंने अपने वाक्यों का स्पष्टीकरण किया, और स्पष्टीकरण करके उन्होंने कहा धन्य है, तुम बड़े सत्यवादी हो क्योंकि ब्रह्मचारी तो वास्तव में सत्यवादी होता है, उन दोनों ने कहा तुम अस्त्रों में कौन से अस्त्रों शस्त्रों को जानते हो? उन्होंने कहा मातेश्वरी! मैं ब्रह्मास्त्र को जानता हूँ, मानो देखो, मैं नाग फांश यन्त्रों को जानता हूँ, हे मातेश्वरी! मैं वामा अस्त्रों को जानता हूँ, अस्त्रों शस्त्रों में मेरी बड़ी प्रायः गति रही है, क्योंकि मैं दो वर्ष तक, मैंने मंगल मण्डल में, मैंने एक मृचिका नामक आचार्य को अपना गुरु बनाया, उससे मैंने इस विद्या का अध्ययन किया है, और मैं नाना प्रकार की विद्याओं को ले करके, मैं इस मृत्त मण्डल में अपने पृथ्वी मण्डल पर आ गया हूँ। तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारी! तुम्हारी उड़ान बड़ी विचित्र हैं विज्ञान में, परन्तु देखो, प्राण को तुम और क्या जानते हो? उन्होंने कहा जो तुम प्रश्न करोगे मानो मैं उसका उत्तर देता जाऊंगा। उन्होंने कहा तुम श्रुति प्राण को जानते हो? उन्होंने कहा हां मैं श्रुति प्राण को जानता हूँ। उन्होने कहा कैसे जानते हो? उन्होंने कहा मैं श्रुति प्राण को इसीलिए जानता हूँ, जो मेरे श्रोत्रों में, प्राणों की ध्वनियां आती हैं, उन ध्वनियों को संग्रह करता रहता हूँ और मैंने स्वात नाम का एक यन्त्र का मैंने निर्माण किया है, जिनमें उन परमाणुओं को एकत्रित करता रहता हूँ, और यन्त्रों के द्वारा मैं मानो देखो, मैं यन्त्रों में स्थिर करता हुआ अग्नि के समीप विद्यमान हो करके, मैं उन परमाणुओं का देखो, भिन्न-भिन्न रूपों में परमाणुओ की कृतियां बना लेता हूँ, जो जल के परमाणु हैं, अग्नि के परमाणु हैं, उन परमाणुओं को मैं देखो, मैं भिन्न-भिन्न करता हुआ, उनके मिलान करके जिस अवस्था में मुझे लाने है जिस यन्त्र में मुझे देखो, वह देखो, वह परमाणुवाद को लाना है उस यन्त्र का उससे निर्माण हो जाता हैं मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने ब्रह्मणे देखो, वह भी एक ऋषि के तुल्य उन्होंने कहा धन्य है तुम तो ब्रह्मचारी नही, तुम तो ऋषि हो। क्या तुम्हारी प्राणों के ऊपर बड़ी गम्भीर गति है, तुम्हारे अन्तर्हृदय में उन्होंने कहा और क्या जानते हो? उन्होंने कहा मैंने नाग प्राण का आश्रय ले करके, प्राण उदान का मैंने एक यन्त्र का निर्माण किया है, उस यन्त्र में यह विशेषता है वे नागफाश कहलाता हैं। यदि मैं किसी को प्राण सत्ता और नागफांश के द्वारा तो वह सूर्य उदय होने से पूर्व मानो देखो, उसके रक्त, वह नाग फांश कहलाता हैं, जो मैंने स्वाति मुनि के द्वारा मैंने इसका अध्ययन किया है। और इसको मैंने मृचिका नामक ऋषि है, उनके द्वारा भी अध्ययन किया है

भगवन! हे मातेश्वरी! मैं इन विद्याओं को मानो देखो, कुछ संक्षिप्तता से जानता हूँ, उन्होंने कहा कि तुम सब जानते हो, कि नही प्रभु! का विज्ञान बड़ा अनन्तमयी माना गया है। मैं सर्वत्रता को नही जानता, मैं मानो देखो, उतना जानता हूँ देखो, उतना जानता हूँ जितना मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया हैं पूज्यपाद गुरुदेव को भी इस अवस्था में गणित नही कर सकता, वो कितना जानते हैं उनके जानने की कितनी सीमा हैं अध्ययन और क्रिया में लाने का उनका कितना अध्ययन है। हे मातेश्वरी! मैं तो प्रभु की सृष्टि में, बहुत ही देखो, निम्न हूँ, क्योंकि प्रभु का ज्ञान और विज्ञान बड़ा अनन्तमयी माना गया हैं। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि अमृतां देखो, ब्रह्मचारी ने कहा धन्य है। हे ब्रह्मणां ब्रहा हे मातेश्वरी! अब मुझे आज्ञा दीजिए। उन्होने कहा धन्य है ब्रह्मचारी परन्तु देखो, उन्होंने एक वाक् कहा, क्या इन्द्र पुरी में आ करके, तुमने क्या अनुभव किया हैं? उन्होंने कहा कुछ नही मैं अनुभव का वाक् तुमसे प्रगट नही करूंगा। मानो देखो, कोई समय मुझे आज्ञा देगा, तो मैं अनुभव की चर्चा तो किसी काल में ही कर पाऊंगा।

मेरे प्यारे! देखो, उन्होने कहा धन्य है तो वहाँ से उन्होंने गमन किया त्रिपुरी से गमन करते हुए वह पुनः बेटा! देखो, ऋषि के आश्रम में आ गएं, तो मुनिवरों! देखो, ऋषि ने कहा स्वाति ने, हे ब्रह्मचारी! अंगदा ब्रहे वर्णा ब्रीहि तुम कहाँ गएं थे, कहाँ तुम्हारा गमन उन्होंने कहा-प्रभु! मैं त्रिपुरी में गया था, और मैं त्रिपुरी में जा करके मानो कुछ विचार-विनिमय विचार-विनिमय हुआ, उन्होंने कहा कुशलतम ब्रह्वे इन्द्र का राष्ट्र है, उन्होंने कहा प्रिय भगवन! बहुत ही कुशल है, आनन्दवत है, तो ऐसा बेटा! उच्चारण करके अपनी पंक्ति में विद्यमान हो गएं। तो मेरे प्यारे! देखो, विचार-विनिमय क्या यह प्राणों का जो संघात हैं, प्राणों की जो एक पवित्र विद्या है, यह एक बड़ी गहन विद्या है, अपने में बड़ी विचित्र विद्या रही हैं। अपने समय में तो बेटा! देखो, एक समय वह एकान्त स्थली में विद्यमान थे, और उनके पूज्यपाद गुरुदेव अन्धकार छाया हुआ है, उन्होने कहा हे मेघनाथ! तुम दीपमालिका क्यों नही प्रकाशित करते हो, उन्होंने कहा-प्रभु! क्या करना हैं? क्या अमृतां ब्रह्वे वृतं देखो, कुछ अध्ययन करेंगें। तो उन्होंने बेटा! देखो, प्राण को अपान में प्रवेश करके उन्होंने आश्रम को दीपमालिका के रूप में परिवर्तित कर दिया। उन्होंने कहा हे मेघनाथ! इस विद्या को विद्या में तुम पारायण हो गएं हो, उन्होंने कहा-प्रभु! यह तो आपकी अनुपम कृपा है। अनुपम देन हैं, क्या प्रभु देखो, इस विद्या को मैं क्रियात्मकता में पान कर गया हूँ, मेरे प्यारे! देखो, इस विद्या को मेघनाथ भी जानते थे, अंगद भी जानते थे, मृचिका कौतुक ऋषि के पुत्र भी इस वाक् को इस विद्या को जानते थे। उनके यहाँ अनन्य ब्रह्मचारी बेटा! अध्ययन करते रहते थे, तो मेरे प्यारे! देखो, विचार-विनिमय यह हमारे यहाँ देखो, विद्यालयों में देखो, भिन्न-भिन्न प्रकार की शिक्षाएं, मेरे प्यारे! देखो, वर्णित होती रही हैं, वृत्तियों में रत्त और ब्रह्मचारी उनका हृदय पवित्र बनाने में आचार्य लगे रहते थे, और विद्या देने में बड़े कुशल थे और उन्होंने एक समय यह कहा था मेघनाथ जी से क्या तुम इस विद्या के अधिकारी हो अथवा नही। क्या प्रभु! इसकी तो परीक्षा ले लीजिए। तो मेरे प्यारे! देखो, विचार यह भी था, ऋषि-मुनियों के मस्तिष्कों में क्या यह विद्या अधिकारी को दी जानी चाहिए। अनधिकारी को नही देनी चाहिए मेरे पुत्रों! देखो, अनधिकारी को यह विद्या प्रदान करोगे, तो यह राष्ट्र और समाज का विनाश हो जाएगा, और यदि इस विद्या को अधिकारी को प्रदान करोगे तो उनमें उनका नामोकरण ऊर्ध्वा में गमन करेगा, और ये विद्याएं मानो देखो, उनके मस्तिष्क में, क्रियात्मकता में और यह विद्या उनकी वृत्तियों में सदैव निहित रहेगी। तो इसीलिए इस विद्या को अधिकारी को प्रदान करनी चाहिए। स्वाति मुनि महाराज देखो, इस विद्या में बड़े पारायण थे, तो मुनिवरों! देखो, इस विद्या अमृतां देखो, ब्रह्म का बखान अवश्य होना चाहिए, जब आचार्यों के गृहों में, वैज्ञानिकों के गृहों से जब परमात्मा का नामोकरण स्मरण नही रहेगा, तो उस समय यह विज्ञान देखो, एक अग्नि का काण्ड बन करके रहता है। मेरे प्यारे! देखो, जैसे यज्ञशाला में यज्ञमान अपने हृदय से नम्रता को त्याग देता है, तो मानो वह यज्ञ, उस मानवीय आन्तरिक प्रवृत्ति को समाप्त कर देता हैं। इसी प्रकार, मेरे

याग और तपस्या

प्यारे! देखो, नम्रता बहुत अनिवार्य हैं, वैज्ञानिकों के गृहों में नम्रता हो, क्रियात्मकवादियों के गृहों में नम्रता हो, और मुनिवरों! देखो, गृह स्वामी गृह स्वामिनीयों के गृहों में नम्रता हो, राजा के हृदय में प्रजा के हृदय में, मानो प्रजा नम्रता और प्रजा में राजा के प्रति मेरे प्यारे! उनको प्रोत्साहन देना यह मानो देखो, नम्रता के प्रतीक माने गएं हैं। इसीलिए प्रत्येक मानव के हृदयों में नमः का शब्द होना चाहिए। हमारे वैदिक साहित्य में नमः का भाव बहुत समय बहुत कृतियों में मानो आता रहा हैं, वेद के मन्त्र इस प्रकार के हैं जो नमः के ही शब्द हैं। इसीलिए नमः रहना चाहिए, नम्रता का ही मानव को ऊर्ध्वा में ले जाती है। मेरे प्यारे! देखो, जब नम्रता समाप्त हो जाती है। विज्ञान, मानववाद, राष्ट्रवाद देखो, सब अग्नि के मुखारबिन्दु में चला जाता है। तो विचार आता रहता हैं, क्या हमारे यहां बेटा! जहाँ विज्ञान हो, तो नम्रता अवश्य हो, मेरे प्यारे! यदि वह चन्द्र यात्री बना है, तो नम्रता अवश्य होनी चाहिए यदि यह सूर्य की किरणों के साथ गमन करने लगा है तो नम्रता अवश्य होनी चाहिए। मेरे प्यारे! वह नम्रता कौन देते हैं? जो उस विद्या का शमन कराते हैं, और जो शमन करते हैं, मानो देखो, दोनों का परस्पर जब व्यवहार नम्रता का होता है, तो नमः वृत्तियों में रत्त हो जाते हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता हैं, आज मैं इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा देने नही आया हूँ, आज मैं बेटा! तुम्हें गम्भीर मुद्रा में तो ले गया हूँ यह तो वैज्ञानिकों का विषय हैं यह जो मानो जब विद्यमान होते हैं विद्यालयों में यह ब्रह्मचारियों और गुरुओं का विषय है, बेटा! जब मैं बेटा! देखो, इसका विद्यार्थी कुछ समय तक बेटा! हम भी रहें हैं, तो बहुत समय पूर्व परन्तु देखो, उस समय आचार्यों के समीप विद्यमान हो करके, इस विद्या का अध्ययन कर रहे हैं, क्रिया में लाते रहे हैं। क्योंकि यह जो ऋषि-मुनि होते हैं, तो तपश्चर होते हैं, जो सर्वत्र विज्ञान में पारायण होते हैं। ये सर्वत्रं ब्रह्मे जितना भी जानते हैं, उतना मैं अपने में पूर्णता की आभा में रत्त रहते हैं। तो यह है बेटा! आज का वाक्, आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह क्या हम परमपिता परमात्मा जो हमारा सखा हैं, आनन्दवत् है, जो विज्ञान का भी वैज्ञानिकों को भी विज्ञानवेत्ता हैं मेरे प्यारे! देखो, सर्वत्रता में विद्यमान हैं, हमारे अन्तर्हृदयों में भी विद्यमान रहता है, वह मानो देखो, बुद्धिमानो का बुद्धितव हैं, वह प्रकाश का भी प्रकाशतव हैं वह मानो देखो, वेद रूपी प्रकाश में रत्त रहने वाला, मेरे प्यारे! हम उस परमपिता परमात्मा की महती अनन्तता को जानते हुए इस सागर से पार हो जाएं यह है बेटा! आज का वाक् अब समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा, आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं मन्था वाचन्नमाः। ओ३म् ब्रीह्विश्चं प्रा वसु मां रेवाः यम सर्वां। ओ३म् यौ सर्वां आभ्यां देवत्वां ब्रीहि वरुणा रथं आ पा अच्छा भगवन्! आज्ञा।

१० रूढ़ियाँ नही पनपनी चाहिए २८-१०-१९८९

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महती और उसकी अनन्तता के ऊपर विचार-विनिमय किया जाता हैं, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी हैं, और वह यज्ञोमयी स्वरूप क्योंकि याग उसका आयतन है, उसका गृह हैं, और उसका सदन हैं, और वह उसी में वास कर रहा हैं। तो आज मुझे कहीं से ये प्रेरणा आ रही हैं कि मैं याग के सम्बन्ध में कुछ अपने विचारों को व्यक्त करूं। क्योंकि याग के ऊपर हमारे यहाँ, ऋषि-मुनियों ने अपने बड़ी विचित्र-विचित्र लेखनियाँ बद्ध की हैं, और समाधिष्ट हो करके, उन्होंने एक-एक वेदमन्त्र के ऊपर गम्भीर अध्ययन किया है, क्योंकि जब तक हम अध्ययन नही कर पाते, जब तक हमारे अध्ययन की प्रतिक्रियाएं मनस्तव और प्राणतव तक नही जा पाती। तो विचार आता रहता है कि मन और प्राण और विचार ये दोनों एक ही सूत्र के मनके कहलाते हैं, और जब हम इनको एकाग्र करके जब हम किसी वस्तु पर, हम अन्वेषण करते हैं, अथवा विचार-विनिमय करते हैं, तो मानो उसके बहुत गम्भीर, आन्तरिक जगत में प्रवेश हो जाते हैं, जहाँ हमारे वाक्यों को कोई, अवृत्तियों में न परिणत कर दे, वह शब्द अकाटय बन जाते हैं जैसे याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने और भी आदि ऋषियों ने उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में और याग के सम्बन्ध में जो उन्होंने अपने विचार व्यक्त किए है। वह बड़े विचित्र है उन्होंने देखो, परमपिता परमात्मा की सम्बन्ध में कहा है क्या यह जो संसार रूपी यज्ञशाला है, मानो नाना प्रकार की मेखला बनी हुई हैं, वह उस परमपिता परमात्मा की महती है। और उसी में वह रत्त हो रहा है, उसी में गमन कर रहा है।

तो विचार आता है कि हम परमपिता परमात्मा की सम्बन्ध में बेटा! वह यज्ञोमयी स्वरूप माना गया हैं, मानो याग उसका आयतन है, वह उसी में वास, वह उसका गृह हैं, और उसी का वह सदन बना हुआ है, मानो वह उसी में वास कर रहा है। यह कैसा अनूठा हैं, कैसा अनुपम ब्रह्म है, जिसकी महिमा बेटा! परम्परागतों से ऋषि-मुनि उसका बखान करते रहते हैं। वैज्ञानिक जन उसकी प्रतिभा को दृष्टिपात करते रहते हैं। परन्तु उसका ज्ञान, विज्ञान इतना अनन्तमयी है, कि मानव अन्त में मौन हो जाता हैं। और वाणी अपनें में, उद्गीत गाने में मानो असमर्थ हो जाती हैं। तो वे परमपिता परमात्मा मानो यज्ञोमयी स्वरूप है, वे पुरोहित हैं, वे पराविद्या के प्रदान करने वाले याग का अभिप्रायः कि हम वह जितने भी सुक्रियाकलाप है। वह सुक्रियाकलाप एक यज्ञमयी माने गएं हैं। तो आओ, मेरे पुत्रों! देखो, मैंने कई कालों में तुम्हें बहुत-सी चर्चाएं प्रगट भी की हैं ऋषि-मुनियों का जो अध्ययन करने का माध्यम रहा है, वह बड़ा विचित्र रहा है, और उनके अध्ययन की जो प्रतिक्रिया रही है वह विज्ञान आध्यात्मिकवाद और मानवीयतव और ब्रह्माण्ड और पिण्ड इन पंचीकरण करते हुए मानो उन्होंने इसके ऊपर अध्ययन किया तो आओ, मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हें ऋषि-मुनियों के क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ। क्योंकि हमारे यहाँ प्राण वक्ताओं ने भी प्राणेश्वरों ने भी मुनिवरों! देखो, याग के ऊपर अपनी बहुत-सी टिप्पणीयाएं और अपना विचार दिया है परन्तु देखो, यहाँ याज्ञिक पुरूषों ने अपना-अपना जो मन्तव्य दिया है, वह बड़ा विचित्रतव माना गया है। आओ, मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हें ऐसे ऋषि के आसन पर ले जाना चाहता हूँ जहाँ बेटा! देखो, बाल्य ब्रह्मचारी देखो, आचार्य के चरणों में विद्यमान हैं, और वह प्रश्न कर रहे हैं, आचार्य उसका उत्तर दे रहा हैं, और उनके प्रश्न करने की जो शैली रही है यह बड़ी विचित्रतम रही है। तो मेरे प्यारे! देखो, मुझे आज, वह आश्रम

स्मरण आ रहा हैं, जहाँ मुनिवरों! देखो, महर्षि शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ जाने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है, और देखो, जहाँ देखो, महर्षि वैशम्पायन उनका विचार-विनिमय भी उनकी जो गम्भीरताएं भी विचारधारा है उनको भी श्रवण करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा परन्तु महर्षि व्यास महर्षि भारद्वाज के यहाँ जो क्रियात्मक यज्ञशालाओं का निर्माण अथवा उनका जो याग उसके ऊपर अध्ययन करने का जो एक माध्यम रहा है वह एक बड़ा विचित्रतम माना गया है।

तो आओ, मेरे पुत्रों! आज मैं तुम्हें महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में ले जाना चाहता हूँ, जिन वाक्यों का विचार बेटा! हम बहुत पूर्व काल हम में दे चुके हैं आज भी हमें स्मरण आ रहा है, क्योंकि उनके विचार सदैव हमारे अन्तर्हृदयों में नवीन बने रहते हैं, उनमें वृद्धपन नही आता, क्योंकि वृद्धपन उन विचारों में आता हैं, जो विचार मानव के अन्तःकरणीय नही हो पाते। जो अन्तःकरणीय मन और प्राण की संज्ञा को ले करके जो विचार देता है, बेटा! वह सदैव नवीन रहते हैं। क्योंकि ज्ञान सदैव नवीन होता हैं, ज्ञान में वृद्धपन नही आता। वह ज्ञान सदैव एक रस रहता है, वह प्रज्ञावी मानो देखो, ज्ञान का सम्बन्ध प्रज्ञा से रहता है, और वह जब प्रज्ञावी बन जाता है, तो बेटा! देखो, वह अरबों वर्षों पूर्व भी उसी प्रकार मानो उससे मध्य काल में भी उसी प्रकार आज भी यदि हम देखो, उद्गीत गाते हैं, तो देखो, वह उसी प्रकार होगा। तो मेरे प्यारे! देखो, ज्ञान सदैव नवीन रहता है, उसमें वृद्धपन नही आता। तो इसीलिए हमें ज्ञान और विज्ञान के ऊपर विचार-विनिमय करना चाहिए। क्योंकि विज्ञान की तरंगें पुरातन काल में भी उसी प्रकार मध्यकाल में भी और उसी प्रकार आज भी वह उसी प्रकार हैं। क्योंकि परमात्मा का अनूठा ज्ञान है परमात्मा की अनूठी रचनाएं हैं और वह मानो देखो, उन्ही में वास कर रहा हैं। तो उसके गुणों का गुणवादन करना, ये हमारा कर्तव्य माना गया हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! देखो, आज मैं ऋषियों के समीप जाना चाहता हूँ, मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में कुछ ऋषि-मुनियों का एक समूह, मानो ऋषि के आश्रम में पंहुचा, और महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने उन ऋषि-मुनियों का स्वागत किया, उनमें बेटा! देखो, गाड़ीवान रेवक, ब्रह्मचारी कवन्धि, तो अध्ययन करते ही थे, परन्तु वह भी उनके आश्रम से हो करके आश्रम में प्रवेश हुए, और मुनिवरों! देखो, उन्हीं के यहाँ देखो, जैसे गाड़ीवान रेवक और मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारी कवन्धि, ब्रह्मचारी रेणकेतु, सोमकेतु, और देखो, प्रवाहण, शिलभ और दालभ्य और यह महर्षि वैशम्पायन यह मानो देखो, अपने आश्रम से भ्रमणं ब्रहे कृता वह भ्रमण करते हुए मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में पधारे। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज के यहाँ उस समय प्रातःकालीन बेटा! ब्रह्मचारीजन और आचार्य जन देखो, याग कर रहे हैं, वह याग में परिणत हो रहे हैं, जब वह याग कर रहे हैं, तो भारद्वाज मुनि के आश्रम में जैसे वह याग हो रहा था उस यज्ञशाला में वह भी विराजमान हो गएं और जब विराजमान हो गएं तो मुनिवरों! देखो, ऋषि भारद्वाज ने दृष्टिपात किया आज तो हमारा बड़ा सौभाग्य हैं, जो ब्रह्मवेत्ताओं का आगमन हुआ है, हम कितने सौभाग्यशाली हैं, तो मेरे पुत्रों! देखो, याग जब उसका सम्पन्न हो गया, भारद्वाज मुनि महाराज ने उनका स्वागत किया उन्होंने कहा कहो भगवन! आज हमारे इस आसन को कैसे तुमने पवित्र किया हैं? हमारा यह कैसा सौभाग्य जागरूक हो गया है, भगवन! उन्होंने कहा हे प्रभु! आज हम देखो, रात्रणं ब्रह्मे देखो, इससे जो पूर्व जो दिवस चला गया है। हम अपने आश्रम में सब विद्यमान थे, मानो अतिथि रूप में महर्षि वैशम्पायन हमारे यहाँ विराजे और यह विचार-विनिमय करने लगे कि याग अपनी स्थलियों में क्या महत्व दायक हैं, उस विचार को हम ले करके हम तुम्हारे समीप आएं हैं। और इसके ऊपर हम विचार-विनिमय करते रहे, तो उन्होंने याग के ऊपर अपनी टिप्पणीयाँ प्रगट की, इतने में महर्षि वैशम्पायन बोले क्या वेदमन्त्रों में तो बहुत से शब्द इस प्रकार के आते हैं, याग के सम्बन्ध में कि याग देखो, यज्ञशाला देखो, एक रथ हैं

याग और तपस्या

और उस रथ पर मानो देखो, यज्ञमान, ब्रह्मा, उद्गाता, अध्वर्यु और होताजन मानो देखो, उस रथ में सब विद्यमान है, और वह जो रथ वह मानो अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके गमन करता रहता है, और हम मानो देखो, यहाँ तक पंहुच पाए, अब भगवन! देखो, उस ऊर्ध्वा में जब गति होती है, उसके ऊपर हमें आगे विचार-विनिमय करना हैं तो महर्षि प्रवाहण जी ने यह कहा कि भारद्वाज मुनि का जो विद्यालय है, वह क्रियात्मक है, उनके आश्रम में गमन करें। तो मानो यह भगवन! हम इसीलिए आए हैं, क्या हम याग को मानो देखो, उस याग को और महत्व जानना चाहते हैं। जितना हमने जाना है, उससे आगे भी इसका आप वर्णन कीजिए, भगवन! क्योंकि आप विज्ञानवेत्ता हैं तरंगेंवाद को जानने वाले हैं, चित्रों में तुम गमन करते रहते हो, चित्रावलियों का निर्माण करते रहते हो, रक्त के बिन्दुओं से तुम मानो देखो, चित्रावलियों का निर्माण होता रहता हैं। मेरे पुत्रों! उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने ब्रह्मचारी कवन्धि और सुकेता ब्रह्मचारिणी शबरी और उसके पितर मानो देखो, महर्षि पणपेतु ऋषि महाराज से उन्होंने यह प्रार्थना की कि महाराज! देखो, ऋषिवर क्या गान गा रहे हैं? ऋषिवरों उद्गीत गाने का अभिप्रायः यह है कि हम विज्ञानशाला को यन्त्रों में या आध्यात्मिकवाद में हम दृष्टिपात करना चाहते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। वह उन्होंने वह कहा याग का प्रारम्भ होना चाहिए। मेरे पुत्रों! जितने वह गण आए, ऋषि-मुनि वह उनमें से कोई ब्रह्मा बना, कोई उद्गाता बना, अध्वर्यु बना, और होता जन और यज्ञमान और पुरोहित बन करके मेरे प्यारे! देखो, याग में वह परिणत हो गएं, और याग करने लगे। जब यज्ञं भूतं ब्रह्मे देखो, उद्गीत गाने लगे तो बेटा! साम गान में कोई गान गा रहा हैं, कोई मानो देखो, उद्गीत गा रहा है कोई मेरे प्यारे! देखो, खेचरी मुद्रा में मुद्रित हो करके बेटा! साम गान की प्रतिभा में रत्त हो गया। मेरे पुत्रों! देखो, जब यह याग का प्रारम्भ उन्होंने किया, याग प्रारम्भ हो गया, तो मुनिवरों! देखो, वह ब्रह्मणा व्रतं ब्रह्मे वह उद्गीत गाने लगे, जब वेदमन्त्रों का स्वरों से उन्होंने गान गाया तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने अपने ब्रह्मचारियों से कहा यन्त्रावलियों को लाया जाएं उन्होंने बेटा! देखो, यन्त्रावलियों को स्थित कर दिया, और जैसे ही वह स्वाहा उच्चारण करते थे, वैसे ही मुनिवरों! देखो, मुनिवरों! उनमें उनके चित्र और उनके क्रियाकालाप और मुनिवरों! देखो, द्यौं ब्रह्मा देखो, भ्रमण करते हुए वे शब्द अग्नि की धाराओं पे बेटा! द्यौ लोक को जाते हुए दृष्टिपात आने लगे। जब वह द्यौ लोक यन्त्रों में उनके चित्र दृष्टिपात आने लगे तो मानो देखो, कोई होता बना हुआ है, आहुति दे रहा हैं, मग्न हो करके और मुनिवरों! देखो, कोई जिसकी प्रवृत्ति बनी हुई हैं, उसी प्रकार के चित्रों के सहित उनके क्रियाकलाप भी और देखो, उसकी भावना भी दृष्टिपात आ रही हैं। मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा कि शुद्धं भो सम्भवा यज्ञं भविते ब्रह्मणा लोकं वृत्ति मेरे प्यारे! देखो, उसमें महर्षि वैशम्पायन तो ये विचार रहे थे, क्या ये ब्रह्मवेत्ता हैं परन्तु वह विज्ञान की धाराओं में रत्त हो रहे हैं, यह यथार्थ है। परन्तु शोभनी ऋषि ने अपने मे ये विचारा कि यह जो उद्गीत गा रहे हैं, यह हो सकता है कि ये मान अपमान की धारा मे तो नही उद्गीत गा रहे हैं, मानो देखो, इसमें भिन्न-भिन्न प्रकार के जो विचार-विनिमय हो रहे थे, उन प्रत्येक विचारों का मुनिवरों! देखो, यन्त्रों में उसके चित्र दृष्टिपात आ रहे थे। तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने ये कहा चित्रों शमं ब्रह्मा शुद्धं भूतप्रह्वा व्रते देवत्वां ब्रह्मणा व्रते वह उद्गीत गाने लगे अरे, तुम शुद्ध और पवित्र भाव से याग का प्रारम्भ करो, वह मानो देखो, मेरा बहुत प्रभु की अनुपम कृपा से मेरा अध्ययन है। यन्त्रों के ऊपर और मैं उस याग को क्रियात्मकता में लाने के लिए सदैव तत्पर रहा हूँ, तुम अपने में विश्वसनीय बन करके अपने मनस्तव को एकाग्र करके मानो देखो, तुम याग का प्रारम्भ करो। तो तुम रथ पर विद्यमान हो तो मेरे पुत्रों! देखो, जब महर्षि भारद्वाज मुनि ने ऐसा कहा तो वह अपने मन को समेटने लगे प्रवृत्तियों को सिमट करके जब वह याग करने लगे तो बेटा! देखो, उनका दो घडी के पश्चात दो घडी ब्रह्मे दो पल के पश्चात मुनिवरों! देखो, घड़ी चार हो गई चार घड़ी के पश्चात मुनिवरों! देखो, उनके मनों का

शुद्धिकरण हुआ। प्रत्येक ऋषि अपने-अपने सूत्रों को एक सूत्रीय धारा बना करके, उन्होंने याग का प्रारम्भ किया, जब प्रारम्भ किया तो उनमें बेटा! शुद्धिकरण हैं। आहुति दे रहा है, वह यज्ञमान के हृदय को पवित्र देखो, उसकी वाणी को देखो, पवित्र बना रहा हैं। और जब देखो, उद्गाता उद्गीत गा रहा है वह भी यही चाहता है कि मैं वेदमन्त्रों से यज्ञमान की वाणी को पवित्र बनाता चला जाऊं, मानो देखो, जो उसमें से ब्रह्मा बना हुआ है, वह भी यही चाहता है, कोई मन्त्र अशुद्ध न हो जाए, जिससे यज्ञमान की प्रवृत्तियों मे अशुद्धवाद आ जाएं, इसी प्रकार देखो, अमृतां देखो, जो पुराहित जन है, वह भी अपने में यह विचार रहा है कि मैं पुरोहित हूँ, मेरा यह कर्तव्य हैं, मैं अपने पुरोहितपने से देखो, पराविद्या को, मेरी भावना और मन के विचार मेरी पराविद्या में होने चाहिएं परन्तु देखो, जम्ब्रहा कृतं और वह जो अध्वर्यु को कह रहा है, कि मैं इसका धिपति हूँ, साकल्य का यह मेरा कर्तव्य है, जैसे राष्ट्र में राजा अध्वर्यु का क्रियाकलाप करता है, ऐसे ही मैं भी मानो देखो, अध्वर्यु बन करके, इस द्रव्य का स्वामीतव मैं कर रहा हूँ, जब यह विचार आ गएं, तो मुनिवरों! देखो, यज्ञ का शुद्धिकरण हो गया, शुद्धिकरण हो जाने के पश्चात, अमृतां ब्रह्मणे लोकां मुनिवरों! देखो, याग अपने में बड़ा अनूठा एक क्रियाकलाप है। विचार आता रहता है जब इस भाव से देखो, उन्होंने आहुति दी, तो उनके चित्र मुनिवरों! देखो, यन्त्रों में दृष्टिपात आने लगे, भारद्वाज मुनि ने कहा हे ऋषिवर! हे गाड़ीवान रेवक! हे वैशम्पायन! देखो, यह तुम्हारे चित्र बन करके ये द्यौ लोक में जा रहे हैं। और द्यौ लोक में इनकी क्या गतियां होती है इस तक मैं अभी तक नही जान पाया हूँ, केवल इतना ही जानता हूँ क्या यज्ञमान का रथ बन करके, वह द्यौ लोक में प्रवेश हो जाता है। और द्यौ में क्या गति होती है इसको मैं नही जानता। मेरे प्यारे! देखो, जब याग उनका सम्पन्न हो गया, तो गाड़ीवान रेवक मुनि ने कहा क्या हे भगवन! इतना तो मानो देखो, हम अपने में विचार तो लाते रहे हैं हमारा क्रियात्मक जो हमने दृष्टिपात किया, कि हमारा बड़ा सौभाग्य है, हम भगवन! ये जानना और चाहते हैं क्या इसके आगे का कोई ऐसा वैज्ञानिक हैं, जो द्यौ मे जाने के पश्चात जो गति होती है, उस गति को जो मानो जानते है ऐसा ऋषि हमें उद्गीत गाईए ऐसा कोई निर्णय कराईए इसके समीप उनके चरणों की हम वन्दना करें, और देखो, इसका स्पष्टीकरण हो जाएं। मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने ये कहा ऋषि-मुनियों ने जब ऋषि मुनियों ने ये कहा गाडीवान रेवक ने भी और मुनिवरों! देखो, और ब्रह्मणे देखो, वैशम्पायन ने भी यही वाक् कहा, प्रवाहण और शिलक और दालभ्य ने भी यही वाक् कहा जब एक स्वर हो गया, तो भारद्वाज मुनि ने यह कहा भई! इतना ही मैं जानता हूँ मैं विचार कर रहा हूँ मेरे प्यारे! उन्होंने बहुत मौन हो करके कहा मेरे विचार में ऐसा आता है क्या महर्षि उद्दालक गोत्र में कुछ ऐसे ऋषि हैं, जिनका वास्तव में ऐसा निर्णय है, क्या उन्होंने बहुत अनुसन्धान किया हैं, उन्होंने कहा तो भगवन! ऐसा विचार आता है, चलो उनके द्वारा गमन करेंगें और उनसे यह प्रश्न करेंगें, और उनसे मानो क्रियात्मक इसी याग की प्रतिभा को हम जान सकेंगें भगवन! देखो, याग के माध्यम से जो विज्ञान की उपलब्धियां होती हैं, विज्ञान अपनी धाराओं में आता हैं, मानो देखो, उसको हम जान सके हैं, तो मेरे पुत्रों! मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है, पुत्रों! क्या मंगलं ब्रह्वे कृतप्रह्वा अमृतां ब्रह्वे कृतं विद्याः वेद के आचार्यों ने कहा भगवन! चलो, गमन करते हैं मेरे पुत्रों! महर्षि भारद्वाज मुनि ने जब अपना यह कर्म बनाया, तो वहाँ के विद्यार्थी ब्रह्मचारियों ने कहा-प्रभु! प्रश्न ऋषि के दर्शन तो हम भी करना चाहते हैं, जिन्होंने इतने महान विशाल विज्ञान को जानने का प्रयास किया हैं, ऐसे मानो देखो, उद्दालक गोत्र में हमारा भी गमन होना चाहिए। महर्षि भारद्वाज मुनि ने ब्रह्मचारियों से कहा बहुत प्रियतम। मेरे पुत्रों! देखो, कुछ ब्रह्मचारी विद्यालय में से ब्रह्मचारी कवन्धि सुकेता, ब्रह्मचारिणी शबरी, यज्ञदता और रेणकेतु मुनि महाराज यह सर्वत्र जो ब्रह्म के जिज्ञासु थे, परमाणुवाद के ऊपर अध्ययन करने वाले थे, और वह ब्रह्मवेत्ता ऋषि-मुनियों ने सबने वहाँ से गमन किया, और भ्रमण करते बेटा! ऋषि-मुनियों से मिलान करते हुए वह भ्रमण करते हुए बेटा! देखो, दण्डक

वनों में उनका आश्रम था, और वह उस आश्रम में पंहुचे। मेरे पुत्रों! जैसे आश्रम में पंहुचे तो महर्षि शिकामकेतु उद्दालक मुनि महाराज बेटा! अपने मे बड़े महान पवित्रतम कहलाए गएं। मुनिवरों! देखो, यह वाक् मैंने पुरातन काल में भी कई कालों में प्रगट किया है कि आज भी मैं इसकी विवेचना अथवा यह यह वाक् उच्चारण कर रहा हूँ। तो मुनिवरों! देखो, जब वह ऋषिम्ब्रहा कृतं दिव्यं ब्रह्वे जब मुनिवरों! शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ पंहुचे तो मुनिवरों! देखो, वह मध्य दिवस का समय था और देखो, उसकी पत्नी रम्भेश्वरी और मुनिवरों! देखो, ऋषिवर अमृतां ब्रह्मणे कृतं दिव्यां लोकं व्रतं देवाः उन्होंने कहा-देवी! आज तो ऋषियों का आगमन हो रहा हैं, हम कैसे सौभाग्यशाली है, देवी क्या आज तो देखो, ब्रह्मवेत्ता जो ब्रह्म की उड़ाने उड़ते रहते हैं, सदैव ब्रह्म की ही चर्चा करते रहते हैं, गाड़ीवान रेवक महर्षि वैशम्पायन और भी ऋषिवर देखो, इस प्रकार के जैसे प्रवाहण है। जैसे शिलभ, दाल्भय जिन्होने माता ने अपने गर्भस्थल से देखो, ऋषितव की उपाधि प्रदान कर दी थी, वह भी हमारे आश्रम में विराज रहे हैं, यह हमारा कैसा सौभाग्य हैं। उन्होंने कहा हां देवतव, मेरे प्यारे! ऋषि-मुनि उनके आश्रम में आ गएं, उन्होंने बारी-बारी ऋषि को नमः किया और नमः करते हुए अपने-अपने आसन पर विद्यमान हो गएं, और जब विद्यमान हो गएं, तो मुनिवरों! देखो, महर्षि शिकामकेतु उद्दालक ने कहा क्या भगवन! आज मेरा कैसा सौभाग्य है? जो आप मेरे आश्रम में विराजे हो, भगवन! ये प्रभु की प्रतिभा और प्रभु की अनुपम कृपा हो गई है भगवन! तो मेरे पुत्रों! उन्होंने कहा सम्भव ब्रह्वा कृतं लोकं व्रत्यं देवाः हे प्रभु! हम आपके दर्शनों के बहुत समय से अभिलाषी थे, हम यह चाहते हैं कि ऋषि का दर्शन हो, प्रभु! यह हमारा सौभाग्य। मेरे पुत्रों! देखो, वह विराजमान जैसे, उन्होंने अतिथि सेवा के लिए, नाना प्रकार के कन्दमूल जो उनके यहाँ उपलब्ध था, बेटा! वह उन अतिथियों को प्रदान किया। अतिथि बड़े प्रसन्न हुए, क्योंकि हमारे आचार्यों ने बेटा! परम्परागतों से ही, ये पांच यागों का बड़ा वर्णन किया हैं। मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मयाग, देवयाग, अतिथि याग और बलि वैश्व याग और बेटा! देखो, पितर याग भी हमारे यहाँ विशेषता में परिणत किए हैं। तो मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ जो अतिथि सेवा है, वह बड़ी विचित्र मानी गई है। देखो, बिना समय के ऋषि-मुनियों का आगमन हुआ, उनकी सेवा करना, अथवा उनको भोज्य देना क्योंकि जो ऋषि को अन्तरात्मा से बेटा! देखो, उसका अतिथि करता हैं उनका आत्मा भी प्रश्न हो जाता हैं, क्योकि अन्न से मानव के मन प्रसन्न हो जाता हैं, जितना भी अन्न पवित्र होता है कन्दमूल इत्यादि होते हैं, उतना ही मुनिवरों! देखो, उसका हृदय प्रफुल्लित होता हैं और हृदय में महान से महान तरंगों का जन्म हो जाता है मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ जब भी साधना में हम प्रवेश होते रहे हैं, तो साधक के लिए क्या चाहिए, अन्न पवित्र चाहिए। मेरे प्यारे! जितना भी अन्न पवित्र होगा, तपे हुए प्राणियों का अन्नाद होगा, देखो, उतना ही मानव देखो, पवित्रतव की आभा में रत्त हो जाएगा, और मन में पवित्र तरंगों का जन्म हो करके वह मन पवित्रता में रत्त हो करके मेरे प्यारे! देखो, विषर्भ बन करके इसमें से देखो, जो तरंगें उत्पन्न होती हैं, उन तरगों को जो श्रवण करता है, वह देवता बन जाता हैं, तो देवता बन जाता है इसीलिए बेटा! हमारे यहाँ अतिथि जो सेवा हैं, अतिथि जो अन्नाद प्रदान किया जाता है, यह बड़ा सौभाग्य है। तो मुनिवरों! देखो, ऋषि शिकामकेतु उद्दालक ने, दोनों पति पत्नियों ने बेटा! उनको स्वागत किया, और स्वागत करने के पश्चात उन्होंने नत मस्तिष्क हो करके कहा, कहो भगवन! आज तुम्हारा आगमन कैसे हुआ है? उन्होंने कहा-प्रभु! हमारा आगमन इसीलिए हुआ है, भारद्वाज मुनि ने कहा-प्रभु! हमारे यहाँ विद्यालय में जो हमारी विज्ञानशाला है, अथवा यज्ञशाला है, उस यज्ञशाला में उन्होंने चित्रों का दर्शन किया मैंने जितना चित्र जाना उतना दृष्टिपात कराया परन्तु देखो, हमने यह विचारा है कि इससे आगे का कौन जानता है? तो प्रभु! आपका नामोकरण हमारे कण्ठ से वर्तित हो रहा था समाहित हो रहा था भगवन! देखो, हमने यह उद्गीत गाया तो सबने अपना क्रम बनाया चलों क्या देखो, ऐसे महापुरूष का दर्शन करेंगें क्या जो ब्रह्मवेत्ता भी हो, और आध्यात्मिक

विज्ञानवेत्ता भी हो, और जो मानो देखो, विज्ञान में भी रत्त रहने वाला हो। तो प्रभु! आप तो ब्रह्मवेत्ता भी हैं, ब्रह्मनिष्ठ भी है, और भगवन! देखो, आप विज्ञान में भी पारायण हैं। मानो जो विज्ञान में पारायण होता हैं, वह भी महान होता है, और दिव्या को नमः हैं, क्योंकि देखो, यह आपं ब्रह्मे यह आप में विज्ञानवेत्ता है। मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषियों ने इस प्रकार वर्णन किया महर्षि शिकामकेतु उद्दालक उनकी पत्नी ने कहा-प्रभु! तो आप उद्गीत गाना चाहते हैं, वह हमे आज्ञा दीजिए। उन्होंने कहा-प्रभु! हम यह आपकी विज्ञानशाला जो आपने अब तक अध्ययन किया हैं उस अध्ययन को हम दृष्टिपात करना चाहते हैं, कि तुम्हारी विज्ञान में कितनी गतियां हैं, आध्यात्मिकवाद को तो हम इमसें इतना नही जानना चाहते। मेरे पुत्रों! देखो, उन्होने कहा तो आओ, मेरे पुत्रों! देखो, भ्रमण कराते हुए देखो, जहाँ वह याग करते थे उसकी यज्ञशाला थी यज्ञशाला के साथ विज्ञानशाला थी और विज्ञानशाला के साथ ही वह जो नित्यप्रति अपना क्रियाकलाप करते थे वह भी इसमें मानो देखो, उन स्थलियों पर ले गएं उन्होंने कहा-प्रभु! यह तो हमारी मानो यज्ञशाला हैं, इसमें याग करते हैं, एक सौ पांच वर्ष हो गएं हैं, हमें इस यज्ञशाला में याग करते हुए यह चौबीस कोणों की यज्ञशाला है। इसमे याग करते हैं। और मानो एक सौ पांच वर्ष हो गएं इसकी अग्नि हम शान्त नही होने देते, यह अग्नि मानो देखो, हमारी यज्ञशाला में प्रदीप्त रहती है। इस अग्नि के ऊपर हम अनुसन्धान करते रहते हैं। और हमारा जब देखो, मन मस्तिष्क जब इन वाक्यों पर रत्त हो गया कि यज्ञ में से तरंगों का प्रादुर्भाव होता है, यह दर्शनों में वेदमन्त्रों में जब हमने अध्ययन किया, एक वेदमन्त्र आया जब हम प्रारम्भ में यज्ञशाला में हम याग करने के पश्चात विचारने लगे प्रश्न आया चित्रं रथं यज्ञं प्रह्वा रथं देवत्वां ब्रह्वे आयु सम्भव ब्रहा हे प्रभु! यह वेदमन्त्र आया वेदमन्त्र यह कहता है कि मं ब्रहे देखो, इसके चित्र बनते हैं और चित्रावलियों में परिवर्तित हो जाता है। तो देखो, भगवन! इसके ऊपर हम अध्ययन करेंगें। बारह वर्ष हो गएं अध्ययन करते हुए परन्तु हम दोनों क्या पान करते थे देखो, कुछ वायु का सेवन करते कुछ मानो कन्दमूल मानो देखो, कन्दमूलों को हम लाते उनका पान करते और विचार मानो यह लग गया मानो हमें यह प्रतीत नही हुआ क्या यह शब्दं ब्रह्वा हम मानो देखो, कि यह चित्रावलियों की आज्ञा देता हैं। यज्ञमान भी अपने में चित्रावलियों का निर्माण कर सकता हैं, तो हे प्रभु! क्या हम मानो देखो, इस वाक् के ऊपर विचार किया विचारते-विचारते बारह वर्ष के तप करने के पश्चात हम मानो देखो, एक यन्त्र का निर्माण कर सके ऊर्ध्वा में भी कोई कुछ हैं परन्तु देखो, द्यौ में (यहाँ से कुछ भाग पुस्तक से लिया गया है क्योंकि वह शब्द ध्वनि के रूप में उपलब्ध नही हैं) एक यन्त्र का निर्माण कर सके और उस यन्त्र में जो हम स्वाहा उच्चारण करते थे, उद्गाता अध्वर्यु अमृतं बन करके हम स्वयं उद्गाता भी बनते, अध्वर्यु भी बनते, विचारधारा में पवित्रतव रहता, तो मानो देखो, उनके चित्र हमे दृष्टिपात आने लगे। तो भगवन! देखो, यह यन्त्र सबसे प्रथम है। जब आगे अध्ययन किया, तो हमारे पच्चीसवें जो महापिता थे हमें उनका दिग्दर्शन होने लगे, यन्त्रों के द्वारा हम उनका अध्ययन करने लगे। यह मानो देखो, चित्रशाला में हमें दृष्टिपात आ रहे हैं, भगवन! मानो देखो, आगे पचासवें महापिता के दर्शन होने लगे। और सौवें महापिता तक हमने दर्शन किया। परन्तु देखो, अग्नि की धाराओं पर शब्द और क्रिया मंगलं ब्रह्वे और उनका क्रियाकलाप और देखो, चित्र बन करके अग्नि की धाराओं पर गमन करने लगा तो द्यौ में स्थित हो गया।

चित्र गमन द्यौ से ऊपर भी होता है

जब द्यौ में स्थित हो गया तो हमने यह दृष्टिपात किया हमने एक वेदमन्त्र हमें स्मरण आया था द्यौ ब्रह्वा ऋतो द्यौ ब्रह्वी कृणां वस्तुतं अन्दधानं ब्रहे कृतोलोकाः यह वेदमन्त्र की आख्यिका हमें स्मरण आई कि द्यौ से भी ऊर्ध्वा में भी कुछ है परन्तु देखो, द्यौ में जब स्थित हो जाते है तो वही मानो देखो, चित्र अन्तरिक्ष में गमन करने लगते हैं वह जब भी मानो कोई अनुसन्धान करता है तो वह चित्र उसी को प्राप्त होते रहते हैं जिसके वह चित्र होते

हैं जिसका वह क्रियाकलाप होता हैं। यह संसार में नही है परन्तु उनकी अन्तरात्मा जहाँ भी वृत्तियों में रह होती है संस्कार के रूप में उदबुद्ध होते रहते हैं इसी प्रकार वेद के आचार्यों ने कहा कि वो सदैव नित्य रहने वाला है और वो देखो, द्यौ से ऊर्ध्वा में जो मृचिका है उसमे वे प्रवेश कर जाते हैं और जब भी कोई उन्हें अपने में स्मरण करना चाहता हैं वह उसे स्मरणता में परितण हो जाते हैं।

विज्ञान सार्वभौमिक होना चाहिए

मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन कराया कि चित्रों का दर्शन होता रहता हैं क्रियाकलाप भी देखो, दृष्टिपात आते रहते हैं। मेरे पुत्रों! कैसा विज्ञान हैं उस मेरे प्यारे प्रभु की इस वैदिक पवित्र विद्या में किस प्रकार का विज्ञान है इस विज्ञान के ऊपर हमें विचार करना चाहिए। बेटा! एक पक्षीय विज्ञा हैं उन्होंने अपने पिता महापिता, पड़पिता सौंवे महापिता का उन्होंने दर्शन किया, मुनिवरों! वह एक पक्षीय विज्ञान माना गया है। मानो वह अपने पितरों का अमृतां देवत्वाम् मेरे प्यारे! देखो, अपने ही पितरों का दर्शन करना एक पक्ष का विज्ञान है। मुनिवरों! देखो, इसी प्रकार द्विपक्ष में भी विज्ञान है और विज्ञान एक सर्वभौम भी कहलाता हैं तो जिसका हम दर्शन करना चाहते हैं इसी के हो जाएं इस प्रकार का विज्ञान सर्वभौम कहलाता हैं।

बेटा! मैं आज विशेष चर्चा तो तुम्हें देने नही आया हूँ व्याख्याता नही हूँ परिचय देने के लिए आया हूँ बेटा! इन वाक्यों की यदि हम व्याख्या करने लगे निर्माण कैसे होता हैं वह निर्माण कम तक रहा है मानो देखो, चित्र कैसे गमन करते रहते हैं यह सब मुनिवरों! देखो, एक समय की आवश्यकत है केवल मैं तो इतना ही परिचय दे सकता हूँ आज बेटा! हम इतना ही परिचय देने आए हैं कि मुनिवरों! देखो, हम इन वाक्यों के ऊपर विचार कि विज्ञान अपनी स्थली पर बड़ा विचित्र बन करके रहा है। इसीलिए विज्ञानशालाओं में मेरे पुत्रों! देखो, चित्रों का दर्शन होता रहता हैं पिता, महापिता, पड़पिता, मुनिवरों! देखो, वह सौंवे महापिता तक के चित्र उन्होंने अपने यन्त्रों में लाने का प्रयास किया। चित्रावलियों मे जाना है तो मुनिवरों! देखो, चित्रावली अपनी स्थली पर बड़ी विचित्र बन करके रही हैं।

मुनिवरों! देखो, जब ऋषि-मुनियों ने इस विज्ञानशाला को दृष्टिपात किया तो भारद्वाज मुनि ने रेवक से कहा कहो-भगवन! अब कोई और जिज्ञासा हो तो उद्गीत गाई। उन्होंने कहा कि-कोई हमें ऐसी जिज्ञासा पूर्णतव को प्राप्त हो गई हैं आज का विचार यह क्या कह रहा है मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि-मुनि अपने में बड़े महान देखो, विचारक और वह देखो, याग के ऊपर बेटा! महर्षियों ने बड़ा विचारा है चिन्तन किया है और देखो, विज्ञान को इस याग से बेटा! उन्होंने कटिबद्ध करके बेटा! आध्यात्मिक और भौतिकवाद का उन्होंने मिलान किया है और मिलान करके वे मुनिवरों! देखो, द्यौ में प्रवेश हो जाते हैं। द्यौ से गमन भी करते रहते हैं मानो सूक्ष्म धाराएं आती रहती हैं तो मुनिवरों! देखो, यह एक विज्ञान की प्रतिभा कहलाती हैं

आओ, मेरे प्यारे! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि ने अपने ब्रह्मचारियों से कहा हे ब्रह्मचारियों! यह ऋषि का दर्शन हैं यह मानो देखो, ऋषि शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ मैंने यह जो तुम्हें दिग्दर्शन कराया है हय मानवीय दर्शन है यह याज्ञिक है और क्रियाकलाप वाला मानो एक वर्णन कहलाता है मेरे पुत्रों! देखो, वह मौन हो गये। उन्होंने कहा धन्य है तो मुनिवरों! देखो, ऋषि-मुनि शिकामकेतु उद्दालक के क्रियाकलाप और अग्नि की धाराओं पर जो शब्द गमन कर रहा हैं रथ बन रहा है उसे सब दृष्टिपात करते हुए सब ऋषियों ने आज्ञा पा करके बेटा! वहाँ से प्रस्थन किया और यह कहा धन्य है प्रभु आज हमारा बड़ा सौभाग्य है आपके मानो दर्शन हुए और आपकी यज्ञशाला का हमें दिग्दर्शन हुआ है प्रभु यह हमारा सौभाग्य है मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मुनि अपनी स्थलियों में जा पंहुचे। सम्भवं अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगें। (यहाँ से शब्द ध्वनि से लिया गया है)

याग और तपस्या

पूज्य महानन्द जीः- ओ३म् देवाः भद्रं भवितं ब्रह्मणाः मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल, अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ऐसे विज्ञान में हमें ले गये, जिस विज्ञान की इस वर्तमान काल में हम कल्पना भी नही कर पा रहे हैं ऐसा विज्ञान वैदिक साहित्य में हमें उपलब्ध होता है इस विज्ञान के लिए ऋषि-मुनियों ने तप किया है और नमः नम्रता की आभा में रत्त रहे हैं।

देखो, आधुनिक काल जो वर्तमान का काल चल रहा हैं वह ऐसा एक काल है जिसे हम वाममार्ग काल कहते हैं विज्ञान है वह भी मानो अधूरे पन में है और उस विज्ञान में वाममार्ग आ गया और वाममार्ग जब आता हैं जब निर्माण अनुसन्धान करने वालों में देखो, प्रभु की प्रतिभा को समाप्त कर देते हैं इसीलिए आधुनिक काल का जो विज्ञानवेत्ता है, वह अपने से अपने में यह शान्त कर गया है, कि यह प्रभु की प्रतिभा है, प्रभु का ही मानो रचाया हुआ ये जगत है, इसमें देखो, ज्ञान विज्ञान अपनी आभा में बड़ा अनन्तमयी रहा हैं, इसको जब अपने में शान्त कर देते हैं, तो विज्ञानवेत्ता को इसमें अभिमान आ जाता है, अभिमान आ करके देखो, विज्ञान का दुरूपयोग होना प्रारम्भ हो जाता हैं। और जब दुरुपयोग होना प्रारम्भ हो जाता है तो समाज में सुरा सुन्दरी और मानो देखो, एक मानव, मानव को न स्वीकार करते हुए और उग्र क्रिया आ जाना ये विज्ञान की एक देन बन गई है। और जहां विज्ञान से मानव को नम्र होना हैं, जहाँ विज्ञान से मानव को चिन्तन और मानवीय दर्शन को विचारना हैं, वहाँ आधुनिक काल को जो प्राणी है, वह विज्ञान में इतना मानो देखो, अपने को वृत कर गया है कि वह वाममार्ग बन गया है। राजा क्या प्रजा क्या केवल पद ही पद रह गया है। विचारों में देखो, राज सभा में तो देखो, पद ही पद रह गया हैं और विज्ञानवेत्ताओं के यहाँ भी पद रह करके अभिमान रह गया हैं। तो इस प्रकार देखो, मैं विचार न देता हुआ केवल यह कि वाममार्ग उसे कहते हैं, जो उल्टे मार्ग पर गमन कर गया है, जो मानो देखो, जो ब्रह्मचारी ब्रह्मचारी नही रहा, क्योकि ब्रह्म सूत्र उससे दूरी हो गया हैं, क्योंकि ब्रह्म सूत्र होना बहुत अनिवार्य हैं, इसीलिए मैं प्रभु से ये प्रार्थना करता रहता हूँ, अपने पूज्यपाद गुरुदेव को मैं यह निर्णय दिलाता रहता हूँ क्योंकि वह पुरातन काल समाप्त हो गया, जिस काल में देखो, राजा और प्रजा दोनों, वैज्ञानिकों को मध्य में ले करके विद्यमान होते और वह विचार-विनिमय ये करते, कि राजा के राजा कहता राष्ट्र में विज्ञान होना चाहिए परन्तु राष्ट्रीय प्रणाली उस विज्ञान से भ्रष्ट न हो जाएं, ऐसा विज्ञान भी हमारा देखो, राष्ट्र को बनाता है। तो राजा देखो, प्रजा दोनों और वैज्ञानिक जब दोनों का एक सूत्र बन जाता है, तो विज्ञान राजा के राष्ट्र में सात्विक बन करके वह विज्ञान देखो, एक महापुरूषों की निधि बन जाती है, और परमपिता परमात्मा की महती आ जाती हैं, परन्तु देखो, वाममार्ग मैं इसीलिए कह रहा हूँ क्या देखो, जहाँ मेरी पुत्रियों को नृत्त होते हैं, और नृतिका बन करके जब चित्रों को दृष्टिपात करते हैं। तो उन चित्रों में जहाँ पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा महापुरूषों के चित्र होने चाहिए, पिता और महापिताओं के क्रियाकलाप उनमें दृष्टिपात कराए जाने चाहिएं। परन्तु आधुनिक काल में जो वर्तमान का काल चल रहा है, उनमें मेरी पुत्रियों के नृत्यांगनियां हो रही हैं, उनको दृष्टिपात करते हुए, छात्र और छात्रिका जब दृष्टिपात करते हैं, तो उनका ब्रह्मचर्य दूषित हो रहा हैं, और जब ब्रह्मचर्य जहाँ दूषित हो जाता हैं, तो वहाँ कर्तव्यवाद नही रहता वहाँ आलस्य और प्रमाद आ जाता है, और जब आलस्य और प्रमाद आ गया है, और जब आलस्य और प्रमाद की प्रतिभा ऊर्ध्वा में गमन करने लगती हैं, तो वहाँ भी अधिकार की पुकार होने लगती हैं। प्रत्येक मानव देखो, अधिकार चाहता हैं, अधिकार पर अधिकार चाहता है, कर्तव्य हो नही रहा है, अधिकार की पुकार है, और अधिकार की पुकार वाला प्राणी अन्त में कोई राष्ट्र कोई समाज ऐसा नही हुआ हैं जो मानो किसी प्राणियों के अधिकार की पूर्ति कर सके। सृष्टि के प्रारम्भ से ले करे, कोई अधिकार की पूर्ति नही करता। क्योंकि कर्तव्य जब करता है कर्तव्य भी अधिकार, मानो उसके गर्भ में रहता है, और अधिकार उसे स्वतः जब कर्तव्य का पालन करता

है, तो अधिकार स्वतः प्राप्त हो जाता है। परन्तु देखो, आलस्य और समाज में गमन करने वाला मानो अधिकार की पुकार कर रहा हैं अन्त में यह कि रक्तभरी क्रान्तियां आ जाती हैं वह रक्तभरी क्रान्तियों का मूल कारण है कि ये नाना प्रकार की सम्प्रदाएं और विज्ञान का दुरूपयोग जो मानो ईश्वर के नामों पर नाना प्रकार की सम्प्रदाएं होती है। सम्प्रदा जब होती है जब राजा ब्रह्मवेत्ता नही होता और जब राजा ब्रह्मवेत्ता होता है, उसी वृत्तियों रत्त करने वाला देखो, उपनिषद का विद्वान हो तरंगेंवाद का विद्वान हो, और क्रियात्मक अपने जीवन को ले जाने वाला हो, जब राजा ब्रह्मवेत्ता होता हैं, तो वह कोई ईश्वर के नाम पर रूढ़ि नही बनती बेटा! और जब रूढ़ि नही पनपती तो एकोकीचरण होता है, एकोकी विचार रहता हैं, और देखो, समाज में मानव कर्तव्य का पालन होता है। तो इसीलिए मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव यह प्रगट कराता रहता हूँ

आज को देखो, यह मेरा हर्षध्वनि कि अमृतां देखो, जिस स्थली पर हमारी यह वाणी जा रही हैं, आकाशवाणी जा रही है, वहां एक याग का आयोजन हुआ है मेरा अन्तरात्मा जो यज्ञमान के साथ रहता हैं, क्योंकि ऐसे वाममार्ग काल में द्रव्य का सदुपयोग करना, देवताओं को हूत करना, अपनी अन्तरात्मा को पवित्र बनाना, ये मानो देखो, उसकी महानता हैं, और द्रव्य का सदुपयोग करना हैं, द्रव्य का सदुपयोग करना ही मानो देखो, उसकी प्रतिभा है। इसीलिए मेरा अन्तरात्मा यज्ञमान के साथ में रहता हैं, हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। मानो देखो, तेरे गृह में सदैव द्रव्य का सदुपयोग होता रहे।

द्रव्य का सदुपयोग होना संसार में बहुत अनिवार्य है। जब इसका दुरूपयोग होता है, ये द्रव्य दूसरे रूप में माता है जब माता का दुरूपयोग होने लगता है, तो मुनिवरों! देखो, ब्रह्मणे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने ये वर्णन कराया है कि जब भी द्रव्य का दुरूपयोग हुआ हैं, तो उसी समय वह द्रव्य देखो, जैसे माता दूषित पुत्र को अपने से दूरी कर देती हैं, इसी प्रकार ये द्रव्य देखो, उस मानव को अपने से दूरी कर देता है। और देखो, उससे यह दूरी हो करके, वह केवल अपने में शून्यता को अनुभव करने लगता है। तो इसीलिए देखो, इसका सुदपयोग जब हो जाता है, तो ये द्रव्य ही माया बन करके, उसके अपनेपन से आलिंगन करने लगती है, और द्रव्य ही देखो, एक मानव के लिए महानता का क्रियाकलापों में, महानता में ले जाता है, और महानतं ब्रह्मे कृतं देखो, जैसे अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव प्रकट करा रहे थे, क्या विज्ञान अपने में कितना सार्थक और महानता में रहा है। इसीलिए प्रत्येक मानव को चाहिए, हे यज्ञमान! मानो देखो, मेरा अन्तरात्मा यज्ञमान के साथ रहता है, मैं सदैव यह चाहता रहता हूँ, कि द्रव्य का सदुपयोग हो और गृह में मानो देखो, द्रव्यां भूतं प्रमाणं ब्रह्वे इस प्रकार सदैव अपने में क्रियाकलाप शुद्धता में परिणत रहे। आज मैं कोई विशेष चर्चा नहीं, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा, क्योंकि पूज्यपाद गुरुदेव ऐसी गम्भीर हमें मुद्रा में ले गए हैं ऐसे उद्दालक गोत्र में ले गए हैं वे भी जैसे ऐसा अनुभव कर रहे थे जैसे हम देखो, शिकामकेतु उद्दालक के गृह में प्रवेश कर रहे हो। उसी में अपना आसन ग्रहण कर रहे हों। भारद्वाज की यज्ञशाला में हम विद्यमान हैं। ऐसा अनुभव कर रहे थे, तो इसके साथ मैं अपने विचारों को विराम दे रहा हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः- मेरे प्यारे ऋषिवर! मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने इतने भव्य और विडम्बनामयी विचार दिए हैं। ये विडम्बनामयी विचार हैं। प्रायः ऐसा होना चाहिए, कि राजा को ब्रह्मवेत्ता और रूढ़िवाद वास्तव में ईश्वर के नाम पर नहीं पनपने चाहिए। क्योंकि राजा रावण के काल में भी रूढ़ियाँ पनपीं और देखो, उस काल में भी मानव अग्नि के मुख में चला गया। द्वापर के काल में भी रूढ़ियाँ पनपी। यह रूढ़ियाँ नही पनपनी चाहिए। यह आज का विचार अब समाप्त होने जा रहा हैं। समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन होगा। आज के विचारों का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा जो यज्ञमयी स्वरूप

हैं, जिसका विज्ञान मंगलं ब्रह्वे देखो, जिसका उद्गीत गाना हमारा कर्तव्य हैं। परमपिता परमात्मा महान और पवित्र है, यह है आज का वाक् समय मिलेगा, शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें। ओ३म् देवाः आभ्यां रथप्रा वसु मां रेवाः ओ३म् यज्ञमा ऋषि आ पा रेधि अमृताः ओ३म् यशाहम्।

११ यौगिकवाद, विज्ञानवाद और व्यवहार २७-०९-१९९०

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी हैं, और उसका यह अनूठा जगत है, यह दृष्टिपात आ रहा है, यह बड़ा अनुपम हैं, अथवा विचारणीय हैं। जो प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, इसके ऊपर अध्ययन करता चला आया है। परन्तु अध्ययन करता रहता हैं, और मानव अन्त में मौन हो जाता हैं तो विचार आता रहता है, कि हमारा वेद का मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की अनन्तमयी, मानो धाराओं के ऊपर मानो मनन करता रहा हैं, क्योंकि वेद का प्रत्येक वेदमन्त्र, उस परमपिता परमात्मा के गुणों का गुणावादन करता रहता हैं, क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र में, उस अनुपम प्रकाश और मानवीयतव की एक प्रतिभा का प्रायः एक वर्णन होता रहता हैं। जिसके ऊपर, हमारे ऋषि-मुनि अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके, विचार-विनिमय करते रहे हैं। क्योंकि हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों की एक पवित्र शैली रही हैं, क्या जब भी वे एकान्त स्थली पर विद्यमान हुए है उसी काल में परमपिता परमात्मा के अनुपम जगत के ऊपर प्रायः विचार-विनिमय करते रहे हैं, क्योंकि जो मानव इस प्रकार का विचार, अथवा मनस्तव अपने में धारण करता रहता हैं, वे मानव एक महानता की ज्योति को अपने में जागरूक करता रहता है। इसीलिए प्रत्येक मानव, प्रत्येक मानवीयतव अपने में मनन करता रहा हैं, और मनन करना चाहिए। क्योंकि बिना मनन के मानव का जीवन अपंग कहलाता हैं। तो इसीलिए प्रत्येक वाक्यों में अपने में कोई न कोई रहस्यतम होना चाहिए क्योंकि जो मानव बिना रहस्य के नाना वार्त्ताओं में अपने जीवन को व्यतीत करता रहता है, और उन शब्दों का कोई रहस्य नही होता, तो ऐसे मानो देखो, निरस वाणी और जो निरस जो शब्द जो होते हैं वह वायुमण्डल को दूषित करते रहते हैं।

तो आओ, मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हें कोई विशेष विवेचना देने नही आया हूँ, केवल ये कि हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा है ऋषि-मुनि हमें वेदमन्त्र के ऊपर अध्ययन करने लगे हैं, ये उनकी अध्ययन शैली बड़ी विचित्र बन करके रही है। तो आओ, मुनिवरों! मैं आज तुम्हें एक ऋषि के आसन पर ले जाना चाहता हूँ, जहाँ उनका विचार-विनिमय बड़े पवित्रतव में होता रहा हैं, जिन वाक्यों की मैं कई काल में पुनरूक्ति हम करते रहे हैं, क्योंकि वाक्यों की पुनरूक्ति होना कोई आश्चर्य नही हैं, परन्तु उनमें कोई रहस्यतम होना चाहिए मेरे पुत्रों! मुझे स्मरण आता रहता हैं, उद्दालक गोत्र में नाना ऋषि हुए है, जो वेद के मर्म को जानने वाले क्योंकि वेद की भिन्न-भिन्न प्रकार की धाराएं हैं। हमने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था क्या एक वेदमन्त्र ऐसे हैं, कई प्रकार की विचारधाराएं हैं। जैसे मानो एक वेदमन्त्र हैं, उसी वेदमन्त्र में ज्ञान हैं, उसी में विज्ञान हैं, और उसी में मुनिवरों! देखो, क्रियात्मक यौगिकवाद कहलाता हैं। तो हमारे यहाँ जो भी वेद के मर्म को जानने वाले ऋषि हुए हैं, वे विवेकी पुरूष कहलाते हैं, जिनके द्वारा तीन प्रकार की धाराओं में और तीन प्रकार के मानो रूप उनके समीप आते रहे हैं। वह मेरे प्यारे! देखो, सबसे प्रथम उसमें यौगिकवाद कहलाता हैं, यौगिकवाद उसे कहते हैं, जिनमें योग हैं, मिलन करने की मानो देखो, क्षमता मानी गई हैं। मेरे पुत्रों! देखो, अमृतं यौगिकवाद उसे कहते हैं, जहाँ परमात्मा और आत्मा का दोनों का समन्वय होने का एक मानो नृत्त होता रहा है, और उसके ऊपर मानव भिन्न-भिन्न प्रकार की टिप्पणियाँ और विचारधाराओ में रत्त रहा है। परन्तु दूसरा विज्ञान है वह विज्ञान क्या है? मेरे प्यारे! देखो, मिलन होने के पश्चात, विज्ञान की धाराओं का जन्म हो जाता हैं। विज्ञान वह कहलाता है, जो विज्ञान मानो

एक भौतिक रूप में रत्त रहने वाला हैं, विज्ञान वह कहलाता है, जो अग्नि की धाराओं पर, मानो अग्निमयी स्वरूप में वर्णित होता रहता हैं। और वही मुनिवरों! देखो, पंच महाभूतों का जो उग्रवाद है उसका नाम मुनिवरों! देखो, विज्ञान माना गया हैं। जैसे हमारे यहाँ अग्नि का उग्रवाद हैं, वह अग्नि के उग्रवाद में ही, मुनिवरों! देखो, विज्ञान निहित रहता हैं। जैसे आपों में उग्रवाद है, आपो के परमाणु मुनिवरों! देखो, एक दूसरें में मिलन होते रहते हैं, परन्तु एक-एक परमाणु में बेटा! उसमें अग्नि भी विद्यमान हैं, और आपो तो वह है ही, परन्तु उसमें देखो, वह गुरूतव विद्यमान रहता हैं। तो ये इस प्रकार की जो विचारधाराएं, तो मेरे पुत्रों! देखो, यह उग्र क्रियाओं का जन्म होता रहता है, तो उसी का नाम विज्ञान माना गया हैं। जैसे वायु का उग्रवाद है। वह प्राण सत्ता को देने वाला है। परन्तु वह प्राण सत्ता मानो देखो, विज्ञान के वांगमय में भी रहती है। और आध्यात्मिकवेत्ताओं के द्वारा भी, जिसे हम यौगिवाद कहतें है, वहाँ भी विद्यमान रहती है। मेरे पुत्रों! इसी प्रकार जब उग्र क्रिया, इन चतुर्थ वस्तुओं की बन करके मेरे प्यारे! पंचम ब्रह्मा ये अवकाश बन करके, यह पंचम रूप बन जाता है। तो इनमें जो उग्र क्रिया से एक दूसरे में मिलान करने की, मिलन करने की सत्ता उत्पन्न हो जाती है तो उसका नाम मेरे प्यारे! देखो, विज्ञानवाद कहा गया हैं, उसी को विज्ञान की प्रतिभा में प्रतिष्ठित रहने वाला अनुपम हैं। मेरे पुत्रों! देखो, इसमें यौगिकवाद विज्ञानवाद जब विज्ञान वाद में मानव रमण करता है, तो बेटा! एक-एक परमाणु को मिलन करता रहता हैं, और एक-एक परमाणु में जब उग्रवाद आ जाता है, तो ये पंच महाभूत, अपने में उग्र क्रिया को अपने में धारण करते हुए, मेरे पुत्रों! देखो, वह अपने में उग्रां भू वर्णनं देवत्वां ये सर्वत्र विज्ञान उसमें निहित हो जाता हैं, चाहे वह विज्ञान मानो देखो, एक अपना सूत्र बना करके, पंच महाभूतों का यदि कोई सूत्र है, तो वह सूत्र मानो देखो, एक कृतिका कहलाती है जिस सूत्र में यह सर्वत्र पिरोऐ जाते हैं। ये माला बन जाती है, और माला को विचार-विनिमय करने वाले, बेटा! विशाल से विशाल विज्ञानवेत्ता अपनी विज्ञान धाराओं में रमण करते रहे हैं। तो मुनिवरों! देखो, ये हमारे यहाँ, एक वेदमन्त्र में दो प्रकार के स्वरूपों का वर्णन है, और तृतीय जो वर्णन आता है, वह व्यवहार आता है, प्रत्येक मानव देखो, व्यवहार शाला में विद्यमान रहता है और व्यवहार में रमण करता हुआ अपने में व्यपारित बनता हुआ वह अपने को बहुत दूरी ले जाता हैं। जैसे मेरे प्यारे! देखो, मैं तुम्हें नाना प्रकार की उदधृत क्रियाओं में रमण कराना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! एक माता-पिता हैं। मानो देखो, जिस स्थली पर विद्यमान हो करके व्यवाहारशाला में रमण करते, व्यवहार करते रहते हैं। तो मानो देखो, बाल्य बालिका उनके व्यवहार को अपने में धारण करते हुए वह जिस प्रकार का उनका व्यवहार होगा जिस प्रकार की उनकी विचारधारा होगी उन विचारधारा को पान करने वाले बेटा! बाल्य बालिका उसी को अपने में ग्रहण करते रहते हैं। और ग्रहण करने के पश्चात मानो एक व्यापारशाला बन जाती हैं। और वह व्यापार मेरे प्यारे! देखो, वेदमन्त्रों में निहित रहता है। वेदमन्त्र कहता है अग्नं ब्रह्रे कृतं अग्नं ब्रह्रा कृति देवत्वां ब्रह्मा मानो देखो, वेदमन्त्र कहता है कि यह व्यवहार मानव के क्षेत्र में बेटा! एक अग्नि बन करके रहता है। क्योंकि अग्नि प्रकाश के देने वाला है। इसीलिए मानव का विचार भी प्रकाश में रत्त होने वाला है। यह प्रकाशमयी कहा जाता हैं। मुनिवरों! देखो, मानो अपनी स्थली पर विद्यमान हो करके और वह विचार-विनिमय करता रहता है। विचार-विनिमय करता-करता मेरे प्यारे! वह परमाणुवाद में रत्त हो जाता हैं। मुनिवरों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता हैं एक समय बेटा! देखो, महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज और महर्षि विभाण्डक जी और देखो, ऋषि वैशम्पायन और मुनिवरों! देखो, वाजश्रवा तीनों ऋषि अपनी स्थलियों पर विद्यमान थे। मेरे पुत्रों! देखो, एक ऋषि तो मानो देखो, उद्दालक गोत्र में एक दद्दड़ गोत्रीय हैं। और एक मुनिवरों! देखो, कौशल गोत्र कहलाता हैं। यह तीनों ऋषि भिन्न-भिन्न अपने गोत्रों की नाना परम्पराओं में लगे हुए थे। तो मेरे प्यारे! देखो, एक स्थली पर विद्यमान हो करके विभाण्डक मुनि के आश्रम में बेटा! भंयकर वनों में यह तीनों ऋषि अपनी-

अपनी विचारधारा प्रगट कर रहे थे। उन्होंने कहा-प्रभु! ये हमारा विज्ञान, हमारा वेदमन्त्र मानो देखो, विज्ञान में ही रत्त रहने से, यह प्रेरित करता रहता हैं। तो विज्ञान को कैसे जाने? तो मुनिवरों! देखो, वाजश्रवा ने कहा कि विज्ञान को जानने की आवश्यकता नही, विज्ञान तो संसार में है, और जो न होता तो उसको जानने की आवश्यकता रहती है, परन्तु रहा ये कि विज्ञान है उसे प्रथम तो ये विचारना है कि विज्ञान हैं। जब ये निष्ठा हो जाती है कि विज्ञान है, जब यह निश्चित हो जाता हैं, उसके पश्चात मेरे प्यारे! देखो, विज्ञान के ऊपर, विचार-विनिमय प्रारम्भ करना चाहिए, और विचार-विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, इसके ऊपर हमें नाना प्रकार के उपकरण बनाने लेने चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा कि हमारे यहाँ एक स्थान है, और उस स्थान पर मुनिवरों! देखो, दर्शनों का अध्ययन होता रहा है। दर्शनों का अध्ययन इतना विचित्र होता रहा है क्या वह मानो देखो, उसमे चित्रावलियाँ विद्यमान हो जाती हैं। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा ये कैसे हम प्राप्त कर सकेंगें? उन्होंने कहा मेरे विचार में ये है क्या जिन वैज्ञानिकों ने, इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया है, उसको मानो उसके सम्बन्ध में नाना प्रकार के उपकरणों को उन्होंने उद्धधृत किया है। उनके द्वारा हम गमन करते हैं तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने कहा बहुत प्रियतम वहाँ से उन्होंने गमन किया, और भ्रमण करते हुए मुनिवरों! देखो, वह श्वेत्ता ऋषि के द्वार पर पंहुचे, महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज देखो, अपनी स्थली पर विद्यमान थे, मुनिवरों! देखो, जब ऋषियों का आगमन हुआ, तो तीनों ऋषियों को, ब्रह्मवेत्ताओं को दृष्टिपात करते भारद्वाज मुनि के चरणों में वन्दना की, और ये कहा कि भगवन! आईए विराजिए, वह विरामान हो गएं। उन्होंने कहा कि प्रभु! ये वेदमन्त्र कुछ कह रहा हैं वेदमन्त्र का आशय हम जानने के लिए आए हैं वेदमन्त्र कहता हैं पवमानं ब्रह्वे कृतं देवत्वां वारंग गणं ब्र्ह्री कृतं दिव्यां भू वर्णन मानो देखो, प्रभु हम ये जानने के लिए आए हैं, क्या वायु मण्डल कैसे पवित्र होता है? वायुमण्डल के पवित्र दृष्टिपात करने का जो आपके द्वारा उपकरणों का आप ने निर्माण किया हैं हम उसे दृष्टिपात करना चाहते हैं? मेरे प्यारे! देखो, भारद्वाज मुनि ने कहा भगवन! विराजो। ये तो मेरा बड़ा सौभाग्य है। परन्तु आते ही तुमने प्रश्न कर दिया है? मैं ये नही जान पाया हूँ कि देखो, तुमने इतना अवृतों में प्रश्न किया हैं प्रभु! आईए आप कुछ अतिथि स्वीकार तो कीजिए। मेरे प्यारे! हमारे यहाँ, ऋषि-मुनियों में और परम्परागतों से बेटा! अतिथि सेवा को बड़ा महान, एक क्रियाकलाप माना हैं। उन्होने कहा है कि ये तो भगवन! याग है। मानो सबसे प्रथम ब्रह्मवेत्ता, अपने आसन पर आ जाएं, अपने गृह में प्रवेश हो जाएं तो उसको सबसे प्रथम मानो देखो, अन्नाद इत्यादि के लिए सूत्रित करना चाहिए जिससे मानो देखो, अपने में भोज्या को प्राप्त करके उनका आत्मा प्रसन्न हो जाएं, क्योंकि आत्मा प्रसन्न जब ही होता है जब मानव का बाह्य व्यापार उसका पवित्र होता है, और व्यापार जब पवित्र होता है, तो भगवन! उसका अग्रणीय जीवन पवित्र बन जाता है। हे भगवन! आईए, मेरे प्यारे! उन्होंने अतिथि सेवा की और मेरे प्यारे! उनके द्वारा नाना प्रकार के जो उसके द्वारा कन्दमूल इत्यदि पदार्थ थे, वे उन्हें प्रदान किए, वह तृप्त हो गएं। और तृप्त हो जाने के पश्चात, मेरे प्यारे! उन्होने कहा भगवन! अब आप अपनी विचारधारा को प्रगट कीजिए। उसका तुम्हें उत्तर दिया जाएगा। यथोचित, जितना हम जानते हैं।

मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि-मुनियों में अभिमान नही होता, क्योंकि अभिमान इसीलिए नही होता, क्योंकि वे प्रभु के राष्ट्र में हैं, जो अपने को प्रभु के राष्ट्र में स्वीकार करता हैं, और ये जानता है कि-प्रभु! का राष्ट्र बड़ा पवित्र हैं, और यह बड़ा विशाल है, तो मानो देखो, इसमें मानव अभिमान नही कर पाता, अभिमान वहाँ आता है, मानव को जहाँ वह परमात्मा को अपने से विच्छेद कर देता हैं। और वह अपने में मैं-मैं को पुकारने लगता है, और वह स्वतः अपने में अभिमानी बन जाता हैं, मेरे प्यारे! ये कहता हैं, क्या मैं सर्वत्र जानता हूँ, और मैं सर्वत्र जानता हूँ, ये कहता हुआ तो मुनिवरों! उसमें अभिमान की मात्रा बलवती हो जाती है। जब वह यह स्वीकार करता हैं, क्या मैं

नही जान पाता, परन्तु प्रभु का राष्ट्र तो बड़ा अनन्तमयी हैं, और मैं तो अनन्तमयी नही हूँ, परन्तु प्रभु का राष्ट्र बड़ा अनन्त है, इसीलिए मैं उसके राष्ट्र में मानो देखो, सूक्ष्म सा भी नही जान पाता हूँ।

तो मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार अपने वाक् उद्धधृत किए तो वह अपने में मौन हो गएं, मेरे प्यारे! उन्होंने कहा प्रभु आप जानते हैं ब्रह्मणा व्रतं देवत्वां मेरे प्यारे! उन्होंने कहा तो भगवन! आप अपने प्रश्न को आगे अग्रणीय बनाईए, उन्होंने कहा-प्रभु! हम इसीलिए आए हैं, क्या भगवन! विज्ञान में आपकी कहाँ तक मानो देखो, विज्ञान की आपकी कहाँ तक प्रतिपदा पंहुच गई हैं? आपका कितना इसमें अनुभव हो गया है, हम इसको जानने के लिए आए हैं, उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। आप विराजिए। मेरे प्यारे! वह विराजमान हो गएं। और वह जब विराजमान हो गएं, तो उन्होंने कहा-प्रभु! ये हमारे यहाँ एक कक्ष है, इस कक्ष में आओ, और तुम विराजमान हो जाओ। मेरे प्यारे! देखो, वह कक्ष में विद्यमान हो गएं, उनके द्वारा एक यन्त्र था उपकरण का जिनको उन्होंने निर्माणित किया था। निर्माणित जैसे किया, तो मुनिवरों! यन्त्र जैसे सुव्रत किया तो मेरे प्यारे! उसमें जो उनके जो विचार ऋषि-मुनियों के जो विचार थे अथवा उनकी जो धाराएं थी, सत्यमयी और वेदमन्त्रों से गुथे हुए, उनके जो विचार थे, वे विचार यौगिक थे वैज्ञानिक थे, और व्यवहारिक थे, क्योंकि व्यवहार मानव का पवित्रतव होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, व्यवहार और विज्ञान और मुनिवरों! देखो, यौगिकवाद उन शब्दों में निहित था, उन शब्दों के बेटा! यन्त्रों में उपकरणों में चित्र आने लगे, जब चित्र आने लगे, तो बेटा! उनमें से जो परमाणुवाद का जन्म हो रहा था, वह परमाणुवाद मेरे प्यारे! देखो, अशुद्ध परमाणुओं को निगल रहे थे और शुद्ध पवित्र परमाणु देखो, अपना विस्तार कर रहे थे मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने ये कहा कि भारद्वाज मुनि ने यह कहा है कि मेरे विचार में तो, वेद का मन्त्र एक-एक मन्त्र ये कहता है पवमंगलं ब्रहे वर्णा मानो देखो, शब्द है ये शब्द जितना भी गृह में पवित्रतम होता चला जाएगा, उतना गृह का वायुमण्डल पवित्र होता चला जाएगा जितना राष्ट्र की शब्दावली ऊँची बनती रहेगी उतना ही राष्ट्रवाद ऊँचा बनता रहेगा तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने ये कहा कि वायुमण्डल को और गृह को पवित्र बनाना है तो सत्य का उच्चारण करना होगा, सत्य का आश्रय लेना होगा, विज्ञान का आश्रय और व्यवहार का आश्रय, और मुनिवरों! देखो, यौगिकवाद का आश्रय लेना होगा, और यदि इनका आश्रय नही लिया गया, तो देखो, ये दूषित वायुमण्डल को कोई भी समाप्त नही कर सकता। इसीलिए हमारे ऋषि-मुनियों ने एक-एक शब्द को ले करके, बेटा! इसके ऊपर अन्वेषण किया हैं, और विचार-विनिमय किया है क्या यौगिकवाद मानो जो शब्द है वह यौगिकवाद मेरे प्यारे! देखो, द्यौ में प्रवेश हो जाता हैं। और मुनिवरों! देखो, वह जो व्यवहार में सत्य से गुथा हुआ, वह भी द्यौ में रमण करता है, और जो मेरे प्यारे! देखो, विज्ञानमयी शब्द हैं वह विज्ञान मानो देखो, सार्थक बन करके वह भी द्यौ में प्रवेश करता रहता हैं। और यह निगलता चला जाता हैं, अशुद्ध परमाणुओं को, और अपना शुद्धिकरण करता चला जाता हैं। तो इसीलिए वेदमन्त्र कहता है, कि हम दोनों प्रकार की मानो देखो, वेद के मन्त्रों में, जो तीन प्रकार की धाराओं का जन्म होता है, उसे हमें जानना हैं, और उसे अपने प्रयोग में लाना हैं, और उसी को हम अपने में जानने के लिए सदैव तत्पर रहे हैं।

तो मेरे पुत्रों! जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया, ऋषि ने जब अपनी वार्त्ताओं का वर्णन किया तो बेटा! ऋषि अपने में शान्त हो गएं उन्होंने कहा जो तुम अपने मन में विचार रहे हो विचारों का भी चित्र आ रहा है, और विचारो में तुम्हारा चित्र विद्यमान रहता है, ये दृष्टिपात करो। मेरे प्यारे! देखो, यन्त्रों में उनके मानो जो आन्तरिक विचारधाराओं का जन्म हो रहा है, वे विचारधाराओं का चित्र ज्यों का त्यों अंकित हो रहा हैं। आज यन्त्रों में मेरे प्यारे! अपने में यौगिकवाद की प्रतिभा का वर्णन हो रहा हैं, वर्णितं वर्णनं ब्रह्मे मेरे प्यारे! देखो, अपने में समाहित हो रहा हैं, और जितना भी व्यवहार है, यही तो सर्वत्र जगत का निर्माण करने वाला हैं। मेरे प्यारे! जब इसमें

व्यवहार में माता-पिता अपनी स्थलियों पर विद्यमान है, यौगिक गुरु शिष्य अपनी स्थलियों पर विद्यमान रहते हैं। परन्तु जब गुरु शिष्य अपनी वार्त्ता अपने विचारधारा को वर्णन करने लगते है, उनके विचारों में, जो यौगिकवाद हैं, जो उनके यहाँ पार्थिववाद है, व्यवहार का, जब उसमें रमण करने लगते हैं, तो बेटा! उनका जीवन धन्य हो जाता हैं। और उनकी विचारधारा में एक पवित्रता की उपलब्धि हो जाती हैं, जिस पवित्रता को धारण करने के पश्चात, मानव अपने में महानता का दर्शन करता रहता हैं। जब मेरे प्यारे! पति और पत्नी अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके, व्यवहारशाला में विद्यमान हो जाते हैं, तो मुनिवरों! देखो, उनका व्यवहार, उनकी विचारधाराएं, महान विचारधाराएं, यौगिक और देखो, वैज्ञानिक विचाधाराएं, माता के गर्भस्थल में, बेटा! आत्मा जो विद्यमान होता हैं, अथवा देखो, माता के गर्भस्थल में जो शिशु होता है, वह विचारों का प्रवाह, उन विचारों की धाराएं, माता के गर्भस्थल में जो शिशु विद्यमान होता है, बेटा! देखो, वह व्यवहार उनकी वाणी का उदगार मुनिवरों! देखो, माता के अन्तर्हृदय की तरंगों में तरंगित हो जाता हैं।

मेरे प्यारे! देखो, मैनें तुम्हे कई काल में वर्णन करते हुए कहा था ऋषि-मुनियों का जीवन प्रायः परम्परागतों से बड़ा महान रहा है, मेरे पुत्रों! देखो, जब महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज जब माता के गर्भस्थल में विद्यमान थे तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि सुनीता ऋषि महाराज और माता शकुन्तकेतु दोनों मुनिवरों! देखो, जब वह एकान्त स्थली में विद्यमान होते, तो आत्मा परमात्मा की चर्चा करते रहते थे, और वह ब्रह्म की चर्चा करते-करते, मुनिवरों! देखो, वह जब मन, कर्म, वचन से माता उन शब्दों को ग्रहण करती रहती है, और पितर उन शब्दों का उद्गीत गाने लगता है। तो मेरे प्यारे! देखो, माता के गर्भस्थल में जो शिशु विद्यमान हैं, वह मानो विचारधाराओं से अपने में धारयामि बन जाता हैं। वे विचार, उसकी तरंगें मुनिवरों! उनकी धाराएं मुनिवरों! शिशु के द्वार पर प्रवेश कर जाती हैं। माता का गर्भाशय धन्य हो जाता हैं। और धन्य हो करके जब वह बाह्य जगत में उस शिशु के आते ही बेटा! वह ब्रह्मवेत्ता की प्रतिभा में रत्त हो जाता हैं मेरे प्यारे! वह ब्रह्मवेत्ता बन जाता हैं उसका जो सरगम है, अथवा उसकी जो धाराएं हैं उनको मानो सूक्ष्मता से हम वर्णित करते हैं। तो मुनिवरों! देखो, उसका स्वरूप उसके समीप उसके आभा में परिणत हो जाता है। तो आओ, मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष चर्चा नही प्रगट करूंगा केवल विचार-विनिमय क्या मुनिवरों! माता और पितर दोनों मैं यह व्यवहार की चर्चा कर रहा हूँ। जब मुनिवरों! देखो, बाल्य के द्वार पर आता है तो माता भी ब्रह्म की चर्चा कर रही है पितर भी ब्रह्म की चर्चा कर रहा है तो बेटा! वह बाल्य मानो आचार्य के कुल में प्रवेश होते ही ब्रह्मवेत्ता बन जाता है और ब्रह्मनिष्ठ बन करके मुनिवरों! देखो, वह ब्रह्म की चर्चाएं ब्रह्म में व्यापार ब्रह्म में विज्ञान और मुनिवरों! देखो, यौगिकवाद ब्रह्म में यौगिकवाद को अपने में रमण करता हुआ मुनिवरों! देखो, वह ज्ञानी पुरूष कहलाता हैं और वह ज्ञानी पुरूष हो करके अपने विचारों का निर्णय देता रहता हैं। प्रकृतिवाद का वह विभाजन करना जानता है, एक-एक परमाणु का विभाजन करना जानता हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, अपने में आत्मा में ही वह सदैव मानो परिणत होता हुआ आत्मा में आत्मा का दर्शन करता रहता हैं तो बेटा! मैं बहुत दूरी न चला जाऊं, विचार-विनिमय केवल यह क्या मुनिवरों! देखो, वेद का मन्त्र कहता है तीन प्रकार की धाराएं प्रत्येक वेदमन्त्र में होती हैं। और वेदमन्त्र का जो भाष्य वेदमन्त्र को जो विचार-विनिमय करता हैं। वह अपने स्वरूप में तो बेटा! देखो, तीन प्रकार का ज्ञान और विज्ञान उसके समीप होता है। तो वह वेद के भाष्य में परिणत हो जाता हैं। वेद की धाराओं में रत्त हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ न तो इकले इसमें यौगिकवाद से ही क्रियाकलाप बनता हैं, और न विज्ञान से और न व्यवहार से, क्योंकि व्यवहार और विज्ञान और यौगिकवाद तीनों एक प्रतिभा के मूल में विद्यमान रहने चाहिएं। तो मेरे प्यारे! देखो, यहाँ, ऋषि-मुनियों ने अपनी विचारधारा को प्रगट किया, तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा-प्रभु! मेरा जो यत्र है, ये सर्वत्रता को दृष्टिपात कर रहा हैं, ये मैंने नाना

प्रकार के उपकरणों का निर्माण किया हैं, और इन उपकरणों के निर्माण से मैं ये जान पाया हूँ, कि संसार अपने में मानो वैदिक कहलाता है, वेदमन्त्र वेद कहते हैं प्रकाश को, वेद कहते हैं जहां मानवीतया का हमें दर्शन हो जाएं, जहाँ मानव दर्शन हमारे समीप आ जाएं, उसी को मुनिवरों! देखो, वेद का मन्त्र अपने में मन्त्रित करता हुआ अपने में अपनेपन को ही प्राप्त करता रहता हैं। आओ मेरे प्यारे! आज मैं, तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट नही करूंगा, आज मैं अपने विचारों को सूक्ष्म रूप में प्रगट कर पाऊंगा, क्योकि आज मैं अपने विचारों की एक भूमिका बनाने के लिए जा रहा हूँ, क्योंकि मानव को यह विचारना है, यौगिकवाद मे क्या जितनी भी संसार की सम्पदा है, चाहे रस्सावादन के रूप में है चाहे वह सम्पदा खनिज के रूप में है चाहे अणु और परमाणु के रूप में है परन्तु देखो, जितना भी द्रव्यां भू वर्णनं ब्रह्मा कृतं देवाः जितना भी ये मानो संसार है, इसके गर्भ में देखो, वे परमपिता परमात्मा निहित रहते हैं, और वह परमपिता परमात्मा उसकी रचयिता और उसकी महानता का प्रायः वर्णन करते रहते हैं। तो मानो देखो, सबसे प्रथम हमें प्रत्येक वेदमन्त्र में यह हमें आख्यिका के रूप में आती रहती हैं, और वह वर्णित होता रहता है, कि प्रायः ऐसा ही, प्रत्येक वेदमन्त्र हमें उद्गीत गाने के लिए हमें सदैव तत्पर रहता हैं। जैसा मैंने पुरातन काल में कहा है, क्या देखो, जब मानव यौगिक बनता है, तो योग की व्याख्या करते हुए ऋषि कहता है सूक्ष्म सा मानव देखो, वहा अनुशासन की वार्त्ता आती रहती हैं। यौगिकवाद कहते हैं, जो अनुशासित रहता है, अनुशासन में रहने वाले को यौगिकवाद का योगी कहा जाता हैं और वह अनुशासन कैसा है बेटा! जो प्रत्येक जो ज्ञानेन्द्रियाँ हैं जो उनका मानो देखो, अनुशासन हैं, उन पांच इन्द्रियों के अनुशासन का नाम यौगिकवाद कहलाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह यौगिकवाद है, और जो प्रकृति के उपकरणों के द्वारा, मानो विज्ञान को जानने लगता है, वह विज्ञानवेत्ता कहलाता हैं, और जो मेरे प्यारे! व्यवहार में, जनता में जर्नादन को दृष्टिपात करता हुआ, समाज में मुनिवरों! देखो, अपने व्यवहार का ऊर्ध्वा में परिचय देता रहता है, तो वह मुनिवरों! विज्ञानां भूवर्णनं ब्रहे वह व्यापार कहा जाता है, और व्यवहार और विज्ञान मुनिवरों! देखो, यह यौगिकवाद तीनों अपनी-अपनी स्थली में पवित्र होने चाहिएं, जब तक यह पवित्र बन जाते हैं, तो मुनिवरों! देखो, ये वायुमण्डल क्या, विज्ञान अपने में सार्थक बन करके रहता हैं, और मुनिवरों! व्यवहार अपने में स्वर्गतव बन करके रहता हैं, और यौगिकवाद मेरे प्यारे! देखो, स्वर्ग की पगडण्डी को ग्रहण करा देता हैं।

आओ, मेरे प्यारे! मैं आज तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट नही करने आया हूँ, केवल तुम्हें सूक्ष्म सा परिचय देने के लिए आया हूँ, और वह परिचय केवल यह है कि प्रत्येक मानव अपने व्यापार में इतना कुशल रहना चाहिए, राजा जब राष्ट्र में मुनिवरों! देखो, अपने में कुशल रहता है, व्यापार में, तो मुनिवरों! देखो, राजा और प्रजा दोनों पवित्र बन करके चलते हैं। मेरे प्यारे! जैसे माता-पिता पवित्र होते हैं, तो बाल्य पवित्र बन जाते हैं, आचार्य पवित्र बनता है, तो गुरु पवित्र बन जाते हैं, ये सब व्यापार में सब वार्त्ता आ जाती हैं। मेरे प्यारे! देखो, ये अपने मे अपनेपन को ध्यानावस्थित करते हुए, अपने में अपनेपन को जानना चाहिए, ये है बेटा! आज का वाक्, अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें आगे की शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा, आज मैंने अपने विचारों की एक भूमिका बनाई है और यह भूमिका मुनिवरों! देखो, बनाने का अभिप्रायः ब्रह्मे अपने में भूमिका बनाना बहुत अनिवार्य हैं, तो ये बेटा! आज का वाक्, मैंने सूक्ष्म रूप से तुम्हें प्रगट किया है, अपने विचारों की भूमिका बनाई है, समय मिलेगा तो इससे आगे की शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः ये क्या देखो, यौगिकवाद और विज्ञानवाद और मुनिवरों! व्यवहार ये तीनों अपनी स्थली में पवित्र होने चाहिए, यदि तीनों पवित्र होंगें, तो समाज में तो बेटा! देखो, वायुमण्डल पवित्र होगा एक दूसरे के अन्धकार एक दूसरे के विचारों में अन्धकार नही आएगा विचारों में एक महानता का प्रदर्शन होता रहेगा, ये है बेटा! आज का वाक्, अब समय मिलेगा तो मैं तुम्हें शेष चर्चाएं, कल प्रगट

करूंगा आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं माहं गायन्त्वा रथं आ पा ओ३म् तनु गन्तर्णाश्चमा आ पा रेवाः गायन्त्वा माहं आ पाहं ओ३म् यश्शचाम् रेवो गा ता रथं।

१२ व्यवहार और तपस्या २८-०९-१९९०

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, क्योंकि हमारे यहाँ ये जो पठन-पाठन का कर्म हैं ये परम्परागतों से ही, विचित्रतम माना गया हैं। क्योंकि हमारे यहाँ, जब ये उद्गीत गाया जाता है, अथवा वेदमन्त्रों का गान गाया जाता है, वे तो जटा पाठ में गान गा रहा है, और कोई माला पाठ में गा रहा हैं, कोई उदात्त अनुदात्त में और विसर्ग अनुदात्त, अपने में वेदों का स्वर अपनी आभा में सजातीय हो जाता हैं। इसीलिए प्रत्येक वेदमन्त्र वह नाना रूपों में उसका गान गाया जाता है, वही वेदमन्त्र है जो जटा पाठ मे गान रूप में गाया जाता हैं, और वही वेदमन्त्र है, जो माला पाठ में, स्वर संगम में मानो उसका स्वर अव्रत होता रहता हैं, और वही उदात्त और अनुदात्त में गान रूपों में गाया जाता हैं। तो मानो ये अपने में बड़ा विचित्रतम माना गया हैं। क्योंकि वेद को हमारे यहाँ प्रकाश कहते हैं, वास्तव में ये ऐसा अनुपम प्रकाश हैं, जिस मानव को ये प्रकाश को प्राप्त हो जाता हैं, वह अपने आनन्दमयी श्वासों की ध्वनियां में रत्त हो जाता हैं। तो मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ वेदमन्त्र जब ये प्रकाश के लिए मानो ये अपनी आभा प्रगट करते रहे हैं। तो यहाँ ऋषि-मुनियों में प्रसंग भी होता रहा है क्योंकि हमारे ऋषि-मुनियों की ये बड़ी विचित्र देन रही है, क्या जब भी एकान्त स्थली पर विद्यमान हुए है, उन्होंने मुनिवरों! अपना एक निर्णय नही स्वीकार किया, उसमें नाना प्रकार के विचार अथवा अपने-अपने हृदय के विचारों को उदगम रूप में लाने का प्रयास किया। और जब वह निश्चयात्मकतव में रमण कर गया, उसके पश्चात उसको स्वीकार किया गया हैं। तो मुनिवरों! देखो, जब ऋषि-मुनियों के मध्य में यह वाक् आया कि वेदं हमारे यहाँ वेद को प्रकाश कहते हैं और कहीं-कहीं प्रकाश सूर्य को कहा गया हैं, तो यहाँ यह प्रसंग आया कि हमारे यहाँ जो प्रकाश है, वह तो सूर्य है, और ये वेद रूपी प्रकाश कैसा प्रकाश हैं? तो मुनिवरों! देखो, इसमें आचार्यों ने अपना मन्तव्य दिया और मन्तव्य देते हुए कहा कि जैसे हमारे यहाँ नेत्रों का प्रकाश ये सूर्य भानु प्रातःकालीन उदय हो जाता हैं और यह नेत्रों का प्रकाश माना गया है, इसी प्रकार जो हमारे विचारों में, हमारे शब्दों में हमारे मनन करने में, जब वेद रूपी प्रकाश आ जाता है तो वह बेटा! वह मानव के अन्तःकरण को पवित्र बना देता है। जैसे नेत्रों का प्रकाश सूर्य है, इसी प्रकार वेद रूपी जो प्रकाश है, वह हमारे अन्तःकरण का प्रकाश माना गया हैं, उससे हमारा अन्तःकरण पवित्र बनता है। इसीलिए हम वेदमन्त्र के ऊपर अपने विचार देते रहते हैं, परम्परागतों से बेटा! जब भी ऋषि-मुनि अपनी स्थलियों पर विद्यमान रहे हैं उन्होंने वेदमन्त्रों के ऊपर विचार-विनिमय प्रारम्भ किया वेदमन्त्रों में जो ज्ञान है अथवा विज्ञान है और देखो, मुनिवरों! उसमें जो भी एक मानवीयतव वह सर्वत्र मानव के समीप रहता है और उसके ऊपर मानव मनन करने के लिए तत्पर हो जाता है तो आओ, मुनिवरों! वेद का मन्त्र यह कहता है हे मानव! तू अपने अन्तःकरण में प्रकाश को लाने का प्रयास कर और वेद रूपी प्रकाश को अपनाता हुआ तू अपने अन्तःकरण को पवित्र बना। क्योंकि अन्तःकरणीय जो धाराएं हैं वही मुनिवरों! देखो, मानव के हृदय में समाहित हो जाती हैं और वह जो हृदय है वह अगम्यता में परिणत रहता है। इसीलिए वेद का मन्त्र कहता है कि हे मानव! तू अपने अन्तःकरण और उसको अपने हृदय का अन्तःकरण का दोनों का एक समन्वय हो जाएं। जिससे मुनिवरों! वह प्रकाश का एक द्यौतक बन जाएं और उस प्रकाश में रत्त हो जाएं तो मुनिवरों! वेद का मन्त्र यह कहता है कि हे मानव! तू अमृतं जैसे सूर्य मानो रात्रि छाई हुई है। सूर्य नही है। चन्द्रमा हैं, किसी स्थली में चन्द्रमा भी अमावस्य में नही रह पाता तो अन्धकार छाया हुआ है। नेत्रों के समीप परन्तु जब यह सूर्य प्रातःकालीन उदय हो जाता है। तो यह प्रकाश देने के लिए तत्पर हो जाता हैं। जब तक यह

रात्रि को अपने गर्भ में धारण कर लेता जब तक मुनिवरों! मानव के नेत्र उससे प्रकाशित नही होते वह प्रकाश का द्यौतक है, प्रकाश को देने वाला है। वह द्यौ से प्रकाश लेता रहता है, और यहाँ देखो, उसी प्रकाश को बिखेर देता है। और वही कहीं ऊर्ज्वा के रूप में है, कहीं प्रकाश के रूप में नेत्रों तक सीमित रहता है, वह अन्तःकरण का प्रकाश नही है। उसका अन्तःकरण से कोई समन्वय नही होता हैं। परन्तु उसकी पूजा करने से उसका अन्तःकरणीय मानो देखो, ज्ञान और विज्ञान जो उसमें निहित रहता हैं। वह उसमें रत्त होता हुआ अपनी आभाओं में परितण हो जाता हैं।

तो आओ, मेरे मैं इस सम्बन्ध में कोई विशेषता नही केवल यह कि हमारा वह देवता हैं और जो देवतव को धारण कर लेता है। वह उसका अपने में पूजन करने लगता हैं बेटा! वह भी देवता बन जाता हैं। और उसी के सदृश्य अपने में अपनेपन को दृष्टिपात करने लगता हैं। तो आओ, मेरे पुत्रों! आज का वेदमन्त्र हमें नाना प्रकार की प्रेरणा देता रहता है। आज का हमारा वेदमन्त्र मानो देखो, उद्गीत गाने के लिए सदैव तत्पर हो रहा है, जो मानव इसको उद्गीत गाता रहता है। वह उद्गीत संगम के रूप में परिणत हो जाता है। वह स्वर संगमों में मानो अपने स्वरों में स्वर ध्वनि करने लगता हैं, और वही ध्वनि मेरे प्यारे! देखो, अपने में अन्तःकरणीय ध्वनि बन करके उसका लघु मस्तिष्क से जब समन्वय हो जाता हैं। तो यह नाना प्रकार की ध्वनियों में ध्वनित हो जाता है, और वही ध्वनि मेरे प्यारे! देखो, मानव के अन्तःकरणीय प्रकाश और अन्तःकरण को एक महानता में परिणत कर देता हैं।

आओ, मुनिवरों! आज मैं तुम्हे विशेषता में नही ले जा रहा हूँ विचार केवल यह कि आज मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ। जहाँ बेटा! देखो, तीनों ऋषि अपने आसन पर विद्यमान हो करके अपना विचार-विनिमय कर रहे थे, महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज के आश्रम में महर्षि वैशम्पायन और मुनिवरों! देखो, वाजश्रवा यह तीनों ऋषि मुनिवरों! अपने में विचार-विनिमय कर रहे थे, महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज को तो यह मन्तव्य था क्या मानव को व्यवहार शाला में पवित्रतम रहना चाहिए। परन्तु वैशम्पायन यह उच्चारण कर रहे थे क्या मेरे विचार में मानवीय ज्ञान पवित्र होना चाहिए और मुनिवरों! देखो, जो अप्रतां भू जो मुनिवरों! देखो, यही वाक् वाजश्रवा के समीप आया तो उन्होंने कहा क्या मेरे विचार में तो जब तक आध्यात्मिकवाद मानव का आध्यात्मिक विज्ञान जब तक वैज्ञानिक रूप में नही आ पाएगा, जब तक मानो भौतिक विज्ञान भी अपंग रह जाता हैं। दोनों प्रकार के विज्ञान का मानो देखो, समन्वय होना चाहिए और जब आध्यात्मिकवाद और भौतिक विज्ञान का अपने में समन्वय हो जाता है। दोनों की एक स्वर ध्वनि बन जाती हैं। तो दोनों एक दूसरे में पवित्र बन करके रहते हैं। मेरे प्यारे! इसमें महर्षि वैशम्पायन ने कहा कि वाक् तो तुम्हारा यथार्थ है, परन्तु कहीं-कहीं ऋषि-मुनियों ने यह कहा है क्या यह जो आध्यात्मिक विज्ञान है, जब भौतिक विज्ञान का समापन होता हैं तो वहाँ से आगे आध्यात्मिकवाद का प्रारम्भ होता है। मानो देखो, सबसे प्रथम तो हमें इस भौतिक विज्ञान के स्वरूप को जानना होगा कहाँ तक हम जा सकते हैं और उसके आगे जब मौन प्रतिक्रिया बन जाती ,है तो वहाँ से आध्यात्मिक विज्ञान का प्रकाश अथवा आध्यात्मिक विज्ञान की उपलब्धि होती रहती है तो ऐसा हमारे यहाँ उन ऋषि-मुनियों का कथन रहा है तो मेरे प्यारे! देखो, जब महर्षि विभाण्डक ने यह कहा कि व्यवाहर इतना पवित्र बाह्य जगत में होना चाहिए क्या जिससे मानव अपने में महानता की आभा में रत्त हो जाएं। क्योंकि यह जो संसार बनता है यह प्रायः जब बनता है, मानव का जगत जबकि देखो, इसका आध्यात्मिकवाद अन्तःकरणीय पवित्र बन जाता है। तो अन्तःकरणीय का अभिप्रायः क्या है? कि इसमें यौगिकवाद है और जो भी मुनिवरों! देखो, यौगिकवाद उसे कहते हैं, जहाँ योगं बहु वर्णसुतं जहाँ एक दूसरें में मिलान में, मानव रत्त हो करके मौन रह-रह करके अपनी मौन प्रतिक्रियाओं में रत्त रहता है।

क्योंकि ये तो प्रायः मानव जानता है वेद का मन्त्र भी कहता है, कर्मणं ब्रह्वे कृतं मणा व्रतप्रह्वी देवत्वां काला सुताः वेद का वाक् कहता है क्या यह मन किसी भी काल में बिना कर्म किए नही रहता ये कुछ न कुछ चिन्तन करता रहता है अपने में कर्मठ बना रहता है। अपने कर्म करता रहता है परन्तु जब यह अपने में कर्म करता रहता है। तो कर्म करने में उस प्रतिक्रिया को लाया जाएं मानो देखो, यौगिकवाद हो और यौगिकवाद उसे कहते हैं। जो अपनी आत्मा के अनुरूप अपने क्रियाकलापों को वह मानो वह क्रिया रूप में लाने का प्रयास करता रहता हैं। तो इसीलिए योगी वह महान कहलाता हैं। जो अपनी आत्मा के अनुसार जो वह तरंगों का प्रादुर्भाव होता हैं। तरंगें उत्पन्न होती रहती है उसी तरंगों के साथ-साथ अपने क्रियाकलापों को वह प्रायः क्रिया रूप में लाने का प्रयास करता रहता हैं। तो आन्तरिक जगत में देखो, उसको प्रतिभाशाली बनाता है।

तो मेरे प्यारे! मुझे एक वाक् स्मरण आ रहा है बहुत पुरातन काल हो गया है। जब बेटा! देखो, अपने में ही मानो देखो, चिन्तन करने वाले ऋषि हुए हैं, क्योंकि आत्मवेत्ता जब आत्मा का बल महानता में ले जाता है। तो आत्मा के बल से शरीर का बल पवित्र बन जाता हैं। और जब आध्यात्मिक और शारीरकि बल दोनों पवित्र होते है तो समाजिक बल होता है। समाज में जो क्रिया करने की कर्म करने की जो शक्ति आती है। वह मुनिवरों! देखो, जब तक वह दोनों जगत नही बन जाते जब तक वह संसार जो बाह्य जगत में अपने मो कर्मठ नही बना सकता, तो मुनिवरों! देखो, इसीलिए सबसे प्रथम आध्यात्मिकवाद उससे देखो, आत्मा का वाद है। उसके पश्चात वह मुनिवरों! देखो, ब्रह्मणे वृतं शारीरिक बल जिससे वह शरीर को अपने में बलिष्ठ बनाता रहता है। ब्रह्मवर्चोसि बनता रहता है। और जब यह बन जाता है तो बाह्य जगत उसका स्वतः बनता चला जाता है, तो मुनिवरों! देखो, सबसे प्रथम मानव को यौगिक बनना है। यौगिक उसे कहा जाता है जो आत्मा में ही आत्मा का दर्शन करने लगता है, वह सर्वश जगत को आत्मा के स्वरूप में दृष्टिपात करने लगता है।

तो आओ, मेरे प्यारे! देखो, इस समय अपने में इस प्रकार की वार्त्ताओं को मैं उद्गीत रूप में नही गाना चाहता हूँ केवल यह कि हमारा आध्यात्मिकवाद पवित्रतव में रमण करना चाहिए जिससे हमारा जीवन एक महानता में सदैव परिणत होता रहे और जिससे हमारे जीवन में उत्पन्न होती रहें। मेरे प्यारे! देखो, इसमें यह विचारधाराएं जब ऋषि-मुनियां की प्रगट होने लगी तो उस समय मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि विभाण्डक ने कहा क्या महाराज हे भगवन! आप भी सब ब्रह्म का चिन्तन करने वाले हम भी चिन्तन करने वाले हैं। परन्तु मानव का जीवन कहाँ से प्रारम्भ होना चाहिए। उन्होने कहा मानव का जीवन कोई तो कहता है, कि आत्मा के आत्मा की तरंगों से प्रारम्भ होना चाहिए कोई कहता है कि नही यह सामाजिक पद्धति से, इसका क्रियात्मक जीवन होना चाहिए, तो मेरे प्यारे! देखो, यह प्रारम्भिक जो वाक् है, ये कहीं-कहीं अपने विचारों का मुनिवरों! देखो, सभी ने अपना प्रदर्शन किया। परन्तु हमारे विचार में ये आता है, कि सबसे प्रथम मानो देखो, आत्मा को प्रारम्भ होना चाहिए परन्त विभाण्डक मुनि ने कहा क्या प्रभु मेरा इसमें दृष्टिकोण भिन्न है। मेरा विचार यह बना है, हमारा विचार क्या मानव का जीवन बाह्य जगत से ही ऊँचा बनना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा यह तुम्हारा वाक् यथार्थ नही है क्योंकि जब भी सृष्टि का प्रारम्भ होता है, और मानव के जीवन का निर्माण होता है तो निर्माण में मानो देखो, सबसे प्रथम वह निर्माण होता है और निर्माण हो करके जब यह बाह्य जगत में आता है तो आन्तरिक जगत में उसकी क्रियाएं परिपूर्ण हो जाती हैं। और जब भिन्न-भिन्न क्रियाएं परिपूर्ण हो जाती हैं तो वही बाह्य जगत में इन्द्रियों का जो भाव है यह उसका प्रादुर्भाव होता रहता है। और उसका प्रादुर्भाव हो करके वही बाह्य जगत में प्रवेश हो जाते हैं। तो मेरे विचार में तो यह है तो मुनिवरों! देखो, महर्षि वैशम्पायन ने तो यह कहा कि मेरे विचार में तो यह आता है क्या मानव का जो प्रारम्भ है, वह माता के गर्भस्थल से होता है। क्योंकि यहाँ देखो, जबसे सृष्टि का प्रारम्भ हुआ है।

मानो समाज बन करके आया है, तो माताओं ने मानो देखो, पुरातकन काल में माताओं ने कहा है सम्भव ब्रहे कृतं अस्सुतम दिव्यं ब्रह्मा लोकां मानो देखो, माताओं ने यह बहुत परिश्रम करने के पश्चात इस बाह्य आन्तरिक जगत में अपने का निर्माण किया और अपने शिशु का निर्माण किया और उसको भावना दे-दे करके उसको वह विज्ञान में और बाह्य जगत में लाने का प्रयास किया तो मेरे प्यारे! देखो, यह उन्होंने अपना वाक् प्रगट करते हुए कहा तो विचार आता रहता है। मैं सम्बन्ध में विशेषता नही केवल एक वाक् उद्गीत रूप में गाने के लिए आया हूँ, मेरे प्यारे! देखो, मैं इससे पूर्व काल में देखो, वशिष्ठ की चर्चा कर रहे थे महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज का जीवन देखो, आन्तरिक जगत से बाह्य जगत में आता है। सबसे प्रथम मानव ब्रह्मनिष्ठ बनता हैं। ब्रह्म की निष्ठा जब उसे आन्तरिक जगत में हो जाती है, तो निष्ठा को ले करके वह विज्ञान के मार्ग में से होता हुआ बेटा! बाह्य जगत में प्रवेश कर जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, यह उन्होंने अपना मन्तव्य दिया क्या अमृतं भू वर्णनं मानो इसी प्रकार कोई भी ऋषि हो जब तक वह तपस्या के रूप में नही परिणत हो जाता, जैसा बेटा! मैने तुम्हें कई काल में वर्णन करते हुए कहा था कि राजा जब बाह्य जगत में आ जाता है, और विज्ञान के जगत में भी आ जाता है, तो उससे उब जाता है उब जाने के पश्चात वह राष्ट्र को त्याग देता है। और राष्ट्र को त्याग करके वह तपस्या में परिणत हो जाता हैं। तो भगवान मनु का तो बड़ा एक ही ऊर्ध्वा में बड़ा उड़ाने रही हैं, भगवान मनु ने यह कहा है कि कोई भी राजा हो वह राज अपने देखो, युवा अवस्था में राज करे और जब उसका देखो, बुद्धि का माध्यम जब देखो, वृद्ध रूप में परिणत हो जाएं तो उस समय देखो, अपने में देखो, पुत्र को राज दे करके उसे सन्यस्थ को प्राप्त हो जाना चाहिए। ऐसा भगवान मनु ने बेटा! कहा है और वह मानो जब तक राजा रहे वह ब्रह्मवेत्ता बना रहे क्योंकि ब्रह्मवेत्ता ही त्याग कर सकता है और जो ब्रह्मवेत्ता नही होता वह त्यागी नही बन सकता। इसीलिए जिस समय भी राष्ट्र का निर्वाचन हो और राष्ट्रीय प्रणाली का निर्वाचन हो, उस समय बुद्धिमानो विवेकी पुरूषों के द्वारा राष्ट्र का निर्वाचन होना चाहिए क्योकि देखो, जो राजा होता है, वह ज्ञानी होता हैं, और ब्रह्मवेत्ता होता, और ज्ञानी ही राजा मानो देखो, राष्ट्र का त्याग कर सकता है वही मान अपमान का त्याग कर सकता है, और त्याग करने के पश्चात वह तपस्या में परिणत हो जाता है। मैंने बहुत पुरातन काल हो गया, बेटा! इस संसार को दृष्टिपात करते हुए हमारे यहाँ बहुत से राजा इस प्रकार के हुए है जिन्होनें बेटा! देखो, अपने जेठे पुत्र को राज दे करके वह भंयकर वन में चले गएं हैं, और वह तपस्या में तपस्वी बन करके ब्रह्मवेत्ता बने, क्योकि ब्रह्मवेत्ता राजा भी होता है, क्योंकि वह न्याय करता है, वही अपनी प्रवृत्तियों को विभक्त रूप में परिणत कर देता है। इसीलिए राजा को ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए, जो राजा ब्रह्मवेत्ता होता है, ब्रह्मनिष्ठ होता है। वह बेटा! देखो, राष्ट्र का पालन कर सकता है, जो निर्मोही होता है जिसे मोह नही होता मानो देखो, वही राष्ट्र का पालन करता है, और वही राष्ट्र को सुसज्जित रूप से मानो उसको गति प्रदान कर देता है, जैसे यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, मानो ब्रह्मा उसे सुचारू रूप से संचालन करने वाला अथवा यज्ञ को गति देने वाला होता है। इसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो, राजा भी ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए। इसका एक पुरोहित होना चाहिए, और वह पुरोहित ऐसा हो जो समय-समय पर मानो देखो, आगे आने वाला जो काल है और उसको वह निर्णयनायक कर सके और निर्णय देता हुआ कहे हे राजन! तुम ब्रह्म विद्या के माध्यम से इसका विभाजन करो और राष्ट्र के ऊपर मानो कोई भी वृत्तियों को धारण कराना हो, तो तुम अपनी अन्तरात्मा से मानो उसका निर्णय लेने वाले बनो। तो मुनिवरों! देखो, एक पुरोहित होता है, और वह राष्ट्र का पुरोहित कैसा होता है? जो बेटा! ब्रह्म ज्ञान में और परमपिता परमात्मा के चिन्तन में रहता है, और वह मानो देखो, वह सृष्टि को निहारता रहता है, जो परमात्मा का न्यायालय है, परमात्मा का जो न्याय है, उस न्याय अवस्था को देखो, अपने में निहारता रहता है, परमात्मा की कैसी सुसज्जित मानो देखो, न्याय व्यवस्था है वह कैसा न्याय करने वाला है, वह

प्रवृत्तियों के साथ में न्याय करने वाला है। एक मानो देखो, मानव अपनी आत्मा देखो, शरीर को त्याग रहा हैं, और त्यागते समय उसके अन्तःकरणीय जो विचार होते है। उन्हीं विचारों को ले करके मानो देखो, वे परमपिता परमात्मा न्यायाधीश बना रहता हैं, और वह न्याय करता रहता है, इसी प्रकार जो ऐसा राजा हो, मानो प्रजा में न्याय करने वाला हो, और उसके राष्ट्र में बेटा! देखो, महानता का प्रदर्शन होता हो, ऐसा राजा ब्रह्मवेत्ता कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, एक राज सभा है और उसमें दो व्यक्तियों का राजा को न्याय करना है एक अपना पुत्र है, और एक मानो प्रजा का पुत्र है, जब दोनों का वह न्याय करता है, तो वह मानो देखो, ब्रह्मज्ञान में चला जाता हैं। न्याय क्या कहता है, ईश्वरीय न्याय क्या कहता है? उसी न्याय मानो देखो, जहां वह न्याय कहता है उसी न्याय को जब वह स्थापित कर देता है तो बेटा! राष्ट्र पवित्र बन जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, मैं इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा नही देने आया हूँ विचार-विनिमय क्या मेरे प्यारे! देखो, यहाँ ब्रह्मज्ञान की आवश्यकता है विचार यह कहता है कि ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए मेरे प्यारे! देखो, जब ब्रह्मवेत्ता राष्ट्रवेत्ता होता है, राजा होता है तो उसके राष्ट्र में मुनिवरों! देखो, वह उस राजा को भय नही होता वह मृत्यु से भय नही होता है। वह मृत्यु उपराम होता है, और जो राजा मृत्यु से उपराम नही हुआ हैं। वह राजा मानो देखो, राष्ट्र का उसे कोई अधिकार नही होता, वह राजा देखो, न्याय करने का भी उसे कोई अधिकार नही है। तो इसीलिए देखो, राष्ट्रीय व्यवस्था पवित्र होनी चाहिए। भगवान मनु ने कहा है क्या राजा को अपने जेठे पुत्र को राज दे करके और वह मानो देखो, अपने मे सन्यस्तव ब्रह्म का चिन्तन करने के लिए क्योंकि तपस्या का बल उसका समाप्त हो गया है। मानो वह बल उसे प्राप्त हो जाएं। जैसा मुनिवरों! मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! मुझे वह काल स्मरण है जब मुनिवरों! देखो, राम लंका को विजय करने के पश्चात जब मुनिवरों! देखो, अपनी अयोध्या में उनका वास हुआ तो उन्होंने जब मुनिवरों! देखो, अयोध्या में आ गएं तो मुनिवरों! अपनी सभा की जिसमें महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज महर्षि विश्वामित्र और महाराज शिव और मुनिवरों! देखो, और भी नाना ऋषिवर जैसे प्रवाहण, शिलभ और दालभ्य मेरे पुत्रों! देखो, जैसे महर्षि श्वेतकेतु और भारद्वाज और भी नाना देखो, ऋषि-मुनियों की सभा हुई और सभा में मुनिवरों! देखो, महाराजा भरत ने यह कहा क्या हे भगवन! देखो, अपने राष्ट्र को लीजिए। आप इसको भोगतव्यं ब्रह्वा कृतं आप इसको भोगिए प्रभु! उन्होंने कहा कि राष्ट्र भोगने की वस्तु नही होती। राष्ट्र तो मानो देखो, तपस्या की वस्तु होती है राजा तो तपस्वी होता है, वह राजा मानो देखो, राष्ट्र भोगने वालों के लिए राष्ट्र तो कर्तव्यवाद के लिए होता है, मुनिवरों! देखो, महात्मा के सदृश्य थे, महाराजा भरत, उन्होंने कहा-प्रभु! इसको आप अपने का अपनाईए और राष्ट्र व्यवस्था को ऊँचा बनाईए। मेरे प्यारे! देखो, भगवान राम ने ये कहा कि भगवन! हे विधाता! आपको प्रतीत है क्या मानो देखो, मैंने लंका को विजय किया है, और लंका को मैंने किसलिए विजय किया है? यह भी सर्वत्र जानते हैं क्योंकि मेरे गुरु का मानो देखो, ये महान आदेश था और वह आदेश यह था कि जो मानो समस्त पृथ्वी मण्डल पर कर्तव्य विहीतना में परिणत हो गया हैं ऐसे राजा को कर्तव्यवाद की वेदी पर लाया जाएं तो मैं उसी आधार पर मानो देखो, मैं आज्ञा का पालन किया, परन्तु मुझे कहीं रजोगुण आया है, कहीं देखो, तमोगुण आया है कहीं मानो देखो, वह अपमान भी हुआ है, और कहीं मानो देखो, मुझे निराश हो गया हूँ। मानो देखो, वह जो निराश वह मेरे अन्तःकरण में उन संस्कारों की प्रतिभा मानो मेरे अन्तःकरण में विद्यमान है। इसीलिए मेरी इच्छा यह है कि हे महात्मन्! हे वशिष्ठ मुनि महाराज! आप ब्रह्मवेत्ता हैं, और ब्रह्मनिष्ठ कहलाते हैं। मानो ऐसी मेरी प्यारी माता अरूणधती है जिन्होनें महान तप किया हैं और तपस्वी बन करके देखो, यह जानती हैं और देखो, ऐसे महात्मा विश्वामित्र हैं, और महाराज शिव तो हिमालय की आभा में मानो देखो, उनके विचार कितने ऊर्ध्वा में गमन करते रहते हैं। मैं यह चाहता हूँ मेरी यह मनोनीत एक इच्छा है कि मैं देखो, तपस्या में परिणत होना चाहता हूँ। जब तक मैं तपस्वी नही बनूंगा क्योंकि तपने से ही

राष्ट्र का उसे अधिकार प्राप्त होता है। क्योंकि राष्ट्र में कहीं रजोगुण आता है, तो कहीं तमोगुण आता है, और उस रजोगुण तमोगुण को मानो तपस्या का बल ही ऐसा है, जो मानो देखो, उनको सहन कर सकता है उसमें सहन शक्ति आ जाती है। और यदि राजा के साथ में तपस्या नही है रजोगुण आ गया है तमोगुण आ गया हैं तो वह राजा राजा नही रहता उसमें ममतव की भावना उत्पन्न हो जाती है।

तो मुनिवरों! देखो, जब राम ने यह कहा कि मैं तपस्या करने के लिए मानो उद्यत हो रहा हूँ, मैं तपस्या करना चाहता हूँ क्योंकि ये जो अयोध्या पुरी है इसमें जो भी राजा हुआ हैं वह तपस्वी हुआ है और जो भी राजा हुआ है। वह ब्रह्मवेत्ता हुआ हैं। क्योंकि यहाँ देखो, मेरे जो वंशलज हुए हैं मेरे जो पिता दशरथ हैं वह दसो इन्द्रियों को विजय करने वाले थे वह जब राजा बने और उसके पश्चात मेरे जो महापिता थे अज वह भी महान तपस्वी थे और महात्मा रघु तो समय-समय पर सर्वत्र देखो, जितना कोष में द्रव्य होता था, उसको सबको हूत करते रहे हैं। याग में परिणत करते रहे हैं, वह मानो कईं समय याग उन्होंने ऐसे किए हैं जो केवल पृथ्वी के पात्र रह गएं हैं वह देखो, खनिज के पात्र भी नही रहे हैं, इसी प्रकार मेरे जो महापिता दलीप जी है, वह गो धन का याग करते रहे हैं, वह कैसे याग करते रहे हैं? कि कामधेनु के और नन्दिनी के पीछे मानो वह तपस्वी बने रहे हैं, इसी प्रकार वह राष्ट्र का समय-समय पर अधिकारी बनने से पूर्व परन्तु राष्ट्र राज समाज कर रहा है। अपने कर्तव्य का पालन कर रहा है परन्तु राजा एक गऊ के पीछे अपने जीवन को व्यतीत कर रहे हैं। वाह रे मेरे राजन! तू कैसा पवित्र बन सकता है, कैसा उसका व्यवहार बन सकता है, क्या मानो देखो, कामधेनु नन्दिनी की सेवा करने वाले देखो, जो इस प्रकार यह पशुओं की भी रक्षा करने वाला राजा होता है, सिंहराज भी निर्द्वन्द्व हो करके अपने राष्ट्र मे विचरण कर सकता हैं, अरे, उसको राष्ट्र की आवश्यकता नही देखो, राष्ट्र चल रहा है शान्ति युक्त हो रहा है परन्तु देखो, उसको कोई भी अपनाने वाला नही हैं कोई भी रक्तोमयी क्रान्ति लाने वाला समाज उत्पन्न नही होता। देखो, जब राजा बुद्धिमान होता है, और ब्रह्मवेत्ता और तपस्वी होता है, तो उस राजा के यहाँ मानो देखो, वह पशुओं की सेवा देखो, वह गो धन की सेवा करते रहते हैं और गो धन की जो सेवा करता है वह राजा पवित्र कहलाता हैं। गो धन क्या मानो देखो, दुग्ध देने वाला पशु वह गो धन कहलाता है। कोई भी पशु हो जब राजा के राष्ट्र में प्रत्येक प्राणी की रक्षा होती हो वह मानो देखो, राजा न्यायाधीश अपने में न्यायाधीश देखो, समाज बन जाता है। अपने में प्राणी मात्र बन जाता है। तो मैं इस सम्बन्ध में विशेषता में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ, भगवान राम ने कहा है कि मेरी जो पिता महापिता हुए हैं, मानो देखो, जो स्वप्न में मेरे और भी महापिता हुए हैं। जो हरिश्चन्द्र में देखो, यह स्वप्न में राज महात्माओं को प्रदान कर रहे हैं वह कैसा तप है? वह ज्ञानियों का तप है। क्योंकि ज्ञानी ही अपनी प्रवृत्तियों का विभाजन कर सकता है। इसी प्रकार देखो, मेरे महापिता देखो, असमंजस हुए है देखो, महाराजा देखो, कृतं भू वर्णानं ब्रह्वे देखो, राजा सगर हुए है यह प्रणाली चली आ रही हैं। इन प्रणालियों में सब बुद्धिमान विचित्र और तपस्वी हुए हैं जब यह तपस्वी हुए है। तो मुझे भी तप करना चाहिए मैं ऋषि-मुनियों यह आज्ञा चाहता हूँ कि मुझे आदेश दें कि मैं वन में चला जाऊं। और मैं तपस्वी बनू मेरे भरत विधाता राष्ट्र का पालन करें या न करें परन्तु मुझे तपस्वी अवश्य बनना है मैं जब तक तपस्या नही करूंगा यह राष्ट्र कदापि ऊँचा नही बनेगा। क्योंकि देखो, इसको अयोध्या को जो राष्ट्र को जो निर्माण किया है, अयोध्या का निर्माण करने वाले देखो, अद्वा मनु थे और मनु ने इसका निर्माण किया देखो, लाखों वंशलज मानो वंश देखो, मनु वंश समाप्त हो गएं है। वह सब इसी प्रकार के क्या तपस्या के पश्चात तपस्या के बल से राष्ट्र को करते चले जाएं जेठे पुत्र को राष्ट्रवेत्ता बना करके राष्ट्र दे करके वह चले गएं जब पिता त्याग करता है, तो मानो देखो, पुत्र भी त्यागी और तपस्वी होता हैं। जब माता तपस्वी होती है, तो पुत्र और पुत्री भी तपस्या में परिणत हो जाते हैं। तो मुनिवरों! देखो, जब महाराजा देखो, राम

ने भगवान राम ने यह वाक् प्रगट किया तो ऋषि-मुनि अपने में मौन हो गएं और यह कहा कि धन्य है प्रभु! तो मेरे प्यारे! देखो, महात्मा वशिष्ठ ने कहा क्या तुम्हारा वाक् यथार्थ है, तुम मानो जानते हो, अपने जीवन की प्रतिक्रिया को। क्योंकि राष्ट्र राजा के लिए प्रथम नही है राजा के लिए प्रथम कर्तव्यवाद और देखो, उसका तप जब तक वह तपस्या नही करेगा वह ब्रह्मज्ञानी नही होगा और जब ज्ञानी नही होगा तो अपना स्वतः वह निर्णय नही दे सकता वह निर्णय केवल मानो देखो, वह सम्ब्रीहि कहलाता हैं इसी प्रकार विचार वेत्ता मुनिवरों! यह कहते है क्या राम ने बेटा! देखो, साहित्यकार यह कहते हैं कि राम ने तपस्या के लिए कहा तो महाराजा शिव का यह निर्णय हो गया कि तपस्या करनी चाहिए। मानो देखो, जब उन्होंने कहा कि तपस्यं ब्रह्मे देखो, महाराजा भरत ने कहा हे प्रभु! यह तपस्या करने चले जाएंगें तो मैं भी तपस्या करने चला जाऊंगा। उन्होनें कहा हे राम! मैं आत्मा की पुकार को मैं किसी काल मे देखो, मैं उसको नष्ट नही करूंगा। राम ने भरत से कहा हे भरत! यदि तुम्हारी तपस्या की इच्छा है तो तुम भी तपस्या करने चले जाओ और मेरी आत्मा की यह प्रतिभा है क्या मैं भी तरंगेंवादी बनूं, तो मैं भी तपस्या में परिणत हो जाऊं। यह राष्ट्र मानो देखो, अपनी आभा में राष्ट्र कोई राष्ट्र नही होता हैं, तपस्वी प्राणियों के आगे राष्ट्र मानो देखो, एक गौण बन जाता हैं। गृह मे जब माता-पिता मानो देखो, महान बन जाते हैं। तो बाल्य बालिका मानो देखो, अपने में देखो, गृह को सुचारू रूप को परिणत करने लगते हैं। मेरे प्यारे! यह महापुरूषों के जो अनुपम विचार है, जब मुझे यह स्मरण आने लगते हैं तो बेटा! हृदय गद्-गद् हो जाता हैं। और मैं यह कहता रहता हूँ कि देखो, राष्ट्र और अनुशासन अपने में ही अपनेपन को ही ऊँचा बनाता रहता है। यह अनुशासन जो अपनेपन में ऊँचा बन जाता है। तो यह संसार उसी से ऊँचा बन जाता है।

तो आओ, मुनिवरों! देखो, विचार-विनिमय क्या राम ने अन्त में यही कहा है कि हे भगवन! मुझे तो आप जानते हैं मैं बारह वर्ष माता-पिता की आज्ञा का पालन करने के लिए मैं मानो भयंकर वन में रहा हूँ, और मैं लंका में रावण को विजय किया और विजय बेटा! देखो, अमृतं मैंने देखो, रजोगुण में परिणत हुआ हूँ। मुझे कई समय रजोगुण छाया है। परन्तु बाह्य जगत में अपनी वाणी से मधुर-मधुर उच्चारण करता रहा हूँ। परन्तु अन्तःकरण में देखो, वह रजोगुण छाया हुआ है। इसी प्रकार देखो, मेरे अन्तःकरण में यह संस्कार है, मैं उन संस्कारों को जब तक तपस्या रूपी अग्नि से मैं जब तक उन्हें दग्ध नही कर लूंगा, इन्हें भोगतव्य जब तक मैं इन्हें भोग नहीं लूंगा, जब तक मैं राष्ट्र का अधिकारी नही हूँगा। राम ने जब यह कहा तो मुनिवरों! वशिष्ठ ने और महाराजा शिव और मुनिवरों! देखो, अंगिरस गोत्रीय कुछ ऋषि थे जाओ राम! तुम तपस्या करने चले जाओ, मेरे प्यारे! देखो, तपस्या भू वर्णनं मुनिवरों! देखो, तपस्या के लिए, उन्होंने अपनी राष्ट्र की स्थली को त्याग दिया। और त्यागने के पश्चात मुनिवरों! देखो, वह भयंकर वन में चले गएं और भयंकर वनों में जा करके वह तपस्या करने लगे राम ने यह विचारा कि वास्तव में मैं तपस्या करूं तो मुझे तो तपस्या का ये ज्ञान नही है तप किसे कहते हैं? क्योंकि देखो, मैं तो इतना ही जानता हूँ क्या इन्द्रियों को संयम में लाने का नाम तप है, अब मैं कैसे इन्द्रियों को संयम में लाऊं ये मैंने अब तक नही जाना जो बाल्यकाल में मैंने गुरु के चरणों में जाना है, वह भी मानो देखो, मैंने राष्ट्रीय विचारधाराओं में और देखो, रजोगुण तमोगुण की धाराओं में भी, मेरे से ओझल हो गया है, अब मैं मानो किसी उससे देखो, वृत्ते भगवान राम ने वहाँ से ये विचार-विनिमय करते हुए, मेरे प्यारे! देखो, मित्रा ऋषि के द्वार पर पंहुचे, जहाँ महर्षि लोमश मुनि महाराज और मित्रा और कागभुषुण्ड जी मानो ये सब तीनों ऋषि विद्यमान रहते थे यह अपने में विचार-विनिमय करते रहते थे क्या मानो अपनी इन्द्रियों के विषयों में परिणत हो जाना चाहिए। क्योंकि बिना इन्द्रियों के विषय के विज्ञान को जाने बिना मानव तपस्या में परिणत नही हो सकता। तो मानो देखो, उस समय राम ने कहा-प्रभु! मुझे निर्णय कराईए, मैं मानो तपस्या करने के लिए आया हूँ कि तपश्चर बनना चाहता हूँ,

याग और तपस्या

मेरे पुत्रों! उन्होंने कहा बहुत प्रिय विराजो, वह विराजमान हो गएं, महर्षि लोमश मुनि ने ये कहा क्या तुम मानो देखो, अन्न को पवित्र बनाओ, उन्होंने कहा-प्रभु! मैं अन्न को कैसे पवित्र बनाऊं? उन्होने कहा क्या तुम मानो देखो, जो कणाक है, अन्नाद है, जिसे पृथ्वी में से एकत्रित करो, और एकत्रित करके जल में मानो देखो, वृत करते हुए उसे प्रातःकालीन खरल करने के पश्चात अग्नि में तपा करके उसका पान करो क्योंकि यह अन्नतं ब्रह्मे देखो, परिणत होना बहुत अनिवार्य है। और जब तक तुम्हारा अन्न पवित्र नही होगा तो मन की धारा मन में जो अन्तःकरण संस्कार विद्यमान हो गएं हैं। तो मानो देखो, आहार के द्वारा भोगतव्य वादि बनो। तो राम ने वही किया मुनिवरों! वह किसी काल में देखो, जब उन्होंने लगभग इस प्रकार के अन्न को ग्रहण किया तो उसे अपनी अन्तरात्मा से ज्ञान होने लगा, मेरे प्यारे! देखो, जब उद्बुद्ध हो जाता है तो वह वायु का सेवन करने लगता है, वायु की खेचरी मुद्रा से मानो वह जल को अपने में सिंचन कर लेते थे, और मानो देखो, व्रेत देखो, संकल्प प्राण के द्वारा प्राणायाम करते हुए वह देखो, पोषक तत्त्वों को वायुमण्डल से अपने में सिंचन करने लगते। तो मेरे प्यारे! देखो, वह इस प्रकार का वह तप करने लगे और तप करके उनका देखो, मनोनीत एक हृदयग्राही बन गया।

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है इस प्रकार भगवान राम ने बारह वर्ष का तप किया, और बारह वर्ष के तप करने के पश्चात मेरे प्यारे! पुनः जो प्रतिभा उनकी नष्ट हो गई थी, वह प्रतिभा पुनः से जागरूक हो गई, और जागरूक होने के पश्चात उन्होंने महर्षि लोमश मुनि और कागभुषुण्ड जी से वह शिक्षा पाते रहे और वह जहाँ भी उन्हें कही भी देखो, कही व्रता होता तो वहीं देखो, प्रश्न कर देते थे एक समय वह बेटा! वह खेचरी मुद्रा कर रहे थे और खेचरी मुद्रा में मुनिवरों! में देखो, कहीं शीतल कहीं मुनिवरों! अपने में ओझल हो गया उन्होंने प्रश्न किया उन्होंने जब खेचरी मुद्रा प्राणी करता है तो खेचरी मुद्रा के करने से अग्नि के परमाणु उसके ऊपर आक्रमण कर देते हैं। वह उसके लिए देखो, वही ओझल हो जाता हैं। इसी प्रकार एक दूसरा परमाणु एक दूसरे पर आक्रमण करता रहता है, और आक्रमण की प्रतिक्रिया को तुम आत्मा के आत्म भाव से तुम उसे शान्त कर सकते हो। इस प्रकार मुनिवरों! देखो, उन्होंने विचारधाराएं जब प्रगट की तो राम बड़े प्रसन्न हुए, राम ने मेरे प्यारे! देखो, अपनी लेखनी में लेखनीबद्ध करते हुए यह कहा है कि राजा के राष्ट्र में विवेकी पुरूष होने चाहिए। और देखो, वेद के पाण्डितव होने चाहिए। क्योंकि वह राष्ट्र जब भी ऊँचा बनता है। तो बुद्धिमान पुरूषों से ऊँचा बनेगा। विवेकी पुरूषों से ऊँचा बनेगा। अन्यथा राष्ट्र में जब ब्रह्मवेत्ता पुरूष नही रहेंगे तपस्वी नहीं रहेंगें तो उस समय राष्ट्र देखो, अपंग बन करके वह नष्ट हो जाएगा। ऐसा मुनिवरों! देखो, लेखनियाँ उनके विचारों की हमें प्रायः प्राप्त होती रहती है।

तो आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नही आया हूँ, मैं व्याख्याता नही हूँ, बेटा! तुम्हें विचारों का एक परिचय देने के लिए आया हूँ क्या मुनिवरों! देखो, मानव को अपने व्यवहार और तपस्या के द्वारा ऊँचा बनना चाहिए। और वही मुनिवरों! देखो, व्यवहार आध्यात्मिकवाद में परिणत हो जाता है, या न्यों कहिए की आत्मा का भाव, तपस्या में और तपस्या का भाव क्रिया में और क्रिया का भाव मुनिवरों! देखो, बाह्य जगत को ऊँचा बनाता है। ये है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हे शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा, जो राम ने बेटा! तपस्या के माध्यम से जिन वस्त्रों को प्राप्त किया वह तपस्या की चर्चाएं तो कल प्रगट करूंगा। जो ऋषि-मुनियों से वह प्रश्न करते रहते थे और ऋषि-मुनि उनका उत्तर देते रहते थे तो यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं माहं गायन्त्वा रथं आ पा ओ३म् तानु गन्तर्णश्चमा आ पा रेवाः गायन्त्वा माहं आ पा ओ३म् यश्शचमं ब्रौ गा ता रथं

याग और तपस्या

पृष्ठ १०६ से १८३

१३ पूजन २९-०९-१९९०

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना जो महान देव हैं और वह जो दुर्गणों को नष्ट करने वाला है मानो वह हमारे ममतव को धारण अथवा उसी में वह रत्त रहता है, तो वह दुर्गणों को नष्ट करने वाला हैं। इसीलिए उस परमपिता परमात्मा का दुर्गणां दुर्गश्चतं दुर्गणा प्रह्वा व्रत्यं मानो उसे दुर्गा माँ के रूप से वर्णित किया जाता हैं। जो हमारे दुर्गणों को दृष्टिपात कर रहा है, वही मानो देखो, हमारे अन्तर्हृदयों में, विद्यमान रहता हैं, हम वह जो हमारे अन्तर्हृदयों में विद्यमान हैं, वह हमारा उपास्य देव है, और प्रायः हमें उसी की उपासना करनी चाहिए, वह देवता हैं। तो मुनिवरों! जहाँ हमारे अन्तर्हृदय में कालिमा है जो मानो हम दूसरों के प्रति हम अमृतां घृणा की दृष्टि से हम निहारते रहते हैं हमारी मानो देखो, वह काली के रूप में वर्णित रहती है। तो हम उसे नष्ट करने के लिए सदैव तपस्या में परिणत हो जाएं। क्योंकि बिना तपस्या के मानव का अन्तर्हृदय पवित्र नही बनता है, क्योंकि वह मन की एक प्रतिभा है, मन का एक विचित्र क्षेत्र कहलाता हैं, जिसमे मानो ज्ञान और विज्ञान का अनुपम भण्डार रहता है। तो वह जो हृदय है वह बिना तपस्या के क्योकि इसका जो अंग संग रहने वाला जो जगत है। जो मानो इसका कुटुम्ब के रूप में वर्णित रहता हैं। हमारा जब तक वह नष्ट नही होता, सु समिधा के रूप में जब तक उपलब्ध नही होता जब तक हमारा अन्तर्हृदय पवित्र नही होता। और वह बनता जब ही है, जबकि हमारे क्रियाकलाप पवित्र रहते हैं। और उन क्रियाकलापों में मानो एक तपस्या का जो एक स्वरूप है वह बड़ा विचित्रतव माना गया हैं। हमारे यूं तो वैदिक साहित्य में बहुत से मन्त्र आते हैं, और तपस्या के लिए मानो वह हमें बाध्य करते रहते हैं, माता को भी कहते हैं कि तू तपस्वी बन, पुत्री को भी कहते है, कि तू तपस्या में परिणत हो, ब्रह्मचारी को कहते हैं तू ब्रह्मवर्चोसि तपस्या में परिणत हो, परन्तु जितना भी ये जगत है यह तपों की उपासना में लगा हुआ हैं। और जड़ और चेतनता मे जब हम दृष्टिपात करते हैं, तो सर्वत्र मानो एक तपोंमयी दृष्टिपात आने लगता है।

तो आओ, मुनिवरों! देखो, हम प्रायः अपने को तपस्या में ले जाएं, हमारा वेद का मन्त्र कहता है परन्तु ऋषि यह कहते हैं कि वेदमन्त्र तपस्या के लिए तो कह रहा हैं, परन्तु यह तप है क्या, जिसके ऊपर मानो वेदमन्त्र इतना बल देता हैं। तो मुनिवरों! देखो, वेद का ऋषि कहता है तपं बुहु वर्णसुतं अभ्यां देवं धनं ब्रीहि सूर्या यह शिक्षा यदि तुम्हें प्राप्त करनी है तो यह सूर्य से प्राप्त करनी चाहिए। जो तप की महिमा का वर्णन कर रहा हैं। यह शिक्षा मानो में चन्द्रमा से लेनी चाहिए। जो हमे तप के लिए बाध्य कर रहा है। यह प्रत्येक लोक-लोकान्तर जो तारामण्डलों के रूप में है। यह उनसे हमें शिक्षा प्राप्त होती है, तो मेरे प्यारे! देखो, सूर्य कैसे हमारा शिक्षक हैं, वह सूर्य जब तपता है, तो तपने के पश्चात मुनिवरों! देखो, यह नाना प्रकार की ऊर्ज्वा देता रहता हैं। और वह ऊर्ज्वा भिन्न-भिन्न रूपों में रमण करती रहती हैं। मानो इसी ऊर्ज्वा को लेने वाला विज्ञानवेत्ता बन जाता हैं। इसी ऊर्ज्वा को आयुर्वेदाचार्य मानो वैद्यराज बन जाते हैं इसी ऊर्ज्वा को लेने वाली वह विज्ञानवेत्ता बन जाते हैं, इसी ऊर्ज्वा को लेने वाली मेरी प्यारी माता अपने मे पुत्रवान बनती है। और इसी ऊर्ज्वा को लेने वाला ब्रह्मचारी अपने में ब्रह्मवर्चोसी बन जाता हैं। तो मानो देखो, यह ऊर्ज्वा है इसी को हम ग्रहण करते रहते हैं।

तो इसका अभिप्रायः यह हुआ कि तप क्या हैं? क्या जो अपनी प्रतिभा इतनी विचित्र बना लेता है। क्या प्रत्येक इन्द्रियों के ऊपर जितना उसका संयम जितनी दूर दृष्टि हो जाती है, और दूर दृष्टि में वह रमण करने

लगता हैं तो मानो देखो, वह एक-एक इन्द्रिय में अपना-अपना गुण देखो, जब व्याख्यान करता हैं। उसका बखान करता रहता है। तो मेरे प्यारे! इन्द्रियों की जो अनुपम धाराएं है। उनको जानना और जानने के पश्चात उनको क्रिया में लाने का नाम तप कहा जाता हैं। तो इसीलिए मानव को तपस्या के लिए, आचार्यों ने बड़ा बल दिया हैं वेदमन्त्र भी अपने में बड़ा बल देता है, और कहता है कि हे मानव! तू तपस्या में परिणत हो जा। हे प्राणी मात्र! मानो ये तपोमयी दृष्टिपात आने लगता है, बेटा! आज मैं तप के ऊपर तुम्हें कुछ विशेष विवेचना देना चाहता हूँ, बेटा! आज का दिवस है, जो प्रकृति मण्डल में गमन कर रहा है, सूर्य की नाना प्रकार की किरणें मानव को बाध्य कर रही हैं, चन्द्रमा की कान्तियां मानव को बाध्य कर रही है, क्या मानव देखो, दसों इन्द्रियों को विजय करने वाला मानव वह दसं ब्रत कहलाता हैं। तो इसीलिए हमें प्रत्येक इन्द्रियों के ऊपर संयम करते हुए, और इन्द्रियों के विषय को जानने वाला और इन्द्रियों का साकल्य बनाना और साकल्य बना करके इन्द्रियों का साकल्य बना करके विज्ञान के युग में, अथवा आध्यात्मिक स्वरूप में अपने को दृष्टिपात करने वाला बन जाता हैं। तो वह प्रायः तपस्या में और वह अपने में मानो देखो, दिवसं ब्रह्म वह दसों इन्द्रियों का स्वामीतव का निर्माण करता हैं, और वह अपनेपन में स्वामीतव को जागरूक करता रहता हैं। यह मानो यह ऐसा दिवस है कि लक्ष्मी वाले लक्ष्मी का पूजन करते हैं, और छात्रवत मानो अपनी छात्र प्रवृत्ति का पूजन करते हैं, और यही क्षत्रिय है मानो जो अपनी अस्त्रों-शस्त्रों का पूजन करते है। और अस्त्रों-शस्त्रों को क्रिया में लाने का प्रयास करते हैं। मानो देखो, सब अपने-अपने गृह ब्राह्मणजन अपने कर्मकाण्ड में मानो परिणत हो करके कर्मकाण्ड की मानो देखो, पोथियों को ले कर अपने कर्मकाण्ड का शोधन करते रहते हैं। वह उसका पूजन करते हैं। तो इसी प्रकार मानव को विचारना चाहिए। कि हम यह जो मानो आज का दिवस है यह सृष्टि के प्रारम्भ से गतिवान हो रहा है। और यह मानवीय मस्तिष्कों में अपनी-अपनी स्थलियों को लिए हुए गमन करता रहता है। क्षत्रियजन कहते हैं कि हम अपने अस्त्रों-शस्त्रों का मानो देखो, आज के दिवस से अभ्यास करते हैं। अभ्यस्त करने लगते हैं। तो मुनिवरों! देखो, यह जो दिवस है, जहाँ मुनिवरों! देखो, त्रेता के काल में मैं तुम्हें ले जाना चाहूँगा। यह वह दिवस है जब महर्षि विश्वामित्र ने सबसे प्रथम मानो देखो, धनुर्याग का आयोजन किया अब हम याग में मानो देखो, वह ब्रह्मचारियों को क्षत्रिय बल को जब उन्होनें क्षत्रिय बल को एकतित्र करने के लिए उन्होंने अस्त्रों-शस्त्रों का अभ्यास प्रारम्भ कराया। यह वह दिवस है जिसमें अभ्यास कराया जाता है, और यन्त्रों का अभ्यस्त कराया जाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ भी यह वही दिवस है जहाँ देखो, ब्रह्मचारी कवन्धि ने एक अग्ने अस्त्र का निर्माण किया था और वह देखो, अग्ने अस्त्र का निर्माण करके जब उनका अभ्यास कराया गया तो वह यन्त्र इतना शक्तिशाली बन करके रहा क्या वह मानो देखो, अग्नि का एक नृत्त बन गया था। अग्नि काण्ड हो गएं थे तो इसी प्रकार वह दिवस अमृतं मानो अमृता कहलाता है जो दशम ब्रह्मे प्रथम एक दिवस है इस दिवस का अपने में बड़ा महत्व माना गया हैं। मानो यह वह दिवस कहलाता है जिस दिवस में मेरे पुत्रों! देखो, लक्ष्मी का पूजन किया जाता हैं। लक्ष्मी गृह में आने के लिए तत्पर हो जाती है। और देखो, कृषक के यहाँ इस दिवस में देखो, नवीन अन्न देखो, उसके गृह में प्रवेश करता है उसके गृह में प्रवेश करता है तो उसका वह पूजन करता है, गृह में लाना मानो देखो, खलियान से गृह में लाना ही यह उसका पूजन कहलाता हैं। मानो देखो, वह जो दिवस है जहाँ मानव दसों इन्द्रियों के ऊपर सयंम करता हुआ देखो, उसका साकल्य बना करके ही देखो, वह ब्रह्म में परिणत होने के लिए तत्पर होता हैं। वह ब्रह्मग्निवादी बन जाता है।

तो विचार आता रहता है ये वह दिवस है जहाँ मुनिवरों! देखो, भगवान राम ने, रावण का वध किया था मानो रावण अन्तिम श्वास इसी दिवस मानो देखो, अमरावती को प्राप्त हो गया था। मेरे पुत्रों! देखो, यह वह दिवस

याग और तपस्या

जिस दिवस में देखो, अमृतां विजय का अमृत कर दिया जाता है। यहाँ विजय याग का अन्तिम चरण समाप्त हो जाता हैं। तो विचार आता रहता है कि हमें नाना प्रकार के यागों में जहाँ परिणत होना चाहिए। वहाँ एक विजय याग भी होना चाहिए। विजय याग उसे कहते हैं, जहाँ अपने को विजय कर लेता हैं। और वह याग कहते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, यागां ब्रह्वा कृतं देवाः याग कहते हैं हूत को, याग कहते है अग्नि और साकल्य के दोनों का समन्वय करने का नाम याग है। याग कहते हैं, मुनिवरों! देखो, यहाँ माता-पिताओं के जब अन्तर्हृदयों में यह पिपासा जागरूक होती है। कि हम याग करना चाहते हैं। तो वह मानो देखो, माता पुत्रेष्टि याग करने के लिए तत्पर हो जाती हैं। विचार आता रहता है यह याग अपने मे बड़ा विचित्र एक शब्द है, जितने भी यहाँ मानवीय मानवता से गुथे हुए विचार है, मानवता से गुथे हुए जितने क्रियाकलाप हैं। उन सर्वत्र का नाम मुनिवरों! देखो, एक याग के रूप में वर्णित किया गया हैं। इसीलिए यागां भू वर्णनं यागां रूद्र भागां ब्रहे मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मचारी आज के दिवस याग करना प्रारम्भ करता है। यह गार्हपथ्य नाम की अग्नि में अपने को हूत कर देता है। मानो हूत का अभिप्रायः यह है कि अपने को समर्पित कर देता हैं, और समर्पित का अभिप्रायः यह है कि जितनी भी विद्याएं है, वह उनको सबको अपने मन, कर्म, वचन से मुनिवरों! इनका अध्ययन प्रारम्भ करने लगता है। तो मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेषता में नही ले जा रहा हूँ, केवल विचार यह है कि यह जो हमारा याग है, यह अपने में मानो यागां भू वर्णनं ब्रह्मा लोकां हिरण्यं दिव्यां गतं ब्रह्मा मेरे पुत्रों! देखो, यह वह याग है जब महात्मा विश्वामित्र ने वशिष्ठं ब्रह्मे आज्ञा पा करके कहा कि मैं याग करना चाहता हूँ। तो उन्होंने धनुर्याग का आयोजन किया और धनुर्याग किसे कहते हैं? जहाँ अस्त्रों-शस्त्रों का अभ्यास कराया जाता हैं। जहाँ शिक्षा दी जाती है मेरे पुत्रों! देखो, उसी का नाम याग है। मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन कराते हुए कहा है मैं इन वाक्यों की देखो, पुनरूक्तियां हम करते रहते हैं क्या महात्मा विश्वामित्र मेरे प्यारे! देखो, राजकुमारों सहित एक सौ पिचासी ब्रह्मचारियों को धनुर्याग का वह मानो देखो, अभ्यास कराते रहते थे, वह अभ्यस्त होना अस्त्रों-शस्त्रों का निर्माण करना और अस्त्रों-शस्त्रों का प्रहार करना और अस्त्रों-शस्त्रों का जब अभ्यास कराया जाता है, तो मेरे प्यारे! देखो, वह महानता में परिणत होता है विचार आता रहता है बेटा! देखो, उनके यहाँ, प्रातःकालीन ब्रह्मचारी याग करते थे, और याग करने के पश्चात, उसके पश्चात उनकी शिक्षा प्रारम्भ होती, वह शिक्षा क्या देते थे कि परमाणुओं का मिलान करना, और मानो देखो, अग्नितव को जानना और गुरूतव को उसमें मिश्रण करना और तरलतव की उसमें पुट लगाना, मेरे प्यारे! ये तीन परमाणु कहलाते थे। और उनको देखो, वायु में गति देना, और अवकाश में भ्रमण करना, इस प्रकार की वह शिक्षा प्रायः प्रदान करते रहते थे। तो मेरे प्यारे! देखो, जब विचार आता रहता है आज मैं अपने विचारों से वंचित हो गया हूँ, विचार केवल ये कि आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कहता है, आज के दिवस का हमें स्मरण कराता है आज का दिवस वह अमृता दिवस कहलाता हैं। जहाँ मुनिवरों! देखो, रावण को विजय करने के पश्चात देखो, राम अपने में देखो, वह अवऋण हो गएं थे, और वह मुनिवरों! देखो, अवऋण हो करके, सम्भव ब्रह्वा अपने में जब मानव उतीर्ण हो जाता है, तो वह बड़ा प्रसन्न होता हैं। इसी प्रकार भगवान राम आज उतीर्ण हो गएं, लंका को विजय करने के पश्चात, अपने में मानो कक्ष में आनन्द का श्वास ले रहे थे, और अपने में गमन कर रहे थे विचारों में रत्त हो रहे थे, तो इसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो, ये दिवस वह एक दिवस देखो, जो महात्मा देखो, विश्वामित्र मुनिवरों! ब्रह्मचारियों के सहित देखो, शिक्षा देना प्रारम्भ कर रहे थे, और वह महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज की आज्ञा से मुनिवरों! देखो, वह शिक्षा पान कर रहे थे, अमृतां भू वर्णनं ब्रह्मा मेरे प्यारे! देखो, विद्यालय में जब भी धनुर्याग का अभ्यास कराया जाता है। तो वहाँ ब्रह्मचारी होता है और मुनिवरों! देखो, वह अस्त्रों-शस्त्रों का अभ्यास होता है, तो मुनिवरों! देखो, वह धर्मज्ञ धर्म को और कर्तव्यवाद की उन्हें दीक्षा प्रदान की जाती हैं।

याग और तपस्या

मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आता रहता हैं, क्या महात्मा विश्वामित्र जब क्या देखो, ब्रह्मचारियों का एक वर्ष सम्पन्न होता सम्पन्न होता, तो ये वह दिवस है जो मेरे प्यारे! महात्मा विश्वामित्र दसो सम्भवा इस दिवस में मुनिवरों! देखो, उनका दीक्षान्त उपदेश होता रहता। देखो, दीक्षा का अभिप्रायः ये है क्या उन ब्रह्मचारियों को मुनिवरों! देखो, उनके अस्त्रों-शस्त्रों का जो क्रियाकलाप था, उनका जो कौतुक था उसे वह मानो वह दृष्टिपात कराते रहते, उन्हें मेरे प्यारे! देखो, एक दिवस अमृतां देखो, माता अरूणधती और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज और महर्षि भारद्वाज महर्षि कालेत्वर ऋषि महाराज, मेरे प्यारे! देखो, ऋषि-मुनियों का एक समाज एकत्रित हुआ, और उन्होंने यह कहा विश्वामित्र जी ने क्या भगवन! मेरे ब्रह्मचारियों को दीक्षान्त अपना उपदेश दीजिए, मेरे प्यारे! देखो, वह ब्रह्मणा व्रतं देवत्वां तो वह जब एकत्रित हुए तो सबसे प्रथम माता अरूणधती से कहा कि हे माते! तुम मानो देखो, इन ब्रह्मचारियों को देखो, दीक्षान्त देखो, अपना उपदेश दे दीजिए, जो आपके मण वृतं जो प्राणा भू वर्णा सुतः मेरे पुत्रों! देखो, माता अरूणधती, जब उपस्थित हुई तो माता अरूणधती ने कहा हे ब्रह्मचारियों! तुमने अब तक मानो प्राप्त किया है, जो तुमने अब तक दृष्टिपात किया हैं तुम अस्त्रों-शस्त्रों की विद्या का तुम अभ्यास कर रहे हो, और तुम अभ्यस्त हो रहे हो मानो यह हमारे बड़े राष्ट्र का सौभाग्य हैं। और राष्ट्र का गौरव कहलाता है। क्योंकि जिस राजा के राष्ट्र में ब्रह्मवेत्ता मानो देखो, विज्ञानवेत्ता और विज्ञान के ब्रह्मचारियों को जो दीक्षा देता हैं, शिक्षा देता है, उस राजा का बड़ा सौभाग्य और राष्ट्र का सौभाग्य माना गया हैं। मैं अपने में राष्ट्र का सौभाग्य स्वीकार करते हुए मानो देखो, यह उन्होंने उपदेश दिया मैं अपने उदगार देना चाहती हूँ और उदगार केवल यही है क्या तुम्हारा जो मानवीय चिन्तन है, वह पवित्र होना चाहिए, जब ब्रह्मचारी का अथवा ब्रह्म छात्र का जब चिन्तन महान बन जाता है, तो उसकी आत्मा से उदगारों की झड़ियां लग जाती है, और आत्मा से जब उदगारों का जन्म होता है वही उदगार मानो देखो, महान बन करके और वही उदगार मानो देखो, उसके जीवन की आगे देखो, भूमिका का निर्माण करते रहते हैं। क्योकि उसकी भूमिका बनाते रहते हैं। इसी प्रकार तुमने जो अस्त्रों-शस्त्रों को जाना है, और भारद्वाज मुनि की कुछ सहायता अपने मे ली है, और महर्षि विश्वामित्र क्योंकि ये पुरातन काल में राजा भी रहे, तपस्वी भी रहे और ये अभिमानी भी रहे है, और यह ब्रह्मवेत्ता भी बन गएं। मानो ये हमारा सौभाग्य है जो ऐसे महापुरूष जो अपने मे देखो, बड़े विचित्र रहे हैं, जिन्होंने बाल्यकाल में आचार्यों से शिक्षा प्राप्त की हैं, और वह तुम्हे शिक्षा दे रहे है, ये बडा सौभाग्य है मानो देखो, इस प्रकार ऋषि की आभा को प्रगट करते हुए, माता अरूणधती ने कहा कि मेरा तो एक ही मन्तव्य रहा है, क्या मैं ब्रह्मचारियों को यही कहती रही हूँ, विद्यालयों में भी, और आज भी मेरा यही विचार है कि हम अपने मानवीयतव को ऊँचा बनाएं और अपने मानसिक जो विचार है, वह महान पवित्र बन जाएं, मानो देखो, उन पर हमारा विजय होना चाहिए जब हमारा विचारों पर विजय हो जाता है, तो मानो हम तपस्वी बन जाते हैं, और बिना तपस्या के मानो देखो, छात्र कदापि भी ऊँचा नही बनता। मेरे प्यारे! देखो, जब माता को, माता की दृष्टि से पात किया जाता है, उसे नेत्रों में मानो माता को मानो समाहित कर लेते हैं तो वह नेत्रों में सदैव माता ही माता दृष्टिपात आने लगती है। और वह माता प्रकृति के रूप में विद्यमान हो जाती हैं। मानो वही प्रकृति है, जो चरी कहलाती हैं, जिसके गर्भ में नाना प्रकार का विज्ञान विद्यमान होता हैं। मानो खाद्यान्न भी है, खनिज भी हैं, और भी नाना प्रकार की धाराओं की उपलब्धियां होती रहती हैं। जो प्रायः तुम्हें क्रिया में लाने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं क्योकि वह अमृतां भू वर्णा सुता मानो ये जो तुम्हारा एक विज्ञान तुम एक अहिल्या कृतिभा यन्त्र का निर्माण किया है जो यह निर्माण मानो तुमने याग के माध्यम से किया हैं, याग के परमाणुओं के ऊपर तुम्हारा अध्ययन हुआ है, और उस मानो परमाणुवाद में यह सत्ता भी प्राप्त की होगी, कि पृथ्वी के गर्भस्थल में कितनी दूरी पर कौन-सा खनिज हैं कौन-सा मानो देखो, गमन कर रहा है जल को शक्तिशाली

बनाने वाली जो ऊर्ज्वा शक्ति है। जो सूर्य से प्राप्त होती है। अमृत को देने वाली मानो देखो, चन्द्रमा से ऊर्ज्वा प्राप्त हो रही है। तो वह सर्वत्र एक आभा में रमण कर रही है। विचार आता रहता है। माता अरूणधती ने कहा हे ब्रह्मचारियों! देखो, यह तुम्हारा सौभाग्य है, जो तुम मानो देखो, इस आश्रम में तुम ब्रह्मवेत्ता के समक्ष तुम अपनी विद्या का अध्ययन कर रहे हो मानो यह अमृतां अहिल्या यन्त्रों का निर्माण किया है, जिस निर्माण में ब्रहे है मानो पृथ्वी के गर्भ को जानना है, और पृथ्वी के गर्भ को जानने वाला है, वह मानो विज्ञानवेत्ता कहलाता है। हे ब्रह्मचारियों! दूसरा तुम्हारा जो कौतक है, वह अस्त्रों-शस्त्रों का निर्माण हैं। कुछ मानो इस प्रकार के अस्त्र-शस्त्र है, जो तुम्हें मानो इस पृथ्वी मण्डल पर अभ्यस्त के लिए नही प्राप्त होंगें, तुम्हें दूसरे मण्डलों में भी जाने की आवश्यकता होगी, वहाँ भी तुम्हें अपनी उड़ाने उड़नी है, और वहाँ भी विज्ञान को तुम्हें विज्ञान को और यन्त्रों को जानने के लिए उसके पश्चात पृथ्वी मण्डल पर आना है, ऐसा मेरा सन्ततप रहता है। मानो देखो, तुम्हारा यह जीवन इसी प्रकार का तपों में क्रियाकलापों में लगा रहेगा। तो इसी का नाम तप कहा जाता है। यह तपस्या में तुम परिणत हो जाओ। तुम्हें यह प्रतीत है कि हमारे यहाँ जब मानो देखो, विष्णु राष्ट्र की स्थापना हुई तो विष्णु महाराज अपने गरूड़ रूपी महाराज पर विद्यमान हो करके लोक-लोकान्तरों की यात्रा करते रहे हैं। और लोक-लोकान्तरों में जाना वहाँ जो भी यन्त्र जिस यन्त्रं ब्रहे देखो, विज्ञान प्राप्त होना मानो विज्ञान की धाराओं को अपने मस्तिष्क में वृत करते हुए और वहाँ से यन्त्रों को इस पृथ्वी मण्डल पर लाना यह प्रायः देखो, राष्ट्र का एक कर्तव्य बन जाता है। मानो राष्ट्र में इतना ऊँचा विज्ञान होना चाहिए। हमारे विद्यालय का विज्ञान इतना ऊँचा होना चाहिए। जिससे तुम्हारा राष्ट्र का वैज्ञानिक मानो देखो, वह नाना लोक-लोकान्तरों की यात्रा में मानो सफलता को प्राप्त कर सके। ऐसा मानो मेरा यह उपदेश है और मेरी यह कामनी रहती है क्या मानो देखो, ब्रह्मणे व्रतं देवत्वां ब्रह्मा देखो, मुझे स्मरण है, मुझे यह सौभाग्य प्राप्त हुआ हैं, क्या मैं जब वशिष्ठ मुनि महाराज के चरणों में विद्यमान रहती तो मुझे यह सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। क्या मैं मानो देखो, अरूणधती मण्डल के ऊपर मेरा अध्ययन रहा हैं। इसीलिए मेरा नामोकरण भी अरूणधती कहलाता है। मेरा अरूणधती जो मण्डल है वह वशिष्ठ मण्डल और अरूणधती मण्डल मानो दोनो साथ-साथ गमन करते रहते हैं। और वह दोनों के ऊपर मेरा अरूणधती मण्डल के ऊपर अध्ययन किया गया है, अरूणधती मण्डल की धाराएं आती रहती हैं, और वह धाराएं मानो देखो, इस पृथ्वी मण्डल पर आती हैं, और पृथ्वी मण्डल पर जा करके वह पृथ्वी के गर्भ में मानो देखो, वह स्वर्ण की जो परमाणुवाद गमन कर रहा है। उससे उसकी छाया जब अवृत्ति होती है तो मानो देखो, उमसें एक अवृत्तियों को धाराओं को प्रदान किया जाता है तो यह अरूणधती मण्डल मानो देखो, जब इसकी छाया चन्द्र मण्डल पर जाती है तो चन्द्रमा की कान्ति पर मानो देखो, स्वर्ण सहित धाराओं का जन्म हो जाता हैं। जब मानो अरूणधती मण्डल की जो कान्तियां हैं। जब यही कान्तियां जब मंगल पर जाती है तो वहाँ विज्ञान के परमाणुओं की देखो, उपलब्धि करता रहता है। यह अरूणधती मण्डल इतना विशाल है, जब माता के गर्भस्थल में मानो देखो, जब इसकी छाया जाती हैं अरूणधती की तो वहाँ बुद्धि की स्थापना कर देता है। बाल्य को बुद्धि आती है। क्योंकि देखो, बालक के अन्ताम देखो, लघु मस्तिष्क में एक वृत्तिका अरूणकेतु नाम की नाड़ी होती है उस नाड़ी का समन्वय अरूणधती मण्डल में जो धाराएं होती है। मानो देखो, उससे उसका समन्वय हो जाता है। तो मानो देखो, विशेष बुद्धि उसे प्राप्त हो जाती है।

तो विचार आता रहता है मेरे प्यारे! देखो, माता अरूणधति ने अपना दीक्षान्त उपदेश देते हुए, कहा मेरा ये सौभाग्य है, मैं एक वर्ष के पश्चात मानो तुमने विजय का अपना एक पतिका तुमने अपने आश्रम में वर्णित की हैं, मेरा ये बड़ा सौभाग्य रहा है मानो मैं जो तुम्हें दृष्टिपात कर रही हूँ और तुम्हारा मानो देखो, यह यम ब्रह्मा व्रतं देवाः तुम दसों इन्द्रियों के ऊपर संयम करो, और विज्ञानवेत्ता बन करके और तुम अस्त्रों-शस्त्रों का अभ्यास और निर्माण

करो, निर्माण करके उनका अभ्यास करो जिससे अयोध्या राष्ट्र ऊँचा बने और अयोध्या राष्ट्र के ऊँचे बनते ही मानो सर्वत्र देखो, पृथ्वी मण्डल एक पवित्रता की मानो एक लहरों में परिणत हो जाएगा, इन तरगों में तरंगित हो करके अपने में तरंगां भू वर्णासुता वह तरंगित हो करके अपने में अपनेपन को प्राप्त करता रहेगा।

तो मेरे प्यारे! देखो, माता अरून्धती ने अपना उपदेश दे करके यह कहा क्या मैं मानो देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज की आज्ञा का पालन करते हुए, मेरे पुत्रों! देखो, माता अरून्धती ने ये कहा क्या गृह विद्यालय जब तपों में बनते हैं जब माता-पिता मानो मैं और महात्मा वशिष्ठ हम दोनों जब भी विद्यमान होते हैं तो विज्ञान की चर्चाएं करते रहते हैं परमात्मा की सृष्टि को निहारते रहते हैं और परमात्मा की सृष्टि को निहारना मानो देखो, देवत्वां देवं ब्रह्मा वह एक दूसरे में देवतव की भावनाओं को ले करके अपने गृह को पवित्र बनाते रहते हैं। तो विचार-विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, माता अरून्धती ने कहा क्या तुम्हारे विचार में जब एकत्रित हो करके, विद्यमान हो जाओ, तो आत्मा परमात्मा को निहारते रहो, और देखो, परमात्मा के विज्ञान में चले जाओ, और मानो प्रकृतिवाद में रमण करते हुए, तुम मनस्तप की धारा को जान करके प्राण में समाहित हो जाओ और प्राण में ही समाहित हो करके मानो तुम हृदय में त्राहि हो करके, और हृदय से हृदय का मिलान करते हुए परमात्मा के हृदय से समाहित होना मानो जानने के लिए तुम तत्पर हो जाओ। ऐसा बेटा! देखो, माता अरून्धती ने अपना विचार देते हुए कहा कि तुम तथास्तु अमृतं।

मेरे प्यारे! विचार आता रहता है बेटा! मैं बहुत दूरी चला गया, विचार देता-देता बहुत दूरी चला गया हूँ मेरे प्यारे! देखो, मैं धनुर्याग में चला गया, धनुर्याग का तो बेटा! वन है, यहाँ तो प्रत्येक ऋषि का अपना-अपना मन्तव्य बड़ा विचित्रता में रहा है, परन्तु माता अरून्धती ने अपना दीक्षान्त उपदेश दे करके, और दीक्षा को ये कहा उन्होंनें दीक्षा तं ब्रहे दीक्षा देने वाला तो आचार्य होता है परन्तु जब वह विद्यालय से अवकाश लेता है, उस समय पूर्ण दीक्षान्त उपदेश दिया जाता हैं। ये तो प्रत्येक वर्ष में एक मानो देखो, दीक्षा का उपदेश दिया जाता हैं, क्या तुम दीक्षित बनो, और दीक्षित बन करके तुम अपने में छात्रवत को धारण करो। ये जो दिवस है अथवा ये जो माह है प्रायः परमपिता परमात्मा में इसीलिए की बल का उर्पाजन करना, और विज्ञान की धाराओं को जानना, मानो देखो, अन्नादं भू वर्णनं ब्रह्मे इससे प्रत्येक मानव अपने-अपने उद्देश्य में रत्त होता हैं, कृषक मुनिवरों! देखो, अपने में ही मानो देखो, लक्ष्मी का उर्पाजन करता है, अन्न इत्यादि नवीन आता है, इसीलिए मानो देखो, ये दिवसं ब्रहा यह माह पवित्रतं में परिणत किया गया हैं। तो आज बेटा! मैं बहुत दूरी न चला जाऊं, विचार ये प्रारम्भ हो रहा था मुनिवरों! देखो, इससे पूर्व काल में यह उच्चारण कर रहा था कि राम! मेरे प्यारे! देखो, तपस्या के लिए भयंकर वन में चले गएं है, मुनविरों देखो, हमारा जो विचार था वह तो दूरी बाल्यकाल का राम का था, जब वह दीक्षा लेते थे, और प्रत्येक वर्ष मानो अपना अभ्यास का कौतुक कराते थे और कहाँ मुनिवरों! वह लंका को विजय करने के पश्चात, वह तप के लिए चले गएं कहाँ वह तप है, कहाँ बाल्यकाल का तप है मेरे प्यारे! वह तप ही तप कहलाता है, बाल्यकाल भी तप है, जो आचार्य के संरक्षण में तपों में परिणत हो रहे हैं, और वह भी तप है, माता-पिता की आज्ञा पा करके भयंकर वन में चले गएं, वह भी तपों में ही है। मेरे प्यारे! देखो, वह विजय करने के पश्चात भी इसीलिए मानव को तपस्या करनी चाहिए, क्योंकि अभिमान न आ जाएं, यदि अभिमान आ गया तो विजय मानो विजय नही रह पाएगी मानो देखो, वह जब मानव में अभिमानी नही आयेगा तो वही विजय मेरे प्यारे! देखो, आध्यात्मिक रूप में परिवर्तन हो जाएगा। तो मेरे प्यारे! देखो, इसीलिए मानव को विजेता बनना चाहिए, और विजेता इस संसार को विजेता संसार को क्या विजेता बनाया जाता है। राजा राष्ट्र को राष्ट्र पर विजेता नही बनता वह मेरे प्यारे! यदि विजय करने के पश्चात यदि अभिमान आ गया है, उसमें देखो, अभिमान आ गया तो अभिमान

ही देखो, मृत्यु का रूप बन करके रहता हैं, और यदि उस अभिमान में, तपस्या में परिणत हो गया हैं, तपो में निष्ठ हो गया है, तो मानो देखो, वही विजय देखो, संसार की विजय राष्ट्र की विजय आध्यात्मिकवाद में परिणत हो करके, मेरे प्यारे! देखो, आत्मा का ज्ञान बन करके रहता है। वह ज्ञान तपस्या के रूप में परिणत हो जाता है, इसी प्रकार भगवान राम का जो मानो क्रियाकलाप हैं, वह मेरे पुत्रों! देखो, तपस्या के रूप में परिणत हो गया, और वह तपस्या के लिए भयंकर वन में चले गएं और वह जब तप करने लगे तो मुनिवरों! देखो, महर्षि लोमश और मुनिवरों! देखो, महर्षि कागभुषुण्ड जी, और मुनिवरों! देखो, वह मुनिवरों! देखो, वैशम्पायन ये तीन ही ऋषियों के मानो देखो, उनका आवागमन होता रहा, और विचारधाराएं भी प्रारम्भ होती रहीं।

मेरे प्यारे! देखो, वह महर्षि लोमश मुनि से ये कहा करते थे राम कि हे भगवन! तुम भयंकर वन में क्या करते हो? उन्होंने कहा मैं वह कार्य करता हूँ जो मुझे प्रभु ने आज्ञा दी हैं प्रभु ने आपको क्या आज्ञा दी है? उन्होने कहा-प्रभु! ने ये कहा है कि आत्मा को जानने का प्रयास करो, उन्होंने कहा आत्मा को जानने के लिए क्यों तुम प्रयास करते हो? हमारे आने का संसार में यही उद्देश्य रहा है उन्होंने कहा क्या उद्देश्य के लिए जन्म लेता है, मानो देखो, उन्होंने कहा यदि उद्देश्य के लिए, मानव जन्म लेता है, तो उसे जन्म नही लेना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि लोमश मुनि बोले क्या हे ब्रहे हे राम! मानो जो प्रसंग तुमने लिया है सिद्ध होता है उसके लिए जन्म की धारा नही उत्पन्न होती मानो देखो, वह आनन्द तो स्वतः है आनन्द आत्मा में आनन्द मानो देखो, उसकी क्रियाओ में हैं, आनन्द मानो देखो, उसके ज्ञान में हैं, आनन्द मानो देखो, जहाँ परमपिता परमात्मा सर्वज्ञ है वही आनन्द है इसीलिए देखो, वह सर्वज्ञता में अपने को ले जाएं, तो उसे आनन्द ही आनन्द प्राप्त हो जाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, ये विचारधारा प्रायः उनकी प्राप्त होती रही, उन्हें प्राप्त होती रही राम अपने में विचारधारा में अमृतां उन्होने कहा-प्रभु! तप किसे कहते हैं? उन्होने कहा तप तो आप स्वतः कर रहे है क्या मानो खेचरी मुद्रा से तुम शीतलता को ग्रहण कर लेते हो और मानो देखो, संक्ल्पोंमयी प्राण से पोषक तत्त्वों को अपने में ग्रहण कर लेते हो, और तुम मानो देखो, रेचक और कुम्भक के द्वारा, तुम मानो देखो, मण्डलों की आभा में परिणत हो जाते हो, तुम लघु मस्तिष्क में प्रवेश हो जाते हो तो मानो देखो, इसका नाम तप कहा जाता हैं। इसका जानना और जान करके इसको विभक्त करने का नाम ही तपस्या कहलाता है। और वह तुम्हारे रजोगुण, तमोगणु से ऊर्ध्वा में जो ज्ञान और विज्ञान रमण कर रहा हैं उसको जानने का नाम तप कहा जाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, राम बड़े प्रसन्न युक्त हुए, और वह प्रसन्नता में रत्त हुए, और उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! मेरे प्यारे! देखो, महर्षि लोमश मुनि से कहा कि महाराज! तुम मानो देखो, भंयकर वन में रहते हो यह वन क्या है? उन्होंने कहा कि-प्रभु! यह वन को क्यों जानना चाहते हो तुम उन्होने कहा वन की मुझे इच्छा है, संसार में कोई वन नही होता है देखो, लोमश जी ने कहा, कि कोई वन नही होता है, यह वन नही कहलाता है, यह तो ज्ञान का वन है, यह तो ज्ञान की प्रतिभा है और ज्ञान की प्रतिभा को देखो, वन कहा जाता हैं। वन में इसीलिए मानव रमण करता है, अपने को ले जाता है कि वह संसार के नाना प्रकार के जो देखो, जेठां जो मानो देखो, मायावी विचार है, उससे उपराम होने के लिए वह एकान्त स्थली में चला जाता है। जो प्रभु की सृष्टि को निहारता रहता है। प्रभु जो देखो, सृष्टि को ही अपने में धारण करता रहता हैं। अपने का उसका मिलान करता रहता है तो उसका नाम वन कहा जाता हैं यह वन नही कहलाता क्योंकि पक्षी अपने में गान गा रहे है। वृक्ष में मानो देखो, धाराओं में गान गा रहे है और वह मानो देखो, पक्षी उसी पर विद्यमान हो करके प्रभु के गुणों का गुणगान गाते रहते हैं। और नाना वतस्पतियां में एक दूसरें में एक दूसरें का शोधन करती रहती हैं। देखो, स्थावर अण्डज को प्राप्त होती रहती हैं, अण्डज सृष्टि मानो जंगम को प्राप्त होती रहती हैं, और जंगम सृष्टि मानो श्वेदज को प्राप्त होती रहती हैं, एक दूसरे में एक दूसरे समन्वय बना रहता है। जैसे लोक-लोकान्तर है एक लोक

दूसरे लोक की प्रतिष्ठा कर रहा हैं। मानो देखो, वह प्रतिष्ठा एक दूसरे में प्रतिष्ठित होता हुआ, यह जगत मानो देखो, विचारों का एक वन बन जाता है, और इसी के ऊपर ऋषि-मुनि मेर पुत्रों! देखो, परम्परागतों से अन्वेषण कर रहे हैं। अनुसन्धान कर रहे है, अनुसन्धान कर रहे हैं और अनुसन्धान इसीलिए करते रहते हैं। विचार करते रहते हैं, अनुसन्धान का अभिप्रायः यह क्या मेरे में कोई वस्तु ऐसी नही है। जो मेरे विचारों से ओझल हो गई है। क्योंकि ब्रह्माण्ड, ब्रह्माण्ड और पिण्ड की दोनों ऋषि-मुनि अपने में कल्पना करते रहते हैं। तो यह मानो यह विचारों का वन बन करके और विचार एक विशाल बन जाते हैं और उन्हीं विचारों को हृदय में वह अपने में हृदय ग्राही बना करके इस संसार को जान करके उसको संकुचित बना करके और प्रभु में समाहित हो जाओ।

तो मेरे प्यारे! देखो, जब यह वाक् उन्होंने वर्णित कराया तो वह बड़े प्रसन्न युक्त हो गएं। तो बेटा! आज का हमारा वाक् यह क्या कह रहा है आज तुम्हें यह प्रतीत हो गया होगा कि आज का हमारा वाक् क्या कहता है तो बेटा! देखो, व्यवहार में विचार-विनिमय कर रहे थे कि हमारा विद्यालय पवित्र बने राष्ट्र महान बने और मुनिवरों! देखो, तपस्या में हम प्राणों का मन का और विचार का इन मानो तीनों का समन्वय करने का प्रयास करें। मेरे पुत्रों! देखो, आज का विचार क्या हम भंयकर वन में चले जाएं। और वह विचारों के वन में चले जाएं निहारते रहे कि विचारों के वन को मुनिवरों! देखो, वह ब्रह्मज्ञान वह ब्रह्म ज्ञान होता है, क्योंकि-प्रभु! का जो ज्ञान है, विज्ञान है, वह इतना अनन्तमयी है, कि मानव मेरे प्यारे! अन्त में मौन हो जाता हैं। और मौन होने की चर्चा तो मैं तुम्हें कल ही प्रगट करूंगा आज का वाक् हमारा क्या कहता है कि हम मुनिवरों! देखो, अपने में क्षात्रवत और मुनिवरों! देखो, लक्ष्मीवत सर्वत्र का पूजन करें पूजन का अभिप्रायः यह है कि प्रत्येक वस्तु का हम उपयोग करें और उसका सदुपयोग करके हम सागर से पार होने का प्रयास करें लोक-लोकान्तरों के ज्ञान विज्ञान को मापते रहें। जैसे माता अरूणधती ने मापने की चर्चाएं की हैं। मानो देखो, इसी प्रकार उसी से हमें ज्ञान प्राप्त होता है उसी से विज्ञान की धाराएं आती है, उसी से अणु और परमाणु का मिलान कराया जाता हैं, उसी को एक-एक अणु और परमाणु का विभाजन कराया जाता है। उसी में नाना प्रकार के मानो देखो, शक्तिशाली मानो देखो, अग्नेय धाराओं का जन्म होता रहता हैं। तो यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा आज के विचारों का अभिप्रायः यह कि प्रत्येक मानव को अपने-अपने कर्तव्य में रत्त रहना चाहिए, और कर्तव्य ही मानवीयतव में क्योंकि प्रत्येक वस्तु तपस्या में परिणत हो रही है। सूर्य अपने उदगार दे रहा है। चन्द्रमा अपने कान्ति के उदगार दे रहा है। मेरे पुत्रों! पृथ्वी अपने गुरूतव के उदगार दे रही हैं। आपो ब्रहे आपो अपने तरलतव के उदगार दे रहा हैं। अग्नि देखो, तेजोमयी के उदगार दे रही है, और देखो, वायु देखो, प्राण के उदगार दे रही हैं, और अन्तरिक्ष मेरे प्यारे! देखो, सर्वत्र को समाहित कर रहा है। तो समय मिलेगा तो मैं बेटा! तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज मैं अपने विचारों को दूरी ले गया हूँ। विचारों का अभिप्रायः केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए ज्ञान और विज्ञान में रत्त होते हुए इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें। और ब्रह्म को जान करके इसके जगत को अपने में मापने वाले बनें यह चर्चाएं कल शेष चर्चाएं प्रगट करेंगें आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं माहं गायन्त्वाः आ पाहाम्। ओ३म् यशश्चाहं ब्रह्म मां ब्रीहिता याश्चमं प्रा वरुणां तानु ब्रीता श्वञ्जनाः आ पाहाम् ओ३म् ऋषित गायन्त्वा मां रथं आ पा हाणहाम।

१४ गो धन ३०-०९-१९९०

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है और उसका ज्ञान और विज्ञान भी अनन्तमयी माना गया हैं क्योंकि जितना भी यह ब्रह्माण्ड प्रायः हमें दृष्टिपात आता रहता है वे सर्वत्र उस परमपिता परमात्मा की महती है और उसका अनन्तमयी ब्रह्माण्ड हैं। और वह उसी में गमन कर रहा है। तो इसीलिए हमारा वेद का मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन करता रहता है क्योंकि आज का हमारा वेदमन्त्र नाना प्रकार के वेदमन्त्र इस प्रकार के थे जहाँ गो नाम का वर्णन आ रहा था हमारे यहाँ गो के बहुत से अर्थ और उसकी बहुत-सी विवेचनाएं होती रही है क्योंकि किन्हीं आचार्यों ने मानव की इन्द्रियों को गो माना है, जहाँ यौगिक विषय आता है। वहाँ गो नाम इन्द्रियों का वर्णित किया गया हैं। जहाँ विद्यालयों में गुरु और ब्रह्मचारियों के मध्य में गो शब्द आता है, वहाँ विद्यालय में ब्रह्मचारी आचार्य के दोनों के सम्पर्क का नाम गो मेध नाम से वर्णन किया जाता है। परन्तु जहाँ गो राष्ट्र के सम्बन्ध में आता है। वहाँ गो नाम पशु का की रक्षा करने का आता है, और जहाँ विज्ञानवेत्ताओं के मध्य में गो शब्द आता है, वहाँ सूर्य की नाना प्रकार की जो रश्मियां है, अथवा उसकी जो किरणें है, वहाँ गो नाम का शब्द प्रतिपादन किया हैं। परन्तु जहाँ अन्धकार के स्वरूप में भी गो शब्द आता रहा हैं। परन्तु विचार आता रहता है कि इन वाक्यों के ऊपर हम विचार-विनिमय करते रहे जब मानव तपस्या के लिए परिणत होता है। और तपस्या में परिणत होना ही उसके लिए वर्णिया बृहत मंगलं मानो अपनी प्रवृत्तियों को ज्ञान के क्षेत्र में ले जाता है, और ज्ञान के क्षेत्र में गो शब्द और गो शब्द को मुनिवरों! वह अपनी क्रियाओं में लाने का प्रयास करता हैं।

मुझे स्मरण आता रहता हैं इससे पूर्व काल में हमारे विचार चल रहे हैं क्या मानव को किसी भी याग में परिणत हो जाएं तो वह तपं वह तपों में ही माना गया हैं जैसे हमारे यहाँ मैं राम की चर्चाएं कर रहा था कि भगवान मानो देखो, ऋषि-मुनियों के मध्य में तपस्वी बने हुए हैं, क्योंकि तप उसी को कहते हैं जहाँ मन और इन्द्रियां का दोनों का परस्पर मिलान हो जाएं और उन दोनो में एक धाराएं उत्पन्न हो जाएं। क्योंकि प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, यौगिकवाद में रमण करता रहा हैं, तो हमारे यहाँ योगी जनों ने ये कहा क्या जिस समय मानव का मन पवित्रतम हो जाता है। तो उस समय इन्द्रियों का जो व्यापार हैं वह गो नाम की जो इन्द्रियाँ हैं, उनका जो व्यापार है वह साकल्य के रूप में परिणत हो जाता हैं। वेदमन्त्र उसे चरू भी कहता है। और वह चरू के रूप में परिणत होता हुआ वह हृदय में समाहित हो जाता हैं। तो मानो उसका नाम एक यौगिकवाद बन गया, तो यौगिक शब्दों में यहाँ इन्द्रियों का नाम गो माना गया हैं। और जो इन्द्रियों का जो ज्ञान है, परमपिता परमात्मा की जो महती है, और जब मन का जब इससे समन्वय होता है, प्राण की क्रियाएं होती है तो वही इन्द्रियाँ मानो देखो, गो मेध के रूप में परिणत हो जाती हैं, क्योकि प्रकाश आ जाता हैं, तो इसीलिए वह प्रकाश कौन-सा है? जो मानवीय तपस्या में परिणत हाने के पश्चात उसके हृदय में जो तरंगों का प्रादुर्भाव होता हैं, और तरंगें वह ऐसी है जो तरंगें मानो देखो, वह लोक-लोकान्तरों में प्रवेश होने लगती है। तो मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता है, कि मन इन्द्रियों का जो विषय है, वह मन में और मन का जो विषय है वह बुद्धि में परिणत हो जाता है। और यहाँ बुद्धि के नाना प्रकार के नाना प्रकार उत्पन्न हो जाते हैं। मेधावी, बुद्धि से बन जाता है, और मेधावी बन करके मुनिवरों!

देखो, वह प्राण को अपना साथी बना करके, मनस्तव की विचारधारा को ले करके मेरे पुत्रों! वह लोक-लोकान्तरों की गणना करने लगता है, वह ये भी जानने लगता है कि एक लोक के आश्रित कितने लोक हैं और वह लोकों में मानो देखो, लोक में लोकों का सूत्र बना हुआ हैं, परन्तु वह एक माला के सदृश्य यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक माला के रूप में दृष्टिपात आने लगता है। जैसे मानो एक माला के स्वरूप में रत्त रहने वाला हैं, जैसे मुनिवरों! देखो, इन्द्रियों का विषय, मन में समाहित हो जाता है, और मन का विषय इन्द्रियों देखो, बुद्धि में समाहित हो जाता हैं, और बुद्धि का विषय मेधावी बन जाता है और मेधावी का विषय ऋतम्भरा में परिणत हो जाता हैं, और ऋतम्भरा का जो विषय है, वह प्रज्ञावी बन जाता है। मेरे प्यारे! बुद्धि, मेधा, ऋतम्भरा और प्रज्ञावी बन करके, मुनिवरों! देखो, वह लोक-लोकान्तरों में और अपने को एक मुनिवरों! देखो, वह माला के रूप में दृष्टिपात करने लगता है। जैसे यह माला बनी ऐसे लोकों की माला बन जाती हैं, और ब्रह्मरन्ध्र जो मानव का एक ब्रह्मरन्ध्र स्थली है जो त्रिवेणी के स्थान पर होती हुई, तरंगें मानो तीन कृतिकाओं के द्वार पर होती हुई वह ब्रह्मरन्ध्र में जब प्रवेश करती है, तो वहां बेटा! एक विचारों का क्या वह संसार क्या बेटा! ब्रह्माण्ड की प्रतिभा में रत्त हो करके बेटा! वहाँ एक नृत्त होने लगता हैं, उस नृतिका ने मुनिवरों! देखो, योगियों ने यौगिकवाद कहा क्योंकि यौगिकवाद देखो, इसीलिए कहा है, क्योकि वह एक माला बन गई हैं, और वह माला के सदृश्य ये ब्रह्माण्ड एक माला के रूप में ही दृष्टिपात आने लगता हैं। तो ये मुनिवरों! देखो, यौगिकवाद कहा जाता है, जो आत्मा के प्रकाश में मुनिवरों देखो, सर्वत्र प्रकाश को दृष्टिपात करता रहता है।

आओ, मुनिवरों! देखो, मैं इस सम्बन्ध में इसीलिए तुम्हें विवेचना दे रहा हूँ क्या जहाँ गो नाम यौगिकवाद में आता है तो गो नाम इन्द्रियों का है, गो नाम बुद्धि का हैं, और गो मेधावी बन करके, मुनिवरों! देखो, गो रक्षक बन जाता हैं। तो विचार आता रहता है सूत्र का नाम भी, एक दूसरे में पिरोया हुआ होने से भी वह मानो देखो, वह उसकी रसूत कहा जाती है, जिससे मानव अपने में मानवीयता की धारा में रमण करने लगता हैं। तो आओ, बेटा! इस सन्दर्भ में मैं तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ विचार-विनिमय केवल ये कि मानव इस ब्रह्माण्ड की माला बना लेता है, मैंने माला के सम्बन्ध में कई समय विवेचना दी है कि यौगिकवाद योगियों की माला कैसी विचित्र होती है। साधारण प्राणी मुनिवरों! देखो, एक माला बना लेता हैं, और वह माला मनकों की बना करके, मुनिवरों! देखो, उसके अन्त में एक सुमेरू बना लेता हैं। उसे ब्रह्म ग्रन्थि कहते हैं। परन्तु वही ब्रह्म ग्रन्थि सुमेरू के रूप में वर्णित हो जाती हैं। इसी प्रकार जब बेटा! ऋषिजन अपने में गो नाम की इन्द्रियों को और गो बुद्धि को जान करके मुनिवरों! देखो, वह उसमें माला का स्वरूप धारण कर लेते हैं, सूत्र सूत्र में पिरोया जाता है, और वह जो नाना प्रकार के लोक-लोकान्तर है जो बेटा! देखो, एक मनके के रूप में सूत्र में पिरोऐ हुए दृष्टिपात आने लगते हैं। तो ऋषि-मुनियों ने बेटा! एक माला नही, नाना मालाओं को धारण कराया है, नाना सुमेरूओं को अपने में धारण कराया हैं, जिससे मुनिवरों! देखो, सुमेरू कौन है? वह चेतना है। जिस चेतना में यह ब्रह्माण्ड सर्वत्र पिरोया हुआ हैं। मेरे प्यारे! वह सूत्र क्या है? वही तो ब्रह्म सूत्र कहलाता हैं, जिसमें ये सर्वत्र आभा एक दूसरे में पिरोई जाती हैं। बेटा! मैं तुम्हें विज्ञान के युग में नही ले जा रहा हूँ, केवल यौगिकवाद में ले जा रहा हूँ, यौगिकवाद उसी को कहते है। जहाँ लोक-लोकान्तरो में मानो देखो, अपनी प्रतिभा को ले करके, और मानो उस ब्रह्म में ब्रह्म के ब्रह्माण्ड को ब्रह्म की रचना को अपने में निहारता रहता है। वह बेटा! देखो, संसार को वह निचली स्थलियों में अभिमान में पिरोया हुआ, वह अग्नि में वह नही प्रवेश होता वह ऐसे मानो देखो, ब्रह्म के रूप में, ब्रह्म के स्वरूप में अपने को ले जाता है कि सर्वत्र उसे ब्रह्म का स्वरूप ही दृष्टिपात आता रहता है। तो बेटा! मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नही देने आया हूँ, केवल विचार-विनिमय ये जहाँ गो शब्द यौगिकवाद में आता है, तो वहाँ गो नाम इन्द्रियों का माना है,

याग और तपस्या

और जहाँ गो नाम बेटा! विद्यालय में जब प्रवेश होते हैं, तो मुझे बेटा! स्मरण आता रहता है क्या जब गो वर्णनं ब्रह्मे भगवान राम जब तपस्या कर रहे हैं, तो ऋषि-मुनि अंग-संग विद्यमान हो करके विवेचनाएं हो रही है और वह मानो देखो, अन्नां ब्रहे व्रतुता वह ग्रहण कर रहे है, ऋषि-मुनियों के जो अनुपम विचार है, ऋषि-मुनियों की जो एक विचारधारा है, गो नाम मुनिवरों! देखो, जब विद्यालय में जाते हैं तो गो नाम मेरे प्यारे! देखो, गो ब्रह्वे वर्णनं मेधाम यहाँ गो मेध बन जाता है। मेरे प्यारे! देखो, गो नाम देखो, अन्धकार को कहा गया है, तो तम ब्रह्मणां व्रतं देवत्वां ब्रह्मणे मुनिवरों! देखो, तमं ब्रह्मा वर्णसुतं वेद का आचार्य, वेद का ऋषि कहता है वेदमन्त्र कहता हैं क्या मुनिवरों! देखो, अमृतां प्रकाशं ब्रह्वे जिन ब्रह्मचारियों को देखो, पशु से प्रकाश में, मेध में, बुद्धि में परिणत कर दिए जाते हैं, आचार्य जन के समीप ब्रह्मचारी अंग-संग विद्यमान हैं, और ब्रह्मचारियों को वह शिक्षा दे रहे है, हे ब्रह्मचारियों! तुम अपनी इन्द्रियों के विषय को मानो मुझे परिणत कर दो, जिससे तुम्हे ज्ञान हो जाएं, मेरे प्यारे! वह कहता है कि चक्षुम्मे शुन्धामि, प्राणम्मे शुन्धामि, सर्वत्र इन्द्रियों को जो नृत्त है। बेटा! वह मुझे प्रदान कर दो बेटा! देखो, ब्रह्मचारी आचार्य के गर्भ में विद्यमान हो जाते हैं। ब्रह्मचारी इन्द्रियों के विषयों का शोधन कर देता है और वह कहता है हे ब्रह्मचारी! तीन दिवस मानो देखो, त्रि वर्धा का वह ज्ञान करा देता है ब्रह्मचारी तुम्हारी जो इन्द्रियाँ हैं मानो वह मानो देखो, तीन प्रकार के ज्ञान और विज्ञान को अपने में अनुभव करने वाले बनें मानं ब्रह्वे तो मानो देखो, वह गो मेध में परिणत करा रहा है, आचार्य मुनिवरों! देखो, गो मेधावी में परिणत करता था, यहाँ गो नाम बेटा! ब्रह्मचारी का है, क्योंकि वह पशु हैं, और मेध में जब परिणत करा देता है, मेध नाम प्रकाश का है, तो मानो देखो, गौ मेधां भू वर्णनं वह मेधावी ब्रह्मचारी को बना देता है। तो मुनिवरों! देखो, जब विद्यालय में गो शब्द आता है तो वहाँ इन्द्रियों का नाम मेरे प्यारे! देखो, गो शब्द आता है। ब्रह्मचारी को मेधां भू वर्णनं मुनिवरों! देखो, वह गो कहते हैं, और वह गो नाम को जब अपने में धारण कर लेता है, तो ब्रह्मचारी अपने में धन्य हो जाता है। आचार्य के चरणों में विद्यमान हो करके वह ब्रह्मचारी कहता है प्रभु! मैं मानो देखो, अपने को मैं गार्हपथ्य नाम की अग्नि में ले जाना चाहता हूँ, तो आचार्य कहता है कि यह जो गार्हपथ्य नाम की अग्नि है, ये तुमने नामोकरण ही श्रवण किया हैं, या इसको जाना भी है ब्रह्मचारी कहता है प्रभु! मैं आपके समीप आया हूँ मुझे आप गो मेध अग्नि का वर्णन कर दीजिए, क्योंकि मैं गो मेध मेधां ब्रह्वा, मैं गार्हपथ्य नाम की अग्नि में उसके पश्चात प्रवेश करूंगा। मुनिवरों! देखो, वह ब्रह्मचारी मुनिवरों! देखो, आचार्य दोनों विद्यमान हो करके जब गो मेधावी बना देता है, उसके पश्चात मेधावी बन करके वही ब्रह्मचारी, मुनिवरों! देखो, ब्रह्मणे व्रतं वह गार्हपथ्य नाम की अग्नि, में चला जाता है गार्हपथ्य नाम की अग्नि वह अग्नि कहलाती है जिस अग्नि में ब्रह्मचारी तपता है और ब्रह्मचारी नाना रूप बन जाते हैं, बेटा! वह ब्रह्मचारी वह ब्रह्मचरिष्यामि बनता है। बेटा! ब्रह्म को अपने में और चरी को धारण करता हुआ मुनिवरों! देखो, वह गार्हपथ्य अमृतां गार्हपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करने लगता है, वह जो अन्तर्हृदय से अग्नि का भाव उत्पन्न हो जाता हैं और बाह्य अग्नि से उसका समावेश, दोनों अग्नियों का जब समावेश हो जाता है तो बेटा! बाह्य जगत का जो ज्ञान विज्ञान है आन्तरिक जो आत्मा से जो तरंगों का जन्म होता हैं, उन दोनों का जब समन्वय कर लेता है, तो बेटा! वह ब्रह्मचारी मानो देखो, ब्रह्मवर्चोसि बन जाता हैं, और ब्रह्मवर्चोसि बन करके वह ब्रह्म में तल्लीन हो जाता है। तो मुनिवरों! देखो, ब्रह्मणा व्रतं देवाः ब्रह्मचरिष्यामि मुनिवरों! देखो, वह ब्रह्मचारी है तो आगे वेद का ऋषि जब ये कहता है हे ब्रह्मचारी! तू गार्हपथ्य नाम की अग्नि में प्रवेश हो गया है, तू अब मानो याग कर। देखो, उन्होंने कहा-प्रभु! बहुत प्रियतम और वह ये पूर्णेष्टि याग उन्होंने किया और जब पूर्णेष्टि याग किया तो उन्होंने कहा ब्रह्मचारी जानते हो कि पूर्णेष्टि याग क्या होता हैं? उन्होंने कहा-प्रभु! मैं नही जानता और एक याग होता अमावेष्टि याग कहलाता हैं, मानो पूर्णेष्टि याग वह कहलाता हैं, जिसमें पूर्णता में, मानव परिणत हो जाता हैं तो अपनी कलाओं में

पूर्ण हो जाता हैं, वह द्रव्यपति भी बन जाता है, विद्या में भी पूर्ण हो जाता हैं, देखो, ज्ञान, कर्म उपासना में वह पूर्ण हो जाता हैं। तो वह ब्रह्मचारी देखो, विद्या में तल्लीन हो करके वह पूर्णेष्टि याग करता हैं, और वह याग इसीलिए करता है मानो एक माह में दो पक्ष होते हैं, एक शुक्ल पक्ष होता हैं, देखो, एक कृष्ण पक्ष होता हैं। शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त होता है। तो उसमें पूर्णेष्टि याग ही हैं। उसे पूर्णिमा कहते हैं और पूर्णेष्टि का अभिप्रायः यह होता है क्या देखो, वह सम्पन्न कलाओं से चन्द्रमा अपनी षोडश कलाओं से युक्त हो गया है षोडश कलाओं से सजातीय बन गया हैं जब वह सजातीय बन गया है तो इसी प्रकार जब चन्द्रमा के तुल्य हमारा जीवन बन जाएं तो उस समय वह पूर्णेष्टि याग करता हैं इतना मानो देखो, जानने के पश्चात मेरे अन्तर्हृदय में अभिमान न आ जाएं क्योंकि जब सम्पन्न कलाओं से युक्त होता है तो अभिमान का उसे सन्देश बना रहता है क्योंकि बुद्धिमान हो जाता है तो उसे स्वाभिमान जागरूक हो जाता है और यदि मानो देखो, वह और बुद्धिमान बन गया है वह संसार को विजय करने लगा है बुद्धि से तो अभिमान बलवती बन जाता है उस अभिमान में देखो, उसकी मृत्यु हो जाती है तो विचार आता है ब्रह्मचारी कहता है ब्रह्मचारी तू देखो, पूर्णेष्टि याग कर जिससे तेरे जीवन में अभिमान की मात्रा न आ जाएं और यदि तुझे अभिमान हो गया है, तो तेरी आत्मा का जो तप है, वह समाप्त हो गया है, आत्मा मे जो तप का प्रकाश है, वह प्रकाश अन्धकार में परिवर्तित हो जाएगा। मेरे प्यारे! देखो, जब यह ऋषि ने कहा तो उन्होंने कहा कि अब तुम देखो, अब अमावेष्टि याग करो उन्होंने अमावेष्टि याग जब प्रारम्भ किया तो उन्होंने कहा ब्रह्मचारी तुम अमावेष्टि याग क्यों कर रहे हो? उन्होंने कहा-प्रभु! मैं नही जानता उन्होंने कहा अमावेष्टि याग का अभिप्रायः यह होता हैं क्या देखो, अमावस्य के दिवस एक भी चन्द्रमा की कान्ति नही रहती वह अन्धकार परिणत हो जाता है वह एक ही तरंगें समुद्रों में नही होती है और न एक किरण होती हैं मानो कान्ति भी नही होती चन्द्रमा की कान्ति अपने में शून्यता को अमावस्य की रात्रि बन जाती है देखो, इसी प्रकार कहीं तुममें मानो देखो, तुम अपने द्रव्य से तुम्हारे जीवन में कहीं मानो देखो, कृष्ण पक्ष आ जाएं अन्धकार आ जाएं तुम्हारे अन्तर्हृदय में किसी प्रकार की देखो, वृत्तियों में अन्धकार छा जाएं तो तुम निराश न होना तुम अपने में निराश मत बन जाना क्योंकि निराश बन जाना भी मृत्यु है और अभिमान भी मृत्यु हैं इसीलिए यदि तुम्हें आगे चल करके योगी बनना हैं। तो मृत्यु को और निरशता को दोनों को त्यागना होगा तुम देखो, परमात्मा की समीप चले जाओगे। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने बड़ा सुन्दर एक अपना विचार दिया जो वेदमन्त्रों में प्रायः आता रहता है उन्होंने कहा क्या देखो, तुम ब्रह्मचारी हो गार्हपथ्य नाम की अग्नि की पूजा करो। क्योंकि गार्हपथ्य नाम की अग्नि में बुद्धियों को जागरूक किया जाता हैं। वह जो पंचाग्नि है, उन पंचाग्नियों को जागरूक किया जाता हैं। यहाँ मुनिवरों! देखो, यहाँ पंचाग्नि का वर्णन आया है पंचाग्नि उसे कहते हैं जिसे बुद्धि कहते हैं? इन बुद्धियों को जैसे बुद्धि को चेताना हैं, और देखो, प्रज्ञावी बनना है बुद्धि से मेधावी और मेधावी से ऋतम्भरा और ऋतम्भरावी से प्रज्ञावी मानो देखो, अग्नियों को मानो देखो, तुम्हें प्रदीप्त करना हैं, जिससे तुम्हारे अन्तःकरण में देखो, ज्ञान और कर्म और उपासना के भाव उत्पन्न हो करके, तुम इतने पारायण बन करके, तुम अपने में पारायणता को प्राप्त हो जाओ। मेरे प्यारे! देखो, पारायणता का अभिप्रायः ये है कि हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में तीन प्रकार के मुनिवरों! देखो, ज्ञान, कर्म और उपासना का प्रायः वर्णन आता रहता है। इसी प्रकार जीवन में शुक्ल पक्ष कृष्ण पक्ष भी आता रहता है। यदि तुम मानो देखो, ज्ञान, कर्म उपासना के पारायणता में पारंगत हो जाओ, पारायणता को प्राप्त हो जाओ, तो तुम्हारे जीवन में मानो देखो, इस प्रकार की तरंगों का जन्म न हो जाएं। इससे तुम्हारा देखो, प्रभु के राष्ट्र में आ करके तुम अभिमानी बन जाओ। मानो देखो, इससे तुम्हें विचार-विनिमय करना हैं मुनिवरों! देखो, आचार्य यही उपदेश देता हुआ आचार्य कहता है हे ब्रह्मचारी! तुम मेधावी बन गएं हो, तुम मानो देखो, तुम तीन

दिवस मेरे यहाँ गर्भ में रह करके तुम मेधावी बन गएं हो, और तुम मानो देखो, मेधावी बन करके, तुम गार्हपथ्य नाम की अग्नि की पूजा करो। उसके पश्चात तुम मानो देखो, गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा करो उसके पश्चात तुम वैश्वानर नाम की अग्नि की पूजा करो, तो मेरे प्यारे! देखो, आचार्य उसे अग्नियों का वर्णन कराता है और वही अग्नि मुनिवरों! देखो, ब्रह्माग्नि बन जाती है, जब इनके स्वरूप में परिवर्तन लाया जाता हैं, तो ब्रह्मग्नि उसे कहते हैं मुनिवरों! क्या जिस अग्नि में मुनिवरों! देखो, संसार की तरंगें न रहे करके उसमें मनस्तव की भाव भी नही रह पाता, वह ममतव में परिवर्तित हो जाता हैं। तो मानो देखो, अग्नि के स्वरूप में, ब्रह्म को दृष्टिपात करने लगता हैं आत्मभाव में ब्रह्म की जिज्ञासा जागरूक हो जाती हैं, और जागरूक हो जाने के पश्चात, अपने में मानो देखो, वह ब्रह्मग्नि की पूजा करने लगता हैं अपने में देखो, अग्नि का भान आने लगता है बाह्य जगत में भी ब्रह्माग्नि दृष्टिपात आने लगती हैं उन दोनों अग्नियों का जब समावेश हो जाता है। तो एक दूसरे में समावेश हो जाता है तो हृदय अगम्य बन जाता है। और वही मुनिवरों! देखो, वही हृदय जब अग्नि में तपायमान हो जाता है। वही अग्नि मुनिवरों! देखो, वह हृदय परमात्मा के हृदय से मानव के हृदय का जब समन्वय हो जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, परमात्मा का हृदय और मानव का हृदय दोनों एक ही तुल्य बन करके, मानो एक दूसरे मे समावेश हो करके, मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्माग्नि प्रचण्ड हो करके वह ब्रह्मां भू वर्णनं ब्रह्म ब्रह्म को ही अपने में भासने लगती है।

तो मेरे प्यारे! देखो, मैं तुम्हें दूरी न ले जाऊं, विचार मुनिवरों! देखो, जहाँ महर्षि वैशम्पायन और मुनिवरों! देखो, महर्षि लोमश और महर्षि कागभुषुण्ड जी तीनों विद्यमान हो करके राम के समीप बेटा! देखो, इस प्रकार की चर्चाएं हो रही हैं। जब आहार का समय होता, तो वह पोषक तत्त्वों को अन्तरिक्ष में से अपने में ग्रहण कर रहा है, और मुनिवरों! देखो, वही शीतली प्राणायाम करता हुआ, संकल्पोमयी प्राण की प्रतिष्ठा में प्रतिष्ठित हो जाता हैं तो आओ, मेरे प्यारे! मैं आज तुम्हे देखो, अपने विचारों की दूरी न ले जाऊं, वेद का ऋषि बहुत ऊर्ध्वा में अपनी उड़ाने उड़ रहा है वेद का ऋषि कहता है, हे ब्रह्मचारी! आ तू मानो देखो, ब्रह्मवर्चोसि बन और तू ब्रह्मवर्चोसि बन करके अपने में ब्रह्मचरिष्यामि बन। मेरे प्यारे! देखो, साधनों में जब मानव परिणत हो जाता हैं इस प्रकार की विचारधारा इस प्रकार की अभ्योदय ब्रह्माग्नि देखो, कैसे बनती है इसके सन्दर्भ में आचार्य ले जाता हैं आचार्य कहता है क्या तुम्हारा यह जो प्राण गमन कर रहा है, स्वाभाविक जो तुम्हारा प्राण गमन कर रहा है, इस प्राण को मानो देखो, अपान में ले जाओ, और अपान को तुम समान में ले जाओ, और समान को तुम व्यान में ले जाओ, और व्यान को तुम उदान के ऊपर अश्वत करके मानो देखो, तुम्हारी जो आन्तरिक जो हृदय में प्रचण्ड हो रही है। वह अग्नि हृदय में तुम्हारे साक्षात दृष्टिपात आती रहेगी। हे ब्रह्मचारी! यह भी न कर पाओं, मानो देखो, जो तुम्हे यह प्रश्न करेंगें कि हे ब्रह्मचारी! तुमने क्या जाना है? तो तुम ब्रह्मवर्चोसि कहो, अपने को ब्रह्मवर्चोसि उसे कहते हैं जो ब्रह्म वर्णसुतं ब्रह्मे जो ब्रह्म के क्षेत्र में परिणत हो जाता हैं। आगे कहता है आचार्य क्या तुम देखो, ब्रह्मचरिष्यामि बनो, ब्रह्मवर्चोसि बन करके ब्रह्म चरिष्यामि बनो, और ब्रह्म चरिष्यामि उसे कहते हैं जो प्रकृति के अंग और उपांगों को जान करके, क्योंकि मन को जानना तो प्रकृति को जानना है, मन को जानना प्रकृति को जानना है और प्राण को जानना है तो मानो देखो, ब्रह्म की प्रतिभा को जानना हैं, तो तुम ब्रह्म और चरी को दोनों को जान करके मानो तुम ब्रह्मचरिष्यामि बन जाओ, ब्रह्मचरिष्यामि कौन होता है? बेटा! मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन करते हुए कहा है, ब्रह्मवर्चोसि और ब्रह्मचरिष्यामि मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्म की निष्ठा होना ब्रह्मवर्चोसि कहलाता है और ब्रह्मचरिष्यामि वह कहलाता हैं जो मानो देखो, प्रत्येक इन्द्रियों के जो स्वरूप है, उनमें सबमें ब्रह्म और चरी दोनों ही दृष्टिपात आते हैं, दोनो का समन्वय करता रहता हैं, वह ब्रह्मचरिष्यामि कहलाता है। मेरे पुत्रों! देखो, ऐसे ब्रह्मचारी से एक आचार्य यह प्रश्न करता है, ब्रह्मचारी यह ब्रह्मचारी किसे कहते हैं? उन्होंने कहा ब्रह्मचारी भगवन! उसे कहते हैं जो ब्रह्म का

देखो, ब्रह्म को अपने में निश्चित कर लेता है पुनः कहा कि यह ब्रह्मचारी कौन होता है? उन्होंने कहा-प्रभु! जो वीरतव की रक्षा करने वाला वह ब्रह्मचारी हैं। उन्होने पुनः कहा कि हे ब्रह्मचारी! यह ब्रह्मचारी कौन है? उन्होंने कहा ब्रह्मचारी वह है जो विद्या का अध्ययन करता है, और विद्या को अंगों और उपांगों से जानने वाला हैं, उन्होंने कहा कि हे ब्रह्मचारी! मानो ब्रह्मचारी कौन है? उन्होंने कहा तीन प्रकार की विद्याओं का जो अध्ययन करता है, वह ज्ञान, कर्म, उपासना में मानो जब परिणत हो जाता है तो वह ब्रह्मचारी कहलाता हैं। उन्होंने पुनः कहा हे ब्रह्मचारी! यह ब्रह्मचारी कौन है? मेरे पुत्रों! देखो, आगे कोई मार्ग जब मौन हो गया तो उस समय मौन हो करके ब्रह्मचारी कहता है हे भगवन! ब्रह्मचारी उसे कहते हैं जो प्रत्येक श्वास की जो गतियां चल रही है, प्रत्येक श्वास को जो ब्रह्म सूत्र में पिरो देता है, वह ब्रह्मचारी कहलाता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि अपने में कितना भावुक बन करके, आचार्य अपनी आभा में परिणत हो रहा हैं, और वह कह रहा है ब्रह्मचारी मैंने स्वीकार कर लिया। परन्तु यह ब्रह्मचारी कौन होता हैं? उन्होंने कहा भगवन! ब्रह्मचारी वह होता है, जो ब्रह्म और चरी को जान करके और ब्रह्म की रचना को जान लेता है और रचना को अपने श्वास की गति को, दोनों को ब्रह्म सूत्र में पिरो देता है, वह ब्रह्मचारी ब्रह्म की चरी को अपने में चरने वाला बन जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार, जहां भी देखो, गो शब्द आता हैं, तो बेटा! बहुत दूरी चला गया हूँ, ऊँची उड़ाने उड़ने लगा हूँ विचार यह प्रारम्भ हो रहा था क्या जहाँ मुनिवरों! गो शब्द आता है यौगिवाद में वहाँ मुनिवरों! देखो, इन्द्रियों का नाम गो है और जब आचार्य के कुल में जाते हैं तो ब्रह्मचारी गो नाम का पशु हैं, और उसे मेध बनाना ही आचार्य का कर्तव्य है मेधावी बना देता हैं और मेधावी जब बनता है। तो वह ब्रह्मवर्चोसि बनता है। ब्रह्मचरिष्यामि बनता है, और ब्रह्मचरिष्यामि बन करके वह अपने को ब्रह्म सूत्र में वह पिरो देता है। दोनों को सहित और ब्रह्म को जान करके तो मेरे प्यारे! देखो, यहाँ यह प्रसंग इसीलिए क्योंकि विद्यालय में इस प्रकार जब आचार्य के चरणों में विद्यमान हो करके, इस प्रकार का अध्ययन करता है। तो बेटा! वह अपने में धन्य हो जाता हैं। अपने में वह महान अपने में अकृतियों को स्वीकार कर लेता हैं मेरे प्यारे! देखो, वास्तव में तो मेधावी माता बनाती हैं। परन्तु आचार्य उस मेधावी को जागरूक कर देता हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! मैं अपने विचारों को दूरी न ले जाऊं जब जब भी किसी काल में मुनिवरों! देखो, गो शब्द जब राष्ट्र के ऊपर आता है तो राजा मेरे प्यारे! देखो, गो धन की पूजा करता हैं, पूजा का अभिप्रायः यह है कि राजा के राष्ट्र में मानो देखो, गौ की सेवा होनी चाहिए गो धन होना चाहिए क्योंकि राजा के राष्ट्र में जब दुग्ध देने वाला पशु होता है। तो मानो देखो, राजा का राष्ट्र धन्य हो जाता है। क्योंकि राजा उस मानो राजा के राष्ट्र में प्रजा उसके घृत से मानो गो दुग्ध से वह याग चलता हैं, वह देवताओं की पूजा करता है, उससे पर्जन्य होता है, उससे वृष्टि होती हैं। तो इसीलिए तो जहाँ मुनिवरों! गो शब्द राष्ट्र के लिए आता है तो राजा को चाहिए कि देखो, वह गो की सेवा करे और गो मानो देखो, गो उसे कहते हैं गो वर्णनं ब्रह्म गो यहां पशु को कहा गया है दुग्ध देने वाले पशु का नाम मुनिवरों! देखो, गो कहा गया है। हमारे आचार्यों ने मुनिवरों! देखो, पुरातन काल में जब राजा के यहाँ कोई महापुरूष जाता है, तो वह गो को मानो देखो, उसे संकल्प में देते, और ये कहते कि हे भगवन! हे ब्रह्मचरिष्यामि! हे महात्मन! इसको स्वीकार कीजिए। मेरे प्यारे! देखो, एक समय एक राजा हमारे यहाँ अयोध्या में बहुत से राजा हुए हैं, अयोध्या एक प्रीचि नाम के राजा हुए हैं, जो भगवान मनु देखो, मनु वंश में हुए हैं प्रीतिक मनु देखो, एक समय मुनिवरों! अपने आसन पर विद्यमान थे एक महात्मा उनके द्वार पर पंहुचे तो महात्मा ने जब उन्हें भिक्षा में देहि कहा तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने कुछ द्रव्य देना प्रयास किया। उन्होंने उन्होंने स्वीकार नही किया उन्होंने विचारा कि महापुरूष है उन्होंने कुछ और विशेष द्रव्य दिया वह भी स्वीकार नही किया। उन्होनें मेरे पुत्रों! एक दुग्ध देने वाले पशु को प्रदान किया तो देखो, ऋषि ने हर्ष से उसे स्वीकार कर लिया तो मुनिवरों! देखो, राजा

ने कहा कि-प्रभु! द्रव्य से आप प्रसन्न क्यों नही हुए आप देखो, दुग्ध देने वाले पशु से क्यों प्रसन्न हुए, उन्होंने कहा यह प्रभु यह जो गो है, यह धन हैं और गो से मानो देखो, गो के घृत और दुग्ध से द्वारा मैं वायुमण्डल का शोधन करूंगा, और शोधन करने के पश्चात उस परमाणुवाद में मैं योगाभ्यास करूंगा और योगाभ्यास करके ही मैं प्राण को अपान में अपान को देखो, समान में समान को व्यान को और उदान को व्यान में प्रवेश करता हुआ। मैं एक दूसरे प्राण को मैं समेटता हुआ और एक सूत्र में इन प्राणों को एक माला के रूप में ला करके मैं मानो देखो, इसके दुग्ध से मेरा जीवन धन्य हो जाएगा। मेरे प्यारे! देखो, वायुमण्डल से जो भी अपने में समाधिष्ट होता हैं। यदि देखो, कहीं देखो, महापुरूष साधना में परिणत होता है, वह प्राणायाम करता है। वह मानो देखो, रेचक और कुम्भक में परिणत हो जाता हैं यदि वह देखो, संकल्पोमयी प्राण में प्रवेश हो जाता हैं। तो उसे प्रकृति से शुद्ध वायुमण्डल प्राप्त नही होता तो बेटा! तो उसक साधना नही बनती साधना जब भी बनती है। साधना उसी काल में बनती है देखो, यहाँ सुगन्धि होती हैं, और सुगन्धि से देखो, साधना का नृत्त होने लगता हैं। वह तो यहाँ महापुरूषों का सदैव यह क्रियाकलाप रहा हैं। क्या जहाँ भी वह विद्यमान रहते हैं वहाँ उनके चित्र गमन करते रहते हैं, इसीलिए यहाँ महापुरूष जहाँ तपस्या करता है, वही मानो देखो, वहाँ अपनी नाना प्रकार इच्छाओं को त्याग करके उस आसन पर जाता है। क्या यहा अमुक ऋषि ने तपस्या की हैं और यहाँ मन की धाराएं मन मानो देखो, पवित्र बन जाएगा। हमारे यहाँ राजा जब भी राष्ट्र के क्रियाकलापों से मानो वह अशान्त हो जाते तो राष्ट्र को त्याग करके वह उन आसनों पर जाते जहाँ ऋषि-मुनि तपस्या करते थे, चाहे वह मानो वह तपस्वी है, या नही है, उस स्थली पर जा करके अपने मन में देखो, शान्ति की स्थापना हो जाती। क्योंकि उसका परमाणुवाद उसकी तरंगें उनके चित्र मुनिवरों! देखो, वायुमण्डल में गमन करते रहते थे, तो मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता है कि जहाँ गो का सम्बन्ध आता है, मैं गो की चर्चा कर रहा था मेरे प्यारे! देखो, जहाँ गो शब्द आता है, वहाँ राष्ट्र का वाची है, राजा को चाहिए कि वह प्रातःकालीन क्या अपने राष्ट्र को यह आदेश देने वाला हो क्या दुग्ध देने वाले पशु की रक्षा होनी चाहिए। गो धन की रक्षा होनी चाहिए। क्योंकि गो धन ही राष्ट्र को ऊँचा बनाता है, मैंने बहुत पुरातन काल में बेटा! निर्णय देते हुए कहा क्या गो का एक श्वास है, उसका जो दुग्ध है, मानो देखो, आयुर्वेद में उसका बड़ा महत्व गया है, बेटा! मुझे बहुत समय हुआ जब आयुर्वेद का अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ परन्तु आयुर्वेद में यह आता रहा है कि गो का जो दुग्ध है उमसें स्वर्ण है, और वह स्वर्ण को पान करने से, स्वर्ण युक्त दुग्ध का पान करने से मानव का अन्तर्हृदय पवित्र बनता चला जाता हैं। और दुग्ध जब दुहा जाता है, तो दुग्ध देता हुआ पशु जब प्रसन्न होता है तो मेरे प्यारे! देखो, मैंने तुम्हें कई कालों में वार्त्ताएं प्रगट की भगवान राम के राज्य में भी इसी प्रकार का नृत्त होता रहा है। बेटा! देखो, मुझे स्मरण है राम के काल में मुनिवरों! देखो, जब वह तपस्या मे परिणत हुए तो वहाँ उनके द्वारा एक इन्द्र ने कामधेनु गऊ उन्हें प्रदान कर दी थी और उस मानो देखो, गो धन के वह दुग्ध का आहार करते थे और उसी से वह तपस्या में परिणत मानो देखो, यौगिकवाद में बेटा! इन्द्रियों से भी दुग्ध को दुहा जाता है। आज मैं बेटा! कहाँ तक वर्णन कर सकता हूँ। यह तो बड़ा विशाल एक गो धन का एक वन हैं, केवल विचार-विनिमय हमारा केवल यह है बेटा! क्या हम मुनिवरों! देखो, गो नाम की अमृतां देखो, राष्ट्र का वाची देखो, जो गो है। वह राष्ट्र के ऊपर दायित्व होता है। राजा के चाहिए कि राजा के राष्ट्र में निद्वन्द हो करके विचरण करने वाला जब पशु धन होता हैं, तो राजा का राष्ट्र पवित्र बनता रहता है। मानो देखो, राजा को चाहिए कि वह अपने में अपनेपन का ध्यानावस्थित होता रहे विचारता रहे प्रातःकालीन हमारे यहाँ जब गो धन का दर्शन कर लेता है। ऐसे राजा बेटा! मनु वंश में हुए हैं। रघु वंश में भी मनु वंश में भी बहुत से राजा ऐसे हुए है जो गो का दर्शन करके देखो, वह अपने को धन्य स्वीकार करते थे अन्नाद उसी से प्राप्त करते रहे हैं। तो आज बेटा! मैं इस सम्बन्ध

में विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने आया हूँ क्या देखो, वाक् उच्चारण करते-करते बहुत दूरी चला गया विचार केवल यह कि मुनिवरों! देखो, अपनी-अपनी स्थलियों पर गो नाम का अपना बडा महत्व हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में माना गया है। वैदिक साहित्य में बहुत-सी चर्चाएं आती रहती हैं आज का विचार बेटा! हमारा क्या कह रहा हैं आज का विचार यह कहता है क्या मुनिवरों! देखो, मानव को यौगिक बनना चाहिए मानव को ब्रह्मवर्चोसि बनना चाहिए और मानव को राजा बन करके अपने यहाँ गो धन की सेवा करनी चाहिए। जिससे आयुर्वेद ऊँचा बने जिससे मानो देखो, आयुर्वेद की प्रतिभा महान बनती रहे और अमृते कृतं देवत्वां क्योंकि देखो, हमारे यहाँ उसी कामधेनु गऊओ से बेटा! देखो, हमारे यहाँ राजा देखो, अश्वमेध याग करते रहते थे अश्व नाम राजा का हैं और देखो, मेध नाम प्रजा का है, जब प्रजा और राजा मिल करके देखो, राष्ट्र को उन्नत बना करके विचारों की सुगन्धि देते रहे हैं, विचारों की सुगन्धि से देखो, राष्ट्र ऊँचे बनते हैं, विचारों की सुगन्धि से गृह ऊँचे बनते हैं। मुनिवरों! देखो, विद्यालयों में कहा है कि विद्यालय जब ही विचार होते हैं। तो विद्यालय पवित्र बनते हैं विद्यालयों विचारों की हीनता नही होनी चाहिए। जब विद्यालयों में हिंसा से विचार आते हैं तो विद्यालय भ्रष्ट हो जाते हैं। राजा के राष्ट्र जब हिंसक प्राणी हो जाते हैं तो राजा का राष्ट्र भ्रष्ट हो जाता है। गृह में जब माता अथवा पति पत्नियों में दोनों में हिंसक विचार आ जाते हैं तो वह गृह अस्वस्थ हो जाता है। तो इसीलिए प्रत्येक मानव को चाहिए क्या हम अपने में महान उग्र मधुरता ज्ञान और विज्ञान को जान करके अपने जीवन को व्यतीत करना चाहते हैं। मेरे प्यारे! मुझे वह काल भली-भाति स्मरण आता रहता है त्रेता के काल में राम यही तो घोषणा करते रहते थे क्या मेरे विचारों में जहाँ मेरे राष्ट्र में देखो, प्रत्येक गृह में वेदमन्त्रों की ध्वनि से याग होता हो सुगन्धि से मानो देखो, विचारों से सुगन्धि आती हो, जहाँ पदार्थों की सुगन्धि वहाँ विचार की सुगन्धि भी बहुत अनिवार्य हैं। क्योंकि विचारों की सुगन्धि से देखो, यह वायुमण्डल पवित्र हो जाता है। वायुमण्डल में दुषितपना नही रहता, दूषितपना जब भी होता है न मानो देखो, खनिज को ले करके अग्नि में नष्ट करते हैं तो उससे भी नही होता जितना विचारों से होता है। यह जो विचारों का धन है। यह सबसे महान धन कहा गया हैं। राष्ट्र की सम्पदा मानी गई है। राजा के राष्ट्र में बेटा! देखो, जितने ब्रह्मवेत्ता और रक्षक प्राणी होते हैं, उतना ही राष्ट्र पवित्रता की वेदी पर रत्त हो जाता हैं, आओ, बेटा! देखो, मैं आज तुम्हे विशेष चर्चा प्रगट करने नही आया हूँ, मुनिवरों! देखो, राजा बन करके जब अग्नि में मुनिवरों! देखो, देना प्रारम्भ करता हैं। उन विचारो को वायुमण्डल में प्रवेश करता है, बेटा! राष्ट्र उन्नत बन जाता हैं। मुझे महाराज अश्वपति का राष्ट्र स्मरण है बेटा! देखो, वह कहाँ तक उच्चारण करूं इन वाक्यों को मुझे वह काल स्मरण आते रहते हैं। जब महाराज अश्वपति के राष्ट्र में मेरे प्यारे! देखो, उनकी पत्नी और वह याग करते थे प्रातःकालीन समिधा के द्वारा देखो, अग्न्याध्यान करके वह गृह में सुगन्धि करते सुगन्ध करने के पश्चात उसके पश्चात मुनिवरों! देखो, अपने क्रियाकलापों में तत्पर हो जाते वह कृषि का उदगम् स्वतः करते थे और वह अपने में राष्ट्र का क्रियाकलाप बनाते थे। क्योंकि वह राष्ट्र में देखो, वह यह उच्चारण करते रहते थे क्या देखो, प्रजा के वैभव को संग्रह करने वाला कोई राजा नही हुआ, वे राजा नही कहलाएगा, वह दैत्य प्रवृत्ति का कहलाता हैं। और जो मानो देखो, स्वतः राजा है मानो देखो, वह स्वयं कला कौशल करके और देखो, जो गृह गो अमृत देखो, गो का दुग्धाहार करने वाले और देखो, जो राष्ट्रीय परम्परा को ऊर्ध्वा में ले जाते हैं। वह सुगन्धि ही सुगन्धि देते हैं। वह राजा पवित्र कहलाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, मैं आज तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नही आया हूँ मैं बहुत दूरी चला गया हूँ, विचार देते-देते विचार केवल यह कि राजा को अपने गो धन की सेवा करनी चाहिए। उसकी रक्षा करनी चाहिए और मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारी विद्यालय में आचार्य ब्रह्मचारी अपने विचारों से और अपने मानो इन्द्रियों को सुसज्जित बनाएं, और ब्रह्मवर्चोसि बन जाएं ब्रह्मचरिष्यामि बन जाएं, और प्रत्येक श्वास को मुनिवरों! देखो, ब्रह्म सूत्र में पिरोना पिरोने के

लिए तप करो जिससे वह माला बन करके और और वह भेंखरी मुद्रा में मानो परिणत हो जाएं। मेरे प्यारे! देखो, यौगिकवाद में जब प्रवेश हो जाएगा तो प्रत्येक इन्द्रियों के ज्ञान विज्ञान को जान करके हृदय रूपी यज्ञशाला में याग करने वाला हो और वह अपने हृदय का परमात्मा के हृदय से मिलान करते हुए मुनिवरों! देखो, उसमें रत्त हो जाएं। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन। अच्छा भगवन्! आज्ञा।

१५ गौ का मन्थन ०१-१०-१९९०

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा, जो महान् हैं जो इस ब्रह्माण्ड का रचयिता कहलाता है, हम उस परमपिता परमात्मा की महती का गुणगान गाते चले जा रहे थे, क्योंकि हमारा प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महती का प्रायः वर्णन करता रहता है और यह उद्गीत गाता रहता है कि यह जो ब्रह्माण्ड है, इसका जो एक-एक परमाणु है, अणु है, यह उस परमपिता परमात्मा की महती और विचित्रता कहलाती है, जिसके ऊपर मानव सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के वर्तमान के काल तक अन्वेषण कर रहा है अथवा विचार-विनिमय कर रहा है। परन्तु वह ऐसा अनुपम है, ऐसा विचित्र है कि उसको जानता ही रहता है, अन्त में बेटा! वो मौन हो जाता है। क्योंकि उसका जगत् एक ऐसा अनुपम है, जो अन्त में मानो विचार-विनिमय करता हुआ अपने में मौन हो जाता है। तो इसीलिए मानव को अपने जीवन में उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान के ऊपर अन्वेषण करना चाहिए।

विचार-विनिमय

आज मैं, बेटा! तुम्हें उस वेदमन्त्र की विचित्रता वर्णन कर रहा हूँ। जो हमारे यहाँ वैदिक मन्त्रों में जिसका उद्गीत गाया जाता है, मानो वह उद्गीतां भूः वर्णनं ब्रह्वे कृतं देवत्वाम् क्या वो ऐसा महा देवतव है कि जिसकी देवत्वा का वर्णन करता हुआ मानव, उसके गुणों का गुणाधानम् करने लगता है, और करता-करता बहुत दूरी चला जाता हैं, परन्तु वाणी का जो विषय है, वो शान्त हो जाता है और मौन हो जाता है। तो इसीलिए, बेटा! ऐसा जो देव है, हम उस देव को अपने अन्तःकरण में धारण करते, उसकी वृत्तियों को अपने में अपनेपन का भान होता रहे। बेटा! ये हमारा एक विचार वैदिक साहित्य में प्रायः आता रहा है।

वेदमन्त्र की प्रेरणा

आओ, मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ बेटा! वेद हमे बारम्बार यह प्रेरणा दे रहा है, प्रेरित कर रहा है कि जहाँ जो शब्द उद्गीत रूप में गाया जाएं, वहाँ उसको उसी रूप में गाना चाहिए। उस शब्द का, उसकी जो रचना है, उसको विकृत नहीं करना चाहिए। तो इसी प्रकार का जो हमारा वेद का मन्त्र हमें यह प्रेरित करता है कि गौ नाम की विवेचना दे रहा है, आज भी, बेटा! गौ शब्द आ रहा था। आज भी, मुनिवरों! तपस्या के सम्बन्ध में बड़े विचित्र अंकुरों का उद्धृत किया जा रहा था। तो इसीलिए हम विचार-विनिमय, करने वाले बनें और हम, मुनिवरों! उस परमपिता की महती और उसकी अनन्तता के ऊपर सदैव विचार-विनिमय करते रहें।

तपस्या

आओ, मुनिवरों! देखो, वेद का मन्त्र पुनः से हमें यह प्रेरणा दे रहा है कि प्रत्येक प्राणी मात्र तपस्या में परिणित हो जाएं। क्योंकि बिना तप के हमारा जो मस्तिष्क है, हमारे मस्तिष्क में मानो जो मेधावी है, और ऋतम्भरा भी है उसका विकास नहीं हो पाता है। क्योंकि जब तक हम मन, कर्म, विचार और शान्त मुद्रा में मुद्रित हो करके उसका अध्ययन नहीं करते और उसके ऊपर ऊर्ध्वा में विचार-विनिमय नहीं करते, तब तक, मुनिवरों! देखो, हमारे जीवन की जो मानवीय सार्थकता है, वह इतनी विकसित नहीं हो पाती जितनी हम अपने में धारण किए रहते हैं। हम अपने में विचार-विनिमय और उसकी धाराओं को साकार रूप में लाना चाहते हैं। तो इसीलिए, बेटा! हमारा वेदमन्त्र ये ही कह रहा है- हे मानव! तू तपस्वी बन, क्योंकि बिना तप के यह संसार हमें दृष्टिपात नहीं

आ रहा है। प्रत्येक प्राणी अपने में तपस्वी बना हुआ है। मेरे प्यारे! बाल्यकाल से युवाकाल और वृद्धकाल तक मानव तपस्वी बना रहता है। और, तपस्या का अभिप्रायः केवल यही है कि हम अपने जीवन का सदुपयोग करें, अपने जीवन में मानो और निष्क्रिय ना बन जाएं। हमारा जीवन जब क्रियात्मक बना रहता है, मन-कम-वचन से हम ऊर्ध्वा में उड़ाने उड़ते रहते हैं, तो प्रायः वही हमारे देखो, क्रियाकलापों का एक मूल है और वही तपस्या में उसका परिवर्तन हो जाना है।

गौ का महत्त्व

आओ, मेरे प्यारे! तुम्हें मैं उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूं गौ शब्द की विवेचना आती रहती है। इस गौ शब्द को ले करके मानव ने कितनी अपनी उड़ाने उड़ी हैं और कितना इसमें तप किया है! क्योंकि प्रत्येक मानव देखो, तपस्वी बन जाता है, यदि गौ शब्द को जान ले। मेरे प्यारे! देखो, तुम्हें इससे पूर्व काल में निर्णय देते हुए कहा था कि, मुनिवरों! देखो, जिस भी काल में ये राष्ट्रवाद का निर्माण हुआ, चाहे वह भगवान मनु से हुआ हो, चाहे वह उससे ऊर्ध्वा में हुआ हो, परन्तु देखो, उन्होंने सर्वत्र राष्ट्रवेत्ताओं ने और देखो, आग्रजम् इसका निर्माण किया, राष्ट्रवाद का, तो कर्त्तव्यवाद में मुनिवरों! देखो, तो अग्रतम् गौ की रक्षा करने के लिए परम्परागतों से, बेटा! एक नियमावली, मानवीय क्षेत्र में, मानो देखो, एक ऊर्ध्वा रूप धारण करके आई, जो सृष्टि के प्रारम्भ से चली आ रही है। मानो इस संसार का मन्थन करने के पश्चात् ये ऋषि-मुनियों ने अपनी नियमावली का निर्माण किया और नियमावली बनाते उन्होंने, बेटा! गौ नाम के पशु की रक्षा करने के लिए कहा है। इसीलिए, राष्ट्र का अपना एक दायित्व हो जाता है और राष्ट्र यह विचारने लगता है कि हमें प्रत्येक प्राणी की रक्षा करनी चाहिए। क्योंकि परमात्मा ने जितने भी प्राणियों को जन्म दिया है, अथवा उसकी उग्र क्रिया से जिसका भी निर्माण हुआ है, चाहे वह, मानो देखो, वह उद्भिज सृष्टि हो, चाहे वह जंगम सृष्टि हो, चाहे वह स्थावर और चाहे वह अण्डज सृष्टि क्यों न हो। परन्तु देखो, ये त्रि जो सृष्टि है ये जो अण्डज, श्वेदज, कंगम है मानो देखो, इसमें प्राणीमात्र अपने में वृत्तियों में रत्त होता रहा है। और ये मुनिवरों! देखो, इन सबकी रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य बन जाता है। क्योंकि एक दूसरे में यह प्राणीमात्र एक लाभप्रद माना गया हैं मानो देखो, गौ नाम को पशु है, वह प्रत्येक रूप में मानो देखो, मानव का साथी बना हुआ रहता है, अंग-संग रहता है।

मानो देखो, जब यही गौ नाम का शब्दः कृषि के क्षेत्र में कृषक के द्वार पर पहुंचा, तो बेटा! कृषक इसी कामधेनु गऊ के बछड़ों को ले करके, पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना कर देते हैं और वही, मानो देखो, धेनु बन करके दुही जाती है। यहाँ, बेटा! पृथ्वी को कामधेनु माना है। पृथ्वी को धेनु के रूप में वर्णित किया है। धेनु उसे कहते हैं जो दुही जाती हो। उसे बेटा! कृषक इसके गर्भ में से नाना प्रकार के खाद्यान्न को उत्पन्न करता रहता है। और, यही शब्द जब वैज्ञानिकों के कुल में पहुंचा, तो वैज्ञानिकों ने बेटा! इस कामधेनु शब्दों से मुनिवरों! देखो, विज्ञान के स्वरूप में अपने को ले गएं और वहाँ मुनिवरों! देखो, इसको दुहना प्रारम्भ किया तो मुनिवरों! देखो, इस पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार का जो खनिज दृष्टिपात आ रहा है, उस खनिज को, मुनिवरों! देखो, वैज्ञानिकों ने दुहना प्रारम्भ किया और उसे जानने के पश्चात् नाना प्रकार के यन्त्रों का उन्होंने निर्माण किया, नाना उपकरणों की वृत्तियों में पहुंच गये। तो विचार आता रहता है, बेटा! यह जो पृथ्वी है, यह धेनु है, परन्तु पृथ्वी का नाम भी धेनु माना गया हैं। जैसे इन्द्रियों का नाम गौ कहलाता है, ऐसे ही गौ नाम पृथ्वी का है। और, यह गौ नाम की जो पृथ्वी है, इसको कौन दुहने वाला हे? वैज्ञानिक दुहता है। और वैज्ञनिक, मुनिवरों! देखो, इसके गर्भ में से नाना प्रकार के मानो खनिज पदार्थों को जान करके विज्ञानवेत्ता बनता है। वह विज्ञानवेत्ता बन करके, बेटा! देखो, राष्ट्रीयताउसमें निहित रहती है। तो विचारा आता रहता है, मुनिवरों! देखो, यह जो गौ शब्द है, ये भिन्न-भिन्न रूपों

में वर्णित होता रहा।

गौ नाम के पशु की सेवा का महत्त्व

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, महाराजा रघु का राष्ट्र। राजा रघु के राष्ट्र में, मुनिवरों! देखो, जब धेनु की सेवा होती थी। मेरे प्यारे! देखो, द्रव्यां भूः वर्णम् जिस समय, मुझे स्मरण आता रहता है, जब मुनिवरों! देखो, वरतेन्तु ब्रह्मचारी ने, मुनिवरों! देखो, यह कहा कि -प्रभु! मुझे पूज्यपाद गुरु के देने के लिए, मुझे मुद्रा चाहिए। मेरे प्यारे! उन्होंने चौदह लाख मुद्रा का प्रश्न किया। महाराजा रघु ने उस समय मानो एक अश्वमेध-याग किया थां यह अश्वमेध भी क्या, सर्वत्र याग किया था और सर्वत्र याग में उन्होंने जितना द्रव्य था वो सब मानो देवताओं को हूत कर दिया था, देवताओं को प्रदान कर दिया था वे कामं द्रव्ये व्रतं देवाः मानो देखो, गृह में कुछ न रहा। गृह में केवल वे पृथ्वी के, रज के पात्र रह गएं थे। खनिज पात्र भी न रहे, धातु के पात्र भी समाप्त कर दिए थे। तो मुनिवरों! देखो, जब ब्रह्मचारी ने यह प्रश्न किया तो आचार्य ने ये मानो देखो, अमृत करने के पश्चात वह तो विराजमान हो गए तो उस समय रघु ने कहा कि - मैं द्रव्य की देखो, इनकी इच्छा कैसे पूर्ण करूं? मेरे प्यारे! अपनी देवी से बोले- हे देवी! यह कैसे इच्छा पूरी हो कि मैं ब्रह्मचारी की आज्ञा का पालन करूं? क्योंकि ब्रह्मचारी यदि मेरे आश्रय से इच्छा पूर्ण हुए बिना चला गया तो मैं पातक बन जाऊंगा, मैं पाप का पातक बनूंगा। इसलिए यह शोभा नहीं देता। देवी ने कहा-प्रभु! कोई आपके विचार इस सम्बन्ध में। मेरे प्यारे! रघु ने कहा-देवी! मेरे विचार में यह आता है कि कुबेर से द्रव्य लाया जाएं और संग्राम करना चाहिए। क्योंकि राजा का यह कर्त्तव्य माना गया है, राजा का यह कर्त्तव्य है कि देखो, भिक्षुक आया है और उसकी यदि हम आज्ञा का पालन नहीं कर सकते तो मानो यह हमारे लिए सुशोभनीय नहीं है हमें मानो इसकी इच्छा को पूर्ण करना चाहिए। तो उस समय राजा रघु ने जब यह कहा तो देवी ने यह कहा-प्रभु! चिन्तन करो।

मेरे पुत्रो! मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है कि उन्होंने, बेटा! देखो, राज सभा -अमृतम् उन्होंने अपनी राज सभा में देखो, जो सेवक थे, ब्रह्म कृतम् जो मानो सेना के नायक थे, उन्हें एकत्रित किया और ये कहा -हे सेना के नायको! अमृतम् जाओ, कुबेर से तुम संग्राम करो और कुबेर से संग्राम करके वहाँ से द्रव्य लाओ। चौदह लाख मुद्राएं मानो जितना द्रव्य तुम्हें प्राप्त हो जाय और यह ब्रह्मचारी को तुम्हें प्रदान करना है। क्योंकि ब्रह्मचारी अपने में वृत्तियों में रत्त रहने वाला है। यह ब्रह्मचारी अपना प्रतिज्ञा है और आचार्य से प्रतिज्ञ हुआ है। क्योंकि प्रत्येक ब्रह्मचारी चाहता है क्या मैं अपने गुरु की आज्ञा का पालन करूं। मेरे पुत्रो! प्रत्येक पुत्र यही चाहता है, कि मैं अपनी माता की आज्ञा का पालन करूं। परन्तु ब्रह्मचारी माता की आज्ञा को एक समय उल्लंघन कर सकता है, परन्तु आचार्य के वचनों का उल्लंघन नहीं कर सकता। क्योंकि माता तो जन्म देने वाली है और आचार्य जीवन देता है, उसे द्विज बनाता है। उसे, मानो सर्वत्र अपना चिन्तन किया हुआ, चिन्तन, यह विचार उसे प्रदान करता रहता है, तो इसलिए मानो देखो, वह प्रतिज्ञा है।

जब ये वाक्य नायकों ने श्रवण किया, उन्होंने कहा-प्रभु! जैसी आपकी इच्छा हो। तो वे महाराजा रघु की आज्ञा का पालन करने के लिए तत्पर हो गये। उन्होंने अपनी सेना को सजातीय बनाते हुए और महाराजा कुबेर के ऊपर आक्रमण करने का विचार किया। मानो देखो, उनके जो ब्रहे, गुप्तचर विभाग वाले थे, मेरे प्यारे! देखो, गुप्तचरं ब्रहे वे देखो, कुबेर के समीप पहुंचे और कुबेर से कहा-कि महाराज! आपके राष्ट्र पर आक्रमण होने वाला है और देखो, एक वरतेन्तु ब्रह्मचारी उनके समीप आया है और उन्होंने भिक्षा पाने के लिए, मुद्राएं स्वीकार मुद्राओं को कहा है और मुद्रा देखो, रघु के समीप तो है नहीं, वह तुम पर आक्रमण करके मुद्रा ले जाएगा। मुनिवरों! देखो, उन्होंने कहा-ये मुद्राएं बिना संग्राम के प्रदान कर दो। महाराजा कुबेर ने यह कहा तो उनके सेवकों ने, मुनिवरों! देखो,

अपने वाहनों में मुद्राओं को ले करके, मुनिवरों! देखो, रात्रि काल में ही वे मुद्राएं महाराजा रघु के यहां उन्हें प्रदान कर दीं, और जब वे उनके नायकों को प्रदान की, नायक ले करके प्रातःकालीन, मेरे पुत्रो। ऐसा स्मरण है,जब राजा रघु के समीप ले गएं जो राजा रघु ने कहा-कहो। उन्होंने कहा-प्रभु! मुद्रा आ गई है महाराजा कुबेर तो, मानो देखो, जानते हैं कि तुम्हारे ऊपर आक्रमण होगा, उन्होंने वैसे ही बिना आक्रमण के मुद्रा प्रदान कर दीं।

तो मुनिवरों! देखो, जब उसमें से मुद्राएं, सर्वत्र मुद्राएं, देखो, राजा रघु ब्रह्मचारी को प्रदान करने लगे तो ब्रह्मचारी ने कहा -प्रभु! मेरे आचार्य की ये आज्ञा है कि मैं चौदह लाख मुद्राएं ले जाऊं। उन्होंने कहा-नहीं ये द्रव्य तो, जितना कुबेर से आया है, ये सब द्रव्य तुम्हारा है हे वरतेन्तु! मानो ये द्रव्य हमारा नहीं है। मेरे प्यारे! देखो, वह वरतेन्तु कहता है कि-नहीं, भगवन! मैं तो उतना ही द्रव्य ले जाऊंगा, जितना मुझे आचार्य को प्रदान करना है और मानो ब्रह्मो वृत्तम् और यह द्रव्य, मानो देखो, विशेष नहीं ले जाऊंगा। उन्होंने बेटा! दोनों का विचार, मानो संग्राम में परिणित हो गया। दोनों का विचार देखो, शब्दों का संग्राम होने लगा। राजा ने कहा-यह द्रव्य मेरा नहीं है। और ऋषि ने कहा-नहीं विशेष द्रव्य मेरा नहीं है, मेरा उतना है जितना मुझे इच्छा है। मेरे पुत्रो! देखो, जब बहुत समय हो गया तो महाराजा महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज आ पहुंचे और वशिष्ठ मुनि महाराज ने कहा-हे रघु क्या संग्राम हो रहा है? उन्होंने कहा-प्रभु! ये द्रव्य कुबेर से आया है और ये ऋषि का द्रव्य है, ये मेरे राष्ट्रकोष में नहीं जाना चाहिए। मानो देखो, ये ब्रह्मचारी कहता है ये द्रव्य मुझे इतना ही चाहिए। तो मेरे पुत्रो! देखो, जब दोनों का संग्राम होता रहा, तो महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज ने महात्मा वृत्ति से कहा - कहो भगवन! क्या किया जाए, इनका निमटारा कैसे हो? उन्होंने कहा-यह तो राष्ट्र का कोष है, कुबेर को दे दो जो उनका विशेष है। जब महाराजा कुबेर, को यह सूचना प्राप्त हुई तो उन्होंने कहा कि मैं द्रव्य को नहीं लूंगां जो द्रव्य मेरे कोष में से चला गया, वो द्रव्य मेरा नहीं है। वो जिसके द्वारा गया, उन्हीं का द्रव्य है। वहाँ देखो, बेटा! कैसी विचित्रता है, न तो विशेष द्रव्य को ब्रह्मचारी अपना रहा है, न राजा ही राजकोष में अर्पित करना चाहता है न उस द्रव्य को, मुनिवरों! देखो, महात्मा कुबेर लेना चाहता है।

मुनिवरों! देखो, महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज ने अंगिरस गोत्र के वृत्ति मुनि को निमंत्रित किया और वृत्ति मुनि से कहा -प्रभु! इनका निमटारा किया जाएं, तो दोनों ऋषियों ने यह निमटारा किया कि-हे राजन्! यह द्रव्य सब लेकर के जो विशेष है, ब्रह्मचारी से जो विशेष द्रव्य है, उसको देखो, गऊओं की सेवा में प्रदान कर दो। मेरे पुत्रो! देखो, हम जो वाक्य उच्चारण करना चाहते थे, वह यह था कि वो द्रव्य सब गऊओं की सेवा में लग गया। मेरे पुत्रो् वो राष्ट्रकोष में भी नहीं रहा।

तो विचार आता रहता है कि गऊओं की सेवा करना मानो राष्ट्र का कर्त्तव्य हैं, राष्ट्र जब अपने यहाँ देखो, गौ नाम के पशु की रक्षा करे। ये उस उसका दायित्व बन जाता है, और यदि उसके राष्ट्र में गौ धन की मानो हानि होती हे वह तो उनका वृत्तम देखो, वे ह्रस होते हैं, तो यह मानो देखो, राजा उसका, पाप का पात्र बन जाता है। तो विचार आता रहता है, मुनिवरों! देखो, प्रायः परमात्मा की सृष्टि में जितने प्राणी मात्र है, वे एक-दूसरे के सहायक बने हुए हैं। कोई भी मानव, देखो, प्राणी नष्ट नहीं होना चाहिए। परन्तु ये मानव का कर्त्तव्य है, क्योंकि मानव में बुद्धि है, मेधा है, ऋतम्भरा है और प्रज्ञावी कहलाता है, और प्रज्ञावी में किसी प्रकार की हिंसा नहीं रह पाती। तो इसीलिए विचार आता रहता है, क्या गौ की रक्षा होनी चाहिए। गऊ के बछड़े है, जो मानो देखो, कृषक के गृह में सुशोभनीय हो करके प्रकृति के गर्भ में बीज की स्थापना करते हैं, उसी से अन्नाद, मानो देखो, उत्पन्न होता है। गऊ के गर्भ से, यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, वह, मानो देखो, गौ-दुग्ध और घृत के द्वारा याग करता है, और वह देवताओं को हूत करता है।

ऋषियों की साधना में गौ नामक पशु का सहयोग

मुझे स्मरण आता रहता है, महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज को महाराजा इन्द्र के यहाँ से एक कामधेनु प्राप्त हुई। और, वह कामधेनु, मानो देखो, गौ थी जिसको महात्मा विश्वामित्र भी अपने गृह में नहीं ले जा सका। वह इतनी विशाल और विशेष थी कि यह कामधेनु, मुनिवरों! देखो, ऋषि की रक्षा कर रही है, ऋषि की हर प्रकार की रक्षा। महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज और माता अरूणधती बेटा! मुझे दृष्टिपात करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। दोनो, देखो, उसके दुग्ध और घृत से प्रातःकालीन ब्रह्मचारियों के मध्य में, बेटा! याग करते थे। और, जब वे याग करते थे तो उसी कामधेनु के घृत के द्वारा और पृथ्वी के साकल्य एकत्रित करके उससे याग करते थे। तो मेरे पुत्रो! देखो, वो देवताओं को हूत करना, अग्नि के मुखारबिन्दु में, मुनिवरों! हूत करना, यह उनका क्रियाकलाप बना रहा, यह उनका कर्त्तव्य रहा है।

मेरे प्यारे! देखो, जिस समय महात्मा विश्वामित्र ने मुनिवरों! देखो, वह धर्नुयाग का आयोजन किया था, तो ब्रह्मचारियों के मध्य में धेनु रहती थी, मानो देखो, गऊएं रहतीं उनके दुग्ध और घृत के द्वारा वे ब्रह्मचारी प्रातःकालीन् याग करते थे, और याग करके देखो, जैसे अग्नि के मुखारबिन्दु में मानो आहुति देता है, होताजन, यज्ञमान आहुति देता है और कहता है-मेरी आहुति मानो देवत्त्व को प्राप्त हो जाए। अग्नि उसको निगल जाती है, अग्नि अपने में उसे ग्रहण करके उसको उसे वितरण कर देती है।

मेरे प्यारे! जैसे, मानव का मुखारबिन्दु एक अग्नि के सदृश्य है, और वह देखो, हूत कर रहा है, अन्न की आहुति दे करके शरीर रूपी अग्नि को, बेटा! यही प्राणों का ग्रास बन जाता है। प्राण का मेरे प्यारे! प्राणों का वो साकल्य बन करके, प्राण, मुनिवरों! देखो, देवतव को, प्रत्येक देवता के अन्तर्हृदय में विराजमान रहते हैं। सब देवता उससे प्रसन्न हो जाते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, इसीलिए वेद का ऋषि कहता है कि यागां भूः वर्णास्ते इससे देखो, होता जन, यज्ञमान अग्नि के मुखारबिन्दु मे चरू प्रदान करते हैं, बाह्य जगत् पवित्र बन जाता है। इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, ये जो आन्तरिक जगत् है, ये भी जब हम हव्य पदार्थों को पान करते हैं, और प्राण को देते है, प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, उदानायं स्वाहा, कह करके बेटा! उसको तृप्त करते हैं। प्राण को जैसे तृप्त होते हैं, वही प्राण मेरे प्यारे! देखो, देवतव को प्राप्त होते रहते है, उनकी धाराएं, मानवीयत्त्व में परिणित रहती हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, वह जो हूत हो रहा है, वह सूक्ष्म बना करके, हृदय, देखो, शरीर रूपी जो अग्नि है वह प्राणों को संचारित करती रहती है। देखो, प्राण अपने में प्राणां करते हुए, मेरे प्यारे! देखो, वह स्थूल इन्द्रियों को प्रदान करते रहते हैं। तो विचार आता रहता है, मानवीय जीवन का संचार होता रहता है। तो मुनिवरों! देखो, इसलिए मानव को देखो ये याग करना चाहिए यागां भूः वर्णाम् मेरे प्यारे! देखो, विचार आता है, ऋषि-मुनि, मुनिवरों! देखो, गऊओं के घृत के द्वारा, और उनके दुग्ध के द्वारा देखो, याग करते थे और वह हूत करते थे। देवताओं को प्रदान करते रहे हैं। राजा जब याग करते थे, अश्वमेध याग हो, चाहे वाजपेयी याग हो, चाहे अग्निष्टोम याग हो, किसी प्रकार का याग हो, परन्तु वह सब घृत और दुग्ध के द्वारा देखो, याग करते हैं। वह अग्नि के मुखारबिन्दु में मानो प्रदान करते रहे हैं और हृदय रूपी देखो, मुखारबिन्दु में जो अग्नि प्रचण्ड हो रही है उसमें, अहा! उसमें हूत कर रहा है, तो बेटा! दोनों जगत् एक ऊर्ध्वा को प्राप्त हो हे है।

तो आओ, मेरे पुत्रो! मैं अपने विचारों को बहूत दूरी नहीं ले जाना चाहता हूँ, केवल विचार-विनिमय ये क्या जो भी, मुनिवरों! देखो, जो याग जैसे क्रियाकलाप है बाह्य जगत् में, वे गौ-घृत और दुग्ध के द्वारा ही मानो वह उनका जन्म, उनके जन्म की आवृत्तियाँ प्राप्त होती रहती है। वह, मुनिवरों! देखो, वह अपने में ही देखो, याग उसकी वृत्तियों में रत्त रहनेवाला है। तो आओ, मेरे प्यारे! विचार क्या चल रहा है? इसीलिए देखो, गौ की रक्षा

होनी चाहिए। मुनिवरों! देखो, गौ अपने में पवित्र है और वह, मुनिवरों! देखो, पशु है, परन्तु वह पशु देखो, जैसे मानव ब्रह्मचारी, बेटा! पशु होता है, आचार्य उसे मेधावी बना देता है, इसी प्रकर गौ घृत को ले करके मुनिवरों! देखो, वह यज्ञमान उसे परमाणु रूप बना करके देवताओं को प्रदान करता है देवता मेधावी बन जाते हैं, प्राणीमात्र, बेटा! मेधावी बन जाते हैं।

तपस्या संदर्भ में गौ का अर्थ

इसीलिए मुझे बहुत काल स्मरण आ रहा है, मैं विशेषकाल में जाना नहीं चाहता हूँ। बेटा! आचार्य के समीप जब ब्रह्मचारी देखो, ब्रह्मविद्या को प्राप्त करने के लिए जाते रहे हैं, उस समय तीन समिधाएं ले करके, मेरे पुत्रों! देखो, जब वे आचार्य के द्वार पर पहुंचे तो, आचार्यों ने ये कहा, सन्देश दिया- हे ब्रह्मचारियों! तुम ब्रह्म-जिज्ञासु हो, या ब्रह्म-यथार्थी हो? उन्होंने कहा-प्रभु! जो आप हमें बनाना चाहते हैं, हम तो वो हैं। उन्होंने कहा-तुम मुझे ब्रह्मवर्चोसि दृष्टिपात आ रहे हो। इसीलिए तुम मानो क्या चाहते हो? उन्होंने कहा-प्रभु! हम देखो, ऋत् और सत् और देखो, ब्रह्माण्ड की कृत्तियों को जानना चाहते हैं। हमने ये तो निश्चय कर लिया हैं कि देखो, ब्रह्म है। वह तो हम विश्वसनीय बन गएं कि ब्रह्म है। परन्तु हमें जब ब्रह्म का यह निश्चय हो गया तो प्रभु! हम उसकी कृति का और जानना चाहते हैं। हम ऋत् और सत् को सत् में रमण करना चाहते हैं। उसे अब तक नहीं जाने। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि कहते हैं-मेरे आश्रम का यह नियम है, ब्रह्मचारियों! कि तुम ब्रह्मचर्य व्रत से रहो, देखो, ब्रह्मचारी बन करके रहो, ब्रह्मवर्चोसि और गऊओं की सेवा करो, जब ये देखो, आचार्य ये कहता है गऊंओं की सेवा करो और ब्रह्मचारी रहो। मेरे प्यारे! देखो, यह तो तुम्हें प्रतीत हो ही गया है क्या जो जिज्ञासु, मुनिवरों! देखो, गृह को त्याग करके बाल्यकाल से जो निश्चित ब्रह्मचारी है, क्या वो ब्रह्मचारी नहीं है? परन्तु देखो, वह ब्रह्मचारी है। पुनेत देखो, पुनः से ऋषि कहता है- हे ब्रह्मचारियों! तुम ब्रह्मचारी रहो, और मैं गऊंओं की एक वर्ष सेवा करो। उसके पश्चात् तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर मैं जानता होऊंगा तो अवश्य दे पाऊंगा। मेरे प्यारे! उसमें से कबन्धि ने कहा, ब्रह्मचारी कबन्धि ने कहा-हे प्रभु! आज ये तो हमें यह प्रतीत हो गया कि आप जानते है, क्योंकि आप नहीं जानते होते तो हमें प्रथम आप कोई आज्ञा नहीं करते, हम आज्ञा के पात्र हैं, भगवन! आपने कहा ब्रह्मचारी रहो, निश्चित रहों और गऊओं की सेवा करो और मैं जानता होऊंगा तो उत्तर दूंगा। प्रभु! ऋषि अभिमान नहीं करते है, आप तो निराभिमानी है, क्योंकि निरभिमानी ही तो ये सब उद्गीत रूप में गा सकता है।

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने गऊओं की सेवा की। यहा देखो, विचार आता है, यहाँ पशु शब्द नहीं बन पाता, मेरे प्यारे! देखो, यहाँ पशु शब्द नहीं बन पाता यहाँ केवल एक वर्ष तक गऊओं की सेवा के लिए कहा है। सेवा का अभिप्रायः यह है कि मानव के द्वारा जो दस इन्द्रियाँ है, उनकी सेवा करो। सेवा का अभिप्रायः ये है कि, मानो देखो, इनको सेवक बना करके इनका अध्ययन करो। ये सेवक कैसे हैं मानो प्रत्येक इन्द्रियां कुछ न कुछ लाती हैं जैसे सेवक गृह में कुछ ना कुछ लाती है। जो आज्ञा करता है स्वामी, वही लाता है। इसी प्रकार, प्रत्येक इन्द्रिय कोई ना कोई लाती है। जैसे मानो देखो, हमारी इन्द्रियाँ है, अमृताम् देखो, नेत्र है, वो देखो, दृष्टिपात करते रूप को लाते हैं, और रूप को जब लाते है, तो उसको वे ग्रहण करते है। मानो देखो, श्रोत जाते हैं, तो शब्द को लाते है, ये शब्द को ला करके वे भी देखो, स्थिर कर देते है। त्वचा से प्रेम आता है। प्राण से सुगन्ध और मन्द आता है। जब सुगन्ध आता है, तो मुनिवरों! देखो, रसना से रस आता है। देखो, वह खटरस आता है, वह जो रस आता है, वह भी स्थिर हो जाता है। तो मानो देखो, प्रत्येक इन्द्रियाँ सेवक है। यहाँ गऊओं की, सेवा कौन करता है? बेटा! गऊओं की सेवा का अभिप्रायः यह है कि गऊओं के विज्ञान को जानना है। उसमें जो विज्ञान परिपूर्ण हो रहा है, अथवा वह जो सृष्टि के पिता ने जब मानो देखो, इन इन्द्रियों का निर्माण किया, इसमें जो ज्ञान और विज्ञान

निहित कर दिया है, वह मुनिवरों! देखो, अमृतां भूः वर्णा ब्रहे उन्हीं इन्द्रियों का जो विषय है, उसको मानो जानने का नाम ही, मुनिवरों! देखो, इन्द्रियों की सेवा करना है। सेवा का अभिप्रायः क्या है? देखो, सेवक के अन्तर्हृदय में क्या है? उसे जानता और जो वो ला रहा है, उसे जानना है और जान करके उसे एकत्रित करना है और एकत्रित करके, मेरे प्यारे! देखो, वह गऊओं की सेवा करता हुआ, वह ब्रह्मचर्य व्रत से रहता है।

ब्रह्मचारी

ब्रह्मचारी की विवेचना करते हुए, बेटा! ऋषि कहता है-ब्रह्मचारी उसी को कहते हैं, ब्रह्मचरिष्यामि ब्रह्मवृत्तम् , बेटा! जो प्रत्येक श्वास की गति आ रही है, प्रत्येक जो, मानो देखो, प्राण गमन कर रहा है, और प्राण के ऊपर जब, बेटा! मन को स्थिर कर देते हैं, तो मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक श्वास के साथ में, उसका मनका बन जाता है। और प्रत्येक श्वास मनका रूप बन करके, मेरे प्यारे! देखो, वह इन्द्रो वर्णास्वतं ब्रह्मः मेरे पुत्रो! देखो, वह ब्रह्मचारी कहलाता है। जो एक वर्ष का ऋषि ने आदेश दिया और यह कहा, यह आज्ञा दी कि-तुम एक वर्ष तक देखो, ब्रह्मचारी रहो और गऊओं की सेवा करो, बेटा! गऊओं की, इन्द्रियों का विषय जान करके उनकी सेवा करते-करते इन्द्रियों का विषय जान करके और तुम, ब्रह्मचारी श्वास का मनका बना करके, मानो देखो, माला को दृष्टिपात करो। उसको माला बना करके अपने में धारण करो। उसके पश्चात्, मुनिवरों! देखो, ब्रह्मणे वृत्तम् वह ब्रह्मचरिष्यामि, वह ब्रह्मचारी कहलाता है। मेरे प्यारे! ये गो कहलाते हैं। गौ नाम सेवा का है, गौ की सेवा करनी चाहिए। मेरे प्यारे! सेवा के बहुत से अभिप्रायः हैं यहाँ इन्द्रियों की सेवा करनी है।

भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में गौ का अर्थ

जब यही गौ शब्द वैज्ञानिकों के मध्य में जाता है, मेरे प्यारे! देखो, यहाँ गौ नाम पृथ्वी का बन जाता है और पृथ्वी के गर्भ में इतना खनिज है, उसे वो जानता रहता है। वह वैज्ञानिक उसके गर्भ में चला जाता है और गर्भ में जा करके अणु और परमाणु जैसे बह रहा है, गमन कर रहा है, मुनिवरों! देखो, उनको जानता हुआ विज्ञान के तथ्यों को जानने लगता है। मेरे पुत्रो! देखो, विज्ञानवेत्ता पृथ्वी के गर्भ में विद्यमान हो करके, उससे खनिज को जान करके अणु और परमाणु को अन्तरिक्ष से ले करके, जब समन्वय करता रहता है, तो नाना प्रकार के यन्त्रों का वह निर्माणवेत्ता बन जाता है। मेरे प्यारे! देखो, वह ब्रह्मास्त्र, वरुणास्त्र नाना प्रकार के अस्त्रों-शस्त्रों का विज्ञानवेत्ता बन जाता है।

आध्यात्मिकवाद में गौ का मन्थन

मेरे पुत्रो! देखो, ये गौ शब्द कितना व्यापक शब्द है। इसके ऊपर, जब मैं टिप्पणियां करने लगता हूँ, मेरा अन्तर्हृदय गद्-गद् हो जाता है। मेरे पुत्रो! देखो, अमृतं भूः वर्णा ब्रहे देखो, वह आध्यात्मिकवाद में गौ शब्द कितना सार्थक माना गया है। मेरे पुत्रो! सर्वत्र आघ्यात्मिक जो विज्ञान है, वह गौ शब्द के ऊपर, बेटा! देखो, स्थिर है। जैसे प्राण देखो, यह जितना शरीर का, मनस्त्व का क्रियाकलाप है, यह प्राण के ऊपर अश्वत्थ हो रहा है और प्राण, मुनिवरों! देखो, आत्मा से ज्ञानत्व ब्रहे आत्मा! से आज्ञा प्रवाह कृतियों को प्राप्त होता रहता है। तो मेरे पुत्रो! देखो, विचार-विनिमय क्या? मैं विचार तुम्हें यह दे रहा हूँ क्या हमारा जो गौ शब्द है, उसको जानना चाहिए।

ऋत और सत् की परिभाषा

बेटा! यही गौ शब्द है, मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि-मुनियों के मध्य में जा करके, एक वर्ष तक मुनिवरों! देखो, गऊओं की सेवा करना, और ब्रह्मचर्यव्रत से रहना और, मुनिवरों! देखो, उसी में एक वर्ष हो गया, जिज्ञासुओं को, उसके पश्चात्, मुनिवरों! देखा एकत्रित हो गए। उन्होंने कहा-प्रभु! हे आचार्यजन। हमारा देखो, एक वर्ष हो गया है, आप हमें देखो, हमारे प्रश्न का उत्तर दीजिए। ब्रह्मचारियों के इन वाक्यों को पान करने वाले ऋषि ने कहा-आओ,

ब्रह्मचारियों! विराजो। वे एक पंक्ति में विराजमान हो गये। उन्होंने कहा-तुमने क्या पाया है? उन्होंने कहा-प्रभु! हमने तो अपनेपन को ही दृष्टिपात किया है। उन्होंने कहा-तुम जानना क्या चाहते हो? तो प्रथम ब्रह्मचारी ने कहा-प्रभु! हम ये जानना चाहते है कि, ऋत् और सत् किसे कहते है? मेरे प्यारे! उन्होंने कहा-ऋत् प्रकृति है, और सत् ब्रह्म है। दोनों का जब समन्वय होता है, तो ये ब्रह्माण्ड अपनी-अपनी क्रिया में दृष्टिपात होने लगता है। ये तुम जान गएं होंगे, कि क्या मानो ऋत् नाम प्रकृति का, और सत् नाम ब्रह्म का है, और ब्रह्म और ऋत् का, दोनों का ही समन्वय होता है। मेरे पुत्रो! देखो, ये ब्रह्माण्ड एक रचना में प्रायः हमें दृष्टिपात आने लगता है तो मेरे प्यारे! ऋषि ने इस प्रकार जब उत्तर दिया तो ब्रह्मचारी मौन हो गये। ब्रह्मचारी ने कहा-प्रभु! ऋत्-सत् मानो यह किसका वाची कहलाता है? उन्होंने कहा-तुम यह प्रश्न क्यों कर रहे हो? जब मैंने तुम्हें अभी-अभी निर्णय किया है कि ऋत् नाम प्रकृति का वाची है और सत् नाम ब्रह्म का वाची है, क्योंकि सत् में ब्रह्म है।

योग में ऋत-सत् का समन्वय

मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचारी बोले-हे प्रभु! कहीं-कहीं मन्त्र ये कहता है कि योगी वह होता है, सतवादी वह होता है, मानो देखो, जो प्रकृति के आवेश में रमण करता रहता है और परमात्मा को जानना चाहता है। मानो, वह सत्-रज-तम को त्याग करके ऊर्ध्वा में रमण करता है। मेरे प्यारे! देखो, देखो, ऋषि ने कहा-वाक्य तो तुम्हारा यथार्थ है। परन्तु, देखो, सबसे प्रथम वो सत् के गर्भ में जाएगा। क्योंकि सत् में प्रकृति है और जब प्रकृतिवाद के अणु और परमाणुओं को जानने लगता है तो प्रकृतिवाद में रत्त हो जाता है, उसके पश्चात् इससे उपराम हो जाता है और उपराम हो करक वो मौन हो जाता है। क्योंकि प्रकृतिवाद का जो क्षेत्र है, वो समाप्त हो जाता है। वह अनाहद में चला जाता है। जैसे सुर-संगम, मुनिवरों! देखो, हमारे मस्तिष्कों में एक ध्वनि आ रही है, उस ध्वनि को वो श्रवण करने लगता है। अपने में नृत्य करने लगता है। मानो वो रज और तम, देखा सबसे ऊर्ध्वा में गमन करता हुआ, मानो देखो, वह अपने में निस्सश्रब्रहे अमृतां भूः वर्णम् देखो, वह ब्रह्म के रसास्वादन को अपने में पान करने लगता है। प्रकृति का क्षेत्र उसका समाप्त हो जाता है।

ऋत् में सत् के पिरोने का रहस्य

मेरे प्यारे! उनके प्रश्नों के उत्तर दे करके ऋषि मौन हो गए। उन्होंने कहा-प्रभु! वाक्य तो वास्तव में प्रियतम् इसी प्रकार है। परन्तु, देखो, ये जो सत् में रमण करने वाला जो ब्रह्म है और देखो, ऋत् में रहने वाली जो प्रकृति है, इन दोनों का परस्पर, देखो, समन्वय जब होता है तो, हे ब्रह्मचारियों! देखो, ये ब्रह्माण्ड अपने-अपने रूप में दृष्टिपात आने लगता है। ये लोक-लोकान्तरों का जगत् अपने रूप में दृष्टिपात आने लगता है। यह एक माला है। इस माला को जो धारण करता है तो मानो याग को अपनी अपनी आभा में स्मरण करने लगता है। तो विचार आता रहता है कि, वृहे सम्भव ब्रह्वा इस मानो ऋत् और सत् में ही तो नाना प्रकार की मालाओं को देखो, वैज्ञानिक और योगेश्वर अपने में धारण करते रहते है और सूत्र बना करके, मानो देखो, उसमें पिरोऐ हुए है।

प्रकृति की मालाएँ

जब परब्रह्म परमात्मा का ऋत्-सत् दोनों का उग्र रूप बनता है और ये संसार-रचना में दृष्टिपात आते हैं तो एक-एक माला, माला बन जाती है। तुम्हें यह प्रतीत होना चाहिए यह माला, माला बन जाती है और यह ऐसी माला है, ऐसी मालाओं को तुम गणना में नहीं ला सकते। मानो देखो, मानव अन्त में मौन हो जाता है। तो मैं मालाओं को दृष्टिपात कराने लगूंगा तो बड़ा आश्चर्य होने लगेगा, मानो देखो, एक-एक अणु और परमाणुओं की माला बन जाती हैं अणु और परमाणु की माला कैसी है? जब मुनिवरों! देखो, मानव-शरीर को मानव, स्थूल-शरीर को त्यागता है जब यह जीवात्मा तो जीवात्मा के साथ में चित्त का मण्डल होता है और चित्त के मण्डल में मानो

देखो, उसका जितने आकार का वो मानव का शव है, स्थूल शरीर, उतने ही शव के आकार में, मानो देखो, परमाणु अपनी-अपनी आभा में गमन करने वाला रहता है और उतने ही आकार का मुनिवरों! देखो, वह अमृतं भूः वर्णं वृतम् अपने-अपने आकार का बन करके, मुनिवरों! देखो, वह शव रमण करता है। उसे हमारा यहाँ, सूक्ष्म शरीर के रूप में वर्णित करते रहते हैं।

तो मुनिवरों! देखो, एक समय मुझे स्मरण आता रहा है, भारद्वाज मुनि के यहाँ, मेरे प्यारे! देखो, वैज्ञानिकों ने इस प्रकार का अन्वेषण किया, कि हम, मानो जब ये आत्मा शरीर को त्यागता है, आत्मा के साथ में जो सूक्ष्म शरीर जाता है, और वही मानो संस्कारों को ले करके वह माता के गर्भस्थल मे शिशु के रूप में परिणित हो जाता है, हम उस, मानो देखो, चित्र को अपने यन्त्रों से दृष्टिपात करना चाहते मेरे प्यारे! मुझे बहुत-सा काल स्मरण है। ऋषि-मुनियों ने कितना तप किया है, बेटा! विज्ञान के सम्बन्ध में। मेरे प्यारे! भारद्वाज मुनि के यहाँ देखो, ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कबन्धि, रोहिणीकेतु इन तीना ब्रह्मचारियों ने, बेटा! छःमाह तक, क्या छह वर्षो तक तपस्या की और वे एक-एक परमाणु को मिलान कराते रहे। कहीं मिलाना, कहीं उसका विच्छेद करना। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने इसी छह वर्ष के पश्चात् एक यन्त्र का निर्माण किया था, बेटा! जिस यन्त्र में मुनिवरों! देखा, जितने अमृताम् जितने परमाणुओं से इन मालाओं को ले करके माता के गर्भ में जब माला प्रवेश होती है, वह सूक्ष्म शरीर वाली माला, और मानो देखो, वह माता के शरीर में स्थूल शरीर का निर्माण होता है, मानो देखो, उस आकार वाले सूक्ष्म आकार वाले शरीर को मुनिवरों! यन्त्रों के द्वारा अपने में अनुभूति को वे यन्त्रों को जान करके मुनिवरों! उतने आकार के चित्र हमे दृष्टिपात आने लगे बेटा! ये कैसी विचित्र माला है कितनी माला है प्रभु के राष्ट्र में मानो देखो, मानव इनको जानने में असमर्थ हो जाता है मेरे प्यारे! देखो, योगेश्वर अपने प्राण, विचार और मन को समाधिष्ठ करता हुआ एक सूत्र में सूत्रित होता हुआ बेटा! इनको अनुभव करता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, आकार बनते रहते हैं। उन आकारों की एक माला बनती रहती है।

मेरे पुत्रो! देखो, मैं तुम्हें बहुत-सी वार्त्ताएं, इसलिए विज्ञान की प्रकट करना चाहता हूँ कि जिससे मानव देखो, विज्ञान में, परमात्मा की सृष्टि में कितने अधूरेपन में रमण कर रहा है। मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, भारद्वाज गोत्र में क्या, मुनिवरों! देखो, यहाँ शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ भी, उद्दालक गोत्र में भी, इस प्रकार के विज्ञानवेत्ता रहे हैं, जो माला को जानने वाले रहे हैं। माला को जानते रहे हैं और वह ऐसी माला देखो, माला (गुणवता) नहीं रह पाती, बेटा! वह जाने क्या बन जाती है। वह मानो उसे अपने में धारयामि भी नहीं कर पाता। मेरे प्यारे! देखो, कहीं नक्षत्रों की माला बन जाती है और उन मालाओं को धारण करता है। परन्तु नक्षत्रों से ऊर्ध्वा में गमन करने वाले परमाणुओं की माला है और वह परमाणुओं की, अणुओं की माला है। उस माला को, मुनिवरों! देखो, योगी और विज्ञानवेत्ता योगेश्वर अपने में धारण करने वाला है।

ब्रह्माण्ड के लोक-लोकान्तरों की माला-गणना

विचार आता रहता है, बेटा! मैं विज्ञान के क्षेत्र में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। केवल यह कि, मैं मालाओं में जाना चाहता हूँ। मेरे पुत्रो! देखो, जब मालाओं की ऋषि अपने में गणना करने लगता है, वेदमन्त्र स्मरण आता है, वेदमन्त्र कहता है- नक्षत्रां भूः वर्णं ब्रह्वे वर्त्य देवत्मां वर्णा सुतेब्रह्मे व्रतम् देवत्वां भूः वर्णम् ऐसा, बेटा! देखो, मालाओं की माला बन जाती है और कैसी माला, इसको हम गणना में ला नहीं पाते। बेटा! जब मुनिवरों! देखो, विज्ञानवेत्ता पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करता है और पृथ्वी के गर्भ के खनिज को जानता है, सूक्ष्म खनिज को जानता है और जान करके उसका यन्त्र का निर्माण करता है।

सबसे प्रथम, उस यन्त्र में, बेटा! पृथ्वियों का अनुभव करता है। कितनी पृथ्वियाँ हैं? एक ही पृथ्वी है या और

भी कोई पृथ्वी है? तो बेटा! वा जानता-जानता, मानो देखो, वो तीस लाख पृथ्वियों पर चला जाता है और तीस लाख पृथ्वियों की बेटा! वो माला बना लेता है और माला का जो सूत्र है, जो उस माला में मानो पिरोया हुआ है वह, मुनिवरों! देखो, सूत्र बन करके, मुनिवरों! देखो, वह सूर्य है। वह सूर्य उस माला को अपने में धारण करता है। मेरे प्यारे! देखो, जब, पृथ्वियों की वह माला बनती है, तो उस माला को कौन धारण कर रहा है? अरे, सूर्य धारण कर रहा है। सूर्य ब्रह्मणं वृत्तं व्रहे । मैं, बेटा! विज्ञान में नहीं जाना चाहता हूँ। ये पृथ्वियाँ कैसे, एक दूसरे से सुगठित हो रही हैं। कैसे एक-एक किरणों में पिरोई हुई हैं। बेटा! जो मानो देखो, जिनकी रक्षा करने वाला सूर्य है और जब सूर्यो की माला बनती है, तो बेटा! एक सहस्र मनके बनते हैं। मानो एक सहस्र सूर्य ब्रह्मे देखो, यहाँ तो तीस लाख पृथ्वियों की, पृथ्वियों के मनके बने, उसकी माला बनी, और वह, मानो देखो, सूर्य अपने में धारण कर गया माला के रूप में और इसी प्रकार, जब वैज्ञानिकों ने जाना कि एक सहस्र सूर्यो की, बेटा! माला बनी। एक सहस्र सूर्यो की माला में विचारने का विषय है। बेटा! देखो, कितनी पृथ्वियाँ हैं। जब एक सूर्य में, मानो देखो, तीस लाख पृथ्वियाँ समाहित हो जाएं तो एक सहस्र सूर्यो में तो बेटा! कितनी पृथ्वियों की मालाएं बन सकती हैं। बेटा! यह विचारणीय विषय है। यह वैज्ञानिक तत्त्व हैं, बेटा! जिनके ऊपर मानव को अनुसन्धान करना है। अरे, मनव को संसार के पापाचारों में तो जाने का मानो उस समय ही नहीं प्राप्त होता यदि वह प्रभु की सृष्टि को निहारने लगता है। प्रभु की सृष्टि को अपने में अपनेपन में प्राप्त करने लगता है। बेटा! मैं कितना आश्चर्य में आ रहा हूँ, विचार आता है कि वेद का मन्त्र, बेटा! क्या कह रहा है? माला बनाने के लिए कह रहा है।

इसी प्रकार, बेटा! विचारा जाएं। मेरे प्यारे! देखो, जब इतनी पृथ्वियों की माला बन करके, बेटा! एक सूर्य धारण कर रहा है और एक सहस्र सूर्यो की माला बनी! बेटा! इसको वृहस्पति धारण कर रहा है। विचारो, बेटा! देखो, अपने में मनन करने वाले बनो और उसके ऊपर अनुसन्धान करो, विज्ञानवेत्ता बनो। क्या, मानो देखो, वह जो वृहस्पति है, उसमें एक सहस्र सूर्य समाहित हो जाएं। मेरे प्यारे! देखो, एक-एक कृतियों में रत्त होने वाला कैसी विचित्रता है। मेरे प्यारे! देखो, कितने सूर्यो की माला बनी है, उस माला को वृहस्पति धारण कर रहा है। इसी प्रकार, मुनिवरों! देखो, एक सहस्र वृहस्पतियों की माला बन करके आरुणीमण्डल अपने में धारणकर रहा है। बेटा! मैं कैसे विशाल बन में चला गया हूँ। कैसी विशाल धाराओं में रमण कर गया हूँ।

मुनिवरों! देखो, यह तो परमात्मा का जो वेदरूपी जो ज्ञान है, यह हमें किस मार्ग के लिए प्रेरित कर रहा है? मेरे प्यारे! देखो, संसार का प्राणी तो वेद के उतने ज्ञान को जानता है, जितना उसका सूक्ष्म स्वरूप बना हुआ है। यदि सर्वत्र ज्ञान को जानना चाहे, तो मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ महर्षियों नक यह कहा है-यदि हम विज्ञान को जानने लगें, तो हमारे वेद के विज्ञान को जानते-जानते यदि हमारे सहस्रों जन्म हों और सहस्रों जन्मों में हम विज्ञान को जानते रहे ता, मानो देखो, हम अन्त में मौन हो जाएंगे।

तो मेरे प्यारे! देखो, मैं विचार ये दे रहा था, विज्ञानवेत्ता जब यह विचारते है कि पृथ्वी को गौ कहते हैं और यह कैसी मानो देखो, कामधेनु है जो हमें नाना प्रकार का खाद्यान्न, खनिज पदार्थ देती है। अरे, मानव! तू कितना सूक्ष्म बन गया है! जब ये माला पर माला बनती रहेंगी, वह तो माला भी नहीं रहा, मानो माला का एक सूक्ष्म अणु के सदृश्य भी नहीं रह पा गया है। तो विचार आता है, बेटा! देखो, इस मानवत्व को अपने में अन्वेषण करना है और करते-करते, मुनिवरों! देखो, अपने को इसी में रत्त कर देना है।

आओ, मेरे प्यारे! देखो, मैं आज कहाँ चला गया हूँ? मैं ऋत् के ऊपर विचार दे रहा हूँ, ये प्रकृति ऋत कहलाती है मुनिवरों! देखो, एक सहस्र आरुणि मण्डलों की माला बनी, बेटा! जिसको मानो देखो, ध्रुव अपने में धारण कर रहा है, ध्रुव-मण्डल अपने में धारण कर रहा है। मेरे प्यारे! विचार आया है कि यह ध्रुव-मण्डल कितना

विशाल है, मेरे प्यारे! देखो, जिसमें एक सहस्त्र आरुणि मण्डलों की माला बनती है और वह माला पर माला को धारण किए रहते है।

इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, मैं विशेषता में न जाता हुआ, मुनिवरों! देखो, एक सहस्त्र मानो ध्रुव-मण्डलों की माला बनकर उसको स्वाति-नक्षत्र अपने में, धारण कर रहा है स्वाति नक्षत्र अपने में मानो देखो, आवृत्तियों को धारण करा रहा है। उस माला को धारण कर रहा है उसमें सत्ता दे रहा है एक सहस्त्र मुनिवरों! देखो, मानो स्वाति नक्षत्रों की माला बन करके, वे पुष्प-नक्षत्र रोहिणीकेतु अपने में धारण कर रहा है। एक सहस्त्र रोहिणीकेतु मण्डल, मेरे प्यारे! देखो, अचंग लोगों में ओतप्रोत है। एक सहस्त्र अचंगकेतु-मण्डल, मृणित मूल-नक्षत्र में ओतप्रोत है। एक सहस्त्र मूल नक्षत्र, मेरे प्यारे! देखो, व्रतकेतु-मण्डल में ओतप्रोत है। मुनिवरों! देखो, एक सहस्त्र मिहितकेतु-मण्डल बेटा! गंधर्व मण्डल में ओतप्रोत हो जाते है। बेटा! ये माला पर माला बनती चली गई। इन मालाओं का, बेटा! एक-एक, मानो देखो, सौर मण्डल बन जाता है। एक सौरमण्डल बन गया है। ऋषि कहता है-अरे, ये तो गौ की वृत्तियां कहलाती है। ये तो गौ का श्वास कहलाता है। मानो जो धाराएं उत्पन्न होती रहती हैं, प्रकृति में से। प्रकृति का नाम मानो धेनु कहा गया है। इस प्रकृति का नाम देखो, ऋत् रूप में वर्णन किया गया है।

मेरे पुत्रो! देखो, इतनी मालाओं का, इतनी माला पर माला बनती चली जाएं, उनका, बेटा! एक सहस्त्र नक्षत्रों का एक सौरमण्डल बना, मेरे प्यारे! देखो, मानो गणना में लाता हुआ ऋषि समाधिस्थ हो जाता है। यन्त्रों से, उपकरणों से नहीं जाना जाता, तो वह समाधिस्थ हो जाता है। और समाधिनस्थ हो करके अपनी मानो प्राणसत्ता को, मुनिवरों! देखो, अपान को ले जा करके, उदान के साथ में चित्त के मण्डल को मुनिवरों! देखो, वह ब्रह्मरन्ध्र में देखो, कृतिका में प्रवेश कर जाता है, समाधिस्थ हो करके, बेटा! विचारने लगता है। अपने में चिन्तनीय विषय बना करके, मुनिवरों! देखो, वह इन सौर-मण्डलों की स्थिति को जान करके, मुनिवरों! देखो, देखो, विचार आता रहता है, बेटा! एक सहस्त्र अमृतां भूः वर्णा ब्रहे मेरे प्यारे! देखो, इतने सौर-मण्डलों की एक आकाश गंगा बनी। मेरे प्यारे! देखो, लगभग, एक अरब छयानवे करोड़ और उन्नासी लाख, उन्नचास हजार, पांच से इकसठ के लगभग, मेरे पुत्रो! देखो, आकाश गंगाओ की एक निहारिका बन जाती है। मेरे प्यारे! देखो, यहाँ मैं ब्रह्माण्ड की चर्चा कर रहा हूँ। यह परमपिता परमात्मा का अनुपम ब्रह्माण्ड है। अरे, पौने दो अरब निहारिकाओं की, बेटा! अवन्तिका बन जाती है। विचार आता रहता है, बेटा! अवन्तिका बन जाती है। विचार आता रहता है, बेटा! कितनी मालाएं हैं, क्या गणना कर सकते हैं? विचार में भी नहीं आ पाता, मेरे प्यारे! देखो, इसे जब समाधि में, अपने में ही, क्योंकि पिण्डं ब्रह्माण्डं भूः करणात्त्वाः लोकां वृत्ति देवत्वाम् मानो देखो, यह मालाओं का एक जगत है।

बेटा! आज मैं तुम्हें बहुत दूरी लिए जा रहा हूँ। केवल विचार-विनिमय कर रहा हूँ, बेटा! यह परमात्मा का अनुपम जगत् है, इसीलिए प्रत्येक मानव को देखो, यदि तपस्या करनी है, तपश्चर बनना है, तो इस सृष्टि का निहारते रहो, जानते रहो। निहारते रहो, जानते रहो, परन्तु देखो, इस संसार में, अपने को, देखो, इसमें रत्त कर जाओ। इसका नाम देखो, तपश्चर कहलाता है। और, इसको जान करके इसको अपने में समेट जाओ और जब सिमट जाओगे, तो मुनिवरों! देखो, वह केवल्य, प्रभु का दर्शन होता रहेगा, आनन्द को हम अपने में अनुभव करते रहेंगे। उस आनन्द में ही रमण करते, बेटा! अपने में अपनेपन को चिन्तन में लाना प्रारम्भ कर दो। ये है, बेटा! आज का वाक्।

आज के वाक्य उच्चारण करते-करते, बेटा! मैं कहाँ चला गया हूँ? विचार-विनिमय ये हो रहा था, कि मुनिवरों! देखो, देखो, गौ शब्द जहाँ जैसा प्रयोग में आए, उसका वही, मुनिवरों! देखो, चिन्तन करना चाहिए। वहीं उसकी सेवा करनी चाहिए। सेवा के बहुत से स्वरूप बन जाते हैं। मेरे प्यारे! वैज्ञानिक, जब गौ की सेवा करते हैं,

तो उसका जानते हैं। सेवा का अर्थ है उसको जानना, जान करके, मुनिवरों! उसको प्रयोग में लाने का नाम सेवा कहा गया है। ये है बेटा! आज का वाक्।

आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः ये कि, मुनिवरों! देखो, हम अग्नं ब्रह्मणा वृत्तम् आज हम, मुनिवरों!। प्रभु का चिन्तन करते हुए सृष्टि को जानते हुए, माला को अपने में, पिरोते हुए, बेटा! इस सागर से हम पार हो जाएं। यह है, बेटा! आज का वाक्। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि ऋषिजन एक-एक वेदमन्त्र में जो विज्ञान है, जो सूक्ष्म शरीर है जो माता के गर्भ-स्थल में चित्त के मण्डल को ले करके प्रवेश करता है, माता नहीं जानती परन्तु देखो, विज्ञानवेत्ता भी देखो, इसको अम्बह्मव्रहे अप्रतिं तपं ब्रह्वे वे तपस्या करने के पश्चात् उसको जानते है। जब मनन करते रहते है, परमाणु का मिलान मिलाते रहते हैं, उसका विभाजन करते हैं, एक-एक परमाणु का विभाजन करने से उसमें इतना ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आने लगता है। मेरे प्यारे! देखो, इतना प्रभु ने इस संसार को शिल्पा है। एक-एक परमाणु में, बेटा! सर्वत्र ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आएगा। मेरे प्यारे! देखो, आज का विचार अब यह सम्पन्न होने जा रहा है। विचारों का अभिप्रायः यह कि मानव को तपश्चर करते हुए हृदयग्राही बन करके परमात्मा की महिमा को निहारते रहना चाहिए और निहारते-निहारते, बेटा! इस संसार से पार होने का प्रयास करो। यह आज का वाक् सम्पन्न होने जा रहा है। समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। अब वेद का पठन-पाठन होगा। सी-४७, रामप्रस्थ ०१-१०-१९९०

१६ होता ०२-१०-१९९०

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महान् देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है, जो यज्ञोमयी स्वरूप वह उसी में वास कर रहा है और याग उसका आयतन है, उसका गृह हे, उसका सदन है। और, वह उसी में वास कर रहा है। तो प्रायः वह जो परमपिता परमात्मा, वो यज्ञोमयी स्वरूप माना गया है। क्योंकि आज का हमारा वेदमन्त्रः हमें यह प्रेरणा दे रहा है कि याग के ऊपर अपना कुछ मन्तव्य दिया जाएं। मन्त्र, याग के सम्बन्ध में क्या-क्या विवेचना कर रहा है।

याग के विभिन्न रूप

आज के हमारे वैदिक पठन-पाठन में मानो यागों का अपना बड़ा महत्त्व प्रायः आता रहा है और सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक इस याग के ऊपर मानव ने बड़ी ऊर्ध्वा में उड़ाने उड़ी हैं और उन्होंने मुनिवरों! देखो, ऊर्ध्वा में जाने का प्रयास किया है। वेद का मन्त्र इस सम्बन्ध में, बड़ी ऊर्ध्वा में, अपनी विवेचना कर रहा है और यह कहता है यज्ञां भूः वृत्तं देवत्वां द्यौः क्योंकि याग जो है, मानव को द्यौ लोक में परिणित कर देता है।

मुनिवरों! देखो, ये नाना प्रकार के यागों का चयन तो प्रायः हमारे वैदिक साहित्य में आता ही रहा है, अपनी-अपनी स्थलियों पर बड़ी विचित्रता में मानो उसका वर्णन आता रहा है। हमारे यहाँ, याग के सम्बन्ध में, मुनिवरों! देखो, बहुत ऊर्ध्वा में उड़ानवेत्ताओं ने कहीं, मुनिवरों! देखो, मानव की इन्द्रियों को संयम में लाने का नाम याग कहा गया है कहीं मुनिवरों! देखो, विद्यालय में ब्रह्मचारी और आचार्य के सम्पर्क को याग कहा है, कहीं गृह-आश्रम में, मुनिवरों! माता अपने पुत्र को शिक्षा और गर्भस्थल में महान् निर्माणित करती रहती है तो कहीं उसको याग कहा है। परन्तु किन्हीं आचार्यों ने यह कहा है कि जो विज्ञानवेत्ता हैं, जो अणु और परमाणु का समन्वय करते रहते हैं और यन्त्रों का निर्माण करते रहते है, परन्तु कोई याग के रूप में इन्हें माना है। परन्तु देखो, कोई योगाचार्यों को, जो ध्यानावस्थित हो जाते हैं और वे खेंचरी मुद्रा, रेचक और कुम्भक प्राण के द्वारा, प्राण को अपने में सिंचन करने लगते हैं, कोई मानो उसको याग कहते हैं। कोई यह कहता है कि विद्यालय का निर्माण करना ही मानो एक याग है। कोई कह रहा है कि माता वसुन्धरा के गर्भस्थल में याग करना है औरन उससे नाना प्रकार के खाद्य-पदार्थों का सिंचन करना है, कोई उसको याग कहता है। परन्तु देखो, जब यागों के इस प्रकार, कोई गौ-मेध नाम के याग से वर्णन कहा गया। कोई गौ-याग के रूप में, गौ की रक्षा को याग कहते हैं। परन्तु ये जो भिन्न-भिन्न प्रकार के यागां का चयन प्रायः हमारे वैदिक साहित्य में आता रहा। परन्तु जब देखो, विशेष याग के ऊपर विचार-विनिमय किया जाता है कि अग्नि के मुखार बिन्दु में हूत करना, अपना साकल्य प्रदान करना और अग्नि, मानो देखो, देवताओं को प्रसन्न कर देती है, यह सर्वस्य यज्ञ कहा गया है। कोई, मानो देखो, अतिथि का विशेषकर स्वीकार कर रहा हैं मेरे प्यारे! वास्तव में तो इसका, ब्रह्माण्ड का जो एक-एक परमाणु है, एक-एक अणु है, मानो देखो, वो सर्वत्र एक याग के रूप में वर्णित हो रहा हैं। क्योंकि एक-दूसरे में पिरोया हुआ है? एक दूसरे में अभ्योदय हो रहा है। एक-दूसरे की सहायता दे करके, बेटा! यह संसार गतिवान् हो रहा है। प्रायः यह सर्वत्र एक याग के रूप में वर्णित किया गया हैं मेरे प्यारे! देखो, राजा अश्वमेध-याग और गौमेध-याग और मुनिवरों! वाजपेयी, अग्निष्टोम-याग को सदैव अपने में रचित रहे हैं। मुनिवरों! देखो, यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकारके यागों में मानव की प्रवृत्तियाँ

होनी चाहिए।

याज्ञवल्क्य मुनि महाराज का याग-दर्शन

मैंने तुम्हें कई काल में याग के ऊपर अपना विचार देते हुए कहा था। आओ, मेरे प्यारे! आज तुम्हें मैं जो बारम्बार इन वाक्यों की पुनरूक्ति भी हम करते रहे हैं, आओ, तुम्हें मैं देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विद्यालय में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ याज्ञवल्क्य और ब्रह्मचारियों का, दोनो का परस्पर विचार-विनिमय होता रहा है, जिसके ऊपर बेटा! ऋषि-मुनि नाना प्रकार के विज्ञान को प्रायः जानते रहे हैं। मुनिवरों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, महाराजा ब्रह्मणेः कृतम् याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने, मुनिवरों! देखो, इस आध्यात्मिकवाद को और मुनिवरों! देखो, भौतिकवाद का, दोनों का समन्वय करने का प्रयास किया। उन्होंने, बेटा! देखो, इस बाह्य जगत् को आध्यात्मिकता में, मुनिवरों! देखो, परिणित किया है। प्रत्येक इन्द्रियों को, मुनिवरों! देखो, उन्होंने याग से कटिबद्ध किया है।

यह वाक्य, मुनिवरों! देखो, मैंने पुरातन, पूर्वकाल में भी इसकी पुनरूक्ति हम करते रहे हैं। परन्तु, आओ, मैं तुम्हें देखो,याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विद्यालय में ले जाना चाहता हूँ जहाँ, बेटा! प्रातःकालीन नैतिक शिक्षा का क्रियाकलाप होता रहा है। मेरे पुत्रो! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज प्रातःकालीन ब्रह्मचारियों के मध्य में याग करने लगे। जब याग करने लगे तो याग के पश्चात् मानो देखो, उसका उपसंहार करते है। क्योंकि हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, यह रहा है, कि याग करने के पश्चात् उसका उपसंहार होता रहा है। तो उन्होंने, बेटा! उसका उपसंहार के लिए ब्रह्मचारियों को शान्त करके कहा-हे ब्रह्मचारियों! अब तुम एकतम पंक्ति में विद्यमान हो जाओ और वेदमन्त्र क्या कहता है याग के सम्बन्ध में, याग के लिए कहता है कि, ब्रह्मचारी को याग करना चाहिए। ब्रह्मचारी प्रातःकालीन मानो देखो, समिधा के द्वारा अग्नि का चयन करता हुआ देवताओं को हूत करने वाला बने। मानो देखो, इस प्रकार वो शिक्षा दे रहे थे।

होता कितने हों?

मेरे प्यारे! देखो, इतने में ब्रह्मचारियों ने अपना एक रूपक बनाया, जिसमें ब्रह्मचारी यज्ञदत्ता और ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु। तो रोहिणीकेतु तो बेटा! यज्ञमान बने और यज्ञदत्त, मुनिवरों! देखो, वह प्रश्न करने लगे। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा-हे प्रभु! यह तो यज्ञमान है, यह तुम्हारे समीप आया है, क्योंकि आप याग में बड़े पारायण है। याग में आपकी बड़ी निष्ठा रही है और याग के ऊपर मन्तव्य देते रहते हैं, तो इसीलिए, यज्ञमान, भवन्! याग करना चाहता है और यज्ञमान का यह प्रश्न है कि, मैं कितने होताओं के द्वारा याग करूँ? तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा कि -यदि यज्ञमान याग करना चाहता है, तो उसको चौबीस होता के द्वारा याग करना चाहिए। क्योंकि चौबीस होताओं से ही जो यज्ञमान याग करता है, सम्पूर्ण याग को अपने में परिणित कर लेता है। मेरे प्यारे! देखो, पुनः यज्ञमान ब्रह्मचारी ने कहा-प्रभु! यज्ञमान याग करना चाहता है, कितने होता होने चाहिएं? उन्होंने कहा-सत्रह होताओं के द्वारा यज्ञमान याग कर सकता है। मेरे प्यारे! दृष्टिपात यज्ञदत्त ने पुनः प्रश्न किया-हे प्रभु! यज्ञमान याग करना चाहता है, कितने होता होने चाहिए? तो ऋषि ने कहा कि-यज्ञमान याग करना चाहता है, तो ग्यारह होताओं के द्वारा याग होना चाहिए। उन्होंने पुनः जब यह प्रश्न किया कि, महाराज यज्ञमान याग करना चाहता है, कितने होता होने चाहिए? तो मुनिवरों! यह कहता है ऋषि कि-यज्ञमान याग करना चाहता है, तो नौ होताओं के द्वारा याग होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, यज्ञदत्त ने कहा-प्रभु! मेरा यज्ञमान याग करना चाहता है, यह प्रश्न करता है, कितने होता होने चाहिए? उन्होंने कहा-सत्त होताओं के द्वारा याग होना चाहिए। मेरे पुत्रो! उन्होंने जब पुनः प्रश्न किया कि -महाराज यज्ञमान याग करना चाहता है, कितने होता

होने चाहिए? उन्होंने कहा-यज्ञमान को देखो, पंच-होताओं के द्वारा याग करना चाहिए। जब पुनः यह प्रश्न किया कि -महाराज! यज्ञमान याग करना चाहता है, कितने होता होने चाहिए? तो उन्होंने कहा-तीन होताओं के द्वारा याग होना चाहिए। जब पुनः यह प्रश्न किया कि -यज्ञमान याग करना चाहता ह कितने होता हों? तो उन्होंने कहा-कि दो होता के द्वारा याग हो। जब और प्रश्न किया गया तो, बेटा! एक होता रह गया। तो विचार आता रहता है, बेटा! ऋषि उत्तर देते अन्त में मौन हो गएं और उन्होंने कहा-ब्रह्म न अहेः।

चौबीस होता

देखो, ब्रह्मचारी ने कहा-प्रभु! यज्ञमान यह जानना चाहता है कि चौबीस होता कौन से होते है, जिनके द्वारा यज्ञमान याग करें, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज बोले कि-चौबीस होताओं में, मानो देखो, इस शरीर में, शरीर को मापते हुए उन्होंने कहा-दस प्राण हैं और दस इन्द्रियाँ है और मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार, ये, मानो देखो, चौबीस होता कहलाते हैं, जिनके द्वारा यज्ञमान याग करेगा। मेरे प्यारे! देखो, प्राणां ब्रह्मे देखो, प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान, नाग, देवदत्त, धन्नजय, कुरू और कृकल, ये दस होता कहलाते है। ये दस प्राण हैं जो मुनिवरों! देखो, मानो शरीर में क्रियाकलाप कर रहे हैं और इसी प्रकार ब्रह्माण्ड को भी मानो ये दस ही प्राण, देखो, हूत बन करके इस ब्रह्माण्ड को गति दे रहे हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा कि-वेद का ऋषि कहता हैं, ये जो दस होता हैं, ये विशेष कहलाते हैं और मानो देखो, इन्द्रियाँ हैं, ज्ञानेन्द्रियाँ हैं, अमृताम् देखो, ये पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियाँ, दस इन्द्रियाँ बन गई। मेरे प्यारे! देखो, ज्ञानेन्द्रियों में सर्वत्र ब्रह्माण्ड समाहित हो रहा है और जितनी संसार की क्रियाकलापता है, वे सर्वत्र इन्द्रियों में समाहित हो रहे हैं।

मेरे प्यारे! देखो, मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार और जितना भी ज्ञान है प्रकृतिवाद का, वो एक अणु से ले करके, परमाणु से ले करके, मानो देखो, स्थूल जगत् का जितना भी ज्ञान है, वह मन के द्वारा विद्यमान रहता है और, मुनिवरों! देखो, उसका निर्णय देने वाली बुद्धि है मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार उसमें वे सर्वत्र अंकुर रूप से प्रकृति का जितना भी असवत है सब, मानो देखो, एक अंकुर रूप में मानो वह चित्त मे मण्डल में विद्यमान रहता है, मुनिवरों! अंहकार में वह समाहित रहता है। तो मेरे प्यारे! ये चौबीस होताओं के द्वारा यज्ञमान याग करता है।

परमपिता परमात्मा ने, सृष्टि के पिता ने सृष्टि का सृजन करते हुए कहा है, सृष्टि का निर्माण करते हुए मुनिवरों! परमपिता परमात्मा ने मानव शरीर को एक प्रकार की यज्ञशाला के रूप में परिणित किया है। परन्तु यह ब्रह्माण्ड भी, मानो देखो, एक यज्ञशाला है। इसमें प्रत्येक लोक-लोकान्तर अपने में गतिवान् हो रहा है, मेरे प्यारे! देखो, प्राणों का सृजन हो रहा

है! इसी प्रकार, यह जो जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है, मानो नाना प्रकार की, कहीं लालिमा में यह जगत! दृष्टिपात आता है, कहीं मानो देखो, श्वेत वर्ण में दृष्टिपात आता है, कहीं मानो हरित वर्ण में दृष्टिपात आ रहा है। यह ब्रह्माण्ड अपन में ब्रह्मण्डित हो रहा है। मानो, बेटा! यह सर्वत्र एक यज्ञशाला के रूप में विद्यमान रहता है। तो मुनिवरों! यह परमात्मा का अनूठा जगत् हैं, परमात्मा के अनूठे जगत् मे नाना प्रकार का यह क्रियाकलाप हो रहा है।

भौतिक साकल्य और आन्तरिक साकल्य का समन्वय

आओ, मेरे प्यारे! ऋषि कहता है याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने अपना निर्णय देते हुए कहा, अपने विचारों को व्यक्त करते हुए कहा कि-हे ऋषिवर! हे ब्रह्मचारियों! देखो, जब यज्ञमान याग करता है, तो चौबीस होता होने चाहिएं। ये संयमी रहने चाहिएं, मानो, प्राणों का प्रत्येक ज्ञान होना चाहिए। प्रत्येक इन्द्रियों का ज्ञान और कर्मेन्द्रियों का ज्ञान। इनका साकल्य बन करके मानो यज्ञमान इन्हीं के द्वारा हूत करता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, पांच

ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियाँ, मनस्त्व, मुनिवरों! देखो, सर्वत्र देखो, ये चौबीस होता कहलाते हैं।

सत्रह होता और सूक्ष्म शरीर

मेरे प्यारे! देखो, जब ब्रह्मचारी ने यह श्रवण किया, ब्रह्मचारी यज्ञदत्त ने कहा-प्रभु! यज्ञमान कहता है कि वाक्य तो हमें आचार्यों ने बहुत समय वर्णन कराया है, परन्तु हम यह जानना चाहते हैं कि वो सत्रह होता कौन से होते है, जिनके द्वारा याग करना है, यज्ञमान गया करता है? उन्होंने कहा-मानो देखो, चौबीस होता तो समाप्तम। मुनिवरों! देखो, जब यह मानव शरीर को त्यागता है, तो बेटा! देखो, इसमें पांच तन्मात्रा रह जाती हैं और दस प्राण रह जाते है। और, मुनिवरों! देखो, देखो, मन और बुद्धि रह जाती हैं, जिसमें चित्त का मण्डल गमन करता है, तो यह सत्रह होताओं का यह शरीर कहलाता है, जो सूक्ष्मतम माना गया है, मेरे प्यारे! जो प्रकृति के मण्डल में प्रतिष्ठित रहता है।

विचार आता रहता है, बेटा! ऋषि-मुनि जब सूक्ष्म शरीर को जानने लगते हैं, जब यह स्थूल शरीर को, मानो देखो, यह सूक्ष्म त्यागता है, तो उसमें देखो, तन्मात्राओं के साथ में, जो चित्त के मण्डल में संस्कार होते हैं, जो भी चित्त के मण्डल में संस्कार होते है, जो भी चित्त के मण्डल में उस समय आता है, उस प्रतिभा को लेकर के यह द्यौ में चला जाता है। मेरे प्यारे! वायुमण्डलों में भ्रमण करता रहता है। तो विचार आता रहता है, मुनिवरों! देखो, ब्रह्मणे ब्रह्मण ब्रहा कृतं देवाः तो मुनिवरों! यज्ञमान इन सत्रह होताओं के द्वारा याग करता है। इन्हीं को जानता रहता है, इन्हीं की प्रतिभा में प्रतिष्ठित रहता है।

ग्यारह होता

यज्ञमान कहता है कि-भगवन! अमृताम् भूः वर्णास्ते मानो देखो, ब्रह्मचारी कहता है, भगवन्! यज्ञमान यह कहता है कि, ग्यारह होता कौन से हैं, जिनके द्वारा मैं याग करने वाला बनूं? उन्होंने कहा-दस इन्द्रियाँ है और ग्यारहवां मन कहलाता है। जब भी, किसी प्रकार का, चाहे बाह्य याग हो चाहे आन्तरिक याग हो, परन्तु दोनों यागों में, मुनिवरों! देखो, पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियों का स्वरूप, मेरे प्यारे! एक सूत्र में जब सूत्रित हो जाता है, तो उस समय मन उसका साथी बन करके गमन करता हैं मेरे प्यारे! दस इन्द्रियां, ग्यारहवां मन, जब यह संयमी होता है, जब यज्ञमान याग करता है, तो बेटा! यह द्यौ में, द्यौ से भी ऊर्ध्वा में प्राप्त हो जाता हैं मेरे प्यारे! उस समय यह देवताओं को, अग्नि को अपना माध्यमबनाता है, ज्ञान को अपनी प्रतिभा बनाता है, और मुनिवरों! देखो, अपने आप में यह ब्रह्माण्ड की कल्पना करने लगता है। तो यज्ञमान जब याग करना चाहता है, जो यज्ञमान को चाहिए कि वह दस इन्द्रियां, ग्यारहवां मन, मानो देखो, इनको अपने वश में करता हुआ, उनको संयम में लाता हुआ याज्ञिग बने जिससे, बेटा! उसका याग द्यौ में प्रवेश हो जाएं, उसके याग में एक महानता का दर्शन हो जाएं।

नौ होता

मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि ने जब ब्रह्मचारी ने पुनः यह प्रश्न किया, कि -महाराज! यज्ञमान यह प्रश्न करता है कि, मानो ये नौ होता कौन से होते हैं? उन्होंने कहा-जिनके द्वारा याग, देखो, यज्ञमान याग करना चाहता हैं? उन्होंने कहा-हमारे जब मानव शरीर का परमपिता परमात्मा ने सृजन किया, अथवा निर्माण किया, तो देखो, इस शरीर में नौ द्वार कहलाए जाते हैं, मेरे प्यारे! -अष्टचक्रां ब्रह्मण नव द्वारा , यह अयोध्या पुरी कहलाती है, मुनिवरों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, भगवान मनु ने देखो, अयोध्या का निर्माण किया तो इसमें आठ चक्र, नौ द्वार कहलाते हैं। इसी प्रकार यह मानव का शरीर, जब परमपिता परमात्मा ने, आदि देव ने उत्पन्न किया, निर्माणित किया, तो बेटा! यह, मानो देखो, नौ द्वारों वाला है, इसमें नौ द्वार हैं। प्रत्येक द्वार पर एक देवता (ऋषि) विद्यमान रहता है। मेरे प्यारे! देखो, किसी पर जमदग्नि है, किसी पर विश्वामित्र है, किसी पर कश्यप है, मेरे प्यारे! किसी

पर अत्रि है, नौ द्वारों पर नौ देवता विद्यमान रहते हैं, नौ ऋषि विद्यमान रहते हैं। मेरे पुत्रो! देखो, देवत्यं चन्द्रमां भूः , यह चन्द्रमा भी देवता, मानो देवतव को प्राप्त होना चाहता है। तो विचार आता रहता है, बेटा! यह मानो एक पुरी है, एक नौ द्वारो वाली पुरी अयोध्या कहलाती है। जहाँ ऋषि-मुनि विद्यमान हो करके, नौ द्वारो वाली पुरी को ले करके मेरे पुत्रो! देखो, द्वार भूः वर्णा ब्रह्मे , मुनिवरों! जब यह जीवात्मा शरीर से निकलता है, तो नौ द्वारों से कोई न कोई द्वार को ही जाता हैं, ऐसा नहीं कि बिना द्वार के चला जाएं। मेरे पुत्रो! देखो, नौ द्वार हैं, नौ द्वार पर नाना देवता विद्यमान है, नौ ही देवता। एक-एक इन्द्रिय के दो-दो देवता कहलाते हैं। मेरे पुत्रो! विचार आता रहता है, ऋषि कहता है, हे यज्ञमान! तू याग करना चाहता है तो दसों द्वारों को महान् बनाता हुआ, दस द्वारों को जानता हुआ तू याज्ञिग बन। उस याग से तेरा कल्याण होगा।

सप्त होता

मेरे प्यारे! देखो, अमृताम् वह अपने में शान्त होने लगे। परन्तु देखो, यह यज्ञदत्त बोले-प्रभु! यज्ञमान यह कहता है कि मानो यह तो जान लिया। परन्तु सप्त होता कौन से होते हैं, जो सातों के द्वारा यज्ञमान याग करता है? उन्होंने कहा-सप्त होता, वह सप्त-ऋषिमण्डल कहलाता है। मानो देखो, ये ज्ञानेन्द्रियाँ जो हैं, मस्तिष्कां भूः वर्णम् ये ज्ञानेन्द्रियाँ के द्वारा, जब द्वारास्तम् इनके द्वारा याग करता है, तो बेटा! वो ज्ञानी बन जाता है, वह इन्द्रियों का जयी बन जाता है। वह, मेरे पुत्रो! देखो, अपने में अपनेपन का विचारता रहता है। तो विचार आता रहता है, वे सप्त-होता, जो महर्षि हैं, मानो सातों अमृतियांम् के द्वारा जो यज्ञमान याग करता हे, बेटा! वो सौभाग्यशाली है।

पाँच होता

मेरे पुत्रो! देखो, जब यह वार्त्ता शतपथ में, यह वार्त्ता वर्णित की तो उनसे पुनः यह प्रश्न किया गया कि महाराज! यज्ञमान याग करना चाहता है। यज्ञमान की इच्छाहै कि मैं याग करूं। परन्तु मेरी इच्छा यह है कृतम्, कितने होता, देखो, अमृतं ब्रह्मे। उन्होंने कहा-यज्ञमान को मैंने वर्णन किया कि पंच होता होने चाहिएं बेटा! ये पंच होता कौन से हैं? सबसे प्रथम, मुनिवरों! देखो, पंच होताओं में पृथ्वी आती है, और द्वितीय में जल आता है, मेरे प्यारे! जिसे आपो कहते हैं, देखो, अमृताम् देखो, अग्नि आता है, अग्नि के पश्चात् वायु और वायु के पश्चात् मुनिवरों! देखो, अन्तरिक्ष आता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, जब यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में याग करता है, याग के लिए तत्पर होता है तो पंच होताओं के द्वारा याग करता है और वह कहता है, प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा और, मुनिवरों! देखो, उदानाय प्राणवृत्त नागां भूः वर्णा स्स्तुतेः ऐसा उद्गीत गाता हुआ, मुनिवरों! देखो, यह यज्ञमान अपने में याग कर रहा है, याग के लिए परिणित हो रहा है। यागको हमारे यहाँ, ऋषि-मुनि देखो, उल्लास के सहित अपने को एक पर्व के रूप में वर्णित करते रहे हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने यह कहा कि ये पंच होता है, इन्हीं में सर्वत्र ब्रह्माण्ड समाहित हो रहा है, सर्वत्र प्रकृति का क्रियाकलाप इन्हीं में निहित होता रहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि आगे कहता है- कौनं ब्रह्मे वृत्तं देवत्वाम् मानो देखो, कौन है जो अपनी-अपनी कृतियों में रत्त रह करके अपने को ऊँचा बनाना चाहता है।

तीन होता

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, ब्रह्मा वृत्तम् ऋषि ने जब यह प्रश्न पुनः किया सम्भूते ब्रह्मः ये तीन होताओं के द्वारा यज्ञमान जब यज्ञ करता है, तो तीन से, बेटा! देखो, रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण इस प्रकार से, मुनिवरों! देखो, ये गुणाधानम् तीन प्रकार के गुणों को धारण करने वाला यज्ञमान यज्ञशाला में तीन होताओं के द्वारा याग करता है। बेटा! जब विज्ञानवेत्ता अपनी विज्ञानशाला में विद्यमान हो करके और मानो

देखो, त्रैतवाद के ऊपर अध्ययन कता है, तो त्रैतवाद क्या है? जहाँ तीन प्रकार के परमाणुओं का विभाजन किया जाता है? मेरे पुत्रो! देखो, वह त्रिवाद कहलाया गया है, त्रिवर्धा कहलाया जाता है। तो विचार आता रहता है, मुनिवरों! देखो, त्रिवर्णाम् देखो, सतोगुणमें विष्णु है, रजोगुण में शिव है, और तमोगुण में ब्रह्म है।

माता तीनों गुणों से युक्त होती है

मेरे पुत्रो! देखो, मेरी जो प्यारी माता है, वह अपने में तीनो गुण धारण करने वाली है। बेटा! देखो, पालना कर रही है सतोगुण में, शासन कर रही है रजोगुण में, और देखो, उत्पन्न करने वाली निर्माणित करने वाली, वह तमोगुण कहलाता है। तो मेरे प्यारे! ये तीन मनके कहलाते हैं। एक-दूसरे के पूरक रहते है, एक-दूसरे के पूरक कहलाते है। वो ही सतोगुण है, वही रजोगुण है, तो वही तमोगुण माना गया है। मेरे प्यारे! देखो, तमोगुण में भी सत् है और सत् में भी तमोगुण है, और मुनिवरा! तमोगुण और देखो, सतोगुण में रंज ब्रह्वे उसमें तमोगुण की वृत्तियाँ विद्यमान रहती हैं। तो विचार आता रहता है, बेटा! वेद का ऋषि कहता है कि तीनों गुणों को अपने में धारणकरना चाहिए।

मेरे प्यारे! देखो, रजोगुण-तमोगुण-सतोगुण, वह सतोंगुण में विष्णु है, रजोगुण में शिव है, और तमोगुण में ब्रह्म माना गया है। तो विचार आता रहता है, मुनिवरों! परमपिता परमात्मा जो परब्रह्म परमात्मा इस संसार का सृजन करने वाले हैं, निर्माण करने वाले है परन्तु उसी के गर्भ में यह सर्वत्र अन्धकार छायित हो रहा है, तो मेरे पुत्रो! देखो, मैं अपने विचारों की दूरी न ले जाऊं, विचार-विनिमय यह प्रारम्भ हो रहा था, हे मानव! तू अपने जीवन को महान् बनाता हुआ तीनों गुणों के द्वारा तू याज्ञिक बन। जो तीनों गुणों को मुनिवरों! एक सूत्र में ला करके याग करता है, वो परम योगेश्वर बनने के लिए तत्पर हो जाता है।

दो होता

मेरे पुत्रो! देखो, यज्ञदत्त ने कहा-प्रभु! यज्ञमान कहता है कि, ये दो होता कौन से हैं? उन्होंने कहा कि-प्रकृति और ब्रह्म। मेरे प्यारे! देखो, दोनों के उग्रवाद से यह तृतीय रचना दृष्टिपात आ रही है। इसके गर्भ में दो ही हैं। मानो देखो, अमृतम परमपिता परमात्मा और प्रकृति, दोनों के मध्य में, मानो देखो, यह ब्रह्माण्ड अपने में रचित हो रहा है। वाह रे! मेरे देव! तू कितना विस्तारवादी है। एक-एक वस्तु में, बेटा! ब्रह्माण्ड की कल्पना करते रहते हैं। परन्तु बड़ा विचित्रतव है। अहाः वर्णां ब्रह्मे कृतं देवाः हिरण्य वेद का ऋषि कहता है कि अपने में याज्ञिक बनो और यौगिक बन करके उस याग को सम्पन्न करा करके, मुनिवरों! सागर से पार होने का प्रयास करो।

एक होता

उन्होने एक होता कि चर्चा करते हुए कहा कि एक ही ब्रह्म कहलाता हैं जो ब्रह्म की उपासना करने लगता है, वो प्रकाश में चला जाता हैं वह ब्रह्म में है, एकोकि ब्रह्म की उपासना करता हुआ, वह इस संसार-सागर से पार होने का प्रयास करता है। तो मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता है, मेरा वाक्य यह क्या कह रहा है, कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करने वाले बनें और आराधिक बने, जिससे आराधना करने वाला ही महान् कहलाता है।

मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा नहीं प्रकट करने जा रहा हूँ, केवल विचार-विनिमय क्या, मुनिवरों! देखो, यागां भूः वर्णां बह्वे यागा , मुनिवरों! देखो, ऋषि ने कहा कि इस प्रकार देखो, वह याग है, यह आध्यात्मिवाद और भौतिकवाद से दोनों से उन्होंने कटिबद्ध किया। मेरे प्यारे! आज के विचारों का हमारा अभिप्रायः तुमने जाना है। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज कहते है कि इस प्रकार जो यज्ञमान है, जब इस प्रकार का याग करता है, तो उसका मानवीयत्त्व अमरावति को प्राप्त हो जाता है।

आओ, मेरे प्यारे! देखो, वेदं ब्रह्म ब्रह्मचारियों ने और आचार्यों ने दोनों ने, एक जिज्ञासु बन गया तो एक यथार्थी बन गया और एक, मुनिवरों! देखो, वह उसका निर्णायक बन गया, वे निर्णय पर पहुंच गये। विचार आता रहता है, बेटा! मानव परम्परागतों से अन्वेषण करता रहा है, विचार-विनिमय करता रहा है कि हम परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में आए हैं, ऊर्ध्वा में जाना हमारा कर्त्तव्य है, उसी ऊर्ध्वा की उड़ान उड़ता हुआ, मानव देखो, महानता की ज्योति में रत्त होने लगता है।

याग सर्वश्रेष्ठ कर्म है

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हे विशेष चर्चा नहीं प्रकट करने आया हूँ, विचार केवल यह कि यज्ञमान चौबीस होताओं के द्वारा, मैं केवल विवेचना नहीं करने आया, उसकी व्याख्या करने नहीं आया, केवल तुम्हे परिचय देने के लिए आया हूँ और वह हमारा परिचय यह है कि हम मानो याज्ञिक बनें जो ऋषि-मुनियों ने हमें उपदेश दिया है। मेरे प्यारे! देखो, जब यह वाक्य उनके हृदयग्राही बन गया हृदय उरू कृतम् मानो देखो, हृदय में समाहित हो गया, मेरे पुत्रो! देखो, इससे बलिष्ठता का कोई क्रियाकलाप भी नहीं हो पाता। तो विचार आता रहता है, मुनिवरों! देखो, हम याज्ञिक बने, और देखो, इसको, ब्रह्माण्ड को पिण्ड में, और पिण्ड को -उन्होंने कहा में, मानो देखो, समावेश करने का प्रयास करें। नाना प्रकार के सुक्रियाकलापों का नाम याग है, परन्तु यज्ञ उसे कहते हैं जिसमें सर्वागों की उपासना की जाती है। मेरे पुत्रो! देखो, अब मैं अपने विचारों में, अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे -

पूज्य महानन्द जीः- देवाः हिरण्यं रथाः मानौ वरुणाश्चमाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! अथवा मेरे भद्रऋषि मण्डल! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, गागर मे सागर की कल्पना कर रहे थे और उसे, मानो सर्वत्र ब्रह्माण्ड को पिण्ड में प्रवेश करना चाहते थे। इनका प्रायः इस प्रकार का अन्वेषण चलता रहता है और इनके गम्भीर विचार-विनिमय होते रहे हैं। तो मैं कोई विशेष चर्चा नहीं दूंगा, क्योंकि आज मेरा हृदय हर्षित हो रहा है, जहाँ हमारी यह वाणी जा रही है, वहाँ एक याग का आयोजन हुआ। इसीलिए मैं अपने ब्रह्माण्ड को प्रेरित करता रहता हूँ, कि याग के सम्बन्ध में विवेचना होनी चाहिए। ब्रह्माण्ड, उसको स्वीकार कर लेते है। जब यह विचारं ब्रह्मणा कृतं देवत्वा लोकाः केवल मेरा तो एक ही मन्तव्य रहता है, कि याग होने चाहिएं। जैसा ब्रह्माण्ड नाना प्रकार की घोषनाएं करते रहते है। मैं घोष्णा में नहीं, केवल विचार-विनिमय कि मेरे आचार्यजन परम्परागतों से ही, वैदिक साहित्य की मानो पूंजी कहलाते है, और वेद के मन्त्रों के आधार पर अपने विचार व्यक्त करते रहते हैं। हमारा जो यह वाक्य है, यह मृतमण्डल में, जहाँ याग को आयोजन हुआ, मानो देखो, मैं यह कहता रहता हूँ, मेरा अन्तरात्मा यज्ञमान के साथ रहता है, हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सदैव सौभाग्य अखंड बना रहे! क्योंकि, देखो, जिस गृह में अग्नि को देवताओं का माध्यम बना करके अग्नि के मुख में जो हूत कर रहा है, उसका चित्र और उसका शब्द, मानो द्यौ में रमण कर जाता है। वह अग्नि की धाराओं में जो शब्द आता है, वेदमन्त्र जाता है, उसके साथ में तो वह द्यौ में प्रवेश हो जाता है।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव को तो मुझे ये वाक्य वर्णन नहीं कराना है। केवल मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह उद्गीत गाता रहा हूं, हे पूज्यपाद! मानो देखो, यह संसार बड़ी वृत्तियों में रत्त हो रहा है। हे मानम्ब्रहे! हे पितरजनम्ब्रहे! मानो देखो, मैं यह कहता रहता हूँ कि पूज्यपाद गुरुदेव मुझे बहुत-सी वार्त्ताएं स्मरण कराते रहते हैं और यह ज्ञान के सागर में ले जाते हैं, जहाँ हम शान्ति की स्थापना में परिणित हो जाते हैं। आज, मानो देखो, मैं अपने यज्ञमान को केवल एक अपने दो शब्द उच्चारण करने के लिए कि - हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखंड बना रहे और तेरे गृह में सदैव द्रव्य का सदुपयोग होता रहे। क्योंकि देखो, जो यज्ञमान बनता है, याज्ञिक

कहलाता है। वो ही तो द्यौ में रमण करता है और द्यौ से वो ही पृथ्वी में गमन करता है और वही पृथ्वी से द्यौ में चला जाता है। देखो, जैसे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे प्रकट कराते रहते हैं, तो इसीलिए याज्ञिक बनना चाहिए।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! देखो, आधुनिक राष्ट्र की चर्चा तो मैं इसलिए नहीं करना चाहता हूँ, क्योंकि राष्ट्र तो चर्चा का विषय नहीं रहा, परन्तु देखो, मेरी तो एक वेदनामयी रहती हे कि -हे प्रभु! आपका राष्ट्र पवित्र होना चाहिए। जब मानव देखो, इस प्रकार ब्रह्मे और अपने में वृत्तम् महाम्बृते देवत्वां लोकाम् मैं अपने यज्ञमान को अपने मुखार, मेरा हृदय यज्ञमान के साथ रहता है कि, हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखंड बना रहे! गृह में सदैव द्रव्य का सदुपयोग होता रहे! क्योंकि जिस गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता है, वो गृह पनपते है। उनको वो द्रव्य नहीं त्यागता और जिन गृहों में द्रव्य का सदुपयोग होता हैं। एक समय आता है कि वह द्रव्य ही मानव को त्याग देता है। उस मानो द्रव्य ही द्रव्यवादी को त्याग देता है। जो यह आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, केवल यह कि - हे यज्ञमान! तेरे जीवन सौभाग्य अखंड बना रहे और देखो, तू याज्ञिक बना रहे और देखो, अपने में अपनेपन को धारण करता हुआ सागर से पार हो जाएं! तो अब मैं विशेषता नहीं दूंगा, क्योंकि राष्ट्र के सम्बन्ध में कोई विचार देना नहीं चाहता हूँ। धर्मज्ञ यह है कि, मानव अपने गृह में द्रव्य का सदुपयोग करे। अग्नि के मुखारबिन्दु में अपना साकल्य श्रद्धा से प्रदान करना चाहिए। यह है आज का वाक्। मैं अपने विचारों को विराम दे रहा हूँ, पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाकर।

पूज्यपाद गुरुदेवः- मेरे प्यारे महानन्द जी, अभी-अभी महानन्द जी ने अपने उद्गार प्रकट किए हैं और उद्गार, केवल संक्षिप्त में, उन्होंने अपनी धाराएं प्रकट की-यज्ञमान का सौभाग्य अखंड बना रहे, द्रव्य का सदुपयोग हो! मानो इसी में देखो, गागर में सागर भरण कर दिया। देखो, यज्ञं ब्रह्मे कृतम् यज्ञमान के दोनों क्रियाकलाप पवित्र हों! तो यह आज का हमारा विचार क्या कह रहा है, विचार यह कह रहा है- मैं याज्ञवल्क्य मुनि की चर्चा कर रहा था याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने, मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचारियों को शिक्षा दी और ब्रह्मचारियों को याग के ऊपर अपना मन्तव्य दिया। ब्रह्मचारी बड़े प्रसन्न हुए। और प्रसन्नचित्त हो करके चरणों की वन्दना की।

मेरे प्यारे! देखो, आज का यह वाक्य क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते रहें, देव की महिता का गुणगान गाते रहें। यह है, देखो, आज का हमारा वाक्य। अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। यज्ञमान चौबीस होता से ले करके एक होता तक उपास्य देव बना रहे, याग करता रहे, ऐसा विचार हैं। तो वेद का मन्त्र कहता है कि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप हैं। परमपिता परमात्मा ने इस ब्रह्माण्ड की रचना की और इसी में देखो, यज्ञमयी श्रेष्ठ जगत् को रचा है, इस याग के ऊपर विचार-विनिमय करते हुए हम, बेटा! इस सागर से पार हो जाएं। हे मुनिवरों! आज का वाक्। अब समय मिलेगा, मैं शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। (वेदों का पठन-पाठन) सी-४७, रामप्रस्थ ०२-१०-१९९०

१७ क्रियात्मकतावादी बने १८-१०-१९९१

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी हैं, और उसका ज्ञान और विज्ञान भी अनन्तमयी माना गया है। क्योंकि प्रत्येक मानव, परम्परागतों से ही, उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में, अथवा उसकी महती को सदैव विचार-विनिमय करता रहा है और उसका ज्ञान और विज्ञान को लाना चाहताहै। परन्तु उसमें वह अन्तिम में अमृत को प्राप्त होता है। मानो देखो, वह अमृता में और अमृत दोनों को प्राप्त करने के पश्चात् अन्त में वो मौन हो जाता हैं। तो विचारना हमारा यह है कि हम परमपिता परमात्मा की जो अनन्तमयी मानो महिमा का सदैव वर्णन, प्रत्येक वेदमन्त्र में आता रहा है। क्योंकि वेदमनत्र उसका निराकरण करता रहता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा का अमोघ ज्ञान है, और उस ज्ञान के द्वारा ही ही मानव देखो, अपने मो महान बनाता रहता है, ऊर्ध्वा में, साधना में सदैव रत्त रहा है। क्योंकि प्रत्येक मानव के हृदय में साधना का समूह बना रहता है, और यह विचारता रहता है कि मैं साधक बनूं और मैं साधना के क्षेत्र में चला जाऊं। परन्तु साधना के पश्चात् वो परमपिता परमात्मा की महती और उसी में वो रत्त रहना चाहता है। यह परम्परागतों का एक मानवीय विचार है, अथवा उसका चिन्तनीय विचार रहा है। वह चिन्तन करता रहता है, इस सम्बन्ध में।

क्रियात्मक सुविचारों से जीवन-निर्माण

आओ, बेटा! मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नहीं प्रकट करूंगा, मानो देखो, हमारे यहाँ एक वेदमन्त्र आया है, और वेदमन्त्र यह कहता रहा है, राजन्नं ब्रह्म वसौ गृहति रेवत्वं ब्रह्मः वाचं नमं ब्रह्मः, कृति देवाः मनं वृत्ति मनाः यह वेद का मन्त्र यह कहता है कि प्रत्येक मानव के हृदय में यह आकांक्षा बनी रहती है कि मैं महानता को प्राप्त हो जाऊं और मेरे अंग-संग रहने वाला जितना भी समाज है, मानो वो सर्वत्र ऊर्ध्वा में गमन करने लगे। प्रत्येक राजा भी यही चाहता है, राजा के मनों में यह इच्छा रहती हे कि मेरा राष्ट्र पवित्र बने और मेरे राष्ट्र में किसी भी प्रकार का उद्दण्ड, किसी भी प्रकार का मानो वृत्ति-विवाद न बन पाए। वह सदैव उसको ऊँचा बनाना चाहता है। परन्तु वेदमन्त्र कहता है रस्वनं ब्रह्मः वर्णस्सुतम् मानो यह विचारने से, राजा के अपने मनों में विचारने से इन वाक्यों की उपलब्धि नहीं होती। ऐसे विचार बनाना ही (पर्याप्त नहीं)। मानो विचार के साथ में क्रियाकलाप, क्रियात्मकता में (जो) मानव अपने में रमण करता रहता है, वही महान् बनता है।

राजा का कर्तव्य

राजा अपने राष्ट्र को यदि ऊँचा बनाना चाहता है, तो राजा को तपस्वी बनना होगा। यदि राजा यह चाहें कि मैं समाज को दमन करके उसे परिस्थिति को ला सकूं, तो यह असम्भव है, क्योंकि आज एक मानव किसी का दमन कर रहा है, मानो आगे आने वाला जो (समाज है) वो बहुधा से दमनता को समाप्त करता रहेगा, और वही, मानो देखो, दमनता, उग्र रूप को धारण कर लेता हैं। तो इसीलिए वेद का मन्त्र यह कहता है, यह इसका निराकरण नहीं है। निराकरण, यदि राजा चाहता है, तो स्वयं जैसा समाज को बनाना चाहता है, वो स्वयं वैसा ही बन जाए। मानो देखो, यह प्रजा को सत्यवादी बनाना चाहता हैं, तो राजा को सत्यवादी बनना होगा। यदि राजा यह चाहता है कि मेरे राष्ट्र में मर्यादा और ज्ञान दोनों ही ऊर्ध्वा में गमन करते रहें, तो राजा को स्वयं अपने में मर्यादा में रत्त होना होगा और ज्ञान में उसे रत्त रह करके, मानो समाज उसी प्रकार का बनता चला जाता है।

माता-पिता द्वारा पवित्र गृह-निर्माण

जैसे, एक माता यह चाहती है कि मेरा गृह स्वर्ग बन जाएं, पिता की भी यही इच्छा रहती है कि स्वर्ग बन जाएं, परन्तु वह स्वयं तो नारकीय चिन्तन में लगा रहें और गृह को वह पवित्र बनाना चाहता है, तो यह असम्भव है। मानो, जब तक माता-पिता, जैसा गृह को बनाना चाहते हैं, उसके अनुसार आचरण नहीं होगा, क्रियात्मकता में नहीं होगा, तब तक, मानो देखो, गृह ऊँचा नहीं बनता।

क्रियात्मक विद्यालय

जैसे, एक आचार्य विद्यालय में अध्ययन करा रहा है, आचार्य का मन मस्तिष्क तो कहीं रमण करता रहे, परन्तु ब्रह्मचारियों को मुखारबिन्दु से शिक्षा देते रहें, तो यह असम्भव है। वह दीक्षा, मानो शिक्षा नहीं कहलाती। शिक्षा वह हैं, कि मन-मस्तिष्क, मानो देखो, आचार्य का ब्रह्मचारियों के ही क्रियाकलापों पर रहता है, अथवा उसको अपनी प्रतिभा में स्वयं वैसा जब तक नहीं बनाएगा, विद्यालय (और) कदापि, विद्यालय में विचरने वाले ब्रह्मचारी ऊँचा नहीं बन सकते। इसी प्रकार, वेद का मन्त्र कहता है-हे मानव! यदि तू अपने गृह को देखो, अपनी मानवीयता को पुनः से ऊंचा बनाना चाहता है, तो तेरा मन-मस्तिष्क उसी प्रकार का होना चाहिए।

लंका-विजय के पश्चात् राम की तप आकांक्षा

मानो इस संदर्भ में मुझे एक वार्त्ता स्मरण आ गई है, तो मैंने बहुत पुरातन काल में देखो, इसका वर्णन भी किया है। आज मैं उस काल में जा रहा हूँ, जिस काल में, बेटा! मानव अपने मन-मस्तिष्क में ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ने वाले चिन्तन को लाता रहा है मेरे पुत्रो! देखो, सदैव मुझे स्मरण है, जब राम लंका को विजय करके आये, लंका को विजय करने के पश्चात् जब वे अपने कक्ष में, अयोध्या में विराजमान हो गये, तो मानो जब तीसरा दिवस हुआ तो उस समय देखो, महात्मा भरत उनके समीप आए और भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मण तो उनके चरणों में रहते ही थे। परन्तु देखो, जब उनके समीप आए तो राम से यह प्रार्थना की-हे प्रभु! मुझे बहुत समय हो गया है, अनधिकार चेष्टा करते। मैं इस समय, मानो देखो, राज्य में रहता हूँ, और राज्य को अनुशासन में लाना चाहता हूँ। परन्तु मेरे से इतना परिश्रम नहीं हो सका है, प्रभु! मैं इतना ज्ञानी और तपस्वी नहीं बन सका हूँ, जो प्रजा मानो देखो, मर्यादा और ज्ञान में हो जाएं। प्रभु! मेरी इच्छा यह है कि आप अयोध्या के राज्य को अपनाइये और इसको राज्य को अपना करके, पृथ्वी के राष्ट्र को ऊँचा बनाइये, प्रभु!

भगवान राम की राष्ट्रीय मर्यादा

मेरे प्यारे! देखो, राम श्रवण करते रहे। भरत ने याचना युक्त हो करके कहा-हे प्रभु! आप देखो, राष्ट्र को अपनाइये, यह तुम्हारा अधिकार है, यह तुम्हारा है, तुम इसे अपनाओ। परन्तु राम ने कहा-हे भरत! तुम्हें यह प्रतीत है कि मैं अभी राष्ट्र के सुयोग्य नहीं हूँ। उन्होंने कहा-प्रभु! क्यो? उन्होंने कहा कि- तुम्हें प्रतीत है कि जो मानव संग्राम करके आता है, तो संग्राम की प्रवृत्ति कितने समय तक मनों में बनी रहती है। क्योंकि मन-मस्तिष्क का जब दोनों में मानो वो संस्कार विद्यमान होते हैं, वो तरंगें विद्यमान होती है, जिन तरंगों को ले करके मानव जब भी देखो, शान्त-मुद्रा में आता है। तो वो ही चिन्तन होता रहता है और वही चित्र, मानो देखो, मुझे प्रायः प्रभावित करते रहे हैं। तो इसीलिए अभी राष्ट्र का मुझे कोई अधिकार नहीं हैं। जब तक मेरे मन-मस्तिष्क में रजोगुण की भावना रहेगी, क्योंकि राष्ट्र का जो पालन होता है, राष्ट्र में जो नियमावली बनती है, उसमें सतोगुण प्रधान रहना चाहिए। उसमें रजोगुण प्रधान रहीं रहना चाहिए। रजोगुण तो उस काल में होता है, जब मानो देखो, प्रजा अस्त-व्यस्त हो जाती है, और जब तक प्रजा को महान् बनाना है, तो उसे सतोगुण को लाना होगा। जब तक सतोगुण तरंगों का प्रादुर्भाव नहीं होगा। तो देखो, जब तक मैं समाज में राष्ट्र का अधिकारी नहीं हूं। मेरे प्यारे! देखो, भरत वहीं दोनों

विचार-विनिमय करने लगे।

राम-तप-इच्छा पर भरत द्वारा विशेष-सभा-आयोजन

मेरे प्यारे! देखो, भरत से यह वाक्य मानो अपने में समाहित नहीं हो सका। उन्होंने कहा-प्रभु! मैं राजाओं को निमन्त्रित करने जा रहा हूँ, और ऋषि-मुनियों को निमन्त्रित करने जा रहा हूँ। राम ने कहा-बहुत प्रिय, तुम ऐसा ही करो। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने सबको निमन्त्रित किया, महर्षि वशिष्ट और विश्वामित्र, महर्षि विभाण्डक, महर्षि शृंगी और मुनिवरों! देखो, महाराजा शिव और नाना जितने भी संसार में मान्यगण पृथ्वी पर प्राणी थे, सबको निमन्त्रित किया और निमन्त्रित करने के पश्चात मानो देखो, समय पर वो सभा एकत्रित हुई और सभा के एकत्रित होने के पश्चात् बेटा! देखो,! वह सभा महाराजा शिव की अध्यक्षता में हुई। शिव उस सभा के अध्यक्ष बने और, मुनिवरों! देखो, - ने तो यह कहा था कि -सभा की अध्यक्षता महर्षि वशिष्ट मुनि महाराज को करनी चाहिए। वशिष्ट मुनि ने कहा कि- नही, भगवन! यह सभा तुम्हें ही सुशोभनीय है, क्योंकि आप तपस्वी हैं, आपके विचार हिमालय के सदृश्य हैं और, भगवन! देखो, इसका अधिकार तुम्हें ही प्राप्त होना चाहिए।

मेरे प्यारे! देखो, वह सभा का प्रारम्भ होने लगा। वह सभापतित्त्व उन्होंने स्वीकार कर लिया। वशिष्ट मुनि महाराज तो सभा के गुरु-पुरोहित कहलाए गये। मुनिवरों! देखो, सभा का प्रारम्भ होने लगी। उन्होंने कहा-क्या विचार-विनिमय होना है। महात्मा वशिष्ट मुनि महाराज ने कहा-भगवन! भरत की इच्छा यह है कि राम अब इस राष्ट्र को अपनाने वाले बने। क्योंकि बहुत समय हो गएं हैं, देखो, भरत अपनी गुफा में रहते हैं। इन्होंने, जिस समय राम को वनवास हो गया था, उसी समय भरत ने, अपने में यह संकल्प कर लिया था कि राम का स्थान पृथ्वी पर रहता है, माता सीता का स्थान पृथ्वी पर रहता है, तो मैं अपने विधाता के, मानो देखो, उसके समान मेरी कोई शक्ति नहीं। मानो देखो, एक गुफा उन्होंने निर्मित की और वह पृथ्वी के अन्तः गुफा में, अपने जीवन (के लिए) अपना विश्राम-गृह बनाए हुए हैं। तो भरत जी कहते है- मुझे बहुत समय हो गया है कि मैं, मानो गुफा में रहता हूँ, इसलिए कि राम पृथ्वी पर अपना शयन करते हैं। मैं चाहता हूँ कि राम अब शयन मानो राजस्थलि पर करें और वह देखो, पृथ्वी पर मुझे अधिकार प्राप्त हो जाएं। मेरे प्यारे! देखो, जब वशिष्ट ने यह कहा, तो महाराजा शिव ने कहा कि-और क्या चाहते है? उन्होंने कहा कि- यह राजस्थलि राम को समर्पित करना चाहते हैं।

मेरे प्यारे! देखो, जब उन्होंने यह कहा, तो महाराजा शिव ने कहा, राजाओं की अनुमति ले करके, कि- तुम्हारा क्या-क्या विचार है? मेरे प्यारे! देखो, इसमे महाराजा अश्वपति ने यह कहा कि -तो राम के विचार लिए जाएं, क्योंकि वह उनका विषय है, वे स्वयं अपने में तपस्वी हैं, ज्ञानी है और मर्यादा में रत्त रहने वाले हैं, वे अपना विचार स्वयं नियुक्त करें। क्योंकि यह इनका ही विषय है, यह किसी और का विषय नहीं है।

मेरे पुत्रो! देखो, राम से यह कहा गया कि -राम! महाराजा अश्वपति का यह विचार है कि यह तुम्हारा विषय है। क्योंकि महाराजा! अश्वपति की जो उपाधि है, वह सतोयुग से चली आ रही है। क्योंकि देखो, अश्वपति उसे कहते हैं, जिस राजा के राष्ट्र में कोई भी परम्परा हो और परम्परा अपने में पूर्णता को प्राप्त होती रही है। क्योंकि यदि वहाँ पालना के मूल में रहे तो वे भी अपने में महान हैं, विज्ञान भी अपने में महान है, शिक्षा प्रणाली भी मानो अपने में बड़ी विचित्र है, तो इनको महाराजा अश्वपति की उपाधि दी जाती है। तो यह उपाधि से अलंकृत हैं। मानो देखो, यह महाराजा अश्वपति का यह अपना मन्तव्य है कि यह तुम्हारा विचार है। मेरे प्यारे! देखो, भगवान राम ने कहा कि-यह विचार तो भरत से पुनः लिया जाएं। तो भरत ने कहा कि-प्रभु! मेरे विचार तो मेरे पूज्यपाद ने वर्णन कर दिए है। और, मैं यही चाहता हूँ कि यह राष्ट्र, मातेश्वरी मर्यादा में गमन करने वाला हो। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा-बहुत प्रियतम्। परन्तु राम ने यह कहा, उपस्थित हो करके, सब राजा इत्यादि अपने में विचार

यह कर रहे थे कि राम क्या उच्चारण करते हैं।

भगवान राम के विजय संदर्भ में विचार

इनके वाक्यों को श्रवणकरने के लिए सभी बड़े लालायित थे तो उस समय राम ने यह कहा-हे राजाओं! अप्रतिम् ब्रहे मानो, हे आचार्यों! हे गुरु जनों। हे ऋषिवर! महान् तपस्वियों! मेरी प्रबल इच्छा यह है कि मैं राष्ट्र के सुयोग्य अभी नहीं हूँ। महाराजा वशिष्ट बोले कि कि -उसका कारण क्या है? राम ने कहा कि उसके मूल में यह है कि मैं अभी-अभी लंका से विजय करके आया हूँ और विजय हभ नहीं मानो अपने कर्त्तव्य का पालन करके आया हूं। विजय तो वो मानव करता है, जो अपनी इन्द्रियों को संयम में कर लेता है। संयमी विजयी होता है। प्रजा को दमन करके या राजा को राज्य ले करके कोई मानव विजयी नहीं कहलाता है राम ने कहा-विजयी वही होता है, जो अपनी इन्द्रियों पर संयम करता हुआ, मन और प्राण, मानो देखो, उसे मस्तिष्क की आभा में रमण कराता है। मानो देखो, इन्द्रियों पर विजय करने वाला ही विजयी कहलाता है। मैं विजयी नहीं हूँ। मैं तो केवल अपने कर्त्तव्य का पालन करता रहता हूँ। उस कर्त्तव्य में यह कि राजाओं में कुरीतियां नहीं रहनी चाहिएं और उनमें, देखो, एक अनुशासन की प्रवृत्ति बनी रहनी चाहिएं और उनमें, देखो, एक एक अनुशासन की प्रवृत्ति बनी रहनी चाहिएं और उनमें, उस अनुशासन की प्रवृत्ति को, मानो देखो, कर्त्तव्य का पालन करने के लिए मैं आ पहुंचा हूँ। देखो, मैं विजय करके नहीं आया। यह अवश्य है कि उसमें, कर्त्तव्य में, मेरे में रजोगुण-तमोगुण की मात्रा अवश्य बलवती हो गयी, विशेष कर रजोगुण की मात्रा। क्योंकि, जब मानव एक दूसरे को नष्ट करता है, तो उसमें रजोगुण की मात्रा बलवती होती है, वह रजोगुण ही कहलाता हैं। इसलिए, जब तक मेरे सतोगुणी विचार नही हो पायेंगे, तब तक मैं इस राष्ट्र का अधिकारी नहीं हूँ। क्योंकि, यह जो अयोध्या है, बड़ी वशिष्ट है, अपने में बड़ी विचित्र हैं।

अयोध्या के तपस्वी राजा

भगवान् मनु ने इसका, मानो देखो, इस नगर का निर्माण किया है और भगवान् मनु ने इसी स्थली पर विद्यमान हो करके अपनी लेखनियाँ बद्ध की है। कालेत्व ऋषि ने और देखो, भगवान् मनु ने इस अयोध्या का निर्माण किया। इसमें, देखो, अष्ट-चक्र, नौ-द्वार कहलाते हैं। इस अयोध्या का ऐसा निर्माण है, जैसे परमपिता परमात्मा ने माता के गर्भस्थल में मानव का निर्माण किया है। मानव का निर्माण क्या, उसी प्रकार अष्ट-चक्र है उसमें नौ-द्वार कहलाते है। मानो देखो, ऐसी अयोध्या है, जो किसी से विजय न हो सके। तो उन्होंने कहा-प्रभु! मेरी इच्छा यह है, भगवन्! कि मैं अपने में, इस स्थली पर बड़े-बड़े महापुरूषों ने देखो, यहा विजेताओं ने राज्य किया है। यहाँ देखो, मेरे महापिता, महाराजा दिलीप, जो बारह वर्ष तक गऊओं के पीछे ही, पश्चात् देखो, अपने जीवन को व्यतीत करने वाले हों,और देखो, वे नन्दिनी के पीछे ही रहते हों और ब्रह्मज्ञान उसी से तेजस्वी बन करके, देखो, उन्होंने, हमारे महापिता रघु जैसों को जन्म दिया।

महाराजा रघु हमारे वंशलज थे, हमारे पूर्वज थे। मानो देखो, महाराजा रघु जब याग करते थे, तो उनका याग भी सर्वस्व में रहता था, जब कोई द्रव्य राष्ट्र में नहीं रह पाता और प्रजा भी प्रसन्न और राजा भी प्रसन्न। इतना तपस्वी जीवन, जिन राजाओं का रहा है! तो मैं अभी देखो, इस योग्य स्वीकार नहीं कर रहा हूँ कि जो मैं इस राष्ट्र का पालन कर सकूं। क्योंकि यहाँ महाराजा दिलीप और रघु जैसों के जो पतीका जो मानो देखो, राजा सगर जैसे हमारे महापिता हुए हैं, असमंजस जैसे महापित हुए है, जो मानो देखो, राजस्थली को त्याग करके बारह-बारह वर्षो तक भयंकर वनों में तपस्या करने चले जाते थे। सुखमंजस को देखो, प्रजा यह जानती रहती कहाँ गएं राजा, तो देखो, भयंकर वनों में जा करके जंगलों के आवृत्तं ब्रह्मा देखो, वह निर्जन भूमि के पत्र-पुष्पों को, जल को पान करके बारह-बारह वर्ष तक वो अपने जीवन को व्यतीत करते थे। वे जो तपस्वी थे, उन तपस्वियों ने इस

स्थली पर राज्य किया है। भगवन! देखो, यहाँ महाराजा भगीरथ जैसे हमारे वंशलज हुए हैं। परन्तु, देखो, मेरी इच्छा यह है, भगवन! कि मैं स्वयं तपस्वी बनूं और बारह वर्ष तक मानो निर्जन वन में रह करके, भयंकर वन में, तपस्वी बन करके, जब तक मैं अपनी आत्मा को ऊँचा नहीं बना लूंगा, मन मस्तिष्क जब तक रजोगुण की तरंगों से उपराम नहीं होगा, जब तक देखो, सतोगुण मेरे में नहीं आयेगा, मैं इस राष्ट्र का अधिकारी नहीं हूँ।

राजा की माता से तुलना

क्योंकि माता जब पालन करती है और लोरियों का पान कराती हैं, तो माता भी सतोगुण विचार में पालन करती है। इसी प्रकार राजा भी यदि सतोगुण राजा के द्वारा नहीं है पालन करते समय, तो उस राजा को राष्ट्र का कोई अधिकार नही होता है। माता को भी कोई अधिकार नहीं है, यदि उनमें सतोगुण नहीं है। माता वह होती है, जो संतान को सुयोग्य बनाने के लिए अपने में तपस्वी बनती है। जैसे, मेरी माता कौशल्या मुझे अपनी गाथा प्रकट कराती रही हैं। जब में लोरियों का पान करके उनके आंगन में रमण करता था, तो माता ने यह कहा कि-मैंने राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं किया है, मैने तमोगुण को मानो स्पर्श नहीं किया है, रजोगुण को स्पर्श नहीं किया, मैंने सतोगुण से पालन किया है। और, देखो, मेरे श्रोत्रों में कहती रहती थी-अरे, बाल्य! तुझे भी सतोगुणी बन करके मेरे गर्भाशय को ऊँचा बनाना हैं। तो देखो, माता के, हमारे पूर्वजों के ये विचार रहे हैं। तो आज मैं पूर्वजों के विचारों के अनुसार अपने जीवन को व्यतीत करना चाहता हूँ।

भगवान राम द्वारा तपस्या की परिभाषा

मेरे प्यारे! देखो, सर्व सभा शून्य हो गई और वह अपने में शून्य हो करके देखो, महाराजा शिव ने कहा-राम! तुम्हारा वाक्य तो बड़ा महान् है। तुम्हारें विचार तो बड़े महान् हैं। परन्तु तपस्या का मूल क्या होगा? उन्होंने कहा-प्रभु! तपस्या का मूल दो होता है, एक, तपस्वी जब तपस्या के लिए त्याग करताहै तो वह अपने में विचारता है कि मैं तपस्वी बनूंगा, मैं त्यागी बनूंगा। और, तपस्वी कौन होता है? जो अपने अन्तःकरण का, जो इसका एक जगत् है, हमारे यहाँ दो प्रकार के जगत् माने गएं हैं-एक बाह्य जगत् है, जो व्यवहार का है, जिसमें व्यवहार अता है और एक आन्तरिक जगत् है, जिसमें अपनी आत्मा को बलिष्ठ किया जाता है। तो मैं भंयककर वन में जा करके मानो अपने आत्मा को तपस्वी बनाऊंगा।

तपस्या का मूल-अन्नशोधन

वह कैसे बनाया जाएगा? यह मानो देखो, मेरे मन-मस्तिष्क में विचार आ रहा है, क्या जब तक मानव का, समाज का देखो, अन्नाद ऊंचा नही बनता, अन्न ऊंचा नहीं बनेगा, तब तक तपस्या प्राप्त नहीं कर सकता। मैं तपस्वी जभी बन पाऊंगा। मेरे प्यारे! देखो, भगवान शिव ने यह कहा-हे राम! हम सभी राजाओं को तपस्वी होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, क्योंकि तपस्वी ही पालन कर सकता है, सतोगुण ही पालन कर सकता है। रजोगुण में पालन नहीं कर सकता। रजोगुण मैं तो दंडित कर सकता है।

मेरे प्यारे! देखो, यह वाक्य अपने में जब निर्णय हुआ, तो महाराजा भरत से कहा गया-कहो, भरत! तुम क्या चाहते हो? उन्होंने कहा-हे प्रभु! मैं क्या कह सकता हूँ? मेरा तो यही है, मैं उस गुफा में पुनः से विश्राम करूंगा। परन्तु, देखो, प्रजा अपने कर्त्तव्य का पालन करती रहेगी।

मेरे प्यारे! देखो, यह वाक्य जब निर्णय हो गया, क्योंकि जिस प्रजा में, जिस प्रजा के राष्ट्र में, राजा तपस्या के लिए चला जाता है, तो प्रजा भी, मानो देखो, स्वतः तपस्वी बन जाती है। जैसे, देखो, यहाँ मुझे स्मरण है, जब दिलीव जी नन्दिनी के पीछे चले गये, ऋषियों की आज्ञा से, तो उनकी जो देवी थी स्वेन्धना, मानो देखो, वह अपने में तपस्विनी बन गई। वह गृह में तपस्विनी बन गई। वह भयंकर वनों में तपस्विनी बन गये। स्वतः मानो

देखो, उसकी तरंगे हैं, उसका जो त्याग और तप है, वो प्रजा को प्रभावित करता रहता है। वह प्रजा उसके अनुसार बरतती रहती है।

मेरे पुत्रो! देखो, मुझे वो काल स्मरण आ रहा है। आज मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है, जैसे आज मैं उस अयोध्या की सभामें, मानो देखो, विद्यमान हूँ, ऐसा मुझे अनुभव हो रहा है, क्या उनके विचारों का कितना गम्भीरता, मानो देखो, रहस्यतम्, विचार उनका था। महाराजा शिव अपने में मौन हो गये। प्रजापति से कहा गया-कहो, प्रजापति! आप, मानो देखो, ज्ञान में महान हैं, उद्गीत गाओ कि इनका विचार क्या है? विभिषण से प्राप्त किया गया कि, तुम्हारा विचार क्या है? उन्होंने कहा-प्रभु! मैं तो स्वयं इनके ही पिछले भाग में, इनका सेवक बना रहता हूँ। मेरा कोई विचार नहीं है, मानो देखो, मैं तो स्वतः बनना चाहता हूँ, विभीषण ने यह कहा। परन्तु, प्रजापति ने यह कहा-यह जो उच्चारण कर रहे हैं, वो यथार्थ है, क्योंकि प्रजावान् जभी बन सकता है, जब उसे प्रजा काअधिकार प्राप्त हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, भगवान् राम ने, इस वाक्य को देखो, जब वशिष्ट से कहा गया कि - आपका, ऋषिवर! क्या मन्तव्य है? क्योंकि आप राज पुरोहित हैं। उन्होंने कहा कि- हे प्रभु! मैं तो राजपुरोहितता करता रहूँगा। मेरा तो वह कर्त्तव्य है। परन्तु राम यदि वन को जाते हैं, तो मुझे उसमें भी किसी प्रकार का, मैं इनके लिए बाधक नहीं बनूंगा। मेरे प्यारे! देखो, भरत भी सहर्ष प्रसन्न हो गएं और वह राम ने देखो, बेटा! आज्ञा पा करके, शिव ने यह कहा-हे राम! तुम्हें धन्य है, जो आज तुम तपस्या के लिए परिणित हो रहे हो, तुम तपस्या के लिए राष्ट्र को त्याग रहे हो!

वनों में भगवान राम की तपस्या

मेरे प्यारे! देखो, राम बन को चले गएं और वन में जा करके वो तपस्या करने लगे। मेरे प्यारे! देखो, पत्र और पुष्पों का रस, अध्ययन करते हुए, वनस्पतियों का देखो, अध्ययन करके, उसे वो पान करते थे। उनका रस बना करके अग्नि मे तपा करके, वे उसे स्वतः पान करते थे। मेरे प्यारे! देखो, उसे पान करते-करते उनका रजोगुण, कुछ समय के पश्चात् समाप्त हो गया। तमोगुण की प्रवृत्तियां (का) तो आने का प्रश्न ही नहीं होता।

मेरे प्यारे! देखो, यहाँ तपस्या के मूल में क्या है? क्या, तपस्या के मूल में पालन है, कर्त्तव्य है, महानता है, तो मेरे पुत्रो! देखो, जब उन्होंने, इस प्रकार तपस्या के मूल में परिणित हो गये, तो बेटा! बारह वर्ष तक उन्होंने कठोर तप किया। बारह वर्ष के पश्चात्, मेरे प्यारे! देखो, वे बारह वर्ष में देखो, जब उन्हें ऋषि-मुनियों की प्रार्थना, अमृतम् देखो, उनके द्वार पर पहुंचे ते ऋषि-मुनि उनसे प्रश्न करने लगे कि-महाराज! तुमने इस तपस्या के मूल में क्या पाया है? उन्होंने कहा-तुम तपस्वी हो, ऋषि हो तुमने क्या पाया? उन्होंने कहा-प्रभु! हम तरंगों को ग्रहण करते रहते हैं। देखो, वह जो अन्न की तरंगें, इस अन्तरिक्ष में भ्रमण कर रही है, रमण कर रही हैं, उसे हम, प्राण के द्वारा प्राण और अपान के द्वारा अपने में देखो, उदर की पूर्ति करते रहते हैं, हम देखो, आपो की पूर्ति करते रहे हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, देखो, तपस्वियों का जो अन्न होता है, वह अन्तरिक्ष में, मानो देखो, विद्यमान होता है, वो पंचमहाभूतों का रस कहलाता है, और जो पंचमहाभूतों के रस को पान करना जानता है, बेटा! वही आत्मा को महान् बनाता है। क्योंकि आत्मा का जो लोक है, वह पंचमहाभूत कहलाता हैं। वही पंचमहाभूत स्थूल जगत् में, स्थूल अन्न में आ जाता है। जो माता वसुन्धरा के गर्भ से उत्पन्न होता है, पृथ्वी के गर्भ से उत्पन्न होता है, वह मानो देखो, स्थूल अन्न कहलाता है। उसका सूक्ष्म-अन्न अन्तरिक्ष में रमण करता रहता है।

तापसी माताओं के आहार

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, जब माता कौशल्या के गर्भ-स्थल में राम का आत्मा विद्यमान था, तो उस समय वो तीन-तीन दिवस तक वायुमण्डल से अन्न को प्राप्त करती रहती थी। तो मुनिवरों! देखो, वे

माताएं, जैसे माता मलदाल्सा के जीवन में आता है, और भी माताओं के जीवन में आता है, वे वायु सेवन करती। मानो वायु से अपने उदर, वायुमण्डल में देखो, वह सब तत्त्व विद्यमान होते हैं, उनको पान करना ऋषियों की भांति और उसे अपने उदर में प्रवेश कराना। मेरे प्यारे! बाल्य, गर्भ-स्थल में उन्ही तत्त्वों को ग्रहण करता रहा।

आत्मा का लोक और तीन शरीर

विचार आता है, जब जालवी ऋषि से यह प्रश्न किया गया कि -महाराज! आत्मा का लोक क्या है? तो वो कहते है-वेदमन्त्र कहता है -पच्ंच ब्रह्वा मना लोकां वृत्ति देवत्वां मानो देखो, वह पंचमहाभूतों का पंचमहाभूत जो है, यही आत्मा का लोक है, वो उसी में निवास करता है। यह शरीर, स्थूल रूप में है, जब येही मानो सूक्ष्म हो जाता है, सूक्ष्म शरीर में वही पंचतन्मात्राओं में, पंचमहाभूतों का इसका गृह बना रहता है। वही जब कारण में चला जाता है, तो ज्ञान और प्रयत्न देखो, उसके गर्भ में जो पंचमहाभूत होते हैं, उसमें चला जाता है। और, जब, मानो देखो, ये तीनो शरीरों से आत्मा उपराम होता है, जो यह परमात्मा की ज्योति को प्राप्त करने लगता है।

बेटा! मैं विशेषता में नहीं जाना चाहता हूँ, ये बड़े गम्भीर विचार है। क्रियात्मक अपने जीवन को बनाना हैं तो मेरे प्यारे! देखो, आज मैं बहुत दूरी चला गया हूँ विचार यह था कि भगवान् राम ने बारह वर्ष का तप भयंकर वनों में किया और भयंकर वनों में, बेटा! वायु का सेवन किया और वायु में जो तत्त्व होते हैं, अन्नाद के, पंचमहाभूतों के, जिनसे शरीर के अवयवों का जन्म होता है और वे उसी में गुथे रहते हैं, उनको ग्रहण करना, मेरे प्यारे! प्राण और अपान, अपान में देखो, व्यान और समान और देखो, उदान का, जब पांचों का जब पुट लगता है तो मानो वह अपनी साधना में पूर्णता को प्राप्त होता है।

मेरे प्यारे! आज का यह विचार, क्या कह रहा है? मैं कोई तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। विचार केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते हुए और मानो देखो, अपने में क्रियाकलापों को ले करके, हम अपने में क्रियात्मकतावादी बने। जैसे, मुनिवरों! देखो, महाराजा शिव थे, देखो, कल, मैं और आगे प्रकट कर सकूंगा, उनके जीवन में कितनी महानता और कितनी विशेषता रही। उनका जीवन बेटा! एक महान् रहा है! बाल्यकाल भी महान् रहा है और युवाकाल भी महान् रहा है।

तो मेरे प्यारे! देखो, उनके जीवन में एक महानता की ज्योति, सदैव जागरूक रही है। त्यागी और तपस्वी जो प्राणी होते हैं, वही पालना कर सकते हैं। परन्तु उनके विचारो में पालना की प्रवृत्ति होती है। जो पालना के मूल में महान् होता है, वह राजा बनता है और जो राजा, मानो पालना और मन देखो, अपनी आवृत्तियों में रत्त कराता हुआ, मानो इन्द्रियों पर जयी बनता है, वो राजा विजयी कहलाता है। राज, संग्राम करने वाला, विजयी नहीं होता। विजयी वहीं होता है, जो इन्द्रियों पर संयम करने वाला हो। विजयी वह होता है, जो देखो, समाज के मन-मस्तिष्क को, देखो, अपनी तपस्या के प्रभाव से उसकी त्रुटियों को निगनले वाला राजा कहलाता है।

यह है, बेटा! आज का वाक्। आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। विचार केवल यह कि राम का तपस्वी जीवन रहा है। उनके जीवन की कुछ चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। आज का वाक्, हमारा सम्पन्न होने जा रहा है। समय मिलेगा, मैं शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन। सी-४७, रामप्रस्थ १८-१०-१९९१

१८ व्यापकवाद १९-१०-१९९१

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है।, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं और जितना भी यह जड़ जगत् अथवा चैतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में, प्रायः वो मेरा देव दृष्टिपात आता रहता हैं। जिस भी क्षेत्र में तुम प्रवेश हो जाओगे, मानो उसी क्षेत्र में उस परमपिता परमात्मा का भान होता है, अथवा उसकी महती हमारे समीप और उसकी महती हमें अपने में प्रायः दृष्टिपात आने लगती है। इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा के इस संसार के एक-एक कण में प्रायः दृष्टिपात करते हैं और उसका अनुभव करते रहते है कि वो परमआनन्द है और वह हमारे अन्तर्हृदय में विद्यमान रहता है और हम हृदय-अगम्य बन करके उस परमपिता परमात्मा को प्रायः अपने में ही दृष्टिपात करते रहे हैं।

मन और प्राण का विषय

सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के वर्तमान के काल तक नाना विज्ञानवेत्ता हुए हैं और नाना साधक हुए है और आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी हुए हैं। विज्ञानवेत्ता ने तो यह कहा कि हम उस परमपिता परमात्मा को अन्तर्हृदय में प्रायः दृष्टिपात करते रहे हैं, परन्तु जो भौतिक - हैं, वे मानो एक-एक परमाणु के ऊपर विचार-विनिमय करते रहे हैं। और यह जितना भी प्रकृति का मण्डल है, चाहे प्रत्यक्ष रूप में है, चाहे वो परोक्ष रूप में है मानो उसका समन्वय, मानव की बाह्य प्रतिक्रियाओं से होता है। चाहे वह विज्ञान है, चाहे वह परमाणुवाद है, मानो चाहे वह लोक-लोकान्तरों की यात्रा है, चाहे पृथ्वी का गर्भ है, वह सर्वत्र, देखो, मन और प्राण का विषय माना गया है। और, मन के क्षेत्र में सर्वत्र प्रकृति का मण्डल रहता है और वह जो प्रकृति का मण्डल है, वही मन की धाराओं में सदैव निहित रहता है। तो हमें यह विचारना है कि हम मन को प्रकृति का सूक्ष्मतम एक मानो तत्त्व और अवृत माना करते हैं।

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा नहीं दूंगा इस सम्बन्ध में, केवल हमारा विचार-विनिमय यह है कि प्रत्येक मानव जब अनुसन्धान करने लगा है, तो उन्होंने व्यापक रूप से इस संसार का विचार-विनिमय करने के लिए वो सदैव तत्पर रहे हैं और अन्तिम छोर पर चले गएं हैं। तो मुनिवरों! देखो, वो प्रकृति को चिन्तन में लाए हैं, तो प्रकृति को अन्त में मानो वह शून्यता में प्राप्त हो जाते हैं और जब चेतना के मूल में प्रवेश करते हैं, तो मानो देखो, अपने को चेतना में, चेतना का समन्वय करने लगते है। वह अपने में बड़ा विचित्र एक नृत्य माना गया है।

साधना में वायुमण्डल-शोधन की आवश्यकता

आज मैं इस सम्बन्ध में भी विशेष चर्चा नहीं, केवल यह कि हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, नाना प्रकार के यागों का बड़ा वर्णन होता रहाहै, जिस ऋषि-मुनि ने यह विचारा है किहमें अपनी साधना में प्रवेश होना है, तो उन्होंने नाना प्रकार के चरू को एकत्रित करने के पश्चात् उन्होंने नाना समिधाओं को ले करके याग प्रारम्भ किया, जिससे वायुमण्डल, मानो देखो, वह सुगन्धीमयी और तंरगों में तरंगित हो जाएं, जिससे वे मानो साधना में प्रवेश हो जाएं और वह साधना को साधना में अपने में धारण करता रहे।

मेरे पुत्रो! बहुत से ऋषि-मुनियों की चर्चाएं, अथवा उनका मन्तव्य, मुझे, प्रायः स्मरण आता रहा है। आज मैं विचार यह देता हुआ,हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों का जो एक अनुपम विचार रहा है, वह यह रहा कि वायुमण्डल को

पवित्र बनाना है, और वायुमण्डल में, मानो देखो, दूषित वायुमण्डलीय न बन जाएं, जिससे मानव के जीवन में मानो एक महानता न रह पाए। तो हमारे ऋषि-मुनियों ने यह कहा कि है कि मानव को विचारों से और अग्निहोत्र के द्वारा इस प्रकार के याग होने चाहिए। क्योंकि हमारे ऋषि-मुनियों ने, बेटा! प्रत्येक क्रियाकलाप को एक याग के रूप में परिणित किया है। उन्होंने यह कहा है कि यह सर्वत्र जितना भी जगत् है यह जब एकान्त स्थली मे विद्यमान होता है, तो यह एक प्रकार का याग हो रहा है। शान्त्वना में विद्यमान है, विचार-विनिमय कर रहे हैं और विचार-विनिमय करते गम्भीरता में जब परिणित हो जाते है, तो उन विचारों का नाम याग माना गया हैं। मानो देखो, याग में जब मानव परिणित हो जाता है विचारणीय जो याग है, वो विचार एक दूसरे में समन्वय होने लगता है। जितने भी सुक्रियाकलाप हैं जो आत्मा से समन्वय, आत्मा का मिलान करने वाले हैं, मन की पुट लगा देते है और प्राण, मानो देखो, महानता में गति करने लगता है, तो (वह) सब याग के रूप में परिणित किया गया है। तो मेरे प्यारे! आज मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि आज का हमारा वाक्य यह कहता है यज्ञनं ब्रह्मा वर्णस्सुतम् मानो यह संसार एक प्रकार का यज्ञमयी जगत् है।

भगवान राम के साधना-यागों में विशेष चरू

आओ, बेटा! ऋषि-मुनियों ने इस मानव शरीर को और ब्रह्माण्ड को, दोनों को एक-दूसरे में कटिबद्ध किया है। बेटा! मुझे वो काल स्मरण है, जिस काल में देखो, राम भयंकर वनों में तप कर रहे थे। तो वे अपनी तपस्या की स्थली को ऊँचा बनाने के लिए वे नाना प्रकार के चरू के द्वारा, साकल्य के द्वारा याग करते रहे हैं। मानो देखो, जिन चरू के द्वारा मानव का मन और मस्तिष्क एक तुल्य हो जाता है, एक ही रूप हो जाता है, तो उसके पश्चात् जो याग करता है, वह मानो देखो, उसके हृदय और मस्तिष्क को ऊर्ध्वा में गमन करता हुआ वायुमण्डल को पवित्र बना देता है। तो मेरे प्यारे! देखो, में इस सम्बन्ध में विशेषता न देता हुआ, केवल यह कि हमारे आचार्यों का यह प्रायः कथन रहा है कि हम अपने में याज्ञिक बनें, और याग में हम परिणित हो जाएं, और आध्यात्मिकवाद और भौतिक-विज्ञान को वे मानो किस प्रकार अपने में कटिबद्ध करते रहे हैं, अपने में दोनों का समन्वय करते रहे हैं।

याज्ञिक सत्यकाम

आओ, बेटा! देखो, मैंने तुम्हें यह वाक्य कई काल में प्रकट किया है, आज भी मुझे स्मरण आ रहा है, मानो देखो, जाबाला पुत्र, महात्मा गौतम से आज्ञा पा करके भयंकर वन को चले जाते हैं और वे चार सौ गऊएं ले करके, एक सहस्त्र जब नहीं हो जाएं, ब्रह्मचारी, मेरे आश्रम में, नही आना। मेरे प्यारे! उसे उन्हीं गऊओं का दुग्ध और उनके द्वारा याग करने से उन्हें ब्रह्मज्ञान हो गया था, ब्रह्मनिष्ठ हो गएं और वे अपने एक-एक श्वास को मानो यज्ञमयी स्वीकार करने लगे। मेरे पुत्रो! देखो, मन-कला और प्राण-कला पर आ करके वो शान्त हो गये। तो विचार आता है कि जो भी मानव अपने में साधक बनना चाहता है, वो मन और प्राण का, दोनों का समन्वय करता रहे, जिससे उसका तारतम्य उस महान् देव से उसकी प्रतिभा का दर्शन हो जाएं, जिस देव के द्वारा मानो इस संसार की रचना हुई हैं।

महर्षि याज्ञवल्क्य का याग-मन्थन

तो मुनिवरों! देखो, इस सम्बन्ध में न जाता हुआ, आओ, आज मैं तुम्हें महर्षि याज्ञवल्क्य के आश्रम में ले जाना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, जब महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने यहाँ नित्यप्रति अपने विद्यालय में ब्रह्मचारियों को एकत्रित करके वे ब्रह्म का प्रायः उपदेश देते रहे और ब्रह्म को जो उपदेश चलता रहा, तो मेरे प्यारे! देखो, याग के ऊपर उनका बड़ा तारतम्य रहता था और वो याग के ऊपर यह कहा करते थे कि-यह संसार एक

यज्ञशाला है। विद्यालय भी यज्ञशाला है, मानो देखो, जहाँ गौपथ्य नाम की अग्नि का चयन किया जाता है, जहाँ गृहपथ्य नाम की अग्नि का चयन किया जाता है, जहाँ वैश्वानर नाम की अग्नि का चयन किया जाता है और वह चयन मानो देखो, अग्नि को प्रदीप्त करना है। अग्नि, मुनिवरों! देखो, कहीं विचारों से प्रदीप्त होती है, कहीं अग्नि, मुनिवरों! देखो, साकल्य और समिधा से प्रदीप्त होती है, और कहीं वही अग्नि, मेरे प्यारे! देखो, साधनामें परिणित हो जाती है। तो इन अग्नियों का, सब का विचार-विनिमय करते हुए, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ब्रह्मचारियों को अपने विद्यालय में यह कहा करते थे कि प्रत्येक इन्द्रियों का जो विषय है वही तो ब्रह्म में ले जाता है, वही याग है जो हृदय से इसका समन्वय रहता है।

मेरे पुत्रो! देखो, जब उन्होंने यह वाक्य प्रकट कराया तो याग के ऊपर वो बहुत बल देते थे। मेरे प्यारे! अग्नि-शक्ति के आधार पर देखो, अपनी शक्ति का तारतम्य याग में परिणित कर देते। और, वो यह कहा करते थे कि विज्ञान भी एक प्रकार का याग है। मानो देखो, जब विज्ञानवेत्ता यह विचारता रहता है कि जितना भी मेरा साकल्य है, मेरे जीवन में जितना भी विचार है और मेरे जीवन का जितना भी क्रियाकलाप हो रहा है, वो सब एक प्रकार का यज्ञमयी है, मानो इस प्रकार का विचार-विनिमय करता हुआ वह विचारों को एकाग्र बनाकर के हृदय में प्रवेश कर जाता है। हृदय में जैसे, मेरे प्यारे! देखो, अग्नि प्रदीप्त होते हुए जब जल की पुट लग जाती है, तो (अग्नि) अपने में शान्त हो जाती हैं, वह कहीं ओझल हो जाती है। परन्तु अग्नि का तारतम्य नष्ट नही हुआ है, वह ओझल हो गई है केवल। तो इसी प्रकार मानव के जो विचार है, वे विचार ज्यों के त्यों अन्तःकरण में, संस्कारों के रूप में विद्यमान रहते है। परन्तु वह ओझल हो गएं है, परन्तु उनकी मृत्यु नहीं हो सकी।

चौबीस होता

मेरे प्यारे! देखो, मैं इस सम्बन्ध में विचार न देता हुआ जब महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज यह विचार दे रहे थे कि याग होना चाहिए, क्योंकि याग संसार का शुद्धिकरण करता है, मानव के विचारों का शुद्धिकरण करता है। परन्तु याग वह होता है, जहाँ मन-मस्तिष्क,यज्ञमान का, देखो, होतागणों का एकाग्र और सांत्वना में मानो देखो, उसके ऊपर अपना अधिपथ्य हो, अनुशासन हो तो मेरे प्यारे! देखो, जब यह विचार-विनिमय हो रहा था, इतने में, मुनिवरों! देखो, दो ब्रह्मचारी उनकी सभा में उपस्थित हुए, उनके विद्यालय में दो ब्रह्मचारी, एक यज्ञदत्त नाम के ब्रह्मचारी और एक वृत्तिका ब्रह्मचारी, दोनों ब्रह्मचारी उपस्थित हुए। मेरे पुत्रो! देखो, यज्ञदत्त ब्रह्मचारी ने कहा-हे प्रभु! आप याग के ऊपर इतना बल देते रहे हैं कि याग हो, प्रभु! कितने होताओं के द्वारा याग करे? मेरे प्यारे! याज्ञवल्क्य मुनि बोले -कि वेद का मन्त्र कहता है चतुषं ब्रह्मे दुहि चतुषुत्प्रह्वा वाचन्नमंब्रह्मे स्वाहा ऐसा उन्होंने कहा-हे ब्रह्मचारी यज्ञदत्त! यह वृत्तिका ब्रह्मचारी, जब यज्ञमान बन करके याग करना चाहता है, यह याग क्यों करना चाहता है? मेरे प्यारे! देखो, यज्ञदत्त ने कहा-प्रभु! यह तो मानव का कर्त्तव्य है, आप कर्त्तव्यवाद की चर्चा कर रहे हैं और याग के ऊपर बल देते हैं, तो उसी याग को यह ब्रह्मचारी करना चाहता है। यह यज्ञमान याग करना चाहता है, कितने होताओं के द्वारा याग में सफलता प्राप्त होती है? उन्होंने कहा कि-चौबीस होताओं के द्वारा यज्ञमान याग करता है। चौबीस होता होते हैं, जिनके द्वारा याग करताहे और अपनी देवी से कहता है-हे देवी! हमारे, मानो देखो, ये चौबीस होता होने चाहिएं, जब हमें याग करना है, मेरे पुत्रो! देखो, दोनों का विचार। ऋषि ने कहा-हे यज्ञदत्त ब्रह्मचारी! मेरे विचार में चौबीस होता होते हैं। जब परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के पिता ने यह मानव शरीर रूपी यज्ञशाला का निर्माण किया जो मानो देखो, ये चौबीस होताओं की यज्ञवेदी है और इस वेदी पर याग करनेवाला यज्ञमान याग करता है।

दस प्राण

मुनिवरों! देखो, चौबीस होता कौन से हैं? दस प्राण कहलाते हैं जिनको हम प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान, उद्गीत रूप में गाते रहते हैं। जिन प्राणों के ऊपर देखो, साधक अनुसन्धान करता है, तो बेटा! प्राणों के ऊपर विचारता रहता है। ये जो प्राण है,ये अरबों-खरबों परमाणु बाह्य जगत् से लाता है और आन्तरिक जगत् से बाह्य जगत् में प्रसारित कर देता है। इसी प्रकार, मानो अपान है, जितनी भी संसार में, देखो, ऊर्ध्वा में गति होती है, वह सब अपान से होती है। और, देखो, जितना यह व्यान है, यह जितना भी संसार में निरीक्षणवत हो रहा है, एक-एक परमाणु जो अपने में गति कर रहा है, वो व्यान के द्वारा, व्यान ही उसका निरीक्षण है। और, समान में उसकी पुट लग करके व्यान में प्रवेश हो जाता है। इस प्रकार जब उन्होंने अपना वर्णन किया तो बोले कि -धन्य है, प्रभु! ये पांच प्राण हैं, पांचों प्राण कहलाते हैं। मानो देखो, पांच उप प्राण, नाग, देवदत्त धनञजय, कुरू और कृकल। ये दस प्राण, सबसे प्रथम हमारे अन्तःवृत्तियों में विद्यमान रहते हैं। इन दसों प्राणों को जानना चाहिए।

याग मे प्राणायाम और परमाणुवाद

जब ऋषि-मुनि, जब साधक, इन प्राणों के ऊपर अन्वेषण करता है और प्राणों को, प्राण में प्रवेश कर देता है, तो बेटा! वो साधक महान् बनता है, मेरे प्यारे! इसी परमाणु-विद्या को जानने के लिए, जब मानव याग करता है तो उसकी सुगन्ध को ले करके प्राणोंमें प्रविष्ट हो जाती है और, प्राणों का शोधन हो जाता है और वे प्राण ही तो मानो परमाणुओं को आदान-प्रदान करते रहते है, चाहे मानवीय शरीर में हो, चाहे वो बाह्य जगत् में हो। मेरे प्यारे! देखो, प्राणी ही एक-दूसरे को निगलता रहता है, एक-दूसरे को एक-दूसरे में सत्ता प्रदान करता है, तो वह साधक देखो, प्राणायाम करता हुआ मन और प्राण को एकाग्र करता हुआ, मुनिवरों! देखो, यह महानता में परिणित हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, इस संदर्भ में, विशेषता में, गम्भीर क्षेत्रों में, मैं तुम्हें नहीं ले जा रहा हूँ, केवल यह कि ये दस प्राण हैं और दस ही इन्द्रियाँ मानी गई है।

दस इन्द्रियाँ

सबसे प्रथम, मानो इन्द्रियाँ वह कहलाती हैं जो ज्ञानं ब्रह्मे देखो, जो ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। ज्ञानेन्द्रियाँ ़े में, मुनिवरों! देखो, जिनसे ज्ञान होता है, चक्षु, घ्राण और रसना, त्वचा और मुनिवरों! देखो, श्रोत्र ये पांच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं, जिनसे ज्ञान होता है। जब मुनिवरों! देखो, ज्ञान होता है, तो श्रोत्रों का जो ज्ञान है, श्रोत्रों में ज्ञान होता हे दिशाओं का दिशाओं से, बेटा! शब्द आता है और शब्द गमन करता हुआ, मानो भ्रमण करके वो श्रोत्रों मे प्रवेश होता है और वही शब्द है, जो मेरे प्यारे! देखो, मानव ध्वनि करता हुआ अन्तरिक्ष में चला जाता है और वह ध्वनि होता हुआ लोक-लोकान्तरों की ध्वनियां को, मुनिवरों! देखो, अपने में वा समन्वय करने लगता है।

मुझे वो वाक्य स्मरण आता रहता है, जब महर्षि शिकामकेतु उद्दालक मुनि से यह प्रश्न किया गया कि जिस समय मानो देखो, वह श्रोत्र इन्द्रियों पर अनुसन्धान कर रहे थे। और बहुत समय हो गया, बारह वर्ष अनुसन्धान करते हुए हो गएं तो उनकी गति यहाँ तक चली गई कि अन्तरिक्ष में जो परमाणुवाद एक-दूसरे में संघर्ष करते है, उनकी ध्वनियों को अपने में अनुभव कर रहे थे और वह ध्वनि, भिन्न-भिन्न प्रकार की जो ध्वनियां थीं, उन ध्वनियों में अपनी ध्वनि का समन्वय कर रहे थे।

मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार नेत्रों का समन्वय देखो, अग्नि से होता है। अग्नि में जो एक प्रदीप्त होने वाली सत्ता है, उसको वो अपने में, नेत्रों के द्वारा, नेत्रों को इतने सूक्ष्मतम में ले गएं कि देखो, बाह्य जगत को दृष्टिपात कर रहे थे। अन्त में जो परमाणुवाद है, उसमें जो प्रकाश है, उसमें चले गएं और परमाणु का विभाजन करते-करते उसमें ब्रह्माण्ड की गति है, उसको वह दृष्टिपात करके, मानो देखो, इतने सूक्ष्मतम यन्त्रों का निर्माण भी कर लेते। उसके पश्चात् वो समाधिष्ट में चले जाते हैं, मन और प्राण को और अग्नि की वृत्तियों को एकाग्र करते, बेटा! वह

जो अग्नि में एक मानो ध्वनि हो रही है, अग्नि में जो प्रकाश हो रहा है, परमाणुओं में जो प्रकाश हो रहा है, उस प्रकाश को वह दृष्टिपात करने लगे। मेरे पुत्रो! देखो, मैं इस सम्बन्ध में, तुम्हें साधना के क्षेत्र में तो नहीं ले जा रहा हूँ, केवल तुम्हें उच्चारण कर रहा हूँ कि साधक ऐसे क्रियाकलाप में परिणित हो जाता है, अन्त में, मुनिवरों! देखो, नेत्र अपनी ज्योति में शान्त हो जाते है और वह अंगों का एक विषय रह जाता हैं। इसी पकार मेरे पुत्रो! देखो, घ्राणेन्द्रिय है, जो जितनी यह ज्ञानेन्द्रियाँ है, बेटा! इनसे ज्ञान होता है।

मन-बुद्धि

मानो देखो, मन की ही मानो एक सूक्ष्म धारा, वह बुद्धि कहलाती है तो वह बुद्धि हमारे यहाँ चतुष प्रकार की बुद्धि मानी गई हैं। वास्तव में तो आवान्तर भेद माने गएं हैं। परन्तु उनमें जो चतुष प्रकार की जो बुद्धि है, सबसे प्रथम बुद्धि है, जो संसार को दृष्टिपात करती रहती है। मानो जो अपना निर्णय देती रहती है। इसके पश्चात् मेधा बुद्धि कहलाती है, मेधा उस कहते हैं, उसे दृष्टिपात करके, उसे क्रिया में लाना और क्रिया में ला करके, जैसे हमने एक आकाश गंगा को मानो दृष्टिपात किया है उस आकाश गंगा में, जो क्रियाकलाप हो रहा है, उसको वह दृष्टिपात करता है। मेरे प्यारे! वो जो मेधावी है, उस मेधावी में ही, मुनिवरों! देखो, सर्वत्र जगत् निहित रहता है, उसको विचारता रहता है और वह अपने में अपनेपन को ध्यानावस्थित होता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, बुद्धि जो मेधा है, वह मेधा ऐसी बुद्धि है, मेरे पुत्रो! देखो, जो संसार की जानकारी और अपने में अनुभव करता है।

विचार आता रहता है, जब मेधावी, लोक-लोकान्तरों में चला जाता है, तरंगों में तरंगित हो जाता है और तरंगों में तरंगित हो करके, बेटा! वो मौन हो जाता हैं। एक लोक जाना है, दूसरे लोक का उसे भान हो गया है और द्वितीय लोक जाना है, तृतीय का भान हो गया है। इसी प्रकार, लोक-लोकान्तरों में प्रवेश करता हुआ वह, मुनिवरों! देखो, निहारिका में क्या, वह सौर-मण्डलों में चला जाता है और सौर-मण्डलों में जा करके, मुनिवरों! देखो, जब उसे कोई मार्ग प्राप्त नहीं होता, तो वो मौन हो जाता है और मौन हो करके, मानो देखो, उसके पश्चात् वो मन और प्राण को, दोनों को एकाग्र करके उसके पश्चात् वो महान मेधावी बनता है। मेधावी जब बन करके, बेटा! उसका भान करता है, क्योंकि इस प्रकृति का जितना मण्डल है, वो मन में ही है और वही, मुनिवरों! देखो, बुद्धि के क्षेत्र में अमृतां ब्रह्मणे वह सूक्ष्म बन करके, मेरे पुत्रो! देखो, मेधावी अन्त में मौन हो जाता है। वह समाधि के द्वारा लोक-लोकान्तरों में नहीं, वह आकाश गंगाओं में विचरण करता है। कहीं यन्त्रों में चला जाता हे, कहीं परमाणु को विचारने लगता है।

मेरे पुत्रो! मैं इस सम्बन्ध में तुम्हें कोई विशेषता नहीं, केवल तुम्हें परिचय देने के लिए आया हूँ। आज का हमारा वेद का मन्त्र इस प्रकार का आ गया है जो मैं इनका परिचय देने लगा हूँ। मेरे पुत्रो! देखो, तृतीय बुद्धि का नाम ऋतम्भरा कहलाता है, वह जान करके मौन हो जाता है और मौन हो करके मानो देखो, उसको ऋतम्भरा कहते हैं। ऋतम्भरा को भी, जब मौन हो करके वह अपने मस्तिष्क में, बेटा! अपने में ही, सर्वत्र जगत् को ही दृष्टिपात करता रहता है, तो उसके पश्चात् ऋतम्भरा और प्रज्ञा में प्रवेश हो जाता है। बेटा! प्रज्ञा उसे कहते है, जिस प्रज्ञा के द्वारा, देखो, वह मन की प्रतिभा, प्रकृति के क्षेत्र को मानो पूर्ण रूपेण जान करके, मेरे प्यारे! परमपिता परमात्मा, जो उसमें व्याप्त हो रहा है, उसका वह अग्रणीय दर्शन करने लगता है। तो मेरे प्यारे! वो दर्शनीय बन जाता है। तो विचार आता है, यह मन, देखो, मन है और मन की मानो देखो, यह बुद्धि है। बुद्धि के चार प्रकार के भेदन माने गएं हैं और आवान्तरभेद तो बहुत है, परन्तु इनमें चार प्रकार के विशेष हैं। बुद्धि, मेधा, ऋतम्भरा और प्रज्ञा, ये चार प्रकार की आभा कहलायी जाती है, तो सूक्ष्म जगत् में चला जाता है।

चित्त

याग और तपस्या

मेरे प्यारे! देखो, जब मन की धारा बुद्धि बनी, मन और बुद्धि और देखो, चित्त को, मानो देखो, मन-बुद्धि-चित्त ये चित्तमण्डल में प्रवेश हो जाता है, जहाँ मुनिवरों! मानव के शरीर में चित्तमण्डल बना हुआ है। और चित्त मण्डल में, बेटा! संस्कार विद्यमान होते है। जब संस्कार विद्यमान हों, तो संस्कारों का नाम चित्तमण्डल कहा जाता है।

एक मित्र, एक मित्र से, मुनिवरों! देखो, वह वृद्ध काल में मिलान करता है, वह बाल्यकाल की वार्त्ता, सब उन्हें दृष्टिपात आने लगती हैं। मानो वह क्षेत्र, चित्त का मण्डल कहलाया जाता है। जिस मण्डल का, मानो देखो, मानव के शरीर में भी वो चित्तमण्डल है और वही चित्त का मण्डल मानो देखो, पृथ्वी में है, वही चित्त का मण्डल, मुनिवरों! देखो, ब्रह्माण्ड में ओतप्रोत रहता है। मेरे प्यारे! देखो, जब मानव के अन्तःकरण में नाना जन्मों के और नाना, मानो देखो, विचार विद्यमान होते हैं, वे संस्कार में निहित हो जाते हैं जैसे, पृथ्वी के गर्भ में, मानो देखो, अंकुर बीज रूप मे विद्यमान होते हैं जब उनका समय होता है, तो वह अपने में उगने लगते हैं। अंकुर रूप में, मानो हमें दृष्टिपात होने लगते है, इसी प्रकार, मानव के चित्तमण्डल में नाना प्रकार के संस्कार विद्यमान होते हैं और वह जो संस्कार हैं, मुनिवरों! देखो, उनको ऋषि-मुनि उद्बुद्ध भी करते रहते है और जानते भी रहते है। क्योंकि मुक्ति का जहाँ क्षेत्र प्राप्त होता है, कहते हैं मुक्ति होनी चाहिए, तो मुक्ति जब तक नहीं होती, जब तक मानव के अन्तःकरण के, संस्कार समाप्त नहीं हो जाते। जब तक संस्कार बने रहते हैं तब तक, मुनिवरों! देखो, प्रकृति का मण्डल बना रहता है। यह मण्डल, मन का एक क्षेत्र हैं चाहे वह किसी क्षेत्र के रूप में हो, चाहे वो बुद्धि के रूप में हो, परन्तु अपने में बना रहता हैं।

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज और रावण का, दोनों का संवाद मुझे स्मरण आता रहता है। और भी नाना ऋषि-मुनियों का इस सम्बन्ध में विचार-विनिमय होता रहा है। जैसे, मुनिवरों! देखो, महर्षि-वृत्तिका और विभाण्डक मुनि का भयंकर वनों में विचार-विनिमय होता रहा है। परन्तु महात्मा कुक्कुट ने एक वाक्य कहा था रावाण से-हे प्रभु! मेरे जो महापिता थे, मानो देखो, उनका जो जन्म था वो अंगिरस गोत्र में ही जो मेरे तीन हजारवें जो महापिता थे, वे महापिता एक समय मौन हो गये। तो जब ऋषि-मुनियों ने कहा-प्रभु! तुम मौन क्यों हो गएं हो? तो उन्होंने कहा-मैं इसलिए मौन हुआ हूँ, क्योंकि मैं चित्त के मण्डलों को जागरूक करना चाहता हूँ और चित्त के मण्डलों को मानो देखो, संस्कारों से जानने के लिए, उनसे मैं अपने में उपराम होऊंगा। जभी तो मुझे परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है। तो वे देखो, अपने में अनुसन्धान करने लगे। मौन हो गये। मौन हो करके, वो मानो देखो, किसी काल मे वायु का सेवन करने लगे, क्योंकि देखो, अन्न का जहाँ तक समन्वय रहता है, उदर की पूर्ति का, हमारे ऋषि-मुनियों की एक बड़ी विचित्र उपलब्धि रही है और वह उपलब्धि यह रही है कि मानो देखो, हम अन्न के द्वारा अपने उदर की पूर्ति करना चाहते हैं। मुनिवरों! देखो, जब साधक प्रारम्भ होता है तो उसी अन्न को ले करके, जल में उसका खरल बना करके, उसका रस बनाते हैं, रस बना करके अग्नि में तपा करके उसका पान करते हैं। और भी सूक्ष्मतम रहस्यों में जाते हैं, तो मानो देखो, जल को शीतली प्राणायाम से ही, देखो, जल को अपने में सिंचन करते हैं, उससे जल की तृप्ति हो जाती है, आपोमयी बन जाता है।

प्राणायाम द्वारा वायु से अन्न-प्राप्ति-प्रक्रिया

उसके पश्चात् और गम्भीरता में जाते हैं, क्योंकि प्राण है और प्राणों को हमें देखो, अन्न देना है, तो वह प्राणों के द्वारा, प्राण में ही प्राणों से ही, देखो, प्राण का सेवन करता हैं वह, मेरे प्यारे! देखो, प्राण से जब अन्न को ग्रहण करता है, वायुमण्डल से, क्योंकि वह परमाणु रूप में अन्न विद्यमान रहता है, उस अन्न को ले करके, मानो

देखो, प्राणायाम करके अपान की पुट लगा करके, व्यान को उसमें सम्मिलित करते हुए, जब वह प्राणायाम करता है तो, बेटा! उसे अन्न की पूर्ति हो जाती हैं। यह ऋषि-मुनियों का एक बड़ा नृत्य रहा है। जब वे इसी प्रकार किसी काल में खरल करके, अन्न को पान करते, कहीं मानो अग्नि में तपा करके, कहीं प्राणायाम के द्वारा। तो इसी प्रकार देखो, वायुमण्डल से वो अपने को पालन-पोषण में लगे रहे।

मेरे प्यारे! इसी महात्मा ने कहा, कुक्कुट मुनि ने रावण से- हे प्रभु! उन्हें एक सौ पच्चासी वर्ष हो गएं थे इसी प्रकार का तप करते हुए। जब एक सौ पच्चासी वर्ष हो गये, तो मानो वह लगभग एक लाख जन्मों के

संस्कारों को जान पाए थे और वे एक लाख जन्मों में, मानो देखो, वे संस्कारों को को जो साक्षात बीज रूप में, अंकुर रूप में, देखो, अन्तःकरण में चित्त के मण्डल में विद्यमान हो गये। बेटा! चित्त कहते ही उसे हैं, जहाँ जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार विद्यमान होते हैं, परन्तु अपने समस्त रूप से, अंकुर रूप में परिणित होते रहे हैं, तो इसी प्रकार उसका नाम चित्तमण्डल कहा जाता है। चित्त में बेटा! देखो, हमारे आचार्यों की बड़ी एक महान् उपलब्धि रही है, उन्होंने कहा-जब तक शरीर में चित्त रहेगा और चित्त के मण्डल में संस्कार रहेंगे, तब तक मानो देखो, मोक्ष की आभा को प्राप्त नहीं कर सकता।

मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि ने बड़े ऊर्ध्वा में, महात्मा कुक्कुट और देखो, रावण का, दोनों का संवाद बड़ा विचित्र रहा। रावण ने कहा कि-प्रभु! धन्य है! यह वार्त्ता, देखो, मेरे महापिता भी करते रहे हैं, महात्मा पुलित्स्य ऋषि भी करते रहे हैं। मानो देखो, यह वृत्तम् मैंने श्रवण किया था। आज आपसे, और भी मेरे विचारों की, हमारे पूर्वजों के विचारों की और भी पुष्टि हो गयी। मेरे पुत्रो! देखो, इस प्रकार यह चित्त का मण्डल है।

अहंकार

उन्होंने कहा-उसके पश्चात् अहंकार है, क्योंकि अहंकार से, मानव के परमाणुओं को, बिखरे हुए परमाणुओं को, पिण्ड रूप में परिणित किया जाता है, मेरे प्यारे! देखो, उसका नामोकरण, हमारे यहाँ मुनिवरों! देखो, उसी को अहंकार कहते हैं। क्योंकि अहंकार से, मानो देखो, जितना अपने में सामान्यत्व अहंकार रहता है वो एक-दूसरे परमाणुओं का मिलना करता है। एक-दूसरे में वो संगठित बनाता है। मेरे पुत्रो! देखो, वह मंगल ब्रहे वह जो अपने में अहंकार है, वही तो पिण्ड रूप बनाता है। यदि अहंकार नहीं होगा, तो पिण्ड भी नहीं बनेगा। पिण्ड नहीं बनेगा, तो चित्त का मण्डल नहीं होगा। चित्त का मण्डल नहीं होगा, तो बुद्धि का मण्डल भी नहीं होगा। बुद्धि का मण्डल नहीं होगा बुद्धि का मण्डल नहीं होगा, तो मन का मण्डल भी नहीं होगा। मानो देखो, हमारे अहंकार में आ करके देखो, ये सर्वत्र एक-दूसरे में मिलान करके, बेटा! यह भव्य भवन का निर्माण होता है। यह मानव का शरीर एक भव्य भवन है और यही भव्य भवन, मानो देखो, ब्रह्माण्ड की रचना में आता है, जहाँ लोक-लोकान्तरों में मानव प्रवेश करता है।

तो मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हे विशेष चर्चा नहीं दूंगा, केवल तुम्हें परिचय देने के लिए आया हूँ कि हमारा वेदमन्त्र क्या कहता है, वेदमन्त्र यह कहता है कि मानव अपने में मानवीयता को जानने वाला बने, जिससे मानो देखो, वह अपने गम्भीर क्षेत्र में प्रवेश हो जाएं, साधक बन जाएं। और साधना में प्रवेश हो करके, अपने चित्तमण्डल को संस्कारों से विहीन करता रहे।

गीता-सार

मेरे प्यारे! इसीलिए मानव को कहा है कि -हे मानव! तू क्रियाकलाप कर, परन्तु इसमें तेरी आस्था नहीं होनी चाहिए। तू अपने में कर्त्तव्यवादी बन और उसमें, देखो, तू नाना प्रकार की आशा अपने में देखो, नाना प्रकार के अपने स्वार्थ को मत दृष्टिपात कर। निस्वार्थ क्रियाकलापों में परिणित हो जा। मेरे प्यारे! देखो, जहाँ तू फल की

इच्छाओं में लगा रहेगा, तब तक देखो, यह संस्कार तेरा नवीन् बनता रहेगा। जहाँ संस्कारों से विहिन जो जाएगा, मानो जहाँ तक तू संस्कार से विहिन होता चला जाएगा, अपने में कर्त्तव्यवाद में परिणित हो जाएगा, वहीं मानो देखो, तू साधक भी बन सकता है और योगेश्वर बन करके परमात्मा की प्रतिभा में और चित्त के मण्डल के संस्कार, तेरे नष्ट होने लगेंगे। तो मेरे प्यारे! मैं आज इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा देने नहीं आया हूँ। आज मैं बड़े गम्भीर क्षेत्र में चला गया हूँ। बेटा! ये तो वो विचार हैं, जो हम देखो, अपने बाल्यकाल में, मानो विद्यालय में, जब अपने देखो, ब्रह्मचारियों से, साधको से वार्त्ता प्रकट करते थे या गुरुजनों के समीप विद्यमान हो करके, इस प्रकार की वार्त्ताओं का वर्णन करते रहे।

चौबीस होताओं द्वारा याग और प्राप्ति

आज, बेटा! मैं बहुत गम्भीर क्षेत्रों में तुम्हें ले गया हूँ। विचार-विनिमय क्या, मुनिवरों! देखो, इस प्रकारको जो मानव है, वह स्वतः ही याज्ञिक कहलाता है। तो याज्ञवल्क्य मुनि महारा ने कहा-हे यज्ञदत्त! ये चौबीस होताओं के द्वारा, देखो, जान करके, जब याज्ञिक याग करता है, तो वह मानो देवलोक को प्राप्त हो जाता है। उसका देवलोक अपने में देवत्त्व बन जाता है

मन और आत्मा का समन्वय

मेरे पुत्रो! यह उन्होंने कहा है कि - यम ब्रह्मणे क्योंकि मन का समन्वय आत्मा से रहता है, आत्मा के प्रकाश में वो प्रकाश लेता रहता है। यदि वह मन का समन्वय आत्मा से नहीं होगा, तो कोई जगत् नहीं बनेगा। आन्तरिक जगत् बनता ही चेतना के मूल में से है। इसीलिए मानो देखो, मन तो स्वप्नवत को प्राप्त होता है, मन ही मानो सुषुप्ति में चला जाता है, मन ही मन प्यारे! जागरूकता में रहता है। जब यह जागरूक रहता है, तो मन संसार का दृष्टा बना रहता है। अपने कुटुम्ब, अपने परिवार, अपने राष्ट्र का निर्णय लेता रहता है, विभाजन में परिणित हो जाता है। परन्तु, इसी प्रकार स्वप्नवत में भी, देखो, स्वप्न को दृष्टिपात करता रहता है। आत्मा का प्रकाश है, उस प्रकाश में संस्कारों को ले करके, वह साक्षाताकार (भोगतव्य) में प्राप्त हो जाता है। मेरे प्यारे! यही तो मन है, जो नदी-नदियों का, पति-पत्नियों का, सब का अपने अन्तःकरण में निर्माण कर लेता है। परन्तु देखो, वहाँ कोई वस्तु है नहीं, अंकुर रूप है, दृष्टिपात किया हुआ अंकुर रूप है। परन्तु उसी अंकुर रूप को, साकार रूप में, भोगतव्य में लाने वाला, आत्मा के प्रकाश में, वे मन कहलाता है। तो मन की बड़ी विचित्र आभा कहलाती हैं। मेरे प्यारे! देखो, समुद्र नहीं होते, परन्तु समुद्र भी अंकुर रूप में और उन्हें साक्षात्कार, विशाल रूप में दृष्टिपात करता है।

मेरे प्यारे! यह तो विचारो का वन है, मैं इस वन में नहीं जाना चाहता हूँ। केवल विचार-विनिमय यह कि, हम परमपिता परमात्मा के अमूल्य जगत् को जानने का प्रयास करें। यह दो प्रकार का जगत् है, एक बाह्य जगत् है, एक आन्तरिक जगत् है। परन्तु बाह्य जगत् और आन्तरिक जगत् भी, उन्हीं प्राणों के ऊपर मानो देखो, निहित रहता है। मानो देखो, इसी में ये पंच्तन्मात्रा प्रकृति की हैं, मानो इनको पंचमहाभूत कहते हैं।

विज्ञान में पाँच प्रकार की गतियाँ

क्योंकि यह जगत् अपने में क्रियाकलाप कर रहा है, मेरे प्यारे! हम भी उसी में गमन करें। इतना विज्ञान है, मानो देखो, चाहे वो यन्त्रवाद हो, चाहे वो किसी प्रकार का विज्ञान हो, वह विज्ञानवेत्ता भी मानो देखो, -उन्होंने कहा, पिण्डं ब्रह्मः यह पांच प्रकार की गतियों में निहित रहता है। मेरे प्यारे! इसे हम प्रसारण कहते हैं। प्रसारण, ध्रुवा, और ऊर्ध्वा, गति और मुनिवरों! देखो, सर्वत्र आकुञ्चन, ये पांच प्रकार की गतियों में यह विज्ञान अपने में नृत्य कर रहा हैं जो मानो देखो, इनको जान लेता है, वह सबसे प्रथम देखो, प्रसारण में सिद्ध हो जाता है। प्रसारण के

पश्चात् वह ध्रुवा और ऊर्ध्वा में, और आकुञ्चन में जब प्रवेश करता है तो, बेटा! सर्वत्र विज्ञान उस वैज्ञानिक के मस्तिष्क में नृत्य करने लगता है। वह परमाणु में प्रवेश कर जाता है।

याज्ञिक की आत्मा का परमात्मा से मिलन

तो मुनिवरों! देखो, आज मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नहीं केवल तुम्हे यह विचार देने के लिए आया हूँ, कि देखो, यह प्रश्न किया, ब्रह्मचारी ने, ऋषि से कि-भगवन्! यज्ञमान याग करे, तो वह मानो कितने होताओं के द्वारा, तो दस प्राण, देखो, दस इन्द्रियाँ मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार, इनके आवान्तर भेदों को वह जब जान लेता है, तो मुनिवरों! देखो, वह याज्ञिक बनता है। वह संसार रूपी जो यज्ञशाला, परमपिता परमात्मा ने जो निर्माणित की है, वह इस यज्ञशाला का और अपनी मानवीयशाला का, दोनों का समन्वय करके, बेटा! वो ब्रह्म को प्राप्त होता रहता है।

तो आओ, बेटा! मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नहीं केवल यह कि ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने जब ब्रह्मचारी यज्ञदत्त को यह निर्णय कराया, तो यज्ञदत्त, मुनिवरों! देखो, उनके चरणों में ओतप्रोत हो गएं और यह कहा कि-प्रभु! आप तो धन्य हैं। मानो आप ने हमें ऐसे विचार में पहुंचा दिया हैं, जहाँ हम इसके ऊपर विचार-विनिमय करते रहेंगे। और विचारों को, अपने में, हम ऊर्ध्वा में गमन कराते हुए, सागर से पार होने का प्रयास करेंगे। तो ब्रह्मचारियों को जब याज्ञवल्क्य ने इस प्रकार का निर्णय कराया, मानो देखो, ब्रह्मचारी अपने में शान्त हो गएं और यह कहा कि अब तुम्हें शेष चर्चाएं, हम कल के पठन-पाठन में उच्चारण करेंगे, देखो, उनका निर्णय देंगे। आज का विचार केवल यह कि, मानो देखो, यह तो विचारों का वन है, इसके ऊपर विवेचना देता रहूँगा। तो बेटा! बहुत समय की आवश्यकता है। आज तो केवल यह विचार सम्पन्न होने जा रहा है।

आज के विचारों का अभिप्रायः यह कि, मानो देखो, ये चौबीस होता होते हैं, जो इस ब्रह्माण्ड रूपी यज्ञशाला को स्थिर किए रहते हैं। जो मानव शरीर को भी स्थिर किए रहते है। मानो देखो, इसी में ब्रह्माण्ड अपने में आश्रित रहता हे, एक-दूसरे में पिरोया हुआ है। और, पिरोने से ही, मुनिवरों! देखो, यह माला बनती है और इस माला को जो धारण करता है, मेरे प्यारे! वह मालामयी बन करके, देखो, परमात्मा की आभा को प्राप्त हो जाता है। तो ये चर्चाएं, मैं बेटा! अपने में शान्त कर रहा हूँ।

आज के विचारों का अभिप्रायः क्या है? कि हम परमपिता परमात्मा के अनुपम जगत! को जानने का प्रयास करें और इस ज्ञान और विज्ञान में जितनी भी धाराएं हैं इनको अपने में, और अपने से, मानो देखो, ब्रह्माण्ड में, ब्रह्माण्ड को अपने में, जब मानो देखो, व्यापकवाद से दृष्टिपात करता रहेगा, तो मानव में किसी भी प्रकार की विडम्बना नहीं होती। वह विडम्बना से विमुक्त हो जाता है और पवित्रता को प्राप्त होता है। यह है, बेटा! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा, तो यज्ञदत्त की चर्चाएं, कल प्रकट करूंगा। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन। सी-४७, रामप्रस्थ १९-१०-१९९१

१९ याग की अनिवार्यता २०-१०-१९९१

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी है और वह यज्ञोमयी स्वरूप माने गएं हैं। क्योंकि आज के हमारे वेद के पठन-पाठन में उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान का वर्णन आ रहा है। इसीलिए वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप माने गएं हैं, अथवा यागां भू वर्णनं ब्रह्मा क्योंकि वह स्वतः याग हैं, और वह उसी में रत्त रहने वाले हैं। तो हम परमपिता परमात्मा को अपना देव अपना यज्ञोमयी अपने में स्वीकार करते चले जाएं। क्योंकि हम सदैव परम्परागतों से उस परमपिता परमात्मा की महती का प्रायः वर्णन होता रहा है, और प्रत्येक मानव के हृदय में यह आशंका बनी रहती है कि मैं उस परमपिता परमात्मा की महती को जानने वाला बनूं और उस परमपिता परमात्मा की आभा और उसका जो यज्ञोयमी स्वरूप हैं, मैं उसमें प्रविष्ट हो जाऊं। प्रत्येक मानव की ये प्रबल इच्छाएं होती है, मेरी पुत्रियाँ भी सदैव ये चाहती रहती है, क्या हमारा जीवन उस परमात्मा से कटिबद्ध हो जाएं, अथवा उसी में रत्त हो जाएं। तो प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, विचार-विनिमय करता रहा है कि मैं उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान में मैं ओझल हो जाऊं, और उसी में अपने को शान्त करूं, ऐसी प्रायः देखो, प्रत्येक मानव की इच्छा बनी रहती है। तो आज का हमारा वेदमन्त्र यह क्या कह रहा है यज्ञं भू वर्णां ब्रहा व्रता क्या जो वृत्ति होते हैं। याज्ञिक कहलाते हैं। तो हम मुनिवरों! देखो, परमपिता परमात्मा के स्वीकार करते हुए वृत्ति बनें और वृत्ति बन करके, और मानो उसमें वृत ले करके उसकी महानता को, अपने में सदैव विचार-विनिमय करने वाले हों और अपने में उसे ओज करते हुए, और अपने को उसमें सिमट करके ही अपने को पान कर सकते हैं। देखो, प्राप्ति की आभा में परिणत हो जाते हैं। तो आओ, मेरे प्यारे! मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नहीं प्रगट करूंगा, क्योंकि हमारे यहाँ, नाना प्रकार की प्रतिभाओं का वर्णन होता रहा है। मैं पुनः से तुम्हें, उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ। जहाँ मुनिवरों! देखो, मैं याज्ञवल्क्य मुनि महाराज की चर्चाएं करता रहा हूँ, और जाबाला पुत्र सत्यकाम की भी चर्चाएं होती रही हैं। जाबाला पुत्र सत्यकाम ने मुनिवरों! देखो, अपने याग के माध्यम से मुनिवरों! देखो, ब्रह्म की आभा में परिणत हो गएं। और जब महात्मा गौतम ने ये कहा कि हे ब्रह्मचारी! अब मैं तुम्हें दीक्षा देना चाहता हूँ, तो उसमें जब आचार्य ने ऐसा कहा तो सत्यकाम ने कहा-प्रभु! जो आप मुझे दीक्षा देना चाहते हैं, वह दीक्षा मुझे प्राप्त हो गई हैं। मैं मन कला को जानता हूँ, मानो मैं प्राण कला को भी जानता हूँ, दोनों कलाओं को जानने वाला हूँ। मैं देखो, गो मेध याग करता रहता हूँ और वह गो मेध याग करता हुआ, मैं अपने में अपने में सिमट गया हूँ प्रभु! मेरे प्यारे! देखो, उस समय गौतम ने कहा, मैं तुम्हें दीक्षित बनाना चाहता हूँ, उन्होंने कहा-प्रभु! आपने मुझे दीक्षा दे दी हैं, और वह दीक्षा जो मैं आपकी आज्ञा का मैंने पालन किया हैं, तो मुझे चार-चार कलाओं का ज्ञान मानो देवताओं ने दिया मुझे प्रजापति ने भी चार कलाओं का ज्ञान दिया है, और उसी ज्ञान के माध्यम से मैं पति तो वे परमपिता परमात्मा ही प्रजापति हैं। मानो देखो, अग्रं ब्रह्मा वह अग्नि देखो, ब्रह्म आभा में रत्त होने वाला जो अग्नि देवता है, जो देवतव माना गया है, तो इसीलिए आज मैं तुम्हें देखो, सत्यकाम ने ये कहा कि-प्रभु! मैं प्रायः यज्ञमान बन गया हूँ, और मैं याज्ञिक बन करके अपने में याग कर रहा हूँ, जब मैं यज्ञशाला मे प्रदीप्त होता हूँ, विराजमान होता हूं तो उस समय मानो पंच महाभूतों की मैं उन देवताओं के समीप जाने के लिए सदैव तत्पर हो जाता हूँ। जहाँ मैं अग्नि को प्रदीप्त करके अग्नि में चरू को, साकल्य को मैं

प्रदान करता रहा हूँ। तो ये अग्नि की पूजा मानो देखो, मां ब्रह्मा अग्नि ये अग्नि सर्वत्र देवताओं का मुख कहलाता है। यह मुख होने से मानो यह अग्नि ही मुनिवरों! देखो, तेजोमयी है, वेद का आचार्य कहता है, वेद के ऋषि ने यही तो कहा है, सम्भूति ब्रह्मा वर्णासुतं मानो देखो, वह वरणीय हैं। परमपिता परमात्मा को, हम अपना वरणीय स्वीकार करके, उसको अपने में धारण करते चले जाएं। जिससे हमारे जीवन में एक महानता का जन्म हो जाएं, तो वेद का ऋषि सत्यकाम वेद का अध्ययन करने वाला यह कहता है, कि भगवन! मुझे चार-चार कलाओं का ज्ञान मानो देखो, याग के माध्यम से प्राप्त हुआ है। इसी प्रकार मैं याज्ञिक हूँ, और मैं यज्ञं ब्रह्मा मानो याग करता रहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा गौतम ने कहा क्या हे ब्रह्मचारी! यह तो मैंने तुम्हारा वाक् स्वीकार कर लिया हैं। परन्तु तुम याग में कैसे परिणत होना चाहोगे? उन्होनें कहा-प्रभु! जितना भी संसार का ये क्रियाकलाप हो रहा है, और उसमें जितनी भी महानता है वह सब मानो देखो, मैं याग में स्वीकार करता हूँ। वे सर्वत्र मानो देखो, यज्ञमयी रूप बनी हुई हैं और उसको जो इस प्रकार व्यापक रूप से स्वीकार करता है, और याग में वह अपने में मानो याज्ञिक है अपने में प्रतिष्ठित अपने में सिमट करके वह याग बन जाता हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार श्रवण किया तो वह बड़े प्रसन्न हुए, तो उस समय उन्होंने कहा कि प्रजापति ही मेरा जीवन हैं। और प्रजापति ही मैं बनना चाहता हूँ, तो मेरे प्यारे! देखो, उस समय सत्यकाम ने जब इस प्रकार कहा तो महात्मा गौतम ने कहा कि मैं तुम्हें दीक्षा देना चाहता हूँ। मेरे पुत्रों! उन्होंने दीक्षामयी और दीक्षित बना करके ब्रह्मचारी से कहा हे सत्यकाम! तुम महान हो और तुम वास्तव में ब्राह्मण हो ब्राह्मण वही कहलाता है जो सर्वत्र अग्नियों का देवताओं का पूजन करता है, और वह देवता कौन है? मानो देखो, जब हम जल का पूजन करते हैं। यज्ञमान जब मेखला में जल को मानो प्रोक्षण के द्वारा मानो जल में जल का सिंचन करता है। तो जैसे परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में जब संसार रूपी यज्ञवेदी को जन्म दिया, अथवा निर्माण किया, तो उस समय समुद्र के मेखला के पृथ्वी के अंग-संग के मेखला का निर्माण किया और वह मेखला कहलाती है। जिस प्रकार यज्ञमान अपनी मेखला में जल का संचय करता हैं, जहाँ से प्रकाश आता है। तो वह कहता है कि अग्नि देवता तो मेरी श्रद्धा को स्वीकार कर। मेरे प्यारे! देखो, वह वरुण से कहता है कि हे वरुण मेरी सहानूभूति को स्वीकार कर। क्योंकि सोम से कहता है कि हे सोम! तू मेरे मे समाहित हो जा। और मैं मानो देखो, सौम्यता को अपने में धारण करना चाहता हूँ। मेरे पुत्रों! देखो, इस प्रकार जब यज्ञमान अपने में जल का संचय करता है। तो जल का वह पूजन कहलाता है। क्योंकि जल ही वरुण बन करके मेरे पुत्रों! वह अन्न का भण्डार बन जाता है। वही सौम्यता को प्राप्त कराता है। वही मेरे प्यारे! देखो, प्रकाश को द्यौतक कहलाया गया हैं। इसके पश्चात देखो, अग्न्याध्यान करता हैं, और अग्नि का ध्यान करता है, क्योंकि वह अग्नि ही पूर्वसूतं ब्रह्मे वे पूर्व दिशा में अग्नि का स्थान माना गया हैं। उस मानो देखो, अग्नि को जब प्रदीप्त करता है। तो वह अग्नि में साकल्य देता है, और कहता है यज्ञमान हे अग्नि देवता! तू मेरे से त्रुटि हो जाएं क्रिया में तो मुझे क्षमा मैं क्षमा का देवतव हूँ, मानो देखो, उसे चाहता रहता हूँ, देवताओं का मुख है, यह और देवताओं के मुख में मैं साकल्य दे रहा हूँ। जिससे परमाणुवाद देखो, परमाणु में परमाणु का देखो, दोनों का संचय हो जाएं, और संचय हो जाने के पश्चात देखो, याग अपनी स्थली मे महान बन जाएं। इसी प्रकार देखो, अग्नि देवताओं का मुख हैं, जो साकल्य दोगे वह सर्वत्र मानो जल को, आपो को पवित्र बनाता है, पृथ्वी के गर्भ में उसकी अमूल्य ज्योति प्रवेश कर जाती है, तो वह पृथ्वी का पूजन और मुनिवरों! इसी प्रकार अन्तरिक्ष में जब तरंगें तरंगित होती है, तो वह तरंगें द्यौ लोक तक चली जाती हैं। जितना वेदमन्त्र शद्ध उच्चारण करने वाला मानो उद्गाता होता है उतनी ही वह आहुति द्यौ में प्रवेश कर जाएं जिससे यज्ञमान का हृदय यज्ञमान का पवित्र होगा उतनी पवित्रता की अग्नि मेरे प्यारे! देखो, द्यौ में प्रवेश हो जाएगी। वह द्यौ में देखो, द्यौ ही एक ऐसा है, जो सूक्ष्म बना

करके इस वायु मण्डल को इस संसार को पवित्र बना देता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, यह अन्तरिक्ष में अमृतं दिशाओं में जाने वाला यह नृत्त है। जो प्रायः होता रहता है तो इसीलिए अग्नि देवताओं का मुख है, तो यज्ञमान देवताओं की पूजा करने वाला है। वह सर्वत्र देखो, सर्वांग हमारे आचार्यों ने जब सृष्टि के प्रारम्भ में देखो, जब ऋषि-मुनियों ने सबसे प्रथम जितने भी क्रियाकलाप हैं, संसार के जितने भी मानो देखो, पूजा की स्थली हैं। चाहे वह माता की पूजा हो, चाहे वह पितरों की पूजा सबसे याग को आचार्यों ने वशिष्ठतव माना गया है। क्योंकि वह वशिष्ठ क्रियाकलाप हैं। उसी में देखो, यज्ञं ब्रह्मा क्योकि यज्ञ ब्रह्म कहलाता है, यज्ञ विष्णु है वही तो पालन करने वाला है, तो मुनिवरों! देखो, सृष्टि के आचार्यों ने सृष्टि के प्रारम्भ के आचार्यों ने याग को सबसे महान देखो, श्रेष्ठतम क्रियाकलाप माना हैं। इसीलिए अग्नि मानो देवताओं का मुख हैं, और देवताओं की प्रत्येक देवताओं की क्रियात्मकता में पूजा करनी हैं। तो इस प्रकार मुनिवरों! देखो, हमें याज्ञिक बनना है, अब मुनिवरों! देखो, मैं उस स्थली पर तुम्हें ले जाना चाहता हूँ, जहाँ बेटा! देखो, ब्रह्मचारियों के मध्य में महर्षि मुनिवरों! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज, अपनी स्थली पर विद्यमान हैं। और वह मुनिवरों! देखो, अपने में उद्गीत गा रहे है, और उद्गीत गाते हुए, वैदिकता में जब विद्यालय में, विद्यालय में आचार्य ब्रह्मचारियों को जब नैतिक शिक्षा देता है, तो याग का अवधान करता है, और यह कहता है कि हे ब्रह्मचारियों! तुम याज्ञिक बनो, तुम अपनी वाणी को याग में परिणत कर दो, तुम अपने नेत्रों को याग में परिणत कर दो, मानो वह क्यों कह रहा है, प्रत्येक इन्द्रिय के लिए क्या इन्द्रियाँ जब तुम्हारी ज्ञान और विज्ञान में सजातीय बन जाती हैं, और याग में परिणत हो जाती हैं तो वह प्रत्येक इन्द्रियों से सुदृष्टिपान करता हैं। सुदृष्टि शब्दों को ग्रहण करता है। सु सुगन्ध लेता हैं, सु वाणी से उद्गीत गाता है, तो इसी प्रकार प्रत्येक इन्द्रियाँ उसकी सजातीय बन जाती हैं, और वह जब सात्विकता में सजातीय बनती हैं, तो इसीलिए आचार्य कहता है। तू मुझे मानो इन्द्रियों के क्रियाकलापों को मुझे प्रदान कर जिससे मैं तुझे महान बना सकूं। तो बेटा! देखो, इस प्रकार जब यज्ञं ब्रह्मा देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने विद्यालय में इस प्रकार की चर्चाएं कर रहे हैं, कि हमारा जीवन यागमय हो जाएं प्रत्येक इन्द्रिय सजातीय बन जाएं। उस समय मुनिवरों! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य जब इस प्रकार का विचार दे रहे थे, तो यज्ञदत ब्रह्मचारी उपस्थित हुए मैं इससे पूर्व काल में भी यज्ञदत की चर्चा कर रहा था, आज भी देखो, केवल इस सम्बन्ध में नही यज्ञदत ने उपस्थित हो करके यह कहा कि यज्ञ हम कैसें करें? क्या-क्या हमें सामग्री समिधा देखो, अमृत होना चाहिए, क्या-क्या साकल्य होना चाहिए। उसके द्वारा हमें विवरण कराईए। मेरे प्यारे! देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने अपने विद्यालय में क्योंकि विद्यालय जब तक याग नही होता विद्यालय ऊँचे नही बनते हैं, वह आध्यात्मिक और भौतिकवाद मानो देखो, दोनों की प्रतिभा का प्रायः वर्णन किया जाता हैं, और वही देखो, विद्यालय ऊँचे बनते हैं, तो आचार्य ने कहा हे ब्रह्मचारी! तुम्हे याग करना है, तो यज्ञशाला हो यज्ञशाला मानो देखो, यज्ञशाला में अग्न्याध्यान किया जाएं, समिधा के द्वारा और नाना प्रकार का चरू होना चाहिए नाना की वतस्पतियां होनी चाहिएं। मानो प्रत्येक वनस्पतियों का जब समूह बनाया जाता है। तो उसको सामग्री साकल्य अथवा उसको भिन्न-भिन्न रूपों से उसका वर्णन चरू के रूप में कहा जाता है। वह समिधा अन्न के द्वारा जो प्रकृति हमें देती है, उसी प्रकृति को ले करके जब याग करते हैं, गो रस गो घृत को ले करके हम मानो देखो, याग करते हैं, तो प्रत्येक स्वाहा जब उद्गीत गाता है, वेदमन्त्रों का हम उच्चारण करते हैं, तो हम कहते हैं, वही स्वाहा मुनिवरों! देखो, अग्नि की धाराओं पर शब्द विद्यमान हो करके, द्यौ में प्रवेश कर जाता हैं। वही शब्द है वही मानो देखो, द्यौ में प्रवेश और द्यौ में ही अकृत बन जाता है। तो विचार आता है क्या मुनिवरों! देखो, जितना भी होता गण अपनी यज्ञशाला में स्वाहा-स्वाहा का उच्चारण करते हैं। तो स्वाहा का अभिप्रायः है अग्नि, हे अग्नि देवता! तू अग्नि है, उस स्वाहा का अभिप्रायः ही अग्नि है, क्योंकि वाणी अग्नि स्वरूप बन

करके रहती है, जितनी वाणी तपायमान हो जाती है, उतनी वाणी मानो ज्ञान में विज्ञान में तप जाती हैं। उतनी ही मुनिवरों! देखो, वाणी में ओज और तेज अग्नि का व्यवधान हो जाता हैं। वह अग्नि रूप बन जाती है। तो स्वाहा कहने से जो साकल्य में रहने वाली अग्नि है, जो समिधा में वास करने वाली अग्नि है, वह अग्नि प्रचण्ड होती है। जितनी अग्नि प्रचण्ड होती हैं। उतना ही याग का मानो व्यापक रूप बन जाता है, वह द्यौ में प्रवेश कर जाती हैं। तो बेटा! आज मैं इस सम्बन्ध में विशेषता नही जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया ऋषि ने कहा हे ब्रह्मचारियों! तुम मानो देखो, उच्चारण करो देखो, प्राणाय स्वाहाः देखो, अपानाय स्वाहाः कह करके प्रारम्भ करो क्योंकि प्राण और अपान ही यह कहते हैं, जो संसार को निगल जाते हैं। उत्पति के मूल में विद्यमान रहते हैं। प्राण अपान ही मानो देखो, इस संसार का नृत्त है, और व्यान मानो देखो, इसके ऊपर पुट लग जाती हैं। मैने तुम्हें कई काल में कहा था कि योगीजन जब देखो, यज्ञ के माध्यम से जब प्रत्येक प्राण की आहुति देते हैं, अपान की आहुति देते हैं, व्यान की आहुति देते हैं, और व्यान और समान को उसमें पुट लगा करके व्यान को उसमें प्रवेश करा देते हैं। तो मुनिवरों! देखो, वह प्राणों का एक समूह बन करके आचार्यों ने क्या वैज्ञानिकों ने भी यह कहा है कि हम अन्तरिक्ष में इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण भी प्राणों के द्वारा ही करते हैं। क्योंकि तरंगें उसमें विद्यमान होती हैं, वही परमाणुवाद मेरे प्यारे! देखो, जब साधको के मध्य में जाता है, अथवा वही प्राण जब मेरे प्यारे! योगियों के मध्य में जाता है, तो योगीजन अपने शरीर को ही पृथक कर लेते हैं, और प्राण के माध्यम से वह अन्तरिक्ष में मानो देखो, वह एक तारतम्य प्राण का बना रहता है। आत्मा के साथ देखो, वह आत्मा द्यौ में प्रवेश है, और वहाँ से प्राणों का समावेश हो रहा है। प्राणों का तारतम्य बन रहा है। शरीर शून्यता में है, परन्तु प्राण की प्रतिभा वहाँ पर विद्यमान रहती है। बेटा! मैं इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा नही यह साधको का विषय हैं। बेटा! देखो, यह कि जैसे वैज्ञानिक जन अपने मानो देखो, परमाणुवाद को जान करके अन्तरिक्ष में वह अन्तरिक्ष में मानो देखो, अपनी स्थली बना लेते हैं। जहाँ चन्द्रमा पृथ्वी का आकर्षण शक्ति का समन्वय होता हैं वहाँ यन्त्रों को स्थिर कर देते हैं। जहाँ सूर्य और मंगल देखो, जहाँ सूर्य और मंगल की दोनों की प्रतिभा एक दूसरे में मिलान होती है, और उसका जहाँ स्थली होती है, एक दूसरे की आकर्षण शक्ति उसमें विद्यमान एक स्थान बनाया जा सकता हैं। तो वैज्ञानिक जब परम्परागतों से ही, मानो नाना प्रकार के विज्ञान में रत्त हो करके और वह अपने मानो देखो, अन्तरिक्ष में स्थलियों में विद्यमान रहे हैं। तो आज बेटा! मैं ज्ञान में जाना नही चाहता हूँ, केवल विचार-विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, विचार यह चल रहा है याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा क्या तुम मानो देखो, इस प्रकार का प्रकृति का साकल्य पृथ्वी से वसुन्धरा से उत्पन्न होने वाला जो खाद्य और खनिज है। उसका चरू बनाया जाता हैं, और वह अग्नि को प्रदान किया जाता हैं। क्योकि अग्नि देवताओं का मुख है, और कोई साकल्य ऐसा नही है जो देवताओं से भिन्न हो वह देवताओं से मानो देखो, पंच महाभूतों से उसका समन्वय रहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, जब समिधा के द्वारा वह तीन-तीन समिधा का व्यवधान करता है, यज्ञमान कहता हैं क्या मेरे तीन प्रकार के ताप मेरे से मानो मैं उसे अवृत हो जाऊं मेरे प्यारे! देखो, मैं ज्ञान कर्म उपासना में मैं रत्त हो जाऊं, और रजोगुण, तमोगुण इसको मैं जान करके इस सागर से पार हो जाऊं। ऐसा मानो तीन समिधा के द्वारा वह अपनी ओजस्वी विचारधारा वह अग्नि को प्रदान करता है। तो क्योंकि तीन समिधाओं में अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। मेरे प्यारे! वही तीन प्रकार का विचार करके जब मानव देखो, राष्ट्रों का निर्माण भी इसी से होता है, राष्ट्र में भी देखो, पूर्ण आहुति दी जाती हैं, और वह मुनिवरों! देखो, उसी में रत्त रहता है। मैं राष्ट्र के विचार देने नही आया हूँ। विचार केवल यह उन्होनें कहा हे यज्ञदत! तुम याग करना चाहते हो तो तुम्हारे याग की यही व्यधान हैं। क्या तुम मानो देखो, नाना साकल्य उसमें समिधा ले करके चरू बना करके तुम मानो देखो, अग्नि में प्रदान करो, और स्वाहा-स्वाहा का उच्चारण करो और

कहो प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, व्यानाय, उदानाय कह करके उसमें मानो परिणत कर दो इस प्रकार जब उन्होंने कहा कि-प्रभु! यह तो आपका वाक् हमने स्वीकार कर लिया है, कि परन्तु हम यह जानना चाहते हैं प्रभु यदि हमें कहीं ऐसा हो जाएं यह समिधा चरू न प्राप्त हो, तो याग कैसे करें? उन्होंने कहा समिधा तो तुम्हें प्राप्त अवश्य रहेगी, परन्तु अग्नि का ध्यान करो और अग्नि को प्रदीप्त करके देखो, प्रत्येक समिधा के द्वारा तुम कहो प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा कह करके हूत करने में तत्पर हो जाओ, मानो देखो, तुम अग्न्याध्यान करके अग्नि मे मानो परिणात करो वही अग्नि तुम्हें देखो, प्रकाश में ले जाएगी, वही अग्नि तुम्हारे अन्तःकरण को प्रकाशमय बना देगी और ज्ञान और विज्ञान में तुम्हारी गति होने लगेगी। परन्तु मौन हो करके याग किया जाएं। वह याग देखो, हृदय से किया जाएं और हृदय का समन्वय मेरे प्यारे! देखो, सर्वत्र चरू से और संसार से होना चाहिए। जिससे व्यापकवाद आ करके तुम्हारे जीवन में एक महानता का जन्म हो जाएं, तो मेरे पुत्रों! तुम्हें देखो, इस प्रकार जब उन्होंने वर्णन किया, कि तुम समिधा को जो क्या मुनिवरों! देखो, यह बड़ा विशाल विज्ञान है देखो, पीपल की समिधा से ज्ञान करो उसमें क्या विशेषताएं हैं। और अम्बी के मानो देखो, समिधा के द्वारा याग करो, तो उसमें क्या-क्या विशेषताएं हैं, और देखो, जब तुम अमृता वृत्ति के द्वारा याग करोगे तो उसमें क्या-क्या गुण विद्यमान रहते हैं। क्रीट के यागों से याग करोगे, तो उसमें क्या-क्या गुण विद्यमान हैं, चन्दन की समिधाओं के द्वारा याग करोगे तो उसमें क्या-क्या विशेषताएं है, यह बेटा! देखो, एक विज्ञान है, धाराएं हैं मैं इस सम्बन्ध में विशेषता में नही ले जाऊंगा, केवल विचार यह कि मानो देखो, कोई औषधि कोई समिधा तो ऐसी है, जो विशेष जो प्रकाश में ले जाती हैं, कोई ऐसी है जो द्यौ में ले जाती हैं, कोई मानो दिशाओं का हमें दिग्दर्शन कराती हैं। कोई ऐसी औषध है हमारे रूग्णों को समाप्त करती है। इसी प्रकार देखो, उस प्रकार की समिधाओं के द्वारा जब यज्ञमान इस प्रकार के विज्ञान को जानता है और ब्राह्मणतव भी जानता है, तो वह मानो देखो, इस प्रकार से इस संसार को जान करके इससे पार होने का प्रयास करे।

तो आज मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नही केवल यह कि देखो, उन्होंने कहा कि तुम अग्नाधान करो समिधा के द्वारा कि तुम अग्न्याध्यान करो तीन-तीन समिधा के द्वारा याग करो, और याग में मानो देखा कहो प्राणाय, अपानाय, उदानाय, समानाय उदानाय कह करके देखो, व्यान की पुट लगा दो, तो तुम्हारा जीवन में पवित्रता में परिणत हो जाऐगा। मेरे प्यारे! उन्होने कहा-प्रभु! ब्रह्मचारियों ने हे प्रभु! यह तो हमने कई समय स्वीकार किया हैं, परन्तु हम यह जानना चाहते हैं कि कहीं ऐसा हो कि हमे समिधा और अग्नि कहीं प्राप्त न हो तो हम याग कैसे करें? उन्होंने कहा यदि यह भी न प्राप्त हो, तो तुम मानो देखो, आपोमयी तुम मानो देखो, जल को अंजलि में ले करके कहो प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, क्योंकि जल ही तुम्हारा अमृत हैं। यह जल ही मानो देखो, तुम्हें अमृतमयी पंहुचा देता है। माता से यह प्रश्न किया जाएं, हे माता! तेरे गर्भस्थल में जो हम जैसे शिशु विद्यमान हैं। उनका ओढ़न क्या है? क्या तुम ओढ़ना देते हो क्या तुम्हारा आसन है, तो उस समय मानो देखो, माता नही जानती इस विज्ञान को मेरे प्यारे! देखो, माता को जानना चाहिए इस प्रकार का ज्ञान माताओं को होना चाहिए मेरे प्यारे! देखो, जल ही तो देखो, उस समय ओढ़न होता हैं। जल ही आसन होता है, जल ही पांशे होते हैं और वह जल को अंजली में ले करके मेरे प्यारे! देखो, वही शिशु अपने में पनपता रहता हैं। देवता अपने में देवतव का कार्य करते रहते हैं, वह उसी में निहित रहते हैं। तो मानो देखो, हे माता! तेरे गर्भस्थल में यह आपो ही तो ओढ़न है। आपो ही आसन है और आपो में ही मानो देखो, विद्यमान रहता है, इसीलिए आपों को ले करके अंजलि में कहो प्राणाय स्वाहाः प्राण के आश्रित रहता है, अपान भी तेरे आश्रित रहता हैं, और व्यानाय स्वाहा व्यान भी तेरे आश्रित रहता हैं। मानो देखो, जब तुम कहो कि समानाय समं ब्रहे अस्सतं वे समानाय कह करके स्वाहाः करके

मेरे प्यारे! देखो, वह उदानाय कह देता हैं, मुनिवरों! देखो, वह कितना महान उस प्रभु का यह विज्ञान हैं। आज मैं इस विज्ञान में न जाता हुआ, कि हे माता! तेरे गर्भस्थल में जो बाल्य पनप रहा है, अथवा वह जल के आश्रित रहता है। जल ही उसका आसन है, और जल ही उसका बिछौना हैं, और मानो देखो, जल ही ओढ़न बन करके पांशे बन करके पनप रहा हैं। चन्द्रमा अमृत दे रहा है, क्योंकि चन्द्रमा का समन्वय समुद्रों से रहता हैं, वह आपो को वह उसमें प्रदान करता रहता है। अमृत के द्वारा अमृत देता रहता है। सूर्य का प्रकाश मानो द्यौ से होता है, और वह वहाँ से प्रकाश ले करके प्रकाशित करता है। अग्नि का देखो, अग्नि देवता जो सर्वत्र देवताओं का मुखारबिन्दु में सब देवताओं का व्यवधान करा देता हैं, तो इसी प्रकार देखो, अमृतं ब्रह्मा वर्णनं जल को अंजलि में ले करके कहो प्राणाय स्वाहा, तो बेटा! जल ही आपोमय अमृत कहलाता है। जब मुनिवरों! देखो, वह परमात्मा से मिलन होता है तो वह सबसे प्रथम वह अंजलि में जल ले करके कहता हैं, अमृतां भूवर्णनं मानो देखो, अमृत जान करके उसका ग्रहण करता है, अमृत ही वह कहलाता है। जो तुम्हारे शरीरों में वास करता रहता है। वह अमृत बाह्य जगत में भी वह अमृत है, परमाणुवाद में अमृतमयी माना गया है। तो बेटा! मैं इस सम्बन्ध में विशेषता न देता हुआ जब आचार्य ने इस प्रकार वर्णन कराया क्या मानो देखो, यह आपो ही मानो देखो, तुम्हारा जीवन हैं उस समय ब्रह्मचारियों ने कहा-प्रभु! कहीं ऐसा प्राप्त हो जाएं जिससे जल भी हमें प्राप्त न हो तो प्रभु! हम याग कैसे करें? तो उन्होंने कहा कहीं तुम ऐसी स्थली में चले जाओ, जहाँ आपो न प्राप्त हो, जल न हो तो उस समय तुम पृथ्वी के कणों को ले करके कहो प्राणाय स्वाहा, रज से तुम यज्ञ करो, देखो, वह जो रज है पृथ्वी की रज को ले करके तुम याग करो। क्योंकि पृथ्वी की रज ही तो संसार का पिण्ड बनाता है, यह जो संसार पिण्ड रूप में विद्यमान हैं। एक दूसरा पिण्ड एक दूसरे की आकर्षण शक्ति में लगा हुआ हैं, और वह भ्रमण कर रहा है, मानो लोक-लोकान्तरों का कहीं पिण्ड बन रहा हैं, कहीं माता के गर्भस्थल में मानव का पिण्ड बन रहा हैं, पुत्रियों के रूप में पिण्ड बन रहा हैं, और वह पिण्ड मानो देखो, उसमें रज विद्यमान होता हैं। गुरूतव होता है, और गुरूतव विद्यमान हो करके वही तो पिण्ड व्रतं देखो, पिण्डं ब्रहे व्रत वही तो पिण्ड कहलाता है। बेटा! देखो, गृहों के निर्माण करता है, उसमें जल का व्यवधान होता है, और जल के द्वारा ही गृह का निर्माण हो जाता है। वह भी पिण्ड रूप बन जाता है। मेरे प्यारे! यह जो ब्रह्माण्ड है, यह सर्वत्र एक पिण्ड रूप विद्यमान है, और पिण्डों के देखो, भिन्न-भिन्न पिण्डों के यह आकाश गंगाएं बनती है। इसी से निहारिका बनती है। और इसी से सौर मण्डलों का निर्माण होता रहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, यह सर्वत्र जगत एक मानो देखो, पिण्ड रूप गुरूतव कहलाता है। यह गुरूतव प्रधान मानो देखो, पृथ्वी मानी गई हैं, तरलतव प्रधान आपो माना गया हैं। तेजोमयी मुनिवरों! देखो, अग्नि का व्यवधान होता रहता हैं, इसी प्रकार जब हम इस प्रकार के विचारों को ले करके अपने में याग करते हैं, और वह रज को ले करके कहते हैं, प्राणाय स्वाहा, तू हे प्राण! तू इसी को निगलता है, गुरूतव मानो इस पिण्डम् ब्रहा इस गुरूतव को निगल करके ही मानो देखो, तू भक्षण करता हैं, तू प्राण है, तू परमाणुओं को ले करके वह परमाणु भी एक पिण्ड के रूप में विद्यमान है मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है, ऋषि-मुनियों में एक पिण्डं देखो, एक श्वास के द्वारा ही जब परमाणु गति करता है। एक वृश्चिक नाम का एक परमाणु हैं, जब उसका विभाजन करते हैं तो सर्वत्र ब्रह्माण्ड मानो देखो, उसी परमाणु में दृष्टिपात आने लगता हैं। वह ब्रह्माण्ड का पिण्ड हैं, और ब्रह्माण्ड एक-एक परमाणु में विद्यमान रहता है बेटा! आज मैं इस सम्बन्ध में विशेषता नही जो रज है, इन रजों को ले करके तुम पृथ्वी की रज को ले करके कहो प्राणाय स्वाहा हे प्राण! तू उसी में रत्त है, अपानाय स्वाहा इसका पृथ्वी से समन्वय रहता है और व्यानाय स्वाहा जिसका समन्वय देखो, वायु अग्नि को ले करके गमन करता हैं, और जब वह कहता है समानाय सबमें विचरण करने वाला हैं। इसी प्रकार वह उदानाय कहता हैं, तो मुनिवरों! देखो, जब शरीर को

त्यागता है, जिज्ञासु तो उस समय मुनिवरों! देखो, वह उदानाय कह करके वह मन का जो चित्त का मण्डल हैं। वह मन में है और मन मुनिवरों! देखो, वह आत्मा को अश्वत करके मुनिवरों! वह शरीर को त्याग देता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, वह पिण्डम् भू वर्णनं ब्रहे वेद का आचार्य कहता है, इस प्रकार तुम याज्ञिक रज के द्वारा तुम याग करो मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी यज्ञदत ने कहा-प्रभु! यह भी हमने स्वीकार कर लिया परन्तु हम यह जानना चाहते हैं, प्रभु कहीं रज भी प्राप्त न हो तो हम याग कैसे करें? उन्होंने कहा कहीं तुम्हें रज भी प्राप्त न हो तो शान्त मुद्रा में मुद्रित हो जाओ और शान्त मुद्रा में मुद्रित हो करके तुम्हारे हृदय में जो एक अग्नि प्रदीप्त हो रही है, उस अग्नि को जागरूक करो और वह ज्ञान रूपी अग्नि के द्वारा मानो देखो, तुम याज्ञिक बनो जब तुम यज्ञवेदी पर विद्यमान हो करके मानो तुम हृदय रूपी यज्ञशाला में याग करोगे वेदमन्त्रों का उद्गीत गाओगे कहो प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, कह करके मेरे प्यारे! देखो, उसमें प्रत्येक वेदमन्त्र में उसमें उद्गीत गाने वाले बनो जिससे तुम्हारा हृदय हृदय का समन्वय वेद की पवित्र विद्या से हो जाए और तुम्हारा जो मन मस्तिष्क है, वह सदैव प्रकाश में रत्त हो जाएं इस प्रकार मुनिवरों! देखो, ऋषि ने कहा क्या तुम शान्त मुद्रा में मुद्रित हो करके याज्ञिक बनो, और तुम अपने हृदय को यज्ञशाला बनाओ, आत्मा को मानो होता बना करके और प्राण को मुनिवरों! देखो, उद्गीत गाने बना करके तुम अपने में मौन हो करके याज्ञिक बनो इस प्रकार मुनिवरों! देखो, ऋषि ने जब वर्णन किया तो महर्षि से ब्रह्मचारियों ने चरणों को छू करके उन्होंने कहा-प्रभु! धन्य है आपने हमें प्रकाश में पंहुचाया हैं, हम बड़े प्रसन्नता में मानो हम इसी प्रकार अपने जीवन को क्रियात्मक बनाएं तो मेरे प्यारे! इस प्रकार जब उन्होंने वर्णन किया उनकी वर्णन शैली बड़ी विचित्र रही है। मेरे प्यारे! वह भी इनको केवल परिचय के रूप में तुम्हें दे रहा हूँ, उनकी विचार धारा तो बडी विचित्रता में रत्त रही है विचार केवल यह कि हमारा याग पवित्र हो, यागं ब्रह्मे प्रत्येक वेद का मन्त्र बेटा! याग के लिए प्ररित कर रहा है, और हमें प्रेरणा दे रहा है, और हमें प्रेरित बन करके जब इस प्रकार होतागण ब्रह्मचारी जन अपने में याज्ञिक बन करके हूत करते हैं। तो तो उनका जीवन पवित्र हो जाता हैं मेरे प्यारे! यज्ञदत इन वाक्यों को पान करके शान्त हो गएं तो विचार क्या आज का हमारा विचार अब सम्पन्न होने जा रहा हैं अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगें।

पूज्य महानन्द जीः- ओ३म् देवां ब्रह्मा वाचन्नमाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव की यह इच्छा बनी रहती है कि मैं सूक्ष्मतम में इस ब्रह्माण्ड की वार्त्ता को एक माला के रूप में परिणत कर सकूं, यह जगत बड़ा विचित्र जैसे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी-अभी वर्णन किया यह विज्ञान और ज्ञान की प्रतिभा कहलाती हैं। आज का हमारा यह वाक् जिस स्थली पर जा रहा है, एक याग का आयोजन हुआ और मेरा जो हृदय है वह याग में प्रसन्न और यज्ञमान के साथ रहता है। हे यज्ञमान! मैं कहता रहता हूँ, हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी-अभी याग के सम्बन्ध में मानो ऋषि-मुनियों की वार्त्ता प्रगट की और गागर में सागर की कल्पना की गई। क्योंकि गागर मे सागर ही एक अप्रतं कहलाता है, जो पिण्ड और ब्रह्माण्ड जैसे परमपिता परमात्मा ने रचा है। तो इसी प्रकार आज मेरा केवल उद्देश्य है, वह यह कि विचारों का हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, और तेरे गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, क्योंकि यह जो काल है, यह बड़ा विचित्र काल है, यहाँ वाम मार्गियों का देखो, अमृत कहलाता है। देखो, नृत्त हो रहा हैं वह नही होना चाहिए। गृह में देखो, द्रव्य का सदुपयोग होना चाहिए, और यज्ञमान के सदैव हृदय में एक द्रव्य का सदुपयोग होना ही मानवीयता कहलाती है। मानवीयता के क्षेत्र में मानव को प्रत्येक मानव को आना ही होता हैं क्या कोई भी मानव हो वह उसी क्षेत्र में सदैव तत्पर रहता है, और वहाँ उसकी पराकाष्ठा न हो जाएं, तो विचार आता रहता है। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के सम्मुख अब विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट नही करूंगा, केवल

यह कि हमारे इस प्रकार के याग यदि राजा अपना ले तो देखो, राष्ट्र में किसी प्रकार की सूक्ष्मता नही रहेगी, देखो, जब यह हमारे राष्ट्रवेत्ताओं ने देखो, याग को दूरी किया है। उस समय देखो, यह वाम मार्गी बन गया है। राजा भी और प्रजा भी दोनो ही वाममार्गी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने बहुत समय हुआ यह कहा था क्या देखो, राजा अपनी प्रजा को बनाना चाहता है अपने जीवन को स्वतःबना ले तो यह राष्ट्र उसी प्रकार का बनता चला जाएगा, और जब राजा नही बनेगा, राजा का विचार तो देखो, प्रजा उसके अनुसार बरतती रहती हैं। यह मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने बड़े सुन्दर वाक्यों अपने वाक् प्रगट किए मैं यह कहता रहता हूँ कि राष्ट्र में एक महानता विद्यमान होती है। तो जब से राजाओं ने याग को त्यागा हैं, प्रजा ने त्यागा है, उस समय से वाममार्ग बलवती हो गया हैं, और वाममार्ग के आने से बेटा! देखो, सुरा दूषित विचार बन गएं हैं। अमृत नही रह करके वह दूषित हो गएं हैं। देखो, अमृत के न रहने से राष्ट्रीय प्रणाली समाप्त होने लगती हैं। तो विचार आता है कि राजा के राष्ट्र में जब नाना प्रकार की हिंसा हो रही हैं, केवल हिंसा का परिणाम यही कि राजा नही रहे तो हिंसा प्रायः देखो, बलवती हो जाती हैं, हिंसा का परिणाम है मानव का स्वार्थवाद और जबकि स्वार्थ हो करके राजा अपने राष्ट्र का पालन करता है, तो प्रजा उसके अनुसार बरतती है, और बरत करके देखो, हिंसा नही रहती, हिंसा को हिंसा से शान्त नही कर सकता दमन करेगा, तो हिंसा प्रचण्ड हो जाएगी। यदि हिंसा को ज्ञान से नम्रता से और विवेक से मानो देखो, हिंसा को विवेक में परिणत कर दिया जाएगा, तो हिंसा हिंसा नही रहेगी वह अहिंसा में परिणत हो करके ही मानो देखो, संसार का समाज का राष्ट्रवाद अपने में महानता को प्राप्त कर सकता हैं। मैंने बहुत पुरातन काल में पूज्यपाद गुरुदेव को यही कहा था क्या जब तक देखो, राजा ज्ञानी ब्रह्मवेत्ता नही होगा, विवेकी नही होगा, तब तक देखो, समाज को महानता नही प्रदान कर सकता, महानता का आना बहुत अनिवार्य है। परन्तु स्वयं में महान बन जाएं तो प्रजा में महानता स्वतः आ जाएगी मानो यह निमय मानो देखो, प्रकृति और चेतना का नियम कहलाता हैं। विचार आता है कि मैनें बहुत पुरातन काल में यह भी कहा था कि राष्ट्र को यदि ऊँचा बनाना है, तो राजा मध्यस्थ बने और यह नाना प्रकार के ईश्वर के नाम पर जो रूढ़ियाँ है, रूढ़ियों का विनाश होना चाहिए। जब तक रूढ़ियों का विनाश नही होगा, तब तक देखो, राजा का राष्ट्र सुखद का अनुभव नही कर सकेगां, और प्रजा सुखी नही बन सकेगी। सुखद जब होता है, जब नाना प्रकार की जो रूढ़िया हैं ईश्वर के नाम पर क्योंकि ईश्वर के नाम पर जो रूढ़ि होती हैं एक रूढ़ि दूसरे को रक्त बहाना चाहती है जब रक्त बहाने वाली रूढ़ियाँ है तो क्यां ने रूढ़ियों को नष्ट कर देना चाहिए।

राजा ब्रह्मज्ञानी हो और उसकी विचारधारा प्रत्येक रूढ़ियों के आचार्य प्रमुखों के उनकी विचारधारा को श्रवण किया जाएं, और जिस विचारधारा पर विज्ञान और मानवता पर स्थिर हो जाएं उसी को राजा को अपना करके राष्ट्र में उसे मानो देखो, उसका प्रसार करना चाहिए। यह राजा का कर्तव्य है राजा यदि इस प्रकार के नियम नही बनाता है केवल देखो, दमन में लगा रहेगा, वह दमन अन्त में प्रचण्ड होती है। तो अग्नि और प्रदीप्त हो जाएगी। देखो, जिस काल में अग्नि प्रचण्ड होती है उन कारणों को राजा को अपने में विचार करना चाहिए। बुद्धिमान-विवेकी विद्यमान हो करके उन कारणों को विचारें कारण क्या है रूढ़ि का।

जब ज्ञान से मानव दूरी चला जाता है, तो विवेक से दूरी चला जाता है, और धर्म और मानवीयता से दूरी चला जाता है तो वहाँ अग्नि प्रायः प्रचण्ड हो जाती हैं और वह अग्नि देखो, एक समय वह आता है एक-एक गृह में अग्नि प्रदीप्त हो करके अग्नि के काण्डों का एक राष्ट्र बन जाता है आज वही मानो देखो, मैं इस सम्बन्ध में विशेषता न दे करके राजा ज्ञानी न हो करके स्वार्थी बन गएं हैं द्रव्य चाहते हैं जितना द्रव्य को एकत्रित करने लगो, उतना अज्ञान आता चला जाएगा। जितना देखो, द्रव्य को त्यागोंगे, दव्य को सदुपयोग में लगाओगे उतनी ही द्रव्य देखो,

तुम्हारी ममतामयी बन करके तुम्हारे मानो देखो, हृदय को तुम्हें आलिंगन करती रहेगी। इसी प्रकार मैंने बहुत पुरातन काल में इन वाक्यों को कहा आज भी मुझे पुनः से स्मरण आ रहे हैं।

आज मैं विशेषता में न जाता हुआ केवल यही कि रूढ़ियाँ नष्ट होनी चाहिए और द्रव्य का सदुपयोग होना चाहिए। मानो देखो, इस प्रकार द्रव्य को जितना भी सदुपयोग करोगे द्रव्य तुम्हारे समीप आयेगा। जब तक सदुपयोग नही होगा, तो द्रव्य तुम्हारे समीप नही आ सकेगा। दुरूपयोग जितना होगा उतना द्रव्य तुम्हारे से दूरी चला जाएगा। तो इसीलिए जितना रूढ़ियाँ है इनके मूल में रूढ़ियाँ विद्यमान रहती हैं कोई रूढ़ि किसी प्रकार की है मानो देखो, मेरी प्यारी माताओं का जब तक राष्ट्र में पूजन नही होगा तो मानो इनका आदर नही होगा और देखो, इनके पूजन की वृत्ति नही बनेगी। माता को माता स्वीकार नही किया जाएगा भगिनि को भगिनि रूप नही दिया जाएगा पुत्री को पुत्री रूप नही दिया जाएगा तब तक मानो देखो, वह शिक्षक तो मेरी प्यारी माता कहलाती है यदि उनकी शिक्षा चली गई देखो, हमारे बाल्यों के हृदय से तो यह समाज अन्धकार में परिणत हो जाएगा। तो इसीलिए आज मैं अपने विशेष चर्चा न देता हुआ मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से विश्राम आज्ञा पाता हुआ हे यज्ञमान! तेर जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, तेरे जीवन में श्रद्धा और महानता सदैव बनी रहे, और द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः- मेरे प्यारे ऋषिवर! अभी-अभी मेरे प्यारे! महानन्द ही के हृदय में जो विडम्बना बनी रहती है उसी विडम्बना के साथ में इन्होंने अपने वाक्या प्रगट किये। इनके हृदय में एह दाह रहती है कि राष्ट्र पवित्र बने और राष्ट्र के लिए इन्होंने के लिए इन्होंने बड़ा सुन्दर एक उपदेश दिया, देखो, रूढ़ि नही रहनी चाहिए। रूढ़ियाँ जितनी रहेंगीं उतना ही समाज अन्धकार में चले जाएगा। क्योंकि रावण के राष्ट्र में भिन्न-भिन्न प्रकार की रूढ़ियाँ बन गई थी। उन रूढ़ियों का परिणाम यह रहा कि रावण का विनाश हो गया था इसी प्रकार, यह आज का वाक् अब सम्पन्न होने जा रहा हैं समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें।

२० प्रकृति ब्रह्म और जीवात्मा ०३-१०-१९९२

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि व परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं और जितना भी यह जड़ जगत् अथवा चैतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में, प्रायः वे विचार-विनिमय दृष्टिपात आते रहते हैं। इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसके गुणों का वर्णन करते रहते हैं। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का बखान करता रहता है, अथवा उसके गुणों का वर्णन करता रहता है। इसीलिए हमारा प्रत्येक वेदमन्त्र उस महान् देव की महिमा और उसके ज्ञान और विज्ञान का वर्णन करता रहा है। तो आज का हमारा वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का बखान कर रहा है, और हमें स देव की अनन्तमयी महिमा दृष्टिपात आती रही है। जिस भी काल में मानव, उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में प्रायः विचार-विनिमय करने लगा है, उसी समय उस महान् देव की, परमपिता परमात्मा की अनुभूति होने लगती है, और वह अपने में ही यह विचारने लगता है कि मैं परमपिता परमात्मा की अनन्तमयी महिमा में ही विद्यमान हूँ। इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा का यशोगान अथवा उसके गुणों का सदैव हम गुणगान गाते रहते हैं।

पिप्पलाद मुनि और छह जिज्ञासु

आज का हमारा वेदमन्त्र, हमें कुछ प्रेरणा दे रहा है। क्योंकि यह मानव परम्परागतो से ही प्रेरणा का स्रोत रहा है और प्रेरणा को पाता रहता है और अपने क्रियाकलापों में सदैव रत्त रहा है। मुनिवरों! देखो, जहाँ मानव को ब्रह्म की जिज्ञासा, अथवा ब्रह्म के होनो, न होने की प्रेरणाएं प्रायः मानव को प्राप्त होती रही है और वह गम्भीर मुद्रा में मुद्रित रहा है, मुझे बेटा! एक वाक्य स्मरण आ रहा है, जहाँ नाना ऋषि-मुनियों का समूह विद्यमान होता रहा है, जिसमें, बेटा! देखो, ब्रह्मचारी सुकेता और ब्रह्मचारी कवन्धि, और श्वेतकेतु, सम्भूति, वरणेश्वर और यज्ञदत्त। ये छह जिज्ञासु अपने आसन पर विद्यमान थे। परन्तु ये बहुत समय से कुछ विचार-विनिमय कर रहे थे। इन्हें प्रेरणा प्राप्त हो रही थी और प्रेरणा के आधार पर अपने में विचार-विनिमय करते रहे।

ब्रह्म-जिज्ञासा

ब्रह्मचारी कवन्धि ने सुकेता से कहा कि-महाराज! ब्रह्म के सम्बन्ध में तुम क्या जानते हो? तो ब्रह्मचारी सुकेता ने यह कहाकि-मैं ब्रह्म को यह स्वीकार करता हूँ कि ब्रह्म है, परन्तु निश्चयात्मक में नहीं पहूंच पाया हूँ। सुकेता ने कवन्धि से कहा-तुम क्या जानते हा उन्होंने कहा-ब्रह्म है और वह सर्वत्रता में विद्यमान है। उन्होंने, बेटा! गार्गे से कहा -हे गार्गे। तुम ब्रह्म के सम्बन्ध में जानते हो? उन्होंने कहा-मैं ब्रह्म, के सम्बन्ध में इतना जानता हूँ कि ब्रह्म का यह ब्रह्माण्ड है और ब्रह्माण्ड में, वो एक-एक में ओतप्रोत हो रहा है। तो छह जिज्ञासु थे, परन्तु छह जिज्ञासुओं का अपने-अपने में भिन्न-भिन्न प्रकार का उनका मन्तव्य रहा।

मेरे प्यारे! देखो, इस विचार को ले करके छह जिज्ञासु अपने आसन से गमन करते हैं और भ्रमण करते हुए, मुनिवरों! देखो, पिप्पलाद मुनि के द्वार पर पहुंचे। पिप्पलाद मुनि ने कहा- सम्भव ब्रह्मे जिज्ञासां भूतं ब्रह्मः आओ, जिज्ञासु! विराजो। वे जिज्ञासु विराजमान हो गये। उन्होंने कहा-कहो, भगवन! तुम्हारा कैसे आगमन हुआ है? उन्होंने कहा-महाराज! आपसे कुछ जानना चाहते हैं। मेरे प्यारे! महर्षि पिप्पलाद मुनि ने कहा कि -सबसे प्रथम तो मेरे आसन पर विराजो और मेरा आतित्य स्वीकार करो। क्योंकि हमारे वैदिक साहित्य में जो भी जिज्ञासु आता है, या यथार्थी है वह हमारा अतिथि है और अतिथि की सेवा करना हमारा कर्त्तव्य हैं। उन्होंने कहा-बहुत प्रियतम। उन्होंने कुछ कन्दमूल उनको जो पर्याप्त था, वह जिज्ञासुओं को उन्होंने प्रदान किया और वे उन्होंने प्रदान किया और वे अपने में तृप्त हो गये। तृप्त होने के पश्चात् छह जिज्ञासु विराजमान हो गये। परन्तु उन्होंने कहा-प्रभु! हम यह जानना यह चाहते हैं कि हमने यह तो जान लिया, निश्चय हो गया कि ब्रह्म है, परन्तु ब्रह्म की जो प्रतिभा है, उसका जो क्रियाकलाप है, प्रायः उसे नहीं जानते। तो महर्षि पिप्पलाद मुनि ने यह कहा कि -मेरे आश्रम का एक नियम है कि एक वर्ष तक तुम गऊओं की सेवा करो और जो गऊओं की सेवा एक वर्ष तक करोगे उसके पश्चात् मैं जानता होऊंगा तो तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर दे सकूंगा। ब्रह्मचारी कवन्धि ने कहा-प्रभु! आप जानते तो हैं। यदि आप जानते नहीं तो यह हमसे उच्चारण नहीं कर सकते कि तुम गऊओं की सेवा करो। इसलिए हमें यह विदित हो गया है कि आप जानते हैं। अब, जैसा आपका हमें आदेश है, हम उसका अवश्य पालन करेंगे।

गौ-सेवा के अर्थ

मुनिवरों! देखो, वे गऊओं की सेवा करने लगे। तो यहाँ मुनिवरों! देखो, गऊओं की सेवा करने का जो रूप है, वह भिन्न माना गया है। हमारे यहाँ, गौ शब्द के बहुत से पर्यायवाची शब्द है। जैसे, गौ नाम पशुओं को माना गया है और गौ नाम ब्रह्मचारी को भी कहा जाता है और गौ नाम इन्द्रियों का भी है। और मुनिवरों! देखो, गौ, अवृत्ति किरणों को भी कहा जाता है। तो विचार आया, ब्रह्मचारियों ने, जिज्ञासुओं ने यह विचारा कि, गऊओं की सेवा करना हे, तो गऊ क्या है? सेवा का अभिप्रायः अनुशासन में लाना है। मानो देखो, जहाँ पशु का प्रसंग आयेगा

वहाँ तो यह कि हमें गऊओं की सेवा करनी है। सेवा का अभिप्रायः उनकी उदर की पूर्ति करनी है और जहाँ मुनिवरों! देखो, उसके ज्ञान और विज्ञान को जानना है। जो इन्द्रियों से हमें प्राप्त होता है अथवा उसकी सेवा है। सेवा का अभिप्रायः कहीं जानना है, तो कहीं मानो देखो, उसके उदर की पूर्ति करना है। तो मुनिवरों! देखो, यह भी इन्द्रियों का, पशु का उदर कहा गया है। उदर का अभिप्रायः यह है कि, जिससे वह तृप्त होता है, वही उसका उदर माना गया है। तो विचार-विनिमय, विचार-वेत्ताओं ने का है कि - विचर प्रह्वेदेवो उदरस्सतं देवत्त्वाम् यह जो उदर है, यह तृप्त होने का एक सूचक माना गया है।

जिज्ञासुओं की गौ-सेवा

मेरे प्यारे! देखो, उन जिज्ञासुओं ने यह अपने में निर्णा कर लिया कि हम अपने में गऊओं की सेवा करेंगे। परन्तु गऊओं का अभिप्रायः यहाँ, मुनिवरों! देखो, यह गौ नाम इन्द्रियों का है और इन्द्रियों को जानना ही हमारे लिए मानो उसकी, सेवा करना है। यदि हम आचार्य से प्रश्न करेंगे, तो उससे पूर्व हमें उस प्रसंग के योग्य बन जाना हे और यदि हम प्रश्न के योग्य नहीं बने है, उस भाषा को, उस कृत को हम जान सकेंगे, जो आचार्य हमें हमारे प्रश्नों का उत्तर दे देंगे। क्योंकि प्रश्न करना बड़ा सहज माना गया है, परन्तु प्रश्नों के उत्तर को जानना, उसे अपने में धारणा करना सहज नहीं होता।

नेत्र-अनुशासन

मेरे प्यारे! देखो, छह जिज्ञासु एक वर्ष तक, बेटा! अपने में चिन्तन करते रहे कि हमारा जो गौ नाम का पशु है, वह इन्द्रियाँ है और इन्द्रियों के ऊपर हमारा अनुशासन होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, इन्द्रियों का जो अनुशासन जानता है, अनुशासन करता हुआ वह अनुशासित हो जाता है। जैसे नेत्रों पर हमें अनुशासन करना है और नेत्रों का जो अनुशासन है, वह देखो, सुदृष्टिपात करना है और सुदृष्टिपात करते-करते वह इतने सूक्ष्मतम मानो दृष्टि में चला जाता है कि वह तारामण्डलों के मध्य में, एक-दूसरे के मध्य में जो ऋत् और सत् बह रहा है, उसको भी देखो, नेत्रों की ज्योति से दृष्टिपात करने लगता है। जब, मानव योगाभ्यास में परिणित हो जाता है तब इन्द्रियों से वह जो अग्नि उसमें वास कर रही है, वह जो अग्नि रूप बना हुआ हमारा नेत्र है, उसे अग्नि के रूप में हमें दृष्टिपात करना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, इन नेत्रों को व्यष्टि से समष्टि में ले जाना है। और, समष्टि उसे कहते है, जहाँ सम हो जाएं, जहाँ व्यापकता आ जाएं। तो मेरे प्यारे! देखो, नेत्रों में जो अग्नि बह रही है अथवा जो दुरितानी ज्योति भ्रमण कर रही है, उस ज्योति को जानने का नाम इन्द्रियों के ऊपर अनुशासन करना है और वही उनकी सेवा का अभिप्रायः होता है वही सेवा कही जाती है।

श्रोत्र-अनुशासन

हमारे यहाँ जैसे श्रोत्र हैं, तो श्रोत्रों से, मानो देखो, वह शब्द आता है, वह शब्द को ग्रहण करता है, शब्दं ब्रह्वे शब्दोब्रेति देवत्त्वाम् मानो शब्द को जानना और वह शब्द को वहाँ तक जानता है, जैसे ध्वनि आ रही है, एक मानव ओझल हो रहा है और ओझल हो करके वह उसका नामोकरण उच्चारण कर रहा है तो जिस मानव ने वह अपनी वाणी से अग्नि की है, शब्द मानो फूंका है, वही शब्द, मुनिवरों! देखो, उसे यह विदित करता हे कि अमुक प्राणी मुझे वाणी से कुछ उद्गीत गा रहा है, वह वाणी से उद्गीत गा रहा है। तो मुनिवरों! देखो, उसके चित्र में, उसकी प्रतिभा में और उसके मानो देखो, शब्द में, वह मुनिवरों! देखो, उसे दृष्टिपात आने लगता है। वह अनुभव करता है। उसका ज्ञान इतना अनन्तमयी हो जाता है कि उसके सब अंगों को जान लेता है कि अमुक प्राणी ने मुझे वह अन्तरिक्ष में मानो, देवत्त्व को धारण कर रहा है। इसी प्रकार, मेरे प्यारे! देखो, शब्द-विज्ञान को जानना है। वह शब्द आ रहा है, वही ध्वनि पर ध्वनि आ रही है और वही मुनिवरों! देखो, देखो, अनर्ध्य रूप में परिणित हो

जाती है और वही ध्वनि, मेरे प्यारे! देखो, मानव अपने ही अन्तर्मुखी हो करके अपने में अनुभव करता है। वह, योगां भूतं ब्रह्मः योग की आभा में परिणित हो जाता है।

ब्रह्माजी द्वारा व्याकरण-प्रवर्तन

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, आदि ब्रह्म जब मुनिवरों! देखो, व्याकरण को जानने के लिए तत्पर रहे, तो वे मानो अन्तर्मुखी हो गएं और अन्तर्मुखी में जो स्वर-संगम हो रहा है आन्तरिक जगत् में, जो मानो देखो, आन्तरिक जगत् में स्वर अपने में स्वर-ध्वनि कर रहा है, उस ध्वनि को अपने में धारण करता हुआ और भी सूक्ष्मतक में चला जाता है तो उससे वह सूत्र रूप बन जाता है और उसी सूत्र को बाह्य जगत् में लाने का प्रयास किया तो, बेटा! देखो, व्याकरण एक-दूसरे में मानो परिणित हो गया और, मानो देखो, वही व्याकरण के रूप में मानव को दृष्टिपात आने लगा।

मेरे प्यारे! देखो, वह ध्वनि है और वही ध्वनि, मुनिवरों! देखो, रात्रि का काल छाया रहता है, एक जिज्ञासु है, योगीजन अपने में, मानो देखो, जो तारामण्डलों का, मानो जो परमाणुवाद का संघर्ष हो रहा है, एक योगी, बेटा! देखो, प्राण को जब व्यान में प्रवेश कराता है, मिलान करता है तो वह ध्वनि आने लगती है और वह जो ध्वनि आने लगती है और वह जो ध्वनि परमाणुवाद अपने में संघर्ष कर रहा है वायुमण्डल में, बेटा! देखो, ध्वनि को वह अपने में धारण करने लगता है तो वह ध्वनि कहलाती है। तो विचार आता है, मुनिवरों! देखो, वह इस प्रकार का जब मानव ध्वनि में ध्वनित हो जाता है, अथवा शब्दों की प्रतिभा में परिणित हो जाता है, तो बेटा! वह उसका अनुशासन माना गया है। वही ध्वनित हो करके, बेटा! कैसे परमाणुओं का संग्राम हो रहा है, परमाणु अपने में संग्रहित हो रहें है, मुनिवरों! देखो, यह सर्वत्र उन्हें दृष्टिपात आता रहता है।

घ्राण-अनुशासन

आओ, मेरे प्यारे! देखो, मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट नहीं करूंगा। मैं व्याख्याता नहीं हूँ, केवल तुम्हें यह परिचय देने आया हूँ कि देखो, उन जिज्ञासुओं का एक अनुशासन रहा। तो मेरे प्यारे! देखो, द्वितीय उन्होंने विचारा कि अमृतं ब्रह्म देखो, घ्राणेन्द्रियां हैं। घ्राणेन्द्रियों के सम्बन्ध में उन्होंने, मुनिवरों! देखो, अपने में अनुशासन करना प्रारम्भ किया। एक घ्राणेन्द्रियों से, मेरे प्यारे! पृथ्वी में से गन्ध आ रही है और पृथ्वी के गन्ध को जानता हुआ, देखो, वह विज्ञान के वांग्मय में जब प्रवेश करता है, जो वह यह जान लेता है कि खनिज कितनी दूरी पर विद्यमान है। कौन-सा खनिज विद्यमान है। यह सब घ्राणेन्द्रियों से ही मानो उसे अनुभव हो जाता है, उसे अनुभूति होने लगती है।

भगवान राम की घ्राण-कला

मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मणे वृत्तम् तुमने यह श्रवण किया होगा, मुझे स्मरण आता रहता है भगवान राम का जीवन मेरे प्यारे! देखो, मैं भगवान राम के जीवन की चर्चा इसलिए कर रहा हूँ कि ऋषि-मुनियों का जीवन तो बड़ा अनुपम रहा है। परन्तु भगवान राम का जीवन भी बड़ा अनुपम रहा है। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता हे कि ज बवह विद्यालय में अध्ययन करते थे, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराजा और, मुनिवरों! देखो, उनके द्वारा जबअध्ययन करते थे जो प्रायः एक समय माता अरून्धति और कुछ ब्रह्मचारी भ्रमण करते हुए, क्योंकि अरून्धति उन्हें नैतिक शिक्षा प्रायः दिया करती थी और वह याग इत्यादियों में परिणित रहती, क्योंकि माता अरून्धति का जीवन भी, बेटा! बड़ा अद्वितीय रहा है, उनका जीवन ब्रह्मवादिनीका रहा है और वे लोक-लोकान्तरों की प्रायः चर्चा करती रही हैं और धनुर्याग में उनका बड़ा सहयोग रहा है। तो मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है कि उनका जीवन कितना महान् और पवित्रता में परिणित रहा है। तो मेरे प्यारे! देखो, वह अमृतम् देखो, भगवान राम, माता अरून्धति और

वशिष्ठ, और भी ब्रह्मचारी थे, भ्रमण करते हुए बेटा! भयंकर वनों में मुनिवरों! देखो, वह पर्वतों की छाया में पहुंचे। तो मुनिवरों! देखो, गन्ध को ही धारण करते हुए भगवान राम ने कहा-यह तो पर्वतों की अनुद्यति है, अथवा इसकी तलहटी है, इसमें अमुक खनिक विद्यमान हैं। तो उन्होंने, बेटा! देखो, पृथ्वी के कणों की सुगन्ध से घ्राण के द्वारा उसको जाना। तो मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण है, उन्होंने, देखो, पृथ्वी के गर्भ में जाने का प्रयास किया। उन्होंने, बेटा! देखो, उस खनिज को जानने का प्रयास किया। तो मुनिवरों! देखो, वह खनिज, मानो देखो, कुछ दूरी पर जाकर के उन्हें वह खनिज प्राप्त हो गया।

मेरे प्यारे! देखो, घ्राणेन्द्रियां अपने में बड़ी अद्वितीय क्रियाकलाप करती रहती है। माता अरून्धति ने कहा - राम! तुम बड़े प्यारे सखा हो, मानो यह उत्तर दो कि- तुमने कैसे जाना है? उन्होंने कहा-मातेश्वरी! घ्राणां भ्वे वृतप्रहिकृतः तुमने वेदमन्त्र की यह आख्यिका स्मरण की होगी और वेदमन्त्र यह कहता रहता है कि देखो, अमृतं ब्रह्वेजब्रहे यह घ्राणेन्द्रियों का विषय है और घ्राण का सम्बन्ध पृथ्वी से है और पृथ्वी में सर्वत्र खनिज विद्यमान रहते हैं। यह पंचमहाभौतिक जो गमन करने वाला अमृत है, वह उसमें नृत्य करता रहता है और वही हमारी घ्राण-इन्द्रियों में गमन करता रहता है। तो उसको हम इस प्राण के माध्यम से, घ्राणेन्द्रियों को जानने का प्रयास करें।

मेरे प्यारे! देखो, भगवान राम के इन वाक्यों को श्रवण करके माता अरून्घति बड़ी प्रसन्न हुई और उन्होंने कहा-धन्य है! मेरे प्यारे! देखो, उनके विद्यालय का, मानो देखो, यह प्रमुख छात्र, अपने में अनुसन्धान करता रहता था। तो विचार आता रहता है, बेटा! यह जब वह अनुसंधान करते रहे तो वह अपने में अद्वितीय क्रियाकलाप करते रहे। आओ, मेरे प्यारे! विचार क्या कि मुनिवरों! देखो, उन्होंने साहित्य की वार्त्ता, देखो, जब वह (राम) वन को चले गएं थे तो निषाद से जब मिलाप हुआ तो निषाद से, मुनिवरों! देखो, उन्होंने पृथ्वी के सम्बन्ध में कहा था कि- हे निषाद! यह पृथ्वी वज्र के तुल्य पड़ी है, परन्तु यह अन्नाद दे सकती है, इसके गर्भ में बहुत-सी देखो, जीवन-शक्ति हैं। तो मुनिवरों! देखो, निषाद ने उस पृथ्वी का नाम अहिल्या के रूप में परिणित किया है। वह पृथ्वी अहिल्या है, जो अन्न दे सकती है। परन्तु जो वज्र के तुल्य पड़ी हुई हो वह, मानो देखो, -निठल प्रधे कृषकों के निठलपन करके उसे त्याग दिया हो, और वह अन्न दे सकती हो तो उसका नाम अहिल्या कहा जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, निशाद ने उस पृथ्वी के लिए आज्ञा दी कृषकों को कि उसमें अन्न उत्पन्न करें। मेरे प्यारे! वह घ्राणेन्द्रियों के द्वारा, यह कि घ्राणेन्द्रियों के द्वारा, मानो देखो, पृथ्वी की गन्ध को ले करके, उससे अपना समन्वय करके और यह विचार-विनिमय कर लेता है कि इसमें इतनी दूरी पर इतना खनिज विद्यमान है। तो मेरे प्यारे! देखो, उसका वह एक अनुशासन माना गया है।

त्वचा अनुशासन

यह अनुशासित होने वाली इन्द्रियां, देखो, अपने में धर्म प्रमाणं वृत्तम् । तो मुनिवरों! देखो, उसके पश्चात् वे अमृतं ब्रह्मः वर्णास्तुतम् देखो, वायु वेग में रमण कर रही है, मानो देखो, त्वचा से उसका स्पर्श हो रहा है। तो त्वचा से जब उसका स्पर्श होता है, तो वह जान लेता है कि वायु में कौन-सा परमाणु भ्रमण कर रहा है, अथवा गमन कर रहा है। मेरे प्यारे! देखो, वह यहाँ तक मुझे कुछ ऐसा अनुभव, मानो ऋषि-मुनियों की प्रतिभा प्राप्त होती रहती रही है कि देखो, इस स्पर्श-शक्ति से वह मुनिवरों! देखो, देखो, शब्द, जो बह रहा है, अन्तरिक्ष में, उसे वह जान लेता है, अथवा - के द्वारा ही, मेरे प्यारे! वह जान लेता है कि वायु में अमुक खनिज रमण कर रहा है। मानो शरद वायु या देखो, ग्रीष्म में मंगल वृत्ति हो रहा है, परन्तु उसमें कौन शब्द रमण कर रहा है।

मेरे प्यारे! देखो, इसके ऊपर, मुझे स्मरण आता रहा है। मुनिवरों! देखो, त्रेता के काल में जब महर्षि विश्वामित्र ने, मुनिवरों! देखो, धनुर्याग किया था, जो उस धनुर्याग में ब्रह्मचारी इसके ऊपर अनुसन्धान करते थे।

मुनिवरों! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ एक देखो, वृत्तिका ऋषि, ब्रह्मचारी, अपने में अध्ययन करते थे और अध्ययन करते उन्होंने, मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है कि उन्होंने देखो, इस वायुमण्डल को जानने का प्रयास किया, अपनी त्वचा के द्वारा, क्योंकि वह उसे स्पर्श करती रही। उसी को यंत्रों में लाने का प्रयास किया। तो बेटा! वायु में कितना खनिज बह रहा है? कितना वृत्त बह रहा है? मेरे प्यारे! देखो, इसके ऊपर अनुसन्धान किया गया। तो विचारने से यह प्रतीत हुआ कि यह त्वचा का अनुशासन है।

रसना अनुशासन

मेरे पुत्रो! देखो, इसी प्रकार, मानव का शब्द, मानव की प्रतिभा और मानव का जो रसास्वादन है, वह जल से उसका समन्वय रहता है और रसना का समन्वय रहता है, दोनों ही, मुनिवरों! देखो, एक-दूसरे के पूरक कहलाए गएं हैं। तो विचार आता रहता है, मैं इस सम्बन्ध में तुम्हें गम्भीरता में नहीं ले जा रहा हूँ। विचार-विनिमय केवल यह कि मुनिवरों! देखो, प्रत्येक इन्द्रिय का अपना विषय है और विषय को ले करके उस पर अनुसन्धान करना है। इसीलिए यह इन्द्रियों का ज्ञान, यदि हमने नहीं जाना है तो ये इन्द्रियों गौ कहलाती हैं और गौ कहते है पशु का।

मुनिवरों! देखो, उन्होंने, इसीलिए महर्षि पिप्पलाद ने कहा था कि तुम गऊओं की सेवा करो। गऊओं की सेवा का अभिप्रायः यह कि उनको जानने का प्रयास करो। सेवां भूतं ब्रह्मणे वृत्तः वेद का वाक्य कहता है कि सेवा का अभिप्रायः है, जानना। तो इसीलिए प्रत्येक इन्द्रियों के विषय को जाना जाएं। जान करके मानो जो अपने में समाहित हो जाता है तो वह मानव प्रभु की सृष्टि को अपने में निहारने लगता है। मेरे प्यारे! वह निहारता हुआअपने में, मानो देखो, अपने में समाहित हो जाता है।

आओ, मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार महर्षि पिप्पलाद मुनि के यहाँ ये जिज्ञासु, अपने में देखो, जिज्ञासा करने लगे, अपने में अनुसन्धान करते लगे, सेवा करने लगे तो इन्हें इसी प्रकार का ज्ञान और विज्ञान की उड़ान उड़ते हुए, बेटा! देखो, एक वर्ष हो गया और एक वर्ष के पश्चात, मुनिवरों! देखो, छह जिज्ञासु अपने आसन पर विद्यमान हो गएं और उन्होंने विचारा कि हमें जो आचार्य ने दीक्षा देनी थी, अथवा जो हमें कहा था, उसके ऊपर हमने अनुसन्धान किया और हमें वह ज्ञान और विज्ञान तो प्राप्त हो गया परन्तु अब देखो, दीक्षा की सूक्ष्मता रह गई कि केवल हमें दीक्षा प्राप्त होनी चाहिए।

ऋत् और सत्

मेरे प्यारे! देखो, वह अमृतम् महर्षि पिप्पलाद मुनि महाराज एक वर्ष के पश्चात् उन छह जिज्ञासुओं के समीप आ पहुंचे और वह अपने आसन पर विद्यमान हो गये। तो महर्षि पिप्पलाद ने कहा-हे जिज्ञासुओ! अब तुम बारी-बारी अपना प्रश्न करो, तुम क्या जानना चाहते हो? तुम्हारा क्या प्रसंग है? उन्होंने कहा-प्रभु! हमने ईश्वर को तो जान लिया है परन्तु उसमें एक शब्द आया है ऋत् और सत् को जानना चाहते है। मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचारी कवन्धि सबसे प्रथम यह प्रश्न किया कि -ऋत् और सत् किसे कहा जाता है? मेरे प्यारे! देखो, पिप्पलाद मुनि ने कहा कि -हे ब्रह्मचारी! तुम्हें अब तक आचार्यों ने इसके सम्बन्ध में कुछ वर्णन कराया है, अथवा नहीं? क्योंकि तुमने विद्यालयों में भी अध्ययन किया है और तुम मानो और भी ऋषि-मुनियों से तुम्हारा मिलाप हुआ है। देखो, वार्त ब्रह्मे महर्षि, पिप्पलाद की वार्ता करते हुए ब्रह्मचारी कवन्धि ने कहा-प्रभु! हम केवल आपसे जानना चाहते हैं कि आप को यह क्या अमृतां गुरुतं ब्रह्मे अन्य-अन्य ऋषियों ने क्या हमें उत्तर दिया है। उन्होंने कहा-हम यही तो जानना चाहते हैं। यदि मैं उनके उत्तर में उत्तर दे सकूंगा तो मैं उत्तर दे सकूंगा। उन्होंने कहा- मन्तप्रह्मे उन्होंने कहा ब्रह्मा ने यह कहा कि देखो, उत्तरायण और दक्षिणायन के -ऋत् और सत् कहते हैं। मानो देखो, उन्होंने कहा-इस प्रकार और अन्धकार में जो प्रकाश है, उसको भी -ऋत् और सत् उन्होंने पुकारा है, परन्तु देखो, रेतस्य का नाम भी उन्होंने यह

कहा है।

इससे आगे देखो, ब्रह्मा जी ने यह कहा-एक समय हम भ्रमण करते हुए महर्षि श्वेतकेतु आचार्य के द्वार पहुंचे तो उन्होंने हमसे यह निर्णय कराया हे कि अमृतम् देखो, ऋत् को कहते हैं ऋतु को सत् कहते हैं जो उसमें समाहित हो रहा है। परन्तु देखो, एक समय हम भ्रमण करते हुए कात्यायन के गृह में पहुंचे, मगध राष्ट्र में। तो कात्यायन के गृह में उनकी देवी ने हमें यह निर्णय दिया था कि देखो, जब वृत्तम् आता है तो मानो देखो, उसे ऋत् कहते है। तो प्रभु! हमारी संतुष्टि, मानो देखो, इस रूप में कहीं-कहीं होती है, कहीं नहीं। तो हम आपसे जानना चाहते है कि -ऋत् और सत् किसे कहते हैं? तो मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आ रहा है जब ऋषि ब्रह्मचारी ने ऋषि से यह प्रश्न किया तो ऋषि पिप्पलाद मुनि ने कहा-मेरे विचार में तो -ऋत् और सत् उसे कहा जाता है, ऋतृ कहते हैं, प्रकृति को सत् कहते हैं ब्रह्म को। मानो देखो, -ऋत् और सत् दोनों एक-दूसरे के पूरक कहलाते है। जैसे मानो देखो, ऋतं ब्रह्मः वृत्तम्हे ऋतंच ब्रह्व कृतं देवत्वां ऋताः यह जो ऋतृ है मानो देखो, ऋत् कहते हैं, जो प्रकृति हमें दृष्टिपात आ रही है, मानो देखो, यह सब जितना भी प्रकृति का मण्डल हे, वह सब ऋत् कहलाता है। यह त्रतस कहलाता है, अथवा इसको ऋत् भी कहा जाता है। परन्तु देखो, यह जड़वत है और केवल सन्निधान मात्र से जब सत् का इसमें सन्निधान होता है, तो मानो देखो, यह प्रकृति का एक विशाल रूप, हमें दृष्टिपात आने लगता है। तो ऋत् और सत् दोनो मानो देखो, ब्रह्म और प्रकृति के दोनों एक-दूसरे की प्रतिभा में रत्त होते रहते हैं। हे जिज्ञासुओं! मेरे विचार में तो यह आता है कि -ऋत् कहते हैं मानो प्रकृति को और उसमें जो सत् निहित हो रहा है तो वह ऋतृ-सत् कहा जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, उसमें पिप्पलाद अमृतम् देखो, कवन्धि ने पिप्पलाद से कहा-महाराज! यह जो ऋत् है, यह अमृतम् जड़ है या चेतन? उन्होंने कहा-यह जड़वत है और सत् के साथ यह चेतना में रत्त रहता है।

प्रकृति ब्रह्म और जीवात्मा

उन्होंने कहा-प्रभु! एक समय हम भ्रमण करते हुए महर्षि व्रेतकेतु के द्वार पर पहुंचे तो उन्होंने हमें यह निर्णय दिया कि देखो, यह जो ऋत् है यह प्रकृति है औा देखो, वह ब्रह्म को सत् कहते हैं और आत्मा, सत्-चित्त है। और परमात्मा सत्, चित्त और आनन्द हैं। परन्तु प्रकरण में दोनों में भिन्नता मानी जाती है। यहाँ प्रकरण है-ऋत् और सत् का। क्योंकि ऋतंचं ब्रह्नः यह प्रकृति का स्वरूप माना गया है, और प्रकृति को मानो ऋत्-सत् भी कहा जाता, परन्तु जब सत् होता है, जब सतं ब्रह्म वरणस्वुतम् जब मानो देखो, यह अपना वरण कर लेती है। यह प्रकृति का जब अपना वरण कर लेती है, यह सत् और देखो, ऋत् दोनों एक स्वरूप बन जाते हैं। तो इसी प्रकार, मेरे विचार में यह आया कि ऋत् कहते हैं, प्रकृति को और सत् कहते हैं ब्रह्म को, क्योंकि ब्रह्म की चेतना-सत् के बिना इस मानों ऋत् का कोई अपना अस्तित्व नहीं कहलाता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, पिप्पलाद की विचारधारा बड़ी प्रखर थी, उनके विचार में यह उनके विचार में यह वाक्य आ गया कि मेरा निर्णय यथार्थ हो गया है, मानो देखो, मैं भी इसको इसी रूप में स्वीकार करता था। परन्तु देखो, आत्मा का प्रसंग, ब्रह्म का प्रसंग और अब देखो, प्रकृति का जो, तीनों का एक-एक भिन्न-भिन्न रूप मं, प्रसंग करेंगे तो प्रसंग उनकी व्याहृति, मानो देखो, दूसरा रूप धारण कर लेती है इस प्रकार, मुनिवरों! अपनी संतुष्टि करते हुए, महर्षि पिप्पलाद के वाक्यों को पान करते ब्रह्मचारी मौन हो गये। परन्तु इसमें देखो, ब्रह्मचारी सुकेता ने कहा-हे प्रभु! मैं भी कुछ जानना चाहता हूँ। उन्होंने कहा-तुम क्या जानना चाहते हो, उन्होंने कहा-प्रभु! यह कौन है, जो इस संसार को चला रहा है? यह कौन है, मानो देखो, इसमें रमण कर रह है और, यह कौन है, जो अपने को ममत्त्व को धारण करा रहा है?

याग और तपस्या

मेरे प्यारे! देखो, महर्षि पिप्पलाद मुनि ने कहा-हे ब्रह्मचारी सुकेता। यह मानो देखो, कौन है? तुम यही तो जानना चाहते हो? यह कौन कहने वाला कौन है? इसके ऊपर भी तो तुम्हें विचार होना चाहिए। मानो देखो, वह ब्रह्मणां ब्रह्मः कृतं देवत्वाम! यह जो ब्रह्म है, यह सर्वत्रता में मानो देखो, विद्यमान है और यही, देखो, सृष्टि को रचाने वाला है और यही, मानो देखो, अपने में धारण कर रहा है, इनके मध्य में, मानो जब ब्रह्म का इसे बोधन हो जाता है, तो ब्रह्म को ही स्वीकार कर लेता है और जब यह प्रकृति के आंगन में इसका बोधन हो जाता है, तो यह प्रकृति को ही मानो पुकारने लगता है कि यह भी प्रकृति है। तो इसी में वो रत्त हो जाता है। तो मानो देखो, वरणाम् कौन रचाने वाला है? कौन धारण कर रहा है? वह ब्रह्म इसको धारण कर रहा है। परन्तु देखो, वह जो दृष्टा बना हुआ है, जो दृष्टिपात कर रहा है इस संसार को, वही ब्रह्मवत माना गया है। तो मेरे प्यारे! देखो, जिज्ञासुओं को, उनके सूक्ष्मता से उन्होंने प्रश्नों का उत्तर दिया और उन्होंने कहा-यही तो मानो देखो, ब्रह्म में विशेषता मानी जाती है कि वो संसार में मानो इसको रचा रहा है और इसमें वो समाहित हो रहा है और, मानो देखो, वही इसको गतिवान् बना रहा है।

विचार आता रहता है मेरे प्यारे! देखो, श्वेत्ताम् भूतं ब्रह्मः रचने वाली प्रकृति है और रचाने वाला ब्रह्म है और मानो देखो, इसको भोग करने वाला यह जीवात्मा- आत्मा कहा जाता है। तो विचार आता है, बेटा! महर्षि श्वेतकेतु ने अपने सांख्य सिद्धान्त का वर्णन करते हुए कहा कि यह संसार त्रिवाद में परिणित हो रहा है और त्रिवाद उसे कहते हैं, जहाँ तीन मात्राओं से, मानो देखो, संसार को हम अपने में निर्णयात्मक कर लेते हैं। जैसे हमारे यहाँ, तीन गुण माने गएं है-रजोगुण-तमोगुण-सतोगुण। ये प्रकृति के सूक्ष्मतम अव्यव माने गएं हैं। तो यह त्रिवर्धा बन जाता है। मेरे प्यारे! देखो, ये संसार की प्रतिभा में चित्त-मण्डल में प्रवेश करते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, तीन ओऊम की मात्रा कहीं जाती है-अ, उ और म्। मेरे प्यारे! देखो, ये तीन मात्राओं से गणना का जन्म होता है। आगे जो व्यापक रूप बनता है। इसी से बनता है। परन्तु ये तीन मण्डल कहे जाते हैं। इन्ही में, बेटा! देखो, तीन प्रकार के परमाणु विद्यमान रहते हैं। देखो, भूः भवः जिसको तरलतव कहते हैं और स्वः जिसको अग्नि का स्परूप माना जाता है। मेरे प्यारे! ये तीन प्रकार के परमाणुओं के ऊपर, संसार का जितना भी ज्ञान है चाहे वह, मुनिवरों! देखो, अन्तरिक्ष में रमण करने वाला हो, चाहे वह लोक-लोकान्तरों में उड़ान उड़ने वाला हो, वे सर्वत्र, मानो देखो, यह तीन प्रकार का परमाणुवाद ही, मुनिवरों! मानो देखो, विज्ञान के वांग्यम में प्रवेश हो जाता है।

विचार आता रहता है, यह जो विज्ञान है, यह मानो अपने मे त्रिविद्या कहलाता है। इसमें गुरूतव, तरलतव और तेजोमयी, तीन प्रकार के परमाणु दृष्टिपात आते रहते है। मेरे प्यारे! देखो, यह त्रिविद्या बन जाता हैं, तीन मण्डलों का त्रिवर्धा है। तीन ही प्रकार के प्राणी मात्र होते हैं। मेरे प्यारे! रजोगुणी प्रवृत्ति, सतोगुणी और तमोगुणी प्रवृत्ति वाले। यह प्रवृत्ति, मानो देखो, उनके प्रकृति में व्याप्त रहती है। तो विचार आता है, तीन प्रकार का ही, मानो देखो, तीन से विभाजन किया जाता है यह संसार, तो बेटा! देखो, त्रैतवाद में मानव प्रवेश कर जाता है। मुनिवरों! देखो, इसी में, हम अपने में अपनेपन को धारण करते रहते हैं। तो विचार आता रहता है, जब, इस प्रकार का उन्होंने अपना मन्तव्य दिया, तो बेटा! वे अपने में मौन होने लगे और अपने में मौन हो करके उन्होंने अपना निर्णतात्मक दिया और, मुनिवरों! देखो, पिप्पलाद मुनि यहाँ आ करके मौन हो गएं और उन्होंने कहा-मैं आगे कोई, मानो देखो, तुम्हारी वृत्तियों का उत्तर नहीं दे सकूंगा।

तो मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है, महर्षि पिप्पलाद मुनि महाराज और जिज्ञासुओं का इस प्रकार, मानो देखो, पशु के ऊपर अपना मन्तव्य प्रारम्भ होता रहा। उन्होंने अपना यही निर्णय दिया है कि संसार, मानो देखो, यह कहीं, मुनिवरों! देखो, चन्द्रमा अमृतं ब्रह्मः देखो, रयि के रूप में रहता है, कहीं मिथुन के रूप में रहता है। तो नाना

प्रकार के देखो, अपना मन्तव्य दिया। ऋषि उनको श्रवण करते रहे। तो बेटा! जिज्ञासुओं को जब यह ज्ञान हो गया कि ब्रह्म की आभा में हम सदैव रमण कर रहे हैं, और यह जो ब्रह्माण्ड, मानो देखो, नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों के रूप में दृष्टिपात आ रहा है, वह सर्वत्र, मानो देखो, ऋत् से बना हुआ, एक-दूसरा मानो, लोक की दूरी के मध्य से भी ऋत् और सत् रहता है। मेरे पुत्रो! देखो, उसमें एक सूत्र से सर्वत्र जगत् पिरोया हुआ है। यतंचब्रह्मः प्रणाम् मानो देखो, उसी से पिरोया हुआ होने से एक माला दृष्टिपात आती रहती है। यह माला के सदृश, उन्होंने, बेटा! अपना निर्णायत्मक दिया।

तो विचार-विनिमय क्या? आज मैं तुम्हे विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। आज का हमारा वेद पाठ कुछ कह रहा था। वेद के पठन-पाठन में प्रायः देखो, इस प्रकार प्रकृति और ब्रह्म का वर्णन होता रहता है और ऋषि-मुनियों की अपनी-अपनी, मानो देखो, मन्तव्य की गाथाएं रही हैं। उनके विचार-विनिमय करने का एक बड़ा विचित्र माध्यम रहा है। तो आज का विचार-विनिमय क्या? हम बेटा! देखो, जिज्ञासु बनें। सबसे प्रथम परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में और विवेक को उत्पन्न करें। विवेकी बन करके प्रकृति का सर्वत्र ज्ञान प्रायः हमें होना चाहिए और जब हम जिज्ञासु बन करके आचार्यो के समीप विद्यमान होते है तो आचार्य तुम्हें, मानो देखो, ब्रह्मा का ज्ञान करायेंगे, अथवा उसी में तुम देखा रत्त हो जाओगे। तो बेटा! देखो, इसीलिए पिप्पलाद मुनि ने कहा कि तुम गऊओं की सेवा करो और एक वर्ष तक गऊओं की सेवा करके जब मेरे से बारी-बारी तुम प्रश्न करना और मैं तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर दे सकूंगा तो वह एक वर्ष के पश्चात् दे सकूंगा। तो मेरे प्यारे! मानव में अभिमान भी नहीं होना चाहिए। क्योंकि ऋषि की निरभिमानता यही सिद्ध होती है कि, जानता हुआ कहता है, मैं तुम्हारे प्रश्नो का उत्तर जब दूंगा यदि मैं जानता होऊंगा और जिज्ञासु मानो इतना महान् होना चाहिए, वो यह जान ले कि यह शब्द कहाँ का कहाँ प्रारम्भ होता है। परन्तु उसके अज्ञान में परिणित नहीं होना चाहिए।

मेरे प्यारे! देखो, मानव को निरभिमानी बन करके परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान में सदैव रत्त हो जाना चाहिए और वही धर्म के मर्म का जानता है, जो इस प्रकार का जिज्ञासु बन करके परमात्मा के मार्ग का पथिक बनता है। तो यह है, बेटा! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। आज के वाक्य उच्चारण करने का हमारा अभिप्रायः क्या? मुनिवरों! देखो, हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा, अथवा उसके गुणों का गुणवादन करते रहें, और उसके गुणों का क्या, उसकी मानो सृष्टि को सदैव विचार-विनिमय करते रहें, जिससे हमें ज्ञान हो जाएं और अपने में, मानो देखो, अपने में अपनेपन को जान करके अपने में समाहित हो जाएं और उस परमदेव आनन्द में ही देखो, हमारी प्रवृत्ति रहनी चाहिए। तो यह है, बेटा! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। परन्तु विचार-विनिमय क्या, कि एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके, मानो देखो, दर्शन के ऊपर विचार-विनिमय करना चाहिए और परमपिता परमात्मा की सृष्टि को निहारते हए अपने में अपनेपन को ही धारण करना चाहिए। तो यह है, बेटा! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। क्योंकि इन्द्रियों का विषय जानना ही, पशु से प्रकाश में जाना है। इन्द्रियों में समाहित हो जाना वह पशु का पशुपन रह जाएगा तो, इसीलिए पशु न बनो। पशु से ऊर्ध्वा में जाओ और वह देखो, गौ नाम पशु का माना गया है। शेष व्याख्या तो, मानो देखो, किसी काल में करूंगा,आज तो मैंने केवल इन वाक्यों का प्रारम्भ किया है। समय मिलेगा, शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। (मन्त्र पाठ) सी-४७, रामप्रस्थ ०३-१०-१९९२

२१ याग की अनिवार्यता ०४-१०-१९९२

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान तो चले जा रहे थे ये भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, आज हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं क्योकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है, और उसका ज्ञान और विज्ञान भी अनन्तमयी माना गया हैं। क्योंकि सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके, वर्तमान के काल तक नाना विज्ञानवेत्ता हुए हैं, परन्तु कोई विज्ञानवता ऐसा नही हुआ तो उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सीमा बद्ध कर सके, तो उसका ज्ञान और विज्ञान सीमा से रहित है, वह सीमा में आने वाला नही हैं, तो इसीलिए उस परमपिता परमात्मा की अनन्तता और उसके ऊपर सदैव हम विचार-विनिमय करते रहे हैं। तो आज का हमारा वेदमन्त्र अपने में उद्गीत गा रहा है। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान का वर्णन कर रहा है आओ, मुनिवरों! हम उस परमात्मा की महिमा अथवा उसके ऊपर कुछ विचार-विनिमय करते रहे आज का हमारा वेदमन्त्र कुछ याग के ऊपर विकृतियों में अश्रोत अश्रताः वह अपने में कुछ उद्गीत गा रहा है वेदमन्त्र कह रहा था यज्ञनं ब्रह्मा वर्णनं सुतं वाचन्नमा क्या वह जो परमपिता परमात्मा वह यज्ञो में निहित रहने वाले हैं मुझे भी कहीं से यह प्रेरणाएं प्राप्त हो रही है क्यों मैं याग के ऊपर अपना कुछ वाक् प्रगट करूं।

मुनिवरों! देखो, प्रत्येक वेदमन्त्र मानो देखो, परमात्मा की प्रतिभा और उसके यज्ञोमयी स्वरूप का वर्णन करता रहता है तो आओ, मुनिवरों! आज का हमारा वेदमन्त्र हमें किस मार्ग के लिए प्रेरित कर रहा है आओ, मुनिवरों! देखो, हम उस परमपिता परमात्मा का जो यह ब्रह्माण्ड हैं अथवा यह ब्रह्माण्ड रूपी जो यज्ञशाला है, इसके ऊपर सदैव विचार-विनिमय करते रहे और अपने में धारयामि उसकी प्रतिभा को अपने में धारण करते रहे।

तो मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हें पुनः से यह यज्ञशाला में ले जाना चाहता हूँ जिन वाक्यों को बारम्बार पुनरूक्तियां करता रहता हूँ, अथवा विचार बड़े प्रियता में परिणत होते रहे हैं, मेरे प्यारे! हमारे यहाँ आचार्यों ने विद्यालयों में अपने ब्रह्मचारियों के मध्य अथवा गृह आश्रम में विद्यमान हो करके वह अपने में विचार-विनिमय करते रहे हैं और कहीं राष्ट्रीयता में राष्ट्रवेत्ता मुनिवरों! देखो, वह अपने में अनुभव और उनकी प्रतिक्रियाएं प्रारम्भ रही। आज मैं देखो, तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ बेटा! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज की प्रायः चर्चाएं होती रही हैं यह वाक् मैंने कई कालों में तुम्हें वर्णन करते हुए कहा है मेरे पुत्रों! देखो, यज्ञनं ब्रह्मा वर्णनं ब्रह्मयाग के ऊपर प्रायः अपना विचार-विनिमय होता रहा। मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारी जन अपने आसन पर विद्यमान हैं और याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपनी देखो, अपने विद्यालय में यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारियों को प्रातःकालीन वह नैतिक शिक्षा देते रहे हैं। वह नैतिकवाद में जब ले गएं तो हमारे यहाँ प्रायः ये क्रियाकलाप चलता रहा हैं, क्या वह विद्यालयों में, गृह आश्रमों में और राष्ट्रीय ऊर्ध्वा में गमन करने वाले, वह सदैव अपने में यागों का प्रचलन और उनकी प्रतिभा का प्रायः वर्णन करते रहे हैं। तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ब्रह्मचारियों के मध्य में प्रातःकालीन नैतिक शिक्षा देते हुए वह ब्रह्मचारियों को वेद का मन्त्र उद्गीत गाते हुए, उन्होंने न्यौदा में वेदमन्त्रों का उद्गीत गाया और न्यौदा में से वेदमन्त्रों का उद्गीत गाते हुए कहा यज्ञनं ब्रह्मणा व्रत्यं देवत्वां ब्रह्मे व्रत सुता देवां भूतं ब्रह्मा मेरे प्यारे! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा हे ब्रह्मचारियों! न्यौदा में वेदमन्त्र कहता है कि प्रत्येक प्राणी मात्र को संसार याग करना चाहिए। क्योंकि यह जो परमात्मा का जगत है, यह एक प्रकार की

यज्ञशाला हैं, मानो इसमें मानो प्रत्येक तत्त्व अपने में याज्ञिक बना हुआ हैं, नाना प्रकार के लोक-लोकान्तर अपने में मानो माला के सदृश्य दृष्टिपात आते रहते हैं, और वह जो माला हैं। वह भी एक प्रकार भी देखो, याग के रूप में परिणत हो रही है। याग का अभिप्रायः है एक दूसरे में एक दूसरे का सहायक बना हुआ हैं। एक दूसरे में वह कटिबद्ध हो रहा है। मेरे प्यारे! देखो, जब हम ब्रह्माण्ड की प्रतिभा में प्रविष्ट हो जाते हैं। तो उसके ऊपर विचार-विनिमय करते हैं। तो बेटा! एक दूसरे में यह एक दूसरा लोक एक दूसरे मे पिरोया हुआ हैं। एक मण्डल दूसरे में पिरोया हुआ है, एक निहारिका दूसरी निहारिका मे पिरोई हुई है। एक आकाश गंगा दूसरी आकाश गंगा में पिराई हुई है तो इसीलिए मानो यह ब्रह्माण्ड एक अनुपम सा दृष्टिपात आता हैं, और एक दूसरे में याग हो रहा है, वह यज्ञ अपने में यागां भूतं ब्रह्मा क्योंकि वह एक दूसरे में सहायक बना हुआ हैं। इसी प्रकार जब प्राणी मात्र में प्रवेश कर जाते हैं। तो यह भी एक दूसरे का सहायक बना हुआ हैं, मेरे पुत्रों देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा क्या प्रत्येक क्षण में याग हो रहा है। परमपिता परमात्मा ने जब सृष्टि का सृजन किया तो यह संसार रूपी यज्ञशाला का निर्माण हो गया बेटा! इसमें परमपिता परमात्मा स्वयं ब्रह्मा हैं। आत्मा यज्ञमान है। पंच महाभूत मुनिवरों! देखो, इसमें अध्वर्यु इसमें उद्गाता और होता के रूप में विद्यमान है। तो यह बेटा! यह कैसा अनुपम प्रभु का याग हो रहा हैं। तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा हे ब्रह्मचारियों! तुम भी अपने जीवन में नैतिकवाद में प्रविष्ट होते हुए, और तुम अपने में याज्ञिक बनो, क्योंकि वह याग तुम्हारे जीवन का अध्वर्यु अव्रतं ब्रह्मा तुम्हारा सहायक बनेगा, तो मेरे प्यारे! जब महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज इस प्रकार उपदेश दे रहे थे। इतने में उनके एक ब्रह्मचारी यज्ञदत नाम के उपस्थित हुए, और यज्ञदत ब्रह्मचारी ने कहा-प्रभु! आप का वाक् तो यथार्थ है कि याग करना चाहिए। आज प्रत्येक मानव याग कर रहा हैं। क्योंकि माता अपने गर्भस्थल में शिशु का निर्माण कर रही है। वह भी याग हो रहा है। मानो देखो, यथार्थ उदगीत गाने वाला भी याग कर रहा हैं। प्रत्येक क्षण में प्रत्येक मानव निस्वार्थता में परिणत होता हुआ, वह क्रियाकलाप में अवृत हो रहा है। तो वह बेटा! वह याग हो रहा है। परन्तु हम यह जानना चाहते हैं प्रभु! आप याग के लिए बारम्बार बाध्य करते रहते हैं। हम याग कैसे करें? मेरे प्यारे! उन्होंने कहा कि तुम्हें याग करना हैं। तो तुम्हारे यहाँ एक सुन्दर यज्ञशाला हो, और वह सजातीय होनी चाहिए, और खम्बों वाली होनी चाहिए, और यज्ञशाला मे तुम विद्यमान हो करके और कहो कि प्राणाय, अपानाय, उदानाय, समानाय, व्यानाय इस प्रकार तुम प्राणों का हूत करना प्रारम्भ करो। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा-प्रभु! यह भी हमने स्वीकार कर लिया। परन्तु हम यागां ब्रह्मे व्रतं उन्होंने कहा नाना प्रकार का साकल्य होना चाहिए। अथवा चरू होना चाहिए, और चरू में उसके क्या मानो देखो, कईं प्रकार के मिष्ठान वर्णासुतं वेद का वाक् कहता है कि जो साकल्य उसमें मधुपन हो, पुष्टिकारक हो, सुगन्धित हो और प्रसारणता में परिणत होने वाला हो तो मानो देखो, इस प्रकार का साकल्य ले करके तुम यज्ञशाला में अग्नि प्रदीप्त हो करके सबसे प्रथम कहो कि प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा, कह करके हूत प्रारम्भ करो मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार जब उन्होंने अपना मन्तव्य दिया, तो उन्होंने कहा-प्रभु! यह हमने स्वीकार कर लिया, परन्तु कहीं ऐसा हो हम ऐसी स्थलियों पर चले जाएं जहाँ हमें देखो, न तो यह यज्ञशाला प्राप्त हो, न साकल्य प्राप्त हो, तो प्रभु! हम याग कैसे करें? तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा तो कहीं मानो देखो, तुम्हें यज्ञशाला भी न हो और चरू भी न हो तो तुम मानो देखो, अग्न्याध्यान करो और समिधाओं को ले करके अग्न्याध्यान ले करके अग्नि प्रदीप्त करके हुए क्योंकि अग्नि प्रसारण करने वाली हैं। यह अग्नि ही तो तेजोमयी कहलाती हैं, यह अग्नि ही तो अखण्ड बन करके गति करती रहती है, माता के गर्भस्थल में जब हम जैसे शिशु प्रवेश होते हैं, तो वहाँ अग्नि अपना क्रियाकलाप करती है। अग्नि ही तपाती रहती हैं तो मानो देखो, अग्नि अपने में तेजोमयी है, यही अग्नि है जो मानो देखो, दक्षिणायान अग्नि बन करके रहती हैं। यही अग्नि है जो

याग और तपस्या

मानो देखो, वह पूर्व दशा में गमन करती हुई प्रकाश को देती चली जाती है। यही अग्नि है मानो देखो, जो प्राचीदिक् बन करके रहती हैं यही अग्नि है जो मुनिवरों! देखो, उदीचि दिक बन करके रहती हैं यही अग्नि है जो विष्णु बन करके, ध्रुवा में गमन करती रहती हैं, तो मानो देखो, अग्न्याध्यान करो अग्नि में मानो नाना प्रकार की समिधाओं को ले करके अग्नि प्रदीप्त करके और सबसे प्रथम समिधा को ले करके कहो, प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा कह करके हूत प्रारम्भ करो। क्योंकि संसार में ये पांच प्राण हैं, जो प्राण ही भक्षण करने वाला है, प्राण ही हूत कर रहा है, प्राण ही मानो देखो, इस संसार को अपने में धारण कर जाता हैं। यही प्राण है, जो अपने में अपने में ही प्राप्त होता हुआ, मानो देखो, ये संसार को निगल जाता है तो मानो देखो, ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो यज्ञदत नाम के ब्रह्मचारी ने नतमस्तिष्क हो करके कहा-प्रभु! यह हमने स्वीकार कर लिया है परन्तु हम यह जानना चाहते हैं कहीं ऐसी स्थली पर चले जाएं, कि हमे समिधा भी प्राप्त न हो, तो वहाँ हम याग कैसे करेंगें? और अग्निं ब्रह्वा कृतं तो उन्होंने कहा मानो देखो, तुम्हें यह कोई सुविधा न प्राप्त हो, तो तुम अंजलि में जल ले करके कहो प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा और उदानाय स्वाहा कह करके तुम हूत प्रारम्भ करो क्योंकि यह जो अमृतं ब्रह्मा अग्नं ब्रह्वे देवत्वां मानो देखो, यह जो जल है, यही तो आपो कहलाता हैं, और यही तो संसार का पिण्ड बना हुआ है। इस अग्नि में इदं ब्रह्वे अग्नि भी न हो तुम्हें काष्ठ भी प्राप्त न हो तो मानो जल को अंजलि में लो और अंजलि में ले करके प्राण को हूत करो। अपान को हूत करो, और आहुति देना तुम प्रारम्भ करो। मानो देखो, यह जल ही अपने मे अमृत कहलाता हैं, यह जल ही है, जो आपो बन करके कृषक को जीवन देता है, कृषक की कृषि को उपजाऊ बना देता हैं। समुद्रों में मानो इसका वास रहता हैं। यह पृथ्वी की मेखला बनी हुई है, यह यज्ञशाला में यज्ञमान देखो, मेखला में जल का प्रोक्षण करता है। इसी प्रकार देखो, जब माता के गर्भस्थल में जब हम जैसे शिशु विद्यमान होते हैं। तो मानो देखो, यह जल ही उसका ओढ़न बना हुआ, जल ही उसका आसन बना हुआ हैं, और जल ही पांशे बने हुए है, और जल में मेरे प्यारे! देखो, जल मे अपने पिण्ड को प्राप्त कर रहा हैं। वाह रे मेरे प्रभु! तू कितना विज्ञानवेत्ता हैं क्या वह देखो, वह पिण्डों का निर्माण हो रहा हैं और जितना भी यह जगत है, यह मानो देखो, पिण्ड रूप में दृष्टिपात आता है जब हम ब्रह्माण्ड की आकृतियों को दृष्टिपात करते हैं, तो यह संसार एक अण्डाकार के रूप में प्रायः हमें दृष्टिपात होता रहता है, यह अपने में मानो देखो, धारयामि बना हुआ हैं, तो यह आपो के कारण है, क्योंकि आपो अमृत कहलाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, इसीलिए उन्होंने कहा ऋषि ने कहा कि तुम आपो में ही परिणत हो जाओ। यह आपो ही तो जो पय कहलाता है। मानो देखो, इस पय को पान करने वाला मानो अमृत को पान करता रहता हैं। इसी प्रकार जब योगाभ्यास करने वाला साधक अपने में साधना करता हैं। तो वह भी मुनिवरों! देखो, ब्रह्मरन्ध्र से रसों का स्वादन करता रहता है। अपने में देखो, उसे पान करता रहता हैं। तो वह अमृत कहलाता है। तो वह भी आपो के रूप में परिणत रहता है। तो मेरे पुत्रों! देखो, इस प्रकार ऋषि ने अपनी विवेचना प्रगट की इतने में यज्ञदत ब्रह्मचारी ने कहा-प्रभु! हम जब बाल्यकाल में आचार्य कुल में यह अध्ययन करते रहे हैं, तो यह हमें सब कुछ श्रवण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। हे प्रभु! हम जानना चाहते हैं कि हे प्रभु! हमें मानो कहीं जल भी प्राप्त न हो और हमें याग करना है, तो हम याग कैसें करें? उन्होंने कहा कि यदि तुम्हें याग करना है तो कहीं तुम्हें मानो देखो, जल भी प्राप्त न हो जो जलं ब्रह्मा वर्णनं ब्रह्मे लोकां वाचन्नमं ब्रहे व्रतं देवत्वां तो कहीं मानो जल भी प्राप्त न हो तो तुम पृथ्वी की रज को ले करके कहो कि प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा कह करके हूत प्रारम्भ करो मानो देखो, यह जो पृथ्वी हैं इसमें गुरूतव विद्यमान रहता है, यह जो गुरूतव है, तरलतव है, दोनों का मिलान होते ही तेजोमयी का इसमें मिश्रण होते ही, तो मुनिवरों! देखो,

यह तीनों का निर्माण हो जाता हैं। मुझे स्मरण आता रहता है जब बेटा! देखो, शिकामकेतु उद्दालक मुनि से जब यह प्रश्न किया गया, कि महाराज! आपने अब तक क्या जाना हैं, तो महर्षि उद्दालक मुनि ने अपनी विवेचना करते हुए कहा है, क्या प्राणं ब्रह्मा व्रतं देवत्वां ब्रह्वा उन्होंने वेदमन्त्रों का उद्गीत गाते हुए कहा, सम्भूति ब्रह्मणा लोकां मानो देखो, मैं इस पिण्डों की गणना करता रहता हूँ, और पिण्डों का आकार एक दूसरे में परिणत होता रहता हैं। जैसा मैंने पुरातन काल में कहा है, पूर्व कालों में भी इसकी विवेचना होती रहती हैं, मानो देखो, जैसे जलं अमृतं तेजोमयी और मुनिवरों! देखो, गुरूतव यह तीन प्रकार के परमाणु गति करते रहते हैं, और तीन प्रकार की गतियों में सर्वत्र विज्ञान निहित रहता हैं। परमाणुओं को गति देने वाला वायु है, और जहाँ गति करता है, वह अन्तरिक्ष कहलाता हैं। तो मुनिवरों! देखो, इसी प्रकार विज्ञान अपने को अद्वितीय रूप को धारण करता रहता हैं। तो मुनिवरों! देखो, यह जो जब यह पृथ्वी के रज को ले करके जब हम कहते है, स्वाहा, तो मेरे प्यारे! ज्ञान रूपी पिण्डों का यह हूत करने वाला है। नाना प्रकार के गृहों का निर्माण होता हैं। अथवा नाना प्रकार के मण्डलों का निर्माण होता हैं, सूर्य जैसे महान लोकों को निर्माण होता है, तो बेटा! एक दूसरे मे पिरोया हुआ जगत है। जैसे मुनिवरों! यह पृथ्वी हैं। इसमें गुरूतव है, तेजोमयी है, और इसी में तरलतव है, तो यह पिण्ड बन जाता है। ऐसी इसके ऊर्ध्वा भाग में सूर्य का पिण्ड बना हुआ हैं। मानो सूर्य के ऊर्ध्वा भाग में बृहस्पति का पिण्ड बना हुआ है। इसी प्रकार एक दूसरा मण्डल एक दूसर में पिण्डाकार को अपने में धारण किए रहता हैं, और माता के गर्भस्थल में नाना प्रकार के जो मानो देखो, मानो योनियां अवृत होती रहती है। यह भी उसी पिण्ड का एक रूप अपने में धारयामि बना रहता है, मेरे पुत्रों! देखो, चार प्रकार की सृष्टियों का प्रायः निर्माण होता रहता है। सबसे प्रथम सृष्टि देखो, जो स्थावर कहलाती है, और द्वितीय सृष्टि का नाम अण्डज है। तृतीय का नाम जंगम हैं और चतुर्थ का नाम उदभिज कहा जाता हैं। ये सर्वत्र जो योनियों का निर्माण हो रहा हैं, पिण्डाकार बन रहा है, यह पृथ्वी के गुरूतव पदार्थ को लिए हुए होता हैं। वही देखो, इसको स्थूल रूप धारण कराता हैं, और तरलतव मानो देखो, परमाणुओं को एकाग्र बनाता हुआ उसमें तेजोमयी की अवृत का जन्म देता हैं, और प्राण बन करके उसकी गतियां प्रारम्भ हो जाती हैं। तो मेरे प्यारे! आज देखो, मैं विशेष विवचेना तो देने नही आया हूँ, केवल विचार-विनिमय ये कि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने, अपने विद्यालय में ब्रह्मचारियों को ये शिक्षा देते हुए कहा क्या इसीलिए शरीरों माता के गर्भ में जो पिण्डों का निर्माण होता है हम जैसे शिशुओं का निर्माण होता हैं वह केवल देखो, पृथ्वी के जो गुरूतव परमाणु उसके कारण होता हैं। तो इसीलिए कही कुछ भी प्राप्त न हो जल भी न हो, तो पृथ्वी की रज को ले करके कहो प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा कह करके हूत प्रारम्भ करो। मेरे प्यारे! देखो, जो इस प्रकार ऋषि ने अपना मन्तव्य दिया, तो यज्ञदत ब्रह्मचारी ने कहा-प्रभु! जब हम बाल्यकाल में आचार्य कुल में अध्ययन करते थे, तो आचार्यों ने हमें इस प्रकार का ज्ञान और विज्ञान वर्णन किया है। परन्तु हम ये जानना चाहते हैं प्रभु! यदि कहीं ऐसा स्थली मिल जाएं क्या हमें पृथ्वी की रज भी प्राप्त न हो, तो हम याग कैसे करें? उन्होंने कहा यदि तुम्हें पृथ्वी की रज भी प्राप्त न हो, तो तुम वाणी से माने वेदमन्त्रों का उद्गीत गाते रहो परमात्मा की जो अमूल्य वाणी है, ये आत्मा प्रसन्न होता हैं। इससे वायुमण्डल भी पवित्र होता हैं। इससे प्रदूषण समाप्त होता हैं। ऐसे तुम वेदमन्त्रों का उद्गीत गाते रहो और वेदमन्त्रों का उद्गीत गाते हुए कहो प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा इस प्रकार देखो, तुम हूत प्रारम्भ करो, और वेदमन्त्रों के द्वारा तुम अपने गृह को सजातीय बनाओं, क्योंकि वेदमन्त्रों की जो तरंगें होती है, वह गृह को ऊँचा बनाती है, मानव के आन्तरिक और बाह्य जगत को, दोनों को ऊँचा बनाती रहती है। तो इसीलिए तुम वेदमन्त्रों का उद्गीत गाते रहो, स्वाहा उच्चारण करते रहो क्योंकि देखो, ये जो स्वाहा है, यह आत्मा भूतं ब्रह्मणा लोकां ये मानो प्रत्येक वेदमन्त्र की आत्मा का सूचक कहा

गया है। मानो याग का भी वह सूचक माना गया हैं। तो इसीलिए तुम अपने में, अपनेपन का भान करते रहो, और चित्रावलियाँ बन करके द्यौ को प्राप्त होती रहती हैं।

तो आओ, बेटा! इसके विज्ञान में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ, विचार-विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने अपने ब्रह्मचारियों के मध्य में कहा हे ब्रह्मचारियों! तुम अपने में याज्ञिक बनो, और यदि तुम्हें कोई भी वस्तु प्राप्त न हो तो तुम वेदमन्त्रों का उद्गीत अवश्य गान रूप में गाओ, जिससे मानो तुम्हारा वेदमन्त्र ही तुम्हारे जीवन का सार्थक बन करके, और तुम अपने जीवन को ऊँचा बनाते रहो। तो मुनिवरों! देखो, इस प्रकार याज्ञवल्क्य मुनि महाराज प्रातःकालीन अपने ब्रह्मचारियों को इस प्रकार का उपदेश देते रहते थे, तो ये नैतिकवाद माना गया है, इसीलिए हमारे यहाँ विद्यालयों में आचार्यों में और गृह स्थलियों में प्रत्येक मानव अपने में याज्ञिक बनता रहा है और देखो, अपने में धारयामि अपने को बनाता रहा है। तो विचार-विनिमय क्या मेरे प्यारे! देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने इस प्रकार अपना उपदेश दे करके वह मौन हो गएं, और मौन हो करके कहा ब्रह्मचारियों! अब तुम अपने में प्रतिज्ञा बद्ध हो जाओ, संकल्प बद्ध हो जाओ क्या हमें अपने मे देखो, याग करना हैं और अपने उस परमपिता परमात्मा जो यज्ञोमयी स्वरूप है, जिसने ब्रह्माण्ड रूपी यज्ञशाला का निर्माण किया और यह जो ब्रह्माण्ड रूपी हो यज्ञशाला हैं, यह मानो देखो, परमपिता परमात्मा निर्माणवेत्ता हैं और उसका स्वयं ब्रह्मा बना हुआ है, आत्मा इसका यज्ञमान है, देखो, ये जो पंच महाभूत हैं, जल अग्नि तेज वायु कोई अध्वर्यु है। कोई उद्गाता है कोई होता बन करके बेटा! यह प्रिय याग हो रहा है कैसा प्रकाशमयी याग कहीं सूर्य अपना प्रकाश दे रहा हैं कहीं चन्द्रमा अमृत को बिखेर रहा है तो मुनिवरों! देखो, यह परमात्मा का प्रिय याग हो रहा हैं आओ, मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह क्या हम ऋषि-मुनियों की विचारधारा को ले करके अपने जीवन को ऊँचा बनायें, अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगें।

पूज्य महानन्द जीः- ओ३म् देवां भूतं मा वाचन्नमा रेवाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल! और भद्र समाज! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गागर मे सागर की कल्पना कर रहे थे और गागर में सागर का भरण करते हुए प्रायः हमें ऐसा अनुभव हो रहा था, जैसे हम याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विद्यालय में विद्यमान हो परन्तु आज मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अपना विज्ञान और विज्ञान से गुथा एक मानो याग के ऊपर अपना उन्होंने विचार दिया तो आज मुझे विशेष चर्चा नही जहाँ हमारी यह वाणी जा रही हैं। आकाशवाणी जा रही है वहाँ देखो, एक याग का आयोजन हुआ है और वह याग अपनेपन में प्रकाश में ले जाने वाला तो प्रायः देखो, मैं कोई विशेष चर्चा नही केवल मेरा जो अन्तर्हृदय रहता है। वह यज्ञमान के साथ रहता है। हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे मानो तेरे गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, क्योंकि गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता यही तो मानवीयता कहलाती हैं, और जिस गृह में द्रव्य का दुरूपयोग होता है। वह गृह नारकिक बन जाता हैं, और जिस गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता है वह गृह महान और पवित्रता को प्राप्त हो जाता हैं। वहाँ लक्ष्मियाएं अपने में वास करती रहती हैं, और जहाँ दुरूपयोग होता है, वहाँ से लक्ष्मी अपने गृह में प्रवेश कर जाती हैं। तो आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अपना जो मन्तव्य दिया है, वह बड़ा विचित्र हैं। और वह यागमय हैं, और वह मानो वेदमन्त्रों पर ला करके उन्होंने शान्त कर दिया, अपने विचारों को यहाँ शान्त किया, परन्तु आधुनिक यह जो वर्तमान का काल है। मैं इस पर कोई अपनी टिप्पणी देना नही चाहता हूँ। केवल यही विचार देता रहता हूँ, क्या देखो, आधुनिक काल का जो समाज हैं। यह वाममार्ग का समाज मैं इसको कहा करता हूँ, और वाममार्ग उसे कहते हैं, जो उल्टे मार्ग पर गमन करता है, जहाँ आहार और व्यवहार दोनों में अपवित्रता आ जाती है। तो मानो उसको वाममार्ग कहा जाता हैं। जहाँ वाणी का सन्तुल नही रहता जहाँ द्रव्य में सुरा और सुन्दरियों में पान

करने वाला समाज बन जाता है। तो वह समाज मानो अन्धकारमय कहलाता है आधुनिक काल में जो राष्ट्र नायक है, अथवा प्रजा है मानो देखो, वह दोनों एक ही सूत्र में सूत्रित रहते हैं, वह केवल सुरा सुन्दरी में अपने को ले जाना चाहते हैं। आधुनिक काल जो समाज वर्तमान काल का जो समाज है। इसके मूल में यह कि ऋषि-मुनियों की वार्त्ताओं को इन्होंने इनके विचारों को त्याग दिया हैं और उनके विचारों को त्यागने से देखो, यह संसार नाना प्रकार की आभा में परिणत हो रहा हैं। नाना प्रकार की रूढ़ियों में परिणत हो रहा हैं और वह जो रूढ़ियाँ है वही विनाश के मूल का कारण हैं। क्योंकि मैं सदैव यह दृष्टिपात करता रहता हूँ, जितने भी देखो, रूढ़ि है उनको धर्म नही कहा जा सकता रूढ़ि कहा जा सकता हैं, और वह जो रूढ़ि है, वह एक दूसरे की रूढ़ि को देखो, विनाश का करना चाहती है। एक दूसरी रूढ़ि को नष्ट करना चाहती है, तो उससे समाज अशान्त हो जाता हैं। (यह कुछ अंश पुस्तक से लिया गया हैं) ईश्वर के नामों पर नाना प्रकार के सम्प्रदाय होते हैं, और सम्प्रदाय जब होते हैं। जब मानव ऋषि-मुनियों की पद्धति को त्याग देता हैं, ज्ञान से और विवेक से मानव दूरी हो जाता हैं, और धर्म और मानवीयता से दूरी चला जाता है। तो वहाँ अग्नि प्रायः प्रचण्ड हो जाती हैं और वह अग्नि देखो, एक समय वह आता हैं एक-एक गृह में अग्नि प्रदीप्त हो करके राष्ट्र में अग्नि काण्ड हो जाते हैं। (यहाँ से शब्द ध्वनि से लिया गया हैं) जिससे राष्ट्रवाद मे नाना प्रकार की क्रान्तियों का प्रादुर्भाव हो जाता हैं, और वही देखो, राष्ट्रीय क्रान्ति मानव सदैव मानव का भक्षण करने के लिए तत्पर हो जाती हैं। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को कई काल में कहा है क्या पृथ्वी के राष्ट्रवेत्ता, सब एक स्थली पर विद्यमान हो करके और जो ऋषि-मुनियों की जो पद्धति है, उसको जब तक नही अपनायेंगें, जब तक मानो देखो, इस समाज का कल्याण नही होगा, न राष्ट्र ही ऊँचा बनेगा, और जब तक यह नाना प्रकार उग्र न्याय क्रियाएं मानो उनके हृदय में प्रदीप्त हो रहे हैं न ये शान्त हो सकेगा क्योंकि उग्र क्रिया बिना ज्ञान के समाप्त नही होती, और ज्ञान समाज में रहा नही, क्योंकि प्रत्येक पद से देखो, भ्रष्ट हो गया है। समाज तो आज मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नही, क्या आधुनिक काल का राष्ट्र ये विचारने लगे, क्या मुझे अपने राष्ट्र का कल्याण करना है मुझे अपने राष्ट्र को उन्नति देना है तो वह दे सकता है परन्तु इसीलिए नही दे सकता क्योंकि वह पद की लोलुपता में लगा हुआ हैं। और पद की लोलुपता में जितनी भी बलवती हो जाती हैं, उतना ही मानव कर्तव्य से विहिन होता चला जाता है। कर्तव्यवादी ज्ञानी होता है कर्तव्यवादी तपस्वी होता हैं, और जब तपस्वी होता है, तो उसको आत्म विश्वास होता है। आत्म बल होता है, आत्मा बलिष्ठ होने वाला मानव मानव के जीवन को ऊँचा बनाता है। तो आज मैं देखो, विशेष चर्चा न देता हुआ, केवल मेरे हृदय में ये प्रायः पिपासा बनी रहती है कि राष्ट्र उन्नत हो, समाज भी उन्नति का उन्नत होने वाला समाज हो, और कर्तव्यवादी होना चाहिए कर्तव्यवाद ही जीवन को ऊँचा बनाता हैं जीवन ऊँचा बनेगा, तो राष्ट्र ऊँचा बनेगा, राष्ट्र ऊँचा बनेगा तो देखो, पवित्रता आती चली जाएगी ऐसा हमारा मन्तव्य रहा है। प्रत्येक आधुनिक काल का जो राष्ट्रवेत्ता है, वह सदैव देखो, अपने मे वाममार्ग की चर्चा करता रहता हैं। परन्तु यदि वह अपने राष्ट्र को उन्नत बनाना चाहता हैं, तो राजा के राष्ट्र में रूढ़ि नही रहनी चाहिए, ईश्वर के नाम पर जितनी भी रूढ़ि बलवती हो जाती है। उतना ही राष्ट्र का समाज भ्रष्ट हो जाता है, राष्ट्र का समाज मानो देखो, क्रान्ति में परिवर्तित हो जाता हैं। इसीलिए रूढ़ियाँ नही रहनी चाहिए, ईश्वर के नाम पर जितनी रूढ़ि बन जाएगी उतना ही अशान्ति का मूल कारण बनेगा परन्तु देखो, मैंने बहुत पुरातन काल में एक ही वाक् कहा था कि राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है तो रूढियों के आचार्यों को एकत्रित करे, और अपने में स्वयं ब्रह्मवेत्ता हो राजा को ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए, और आचार्य जन भी ब्रह्मवेत्ता हो और उसके पश्चात देखो, प्रत्येक रूढ़ि के आचार्यों से विचार-विनिमय हो जहाँ मानवता और विज्ञान मानो शिरोमणी हो जाए उसी को अपना लेना चाहिए वह उसका धर्म और वही उसकी मानवता कहलाती हैं, मानो देखो, जहाँ

विज्ञान और धर्म मानवीयता का ह्रस होता हो उसको स्वीकार नही करना चाहिए, तो राजा का कर्तव्य है कि राजा अपने में देखो, कोई रूढ़ि नही पनपने देने का एक ही कारण है, वह स्वयं अभ्यस्त बने और प्रत्येक रूढ़ियों के आचार्यों की चर्चा होनी चाहिए। और विज्ञानवेत्ता भी हों और ब्रह्मवेत्ता विद्यमान हो करके उसमें निर्णायक बने और वह निर्णय देने वालें बने राष्ट्र पुनः से मनु राष्ट्र की आभा में परिणत होता रहे, तो आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ कवेल यह कि आज देखो, आधुनिक काल अग्नि के मुखारबिन्दु में यह पृथ्वी मण्डल का प्राणी अपने को परिणत कर रहा हैं। मैं सदैव यह अपने प्रभु से यह याचना करता रहता हूँ, हे प्रभु! समाज को सु बुद्धि दे जिससे देखो, राष्ट्र और समाज ऊँचा बने और द्रव्य का दुरूपयोग न हो जाएं, द्रव्य का सदुपयोग होता रहे जिससे सदुपयोग से देखो, राष्ट्र ऊँचे बनते हैं समाज में देखो, मानवता का प्रसार होता है तो आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि आधुनिक जहाँ हमारी यह वाणी जा रही हैं, वहाँ एक याग हुआ है मेरा अन्तरात्मा यज्ञमान के साथ रहता है। हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और निरअभिमानता से तू अपने जीवन को व्यतीत करता रहे द्रव्य का सदुपयोग होता रहे ऐसी मेरी कामना रहती हैं अब मैं अपने वाक्यों को विराम दे रहा हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः- मेरे प्यारे ऋषिवर! अभी-अभी मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपनी वेदना प्रगट की इनके हृदय में राष्ट्र के प्रति मानव के प्रति कितनी वेदना है परन्तु यह वेदना भी देखो, ज्ञानी और महापुरूषों से ही समाप्त हुआ करती है, और विज्ञान का सदुपयोग और विज्ञान अपने में महानता को प्राप्त होता रहे। आज का वाक् क्या है क्या हम अपने में अपनेपन में समाहित होते रहे, ज्ञान और विज्ञान की वार्त्ताओं में हमारा मानवतव तत्पर रहना चाहिए, और याज्ञिक बने रहें और इतना ही संसार का सुक्रियाकलाप है, महान क्रियाकलाप है जो वैदिक साहित्य से गुथा हुआ है, वह सर्वत्र धर्म है, और मानवता हैं, उसे हमें अपनाते हुए इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करना चाहिए यह है आज का हमारा वाक् अब समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएं तुम्हें कल प्रगट करूंगा आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन होगा। सी-४७, रामप्रस्थ।